CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ईश्वरप्रोक्तं

ज्ञानार्णवतन्त्रम्

(श्रीविद्याविवरणात्मकम्)

(संस्कृत मूल एवं भाषाभाष्ययुक्त)

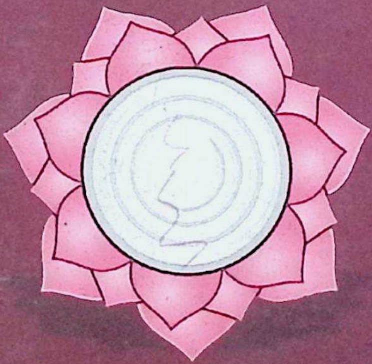

एस. एन. खण्डेलवाल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तन्त्र२९२

॥ श्रीः ॥

काशी संस्कृत ग्रन्थमाला
३४७

ईश्वरप्रोक्तं

ज्ञानार्णवतन्त्रम्

(श्रीविद्याविवरणात्मकम्)
(संस्कृत मूल एवं भाषाभाष्ययुक्त)

भाषाभाष्यकार :
एस. एन. खण्डेलवाल

चौखम्भा संस्कृत संस्थान
वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रकाशक :
चौखम्भा संस्कृत संस्थान
भारतीय सांस्कृतिक साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक
पोस्ट बाक्स नं. 1139
के. 37/116, गोपाल मन्दिर लेन, गोलघर (समीप मैदागिन)
वाराणसी - 221001 (भारत)
टेलीफोन : 2333445, टेलीफैक्स : 0542-2335930
E-mail : cssvns@sify.com

ISNB : 978-93-81608-22-7

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

संस्करण : प्रथम, वि0 सं0 2070
मूल्य : रु. 275.00
NRS 440=00
Acc. 39886/31447

शाखाएं :
चौखम्भा पब्लिकेशन्स
4262/3 अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली - 110002 (भारत)
टेलीफोन : 011 : 23259050, टेलीफैक्स : 011-23268639
E-mail:cpub@vsnl.net

चौखम्भा संस्कृत संस्थान
692/93, रविवारपेठ, कापड़गंज
समीप डी. एस. हाउस, पुणे - 411002 (भारत)
टेलीफोन : 020-24471283, मोबाइल : 09970193955
E-mail : hn.shah@rediffmail.com

मुद्रक : चारू प्रिन्टर्स, वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तन्त्र २५२

THE
KASHI SANSKRIT SERIES
347

Iśvarproktam

GYĀNĀRṆAVATANTRAM

(Śrīvidyāvivaraṇātmakam)

Translated by
S.N. Kahandelwal

CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN
VARANASI

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Publisher :

© CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN

Publishers and Distributors of Oriental Cultural Literature

Post Box No. 1139

K. 37 / 116, Gopal Mandir Lane, Golghar (Near Maidagin)

Varanasi-221001 (India)

Telephone : 2333445, Telefax : 0542-2335930

E-mail : cssvns@sify.com

ISNB : 978-93-81608-22-7

All rights reserved

Edition : First, **2014**

Price Rs. : 275.00

Branches :

CHAUKHAMBHA PUBLICATIONS

4262/3, Ansari Road, Darya Ganj

New Delhi-110002 (India)

Telephone : 23259050

Telefax : 011-23268639

E-mail : cpub@vsnl.net

CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN

692/93, Raviwar Peth, Kapadganj

Near D.S. House, Pune - 411002 (India)

Telephone : 020-24471283, Cell No. 09970193955

E-mail : hn.shah@rediffmail.com

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

निवेदन

ज्ञानार्णव तन्त्र श्रीविद्या उपासना सम्बन्धि एक प्राचीन तथा सर्वमान्य ग्रंथ है। इसमें श्रीविद्या उपासना सम्बन्धित भुक्ति प्रदायक तथा मुक्तिप्रदायक दोनों प्रकार की साधनाओं का मणिकाञ्चन संयोग परिलक्षित होता है। साथ ही मारण, उच्चाटन, वशीकरण, मोहन आदि के साथ ही प्रभूत सुख तथा अर्थ प्राप्ति हेत भी श्रीविद्या के मन्त्र तथा उपासना पद्धति का समावेश किया गया है। यह ग्रंथ आत्मतत्व के उपदेशों से भी समृद्ध है। यद्यपि उसकी व्याख्या संक्षिप्त रूप में की गई है, तथापि समस्त श्रीविद्या उपासना को सर्वान्त में आत्मतत्वरूप समुद्र में समाहित कर दिया गया है। मैंने इस भाष्य में यथाशक्ति प्रक्रिया प्रभृति का भी यथास्थान उल्लेख करने का प्रयास किया है। तथापि यह साधना पूर्णतः गुरु सापेक्ष है। इसका अनुशीलन पूर्णप्रज्ञ गुरु के निर्देश के बिना करना हानिकारक हो सकता है। इस पुस्तक के प्रकाशनार्थ चौखम्भा संस्कृत संस्थान के अधिष्ठातागण ने जो मनोयोग प्रदर्शित किया है, वह स्तुत्य है।

रथयात्रा, सन् २०१३ ई.

निवेदक

एस.एन. खण्डेलवाल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रस्तावना

'ज्ञानार्णव' श्रीविद्या पर आधारित सूत्ररूप ग्रन्थ है। सामान्य दृष्टि से देखने पर इसमें महात्रिपुरसुन्दरी की बाह्यपूजा का ही उल्लेख मिलता है। लेकिन सूक्ष्म दृष्टि के समक्ष (इस ग्रन्थ के अनुशीलन द्वारा) यह तथ्य प्रकाशित होता है कि जो आन्तर पूजा में समर्थ है, वे ही वाह्यपूजन के अधिकारी है। आन्तरपूजा से जाग्रत किया आत्मतेज जब तक वाह्य प्रतिमा अथवा यन्त्रादि में संस्थापित नहीं किया जाता, तब तक ये सब निर्जीव ही रहते हैं। अत: ज्ञानार्णवोक्त विधान में उनको ही पूजाधिकार है जिन्होने अन्तर्याग रूपी अन्त:पूजन को गुरुकृपा से सम्पन्न कर लिया है। सरजान उडरफ ने यही तथ्य ''प्रिंसपल आफ तंत्राज्' में कहा है, तथा उनके गुरुवर्ग के महान् विद्वान शिवचन्द्र विद्यार्णव ने अपने ग्रंथ 'तन्त्रतत्व' में इसी मत का प्रतिपादन किया है। 'तन्त्रतत्व' के भाषानुवाद काल में ही मुझे श्रीचक्र की यथार्थ उपासना का बोध हो सका।

यह आन्तर पूजा प्राणानुसन्धान द्वारा ही आयत्त होती है। नासिकाद्वय से प्राण दो रेखाओं में बाहर होकर एक विन्दु पर मिलता है। यही द्वादशान्त है। यह गति अधोमुखी त्रिकोण रूप से होती है। पुन: उस वाह्य द्वादशान्त बिन्दु से उठकर प्राणस्पन्दन दोनों नासिकारन्ध्र से प्रविष्ट होकर भ्रूमध्य में जाकर वहाँ पर उर्ध्वमुखी त्रिकोण का अंकन करता है। यही दोनों शिव त्रिकोण तथा शक्ति त्रिकोण हैं जो मानव चेतना में सर्वदा २१६०० बार अहोरात्र में अंकित होता है। यही षट्कोण है। जो इस पूरी गुरुगम्य प्रक्रिया का रहस्य जान लेते हैं, वे अपने बोधगमन में श्रीचक्र की (अकृत्रिम चक्र जो मानव निर्मित नहीं है) रचना करने में सक्षम हो जाते हैं।

यह रहस्य महामहोपाध्याय शिवकल्प आचार्य रामेश्वर जी झा महोदय के श्रीमुख से सुनने का सौभाग्य मिला था। इस प्रकार से बोधगगन में इस श्रीयन्त्र के निर्माण का अधिकार प्राप्त कर लेना ही यथार्थ आन्तर श्रीचक्र पूजा है। इसका संकेत 'भावनोपनिषद' में भी प्राप्त होता है। तदनुसार देह ही नवरत्न द्वीप है, जो त्वगादि सप्तधातु रोम संयुक्त है। इसी में श्रीचक्रान्तर्गत समस्त शक्तियों का विलास हो रहा है। तथापि यह अतीव गोपनीय गुरुगम्य रहस्य है। शास्त्रों में इसका संकेत मात्र देकर इसे गुरुगण के ही अधिकार क्षेत्र में प्रच्छन्न कर रखा है।

एवंविध आन्तर अनुसंधानात्मक पूजा सम्पन्न कर लेने के अनंतर तत्र ज्ञानार्णव जैसे शास्त्रों में वर्णित पूजनाधिकार प्राप्त होता है। तभी इन तन्त्रों मे वर्णित श्रीविद्यार्चन फलीभूत होता है। अन्यथा विशालग्रन्थो का अनुशीलन करके पूजा प्रयास करना कहाँ तक सार्थक है, वह तो ऐसे पूजक ही जानें। आचार्यप्रवर भाष्करराय कहते हैं कि वामकेश्वर तन्त्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्तर्पूजा (अन्तर्याग) प्रधान था। इनका कथन है कि कुलार्णव, ज्ञानर्णव, स्वच्छन्द, परानन्द, दक्षिणामूर्त्ति संहिता आदि अनेक ग्रंथ केवल बहि:पूजन की ही वर्णना करते हैं। यद्यपि कहीं कहीं क्षीण आभास अन्तर्याग रूप अन्त:पूजन का भी उनमें दृष्टिगोचर होता है, लेकिन उससे कुछ स्पष्ट नहीं होता है।

यहाँ यह भी भ्रम निवारण करना है कि केवल पुष्पधूपादि पूजन, घृतपायसादि त्रिमधुरादि होम, चक्रांकन, जप, यही श्रीचक्रसाधना की इति:श्री नहीं है। बिना योगनुशीलन किये श्रीचक्र पूजा अंगहीन रहती है। अंगहीन पूजनादि त्रिकाल में भी सिद्धिप्रय नहीं होता। श्रीचक्रार्चन में कुण्डलिनी सर्वापेक्षा आवश्यक है। योगोक्त षट्चक्र तथा श्रीचक्रोक्त तदन्तस्थ चक्र साम्य पूर्ण हैं । त्रिकोण ही मूलाधार है । स्वाधिष्ठान अष्टार है। अन्तर्दशार है मणिपूर चक्र। बहि: दशार है अनाहतचक्र। चतुर्दशार है विशुद्धिचक्र। शिवचक्र चतुष्टय है आज्ञाचक्र। सहस्रार है - विन्दु। श्रीचक्र को षट्चक्रात्मक कहा गया । अत: यही है उसकी षट्चक्रात्मकता साथ ही श्रीचक्र त्रिखण्डात्मक भी है। इसका तात्पर्य है कि मूलाधार से लेकर स्वाधिष्ठान है अनलात्मक प्रथमखण्ड। मणिपूर से अनाहत पर्यन्त सूर्यात्मक द्वितीय खण्ड है। तृतीय खण्ड है। विशुद्ध एवं आज्ञाचक्र।

इस प्रकार से देहचक्र भी श्रीचक्रवत् त्रिखण्डात्मक है इससे आन्तर श्रीचक्र का किंचित् वर्णन किया गया। श्रीचक्र का परम प्राप्तव्य है दिव्यभाव प्राप्ति। सर्वव्याधिरहित होकर दिव्यदेह की प्राप्ति आवश्यक है। इसके लिये श्रीचक्रोपासक को अनिवार्यरूप से षोडशाधार, त्रिलक्ष्य, व्योमपञ्चक, द्वादशग्रंथि, शक्तित्रय, धामत्रय तथा नाड़ीत्रय के तत्व को साक्षात्कृत करना होगा। उसे साढ़े तीन कोटि नाड़ियों से व्याप्त देह को निर्मल करना होगा । तभी यथार्थ श्रीचक्रतत्व पूजित हो सकेगा । अत: प्रकृत योगी ही श्रीचक्रार्चन का सम्यक् अधिकारी है।

ज्ञानार्णव में मातृका का वर्णन स्थान-स्थान पर आया है। इसमें प्रतिपादित जपादि कृत्य मातृका पर ही आधारित हैं। आचार्यशिवानन्द ऋजुविमर्शिनी में कहते हैं कि यह परावाक् रूप तथा जगत्कारण ३६ तत्वों का प्रसव करने वाली है। विद्यानन्द कृतार्थ रत्नावली में इसकी व्याख्या करते हैं "धाति" अर्थात् त्राण करने वाली। इनके मत से यह अनुग्रह द्वारा जीवशक्ति का त्राण करती है। समस्त मन्त्र इसी से निकलते हैं। नित्याषोडशिकार्णव में कहा गया है कि यह कालवेग के बन्धनों का नाश करती है। इसका फल है मृत्यु से पार होना। शास्त्र का कथन है कि एक ही मातृका (अक्षर) की सिद्धिवाले साधक शंकर के समान अजेय, अग्नि के समान तेजस्वी तथा विष्णु के समान उज्वल हो जाता है। यहाँ एक ही मातृकाक्षर की सिद्धि वाक्य से तात्पर्य है कि यदि वह एक ही अक्षर भले ही विन्दु रहित हो अर्थात बीज रहित हो, तब भी वही फल देता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसके जप का रहस्य भी जानना आवश्यक है उस मातृकावर्ण को पूरक में (श्वास भीतर लेते समय) अन्दर ले जाये। कुंभक में उसका चिन्तन करें। रेचक काल में उसकी भावना करते बाहर छोड़े। यहाँ पुन: पुन: करना यथार्थ जप है। जिह्वा से जपने से वह केवल श्रम ही है। जबकि इस विधि से जप करना ही प्रकृत जप है। इस प्रक्रिया से यथाशीघ्र तथा निश्चित रूप से मन्त्र सिद्धि होती है। यह योग युक्त जपविधि है। इस शास्त्र में विसर्ग को पराशक्ति कहते हैं। उनका आमोद है इच्छा-ज्ञान-क्रिया। योग दृष्टि से पूरक है इच्छा। कुंभक है ज्ञान तथा रेचक है क्रिया। जब ये तीनो युक्त हो जाते हैं अर्थात् जब प्राणगति भीतर ही भीतर चले केवल-पूरक एवं कुंभक हो तब वही है तन्त्रालोक तृतीय आन्हिक में वर्णित विसर्गामोदसुन्दर। यही देवभाव है। क्योंकि मनुष्यों में प्राण बाहर भीतर चलता है। पूरक-रेचक होता है। देवदेह में प्राण का प्रवाह भीतर ही होता है। रेचक अर्थात् प्रश्वास नहीं रहता । इस स्थिति के अभाव में साधक नाद के अन्तर्नदन को कैसे जानेगा ? यही है वह स्थिति जिसमें मन्त्र सिद्धि तथा श्रीयन्त्रस्थ बिन्दु चक्र का बोध होता है। यह द्वादशान्त स्थिति है।

श्रीविद्या प्रसंग में ज्ञानार्णव में ध्यान का निर्देश मिलता है। मुख आदि शरीरगत अवयवों का ध्यान उनकी सज्जा, आयुधादि का ध्यान, यह ध्यान पदवाच्य नहीं हैं। भास्कर राय इसे अवयवों का कल्पित ध्यान कहते हैं। यह तात्विक ध्यान नहीं है। इससे ध्याता-ध्यान-ध्येय की त्रिपुटी में ऐक्य सम्पादित हो ही नहीं सकता। वास्तव में शक्तिसमावेश रूप ब्रह्मसामरस्य ही यथार्थ ध्यान है। यह स्थिति गुरुशक्तिपात के बिना नहीं प्राप्त हो सकती। नित्याषोडशिकार्णव में इसी मत का प्रतिपादन मिलता है।

इसी प्रकार जपान्त में अथवा प्रक्रिया में होम भी आवश्यक है, लेकिन तन्त्रोक्त होमद्रव्य को अग्नि में प्रदान करते रहने का ही होम से तात्पर्य नहीं है जबतक आत्मरूप महाअग्नि में मन की पूर्णाहुति नहीं हो जाती, तबतक होम अधूरा ही रह जाता है। अधूरी विधि से कभी भी श्रीचक्रविज्ञान सिद्ध नहीं होता। आज इस स्थिति में होम करने वाले खोजने पर भी नहीं मिलते। अत: श्रीचक्रार्चन एक प्रकार से निष्प्रभावी होकर पड़ा है, भले ही उसे कितना प्रचारित विज्ञापित क्यों न किया जाये। यह एक सम्पूर्ण विज्ञान (Science) है। विज्ञान में उसके किसी भी अंग की काल्पनिक पूर्त्ति नहीं की जा सकती । उसके लिये शास्त्रोक्त विधान के पूर्व आन्तर विधान में निष्णात् होना आवश्यक है तभी वाह्य प्रक्रिया भी यथार्थत: सम्पन्न हो सकेगी।

श्रीचक्र को महिमान्वित करते समय शास्त्रों ने उसे तंत्रोक्त षट्कर्म सिद्धिप्रदाता कहा है। अर्थात् वह स्तम्भन, क्षोभण, आकर्षण विद्वेषणादि कार्य साधक भी है तदनन्तर्गत् मोहन कर्म का तात्विक अर्थ भास्करराय के अनुसार है। कृत्यअकृत्य में स्फूर्त्तिकारी। "मोहन कृत्याकृत्योरस्फूर्तिकृत"। जृम्भण का अर्थ इनके अनुसार है अणु को भी महत्

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करने वाला। "द्रावण" कर्म का अर्थ विद्यानन्द करते हैं "समस्त पाशचाल का द्रावण करने वाला, गलाने वाला।" "निखिल पाशजालं द्रावयति विलापयतीत्यर्थः। यह चक्र (श्री विद्या यन्त्र) व्याधिदरिद्रतानाशक है। इसका अर्थ शिवानन्द करते हैं कि" व्याधिरपूर्णम्मन्यतात्मा संकोचः। द्रारिद्रयम् अज्ञानम्। अर्थात् व्याधि है स्वयं का अपूर्ण रूप में, देहादिबोध रूप संकोच रूप में रहना। दरिद्रता है अज्ञान। इन दोनों का नाशक है। श्रीचक्र। भट्टगङ्गाधर मिश्र भी यही मानते हैं—

"अपूर्णम्मन्यता व्याधिः कार्पण्यैकनिदानम्:" इत्यादि।

इस प्रकार से इसके महत्व को प्रदर्शित किया गया है। ज्ञानार्णव में यह महापातक नाशक कहा गया है। शिवानन्द कहते हैं कि जीव तथा शिव के मध्य भेद ही महापातक है। इसका भेदरूप अनुभव करने वाला ही महापातकी है। यह श्रीयन्त्र जीव तथा शिव के बीच ऐक्य का स्फुरण कराता है। यही पातक नाश है।

गन्धर्वतन्त्र, नित्याषोडशिकार्णव, योगिनी हृदय का भाषाभाष्य करते समय मुझे वाग्भव, कामराज तथा शक्ति कूट के विविध रूप का परिचय प्राप्त हुआ। इनमे नित्याषोडशिकार्णव का मत अधिक व्यवहार योग्य प्रतीत होता है। ज्ञानार्णव में जहाँ मन्त्रोद्धारादि में कोई भ्रम उत्पन्न हो, वहाँ उसका निराकरण नित्याषोडशिकार्णव से ही करना समीचीन प्रतीत होता है। क्योंकि गन्धर्वतंत्र आदि ग्रंथों में क्षेपक तथा पाठभेद आदि से कई स्थान पर विषयवस्तु स्पष्ट नहीं होती। सर्वश्रेष्ठ मार्ग है गुरुपरम्परा। वह सर्वोपरि है।

चैत्रनवरात्र, सन् २०१२ ई. **एस.एन. खण्डेलवाल**

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साधको के हितार्थ तन्त्रान्तरोक्त श्रीविद्यान्तर्गत बीज

अरुणा बीज	-	ज्म्रीं।
वशिनी बीज	-	ब्ल्रूं।
कामेश्वरी	-	क्ल् ह्रीं।
मोदिनी बीज	-	न् व् लीं।
विमला बीज	-	य् लूं।
जयिनीबीज	-	ह् स् ल् व् र् यूं।
सर्वेश्वरी बीज	-	झ् म् र् यूं
कौलिनी बीज	-	क्ष्म्रीं।
करशुद्धिकरी विद्या	-	अं आं सौः।
त्रिपुराबाला विद्या	-	ऐं क्लीं सौः।
आत्मासन विद्या	-	ह्रीं क्लीं सौः।
सर्वमन्त्रासन स्थिता विद्या	-	ह्सैं ह् स् क्लीं ह् सौः।
साध्यसिद्धासनस्थिता विद्या	-	ह्रीं क्लीं लें।
सर्वार्थसाधिका आवाहनी विद्या	-	हस्रैं ह् स् क् ल् रीं ह् स्रौः।
हादिमत का वाग्भव कूट	-	ह स क ल ह्रीं।
कादिमत का वाग्भव कूट	-	क ए ई ल ह्रीं।

(कामराज कूट मे हादि कादि विरोध नहीं है)

अतः सर्वसम्मत कामराज कूट है— ह स क ह ल ह्रीं।

शक्ति कूट— स क ल ह्रीं।

श्रीविद्या में कर शुद्धि को मध्यमा से प्रारम्भ करे यथा— अं मध्यमाभ्यां नमः। आं अनामिकाभ्यां नमः। सौः कनिष्ठिकाभ्यां नमः। अं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। आंतर्जनीभ्यां नमः। सौः करतल पृष्ठाभ्यां नमः। (यह तन्त्रसार की वसुमति टीका का आधार लेकर करशुद्धि कही गयी है।

चक्रासन मन्त्र— हैं ह् क्लीः ह्सौः श्रीचक्रासनाय नमः। कुलविद्या है 'ऐं क्लीं सौः'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इससे षड़ङ्गन्यास इस प्रकार होगा— ऐं हृदयाय नमः, क्लीं शिरसे स्वाहा, सौः शिखायै वषट्, ऐं कवचाय हुं, क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्, सौः अस्त्राय फट्।

बीजपञ्चक - ह्रीं क्लीं ऐं ब्लूं स्त्रीं।

श्रीचक्र पूजनान्तर्गत इन मुद्राओं का प्रयोग गुरु से पहले जान लेना होगा। यथा— त्रिखण्डा, सर्वसंक्षोभकारिणी, सर्वविद्राविणी, आकर्षिणी, सर्ववेशकरी, उन्मादिनी, महाङ्कुशा, खेचरी, (खेचरी ही समय मुद्रा भी हैं), योनिमुद्रा। योनिमुद्रा शिष्य की स्थिति के आधार पर एकमात्र गुरु ही बताते हैं, यह भास्कर राय का मत है। "मुद्रा योनिमुद्रा गुरुमुखैकवेद्या"।

●

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनुक्रमणिका

अध्याय	पृष्ठ संख्या
प्रथमः पटलः	१-५
द्वितीयः पटलः	६-२०
तृतीयः पटलः	२१-२५
चतुर्थः पटलः	२६-३६
पञ्चमः पटलः	३७-४३
षष्टः पटलः	४४-४९
सप्तमः पटलः	५०-५२
अष्टमः पटलः	५३-५५
नवमः पटलः	५६-६६
दशमः पटलः	६७-८१
एकादशः पटलः	८२-८३
द्वादशः पटलः	८४-८७
त्रयोदशः पटलः	८८-९६
चतुर्दशः पटलः	९७-१२३
पञ्चदशः पटलः	१२४-१३५
षोडशः पटलः	१३६-१७५
सप्तदशः पटलः	१७६-१९१
अष्टादशः पटलः	१९२-१९५
एकोनविंशः पटलः	१९६-२०२
विंशः पटलः	२०३-२२६
एकविंशः पटलः	२२७-२३३
द्वाविंशः पटलः	२३४-२४६
त्रयोविंशः पटलः	२४७-२५२
चतुर्विंशः पटलः	२५३-२६६
पञ्चविंशः पटलः	२६७-२७०
षड्विंशः पटलः	२७१-२७५
ज्ञानार्णवतन्त्रम् चित्र	२७६-२८३

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रीगुरवेनमः
श्रीगणेशायनमः

ज्ञानार्णवतन्त्रम्

प्रथमः पटलः

(आत्मस्वरूप ज्ञेयमातृकावर्ण, शब्दातीतब्रह्म, बिन्दुत्रय, उन्मनी)

श्रीदेव्युवाच–

गणेशनन्दिचण्डेशसुरेन्द्रपरिवारित ।
सर्ववन्द्य गणाधीश किं त्वया जप्यते सदा ।।१।।

श्रीदेवी कहती हैं— हे (प्रथमादि) गण के अधिपति, गणेश, नन्दी, चण्डेश (महादेव के परिवार) तथा इन्द्र द्वारा परिवेष्ठित ! आप सर्वदा क्या जप करते रहते हैं ? ॥१॥

अक्षमालेति किं नाम संशयो मे हृदि स्थितः ।
शब्दातीतं परं ब्रह्म त्वमेव परमार्थवित् ।।२।।
कथयाऽऽनन्दनिष्यन्दसान्द्रमानसनिश्चयात् ।

'अक्षमाला' का क्या तात्पर्य है ? इसके लिये मेरे हृदय में संदेह है। आप परमार्थविद् है। आनन्दधारा में आपका मन एकान्त निःस्पन्दयुक्त है, आप मुझसे अक्षमाला तथा शब्दातीत परब्रह्म के सम्बन्ध में कहिये ॥२॥

ईश्वर उवाच–

कथयामि वरारोहे यन्मया जप्यते सदा ।।३।।
अकारादिक्षकारान्ता मातृका पीठरूपिणी ।
चतुर्दशस्वरोपेता बिन्दुत्रयविभूषिता ।।४।।
अनुस्वारेण देवेशि बिन्दुनैकेन मण्डिता ।
विसर्गेण च बिन्दुभ्यां संलग्नाभ्यां विराजिता ।।५।।

ईश्वर कहते हैं— हे सून्दरी ! (जिनका मनोहर कटिदेश है) मैं जो जप करता हूँ। उसे कहता हूँ।

हे देवेशी ! अनुस्वार रूप एक बिन्दु (.) द्वारा भूषित, विसर्गरूप दो विन्दु द्वारा संलग्न, अतः तीन बिन्दु से विभूषित १४ स्वरों से युक्त (अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ए ऐ ओ औ) अकार से लेकर क्षकार पर्यन्त वर्ण समूह को मातृका पीठरूपिणी अथवा मातृकावर्णरूपा कहते हैं ॥३-५॥

कलामण्डलमाख्यातां शक्तिरूपं महेश्वरि ।
ककारादिक्षकारान्ता वर्णास्तु शिवरूपिणः ॥६॥

हे महेश्वरी ! कला समूह (अर्थात् ये १४ स्वर) तथा अनुस्वार (अं) एक विसर्ग (अः) इन १६ को शक्ति स्वरूप कहते हैं । 'क' से 'क्ष' पर्यन्त वर्ण शिवस्वरूप कहलाते हैं ॥६॥

व्यञ्जनत्वात्सदाऽऽनन्देनोच्चारसहिता यतः ।
उच्चरेत्स्वरसंभिन्नांस्तदा देवि न संशयः ॥७॥

हे देवी ! 'क' से 'क्ष' पर्यन्त वर्ण व्यंजन कहलाकर सर्वदा आनन्द (स्वर) के साथ उच्चरित होते हैं, इसी कारण स्वर मिश्रित रूप से व्यजनों का उच्चारण होता है । इसमें सन्देह नहीं है ॥७॥

पञ्चाशद्वर्णरूपेण शब्दाख्यं वस्तु सुव्रते ।
अकारः प्रथमो देवि क्षकारोऽन्तिम इष्यते ॥८॥

हे सुव्रते ! हे देवी ! ५० वर्णरूप वस्तु को शब्द कहते हैं । इसमें 'अकार' प्रथम तथा 'क्षकार' अन्तिम कहा जाता है ॥८॥

अक्षमालेति विख्याता मातृका वर्णरूपिणी ।
शब्दब्रह्मस्वरूपेयं शब्दातीतं तु जप्यते ॥९॥

इन ५० मातृकावर्ण को ही अक्षमाला कहते हैं । यह है शब्द ब्रह्म स्वरूपा लेकिन मैं तो शब्दातीत का जप करता हूँ ॥९॥

शब्दातीतं परं धाम गणनारहितं सदा ।
आत्मस्वरूपं जानीहि हंसस्तु परमेश्वरः ॥१०॥

जो शब्द से अतीत, परम आश्रय, सर्वदा गणना शून्य है उसे आत्मा का स्वरूप जानों । लेकिन हंस है परमेश्वर ॥१०॥

विन्दुत्रयम्

अस्मिन्नेव परे तत्त्वे बिन्दुत्रयविभूषिते ।
मातृकासंपुटत्वेन संस्थितं व्यक्तिमागतम् ॥११॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तीन बिन्दु द्वारा (हं एक विन्दु, सः दो बिन्दु-दोनों मिलाकर तीन बिन्दु) अलंकृत यह परमतत्व, अर्थात् हंसरूप परमतत्व में मातृका वर्ण एकीभूत रूप से स्थित रहते हैं और वहीं से अभिव्यक्त होते हैं ॥११॥

बिन्दुत्रयं प्रवक्ष्यामि बीजरूपं वरानने ।
हकारं बिन्दुरूपेण ब्रह्माणं विद्धि पार्वति ।।१२।।

हे वरानने ! हे पार्वती ! बीजरूप (जगत्बीजरूप) बिन्दुत्रय का वर्णन सुनो बिन्दुरूप हकार को (हं) ब्रह्मा जानो ॥१२॥

सकारः सर्गबिन्दुभ्यां हरिश्चाहं सुरेश्वरि ।
अविनाभावसंस्थानाल्लोके हरिहराविति ।।१३।।

हे सुरेश्वरी ! सर्गबिन्दुद्वय (विसर्ग बिन्दुद्वय) युक्त सकार हरि है तथा मैं (हर) हरि तथा हर अविच्छिन्न आकार होने के कारण जगत् में हरिहर कहलाते हैं ॥१३॥

ब्रह्मबिन्दुर्महेशानि वामा शक्तिर्निगद्यते ।
विश्वं वमति यस्मात्तद्वामेयं परिकीर्तिता ।।१४।।

हे महेशगृहिणी ! बिन्दु को ब्रह्म कहते हैं। शक्ति को वामा कहा गया है। शक्ति समग्र जगत को वमन करती है अर्थात् स्वयं से सृष्टि करती है। तभी वह वामा है ॥१४॥

ज्येष्ठा तु वैष्णवी शक्तिः पालयन्ती जगत्त्रयम् ।
ततो रौद्री ग्रसन्ती तु क्रमेण परमेश्वरी ।।१५।।

ज्येष्ठा वैष्णवी शक्ति त्रिजगत् का पालन करती हैं। परमेश्वरी रौद्री समस्त जगत् का (तीनों लोक का) ग्रास कर लेती हैं ॥१५॥

एवं बिन्दुत्रयं विद्धि गुणत्रयविभूषितम् ।
बिन्दुशब्देन शून्यं तु तथाऽपि गुणसूचकम् ।।१६।।

इस प्रकार से बिन्दुत्रय को सत्व-रजः तथा तमोगुणरूप गुणत्रय भूषित कहते हैं। यद्यपि बिन्दु से शून्य का तात्पर्य विदित होता है लेकिन वह गुणत्रयसूचक है ॥१६॥

इच्छाज्ञानक्रियारूपं भूर्भुवःस्वःस्वरूपकम् ।
पुरत्रयात्मकं विद्धि तत्त्वत्रयमयं प्रिये ।।१७।।

हे प्रिये ! उक्त बिन्दुत्रय को इच्छा-ज्ञान-क्रिया स्वरूप, भूः—भुवः—स्वः स्वरूप, त्रिपुर अर्थात् पृथिवी-अन्तरिक्ष तथा स्वर्ग रूप त्रिगुणात्मक कहते हैं ॥१७॥

बिन्दुत्रये महेशानि सर्वमेतत्प्रतिष्ठितम् ।
अम्बिकाबिन्दुर्भिर्देवि गुणत्रयपरम्परा ।।१८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे महादेवी ! विन्दुत्रय समस्तजगत् में स्थित है। हे देवी! अम्बिका स्वरूप बिन्दुत्रय द्वारा तीनों गुण का विस्तार होता है ॥१८॥

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिश्च बिन्दुत्रयभवा शिवे।
जाग्रत्सत्त्वगुणा ज्ञेया केवलं शक्तिरूपिणी ।।१९।।

हे देवी ! जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति भी इन बिन्दुत्रय से उत्पन्न है। जाग्रदावस्था को केवला, शक्तिरुपिणी, सत्वगुणात्मक कहते हैं ॥१९॥

मनोव्यावृत्तिविस्तारा दुःखदोषाभिलाषिणी।
शिवरूपा सुषुप्तिस्तु सर्वव्यावृत्तिहारिणी ।।२०।।

सुषुप्ति स्वप्नावस्था इन्द्रिय तथा इन्द्रियग्राह्य वाह्य विषय से मन की निवृत्ति का विस्तार स्वरूप है तथा राग-द्वेष-मोह इच्छाकारी है। शिवरूपा सुषुप्ति वाह्य तथा आन्तर, इन्द्रिय तथा मन की निवृत्ति का वहन करती है। सुषुप्ति में वाह्य तथा आन्तर इन्द्रियां, मन तथा उनके विषय निवृत्त हो जाते हैं ॥२०॥

देहधर्मपरित्यक्ता शिवतत्त्वस्वरूपिणी।
तमोगुणमयी कर्म ग्रसन्ती मोक्षरूपिणी ।।२१।।

जो देहधर्म वर्जिता, मोक्षरूपा, शिवतत्वरूपा हैं। वे तमोगुणमयी होने के कारण कर्म को निवृत्त करती हैं ॥२१॥

सुषुप्त्यन्ते जागरादौ स्वप्नावस्था रजोमयी।
उभयैर्लक्षणैर्युक्ता तृष्णालक्षणलक्षिता ।।२२।।

सुषुप्ति के अन्त में अथच जाग्रत के आदि में (अर्थात् सुषुप्ति जाग्रत के सन्धिक्षण में) रजोमयी स्वप्नावस्था जिसे कहा जाता है, वह सत्व तथा तमः रूप लक्षणद्वय द्वारा युक्त तथा तृष्णालक्षण समन्वित है। स्वप्नावस्था में जाग्रद्भाव की वासना के कारण विषय-भोग तृष्णा की अनुवृत्ति होती है ॥२२॥

अवस्थात्रयमेतत्तु कथितं बिन्दुसंभवम्।
एतस्मिन्बैदवे ज्ञाते तुर्यावस्थां शृणु प्रिये ।।२३।।

हे प्रिय ! बिन्दुत्रय से उत्पन्न ये तीनों अवस्थायें (जाग्रद-स्वप्न-सुषुप्ति) कही गयीं। यह बिन्दुत्रयजनित अवस्थायें आलोचित हो गयीं। अब तुरीयावस्था को सुनो ॥२३॥

निद्रादौ जागरस्यान्ते स्फुरत्तामात्रलक्षणा।
अवस्था पूर्णतां प्राप्ता तुर्यावस्था परा कला ।।२४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

निद्रा के आदि में अथच जाग्रत के अन्त में जो प्रकाशमात्र स्वरूप अवस्था है, वह पूर्णत्व को जब प्राप्त हो जाती है, तब पूर्णता युक्त तुरीयअवस्था होती है। इसे पराकला भी कहते हैं ॥२४॥

भावाभावपरित्यक्ता गुणातीता सुनिश्चला।
इयमेव यदा देवि मनसा प्राप्यते सदा ॥२५॥

हे देवी ! भावतीत, भाव तथा अभाव रहित अतिशय निश्चल तुरीयावस्था मन से प्राप्त होती है ॥२५॥

उन्मनी नाम सद्रूपा ज्ञानवल्ली चिदात्मिका।
बिन्दुत्रयेण नादेन प्रसृताऽऽनन्दरूपिणी ॥२६॥
बिन्दुत्रयसमायोगात् त्रिपुरानामरूपिणी।
वर्णातीता सवर्णाऽपि केवलं ज्ञानचित्कला ॥२७॥

तब उन्मनी नामक सद्रूप चिदात्मक ज्ञानलता के बिन्दुत्रयात्मक नाद के द्वारा प्रसार लाभ करने पर आनन्दरूपा अवस्था उद्भूत होती है। वह अवस्था विन्दुत्रय के सम्यक् योग के कारण त्रिपुरारुपिणी वर्णयुक्त होकर भी वर्णातीत केवल ज्ञानचैतन्य कलारूप हैं ॥२६-२७॥

एनां विद्यां समाराध्य सर्वज्ञत्वं मयि प्रिये।
उपास्यते मया देवि त्रिपुरा चाक्षमालया ॥२८॥

हे प्रिये ! (अक्षमाला तथा वर्णातीत स्वरूपविद्या) इस विद्या की सम्यक् अराधना करके ही मुझमे सर्वज्ञत्वगुण आया है। हे देवी ! मैं अक्षमाला से त्रिपुरा की अराधना करता हूँ ॥२८॥

॥ इति श्रीमज्ज्ञानार्णवे नित्यातन्त्रे स्वरूपज्ञेयमात्रं नाम प्रथमः पटलः ॥१॥

प्रथम पटल समाप्त।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वितीयः पटलः

(बालान्यासविधि-त्रयक्षरीविद्या, प्राणायाम, भूतशुद्धि, ऋष्यादिन्यास, बाणन्यास, सर्वाङ्गन्यास, नवयोन्यङ्कितन्यास)

श्री देव्युवाच–

त्रिपुरा परमेशान ज्ञानमार्गेण सूचिता ।
तत्त्वरूपेण कथय यद्यहं तव वल्लभा ।।१।।

श्री देवी कहती हैं— हे परमेश्वर ! आपने ज्ञानमार्ग में त्रिपुरा सम्बन्धित वर्णन किया है । यदि मैं आपकी प्रिया हूँ, तब तत्वरूप से (यथार्थतः) त्रिपुरा का वर्णन करिये ।

त्रिपुरायाः प्रकारस्तु मन्त्रभेदश्च किंविधः ।
सर्वं तच्छ्रोतुमिच्छामि येन सौभाग्यमाप्नुयाम् ।।२।।

त्रिपुरा का प्रकार (भेद) तथा मन्त्रभेद क्या है ? मैं यह सब सुनना चाहती हूँ, जिससे सौभाग्य प्राप्त हो ।।२।।

ईश्वर उवाच–

त्रिपुरा त्रिविधा देवि बालां तु प्रथमं शृणु ।
यया विज्ञातया देवि साक्षात्सुरगुरुर्भवेत् ।।३।।

ईश्वर (महादेव) कहते हैं— हे देवी ! त्रिपुरा तीन प्रकार की है । प्रथम है बाला त्रिपुरा । इनका वर्णन (पहले) सुनो । हे देवी ! इन बाला त्रिपुरा को जानकर व्यक्ति साक्षात् देवगुरु हो जाता है ।।३।।

सूर्यस्वरं समुच्चार्य बिन्दुनादकलान्वितम् ।
स्वरान्तं पृथिवीयुक्तं तूर्यस्वरविभूषितम् ।।४।।
बिन्दुनादकलाक्रान्तं सर्गवान्भृगुरव्ययः ।
शक्रस्वरसमोपेतो विद्येयं त्र्यक्षरी मता ।।५।।

सूर्यस्वर अर्थात् द्वादश स्वर (ऐ)' का सम्यक् उच्चारण करके उसे बिन्दु तथा नादकला से युक्त करे । अर्थात् (ँ) चन्द्रबिन्दु लगाकर 'ऐं' उच्चारण करके स्वरान्त (क) पृथिवी (ल्) युक्त करें यह होगा 'क्ल' । इसे तूर्यस्वर अर्थात् चतुर्थ स्वर 'ई' से युक्त होकर नादबिन्दु कलाक्रान्त करे (ँ) लगाये । अब होगा क्लीं । तदनन्तर सर्गवान् अर्थात् विसर्गयुक्त भृगु (स) पर शक्र स्वर (१६ वां स्वर) औ लगाये इससे होगा स+:+औ=सौः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अब त्र्यक्षर विद्या का मन्त्रोद्धार होगा। यथा— "ऐं क्लीं सौः"। यह बाला त्रिपुरा का मन्त्र है ॥४-५॥

गङ्गातरङ्गकल्लोलवाक्पटुत्वप्रदायिनी ।
महासौभाग्यजननी महासारस्वतप्रदा ॥६॥

यह त्र्यक्षरी विद्या गंगा की तरंग के अविच्छिन्न कल्लोल (शब्दों) की तरह वाक्पटुत्व प्रदान करके महान् सौभाग्य प्रदात्री है ॥६॥

महासौन्दर्यसुभगा महामृत्युविनाशिनी ।
ब्रह्मविष्णुसुरेन्द्रादिवन्दिता पापहारिणी ॥७॥

यह विद्या महासौन्दर्यरूप ऐश्वर्यवाली तथा महामृत्यु का विनाश करने वाली, ब्रह्मा-विष्णु तथा इन्द्रादि देवगण द्वारा वन्दिता तथा पाप नाशिनी है ॥७॥

सर्वतीर्थमयी देवी स्वर्णरत्नादिदायिनी ।
सर्वलोकमयी देवी सर्वलोकवशंकरी ॥८॥

यह समस्त तीर्थ स्वरूप है। यह देवी मन्त्र तथा मन्त्र देवता में ऐक्य होने के कारण मन्त्र भी देवी ही है। स्वर्णरत्नादि प्रदान करती हैं। ये भूरादि समस्त लोकस्वरूपा हैं। ये समस्त प्राणीगण को वश में करती है (इनके मन्त्र का जप जगत् वश्यकर है) ॥८॥

सर्वक्षेत्रमयी देवी सर्वकार्यार्थसाधिका ।
महामोक्षप्रदा शान्ता महामुक्तिप्रदायिनी ॥९॥

ये देवी (मन्त्र) समस्त तीर्थस्वरूप अथवा समस्त क्षेत्र स्वरूप हैं। (यह शरीर भं क्षेत्र है। वह भी उनका रूप है)। ये देवी सभी प्रयोजन साधित करती हैं। ये महामोक्ष (इसका लौकिक तात्पर्य बन्धन मुक्ति भी है) प्रदान करती है। ये सभी उपद्रवों का प्रशमन करने के कारण शान्ता है। ये महामुक्ति तथा केवल मुक्तिदायिनी भी हैं ॥९॥

वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
वर्णितुं नैव शक्येयं विद्येयं त्र्यक्षरी· परा ॥१०॥

इन त्र्यक्षरी पराविद्या (महामन्त्र) का वर्णन सहस्रकोटि मुख द्वारा, शतकोटि जिह्व द्वारा नहीं किया जा सकता ॥१०॥

त्रिपुरा त्र्यक्षरी विद्यागुणाः–

पञ्चवक्त्रेण जिह्वाभिः पञ्चभिर्नैव शक्यते ।
वाग्भवेनेन्दुमहसा वागीशत्वप्रदायिनी ॥११॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस त्रिपुराविद्या के महात्म्य का वर्णन भगवान सदाशिव अपने पांच मुख तथा पांच जीभ से भी नहीं कर सकते। इस मन्त्र का जो प्रथम बीज 'ऐं' है, वह वागीश्वरत्व प्रदान करता है ॥११॥

कामराजेन बीजेन शक्रगोपस्फुरत्त्विषा।
त्रैलोक्यं मोहयन्तीयं शक्तिबीजेन सुव्रते ॥१२॥

इस मन्त्र में स्थित कामराज बीज (क्लीं) इन्द्रगोप (वीर बहूरी नामक प्राणी) के समान प्रभायुक्त है। इससे यह विद्या उद्भासित होती रहती हैं। तथा इनके तृतीय बीज "सौः" से यह त्रिलोकी मोहित हो जाती है। हे सुव्रते! यह विद्या शक्ति बीज 'ह्रीं' से भी त्रैलोक्य मोहन करती है। 'ह्रीं' बीज त्रिपुरा का एक अन्य मन्त्र है। उसके साधन का भी फल है त्रैलोक्य मोहन ॥१२॥

स्फुरत्सुवर्णवर्णेन सौभाग्यं तस्य मन्दिरे।
एतस्याः साधनं देवि कथयामि समासतः ॥१३॥

शक्ति बीज के जपकाल में यदि ध्यानकाल में यह मंत्र सुवर्ण के समान मानस नेत्रों के सामने लक्षित होता है। (अथवा स्वप्नकाल में भी लक्षित हो, यह भी अर्थ लिया जा सकता है), तब साधक के गृह में सौभाग्य का उदय होगा। हे देवी! इन त्रिपुरा विद्या का साधन संक्षेप में कहता हूँ ॥१३॥

प्रातरुत्थाय देवेशि ब्रह्मरन्ध्रे निजं गुरुम्।
स्मृत्वा देवीमयो भूत्वा तत्प्रभापटलामलः ॥१४॥

हे देवेश्वरी! प्रातः शय्यात्याग करके ब्रह्मरन्ध्र में अपने गुरु का स्मरण करके देवीमय (त्रिपुरा चिन्तन में तन्मय) होकर उन देवी की चिन्तन जनित छटा से निर्मल हो जाये। (तन्मयता से चिन्तन करने वाला ध्येय वस्तु के गुण से संक्रामित हो जाता है) ॥१४॥

त्रिपुराबालायाः साधनम्—

स्नानकर्म ततः कुर्यान्मूलमन्त्रं स्मरन्बुधः।
त्रिवारमञ्जलौ वारि मन्त्रयित्वा तु मूर्धनि ॥१५॥
निक्षिपेत् परमेशानि त्रिधा चाऽऽचम्य तर्पयेत्।
त्रिधा च प्रोक्षयेद्देहं सूर्यायार्घं निवेदयेत् ॥१६॥

तब बुद्धिमान व्यक्ति (जो ज्ञान हेतु तत्पर है) मूलमन्त्र (त्रैपुरमन्त्र) स्मरण करके स्नान करे। अंजलि में जल रखकर उसे इसी त्र्यक्षर मन्त्र से मंत्रित करके मस्तक पर छोड़े। ऐसा तीन बार करे ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे परमेश्वरी ! इस प्रकार शिरपर जल निःक्षेप करके तीन आचमनोपरान्त तीन बार तर्पण कर्त्तव्य है। तीन बार देह प्रोक्षण करे (विशेष मुद्रा से शरीर पर जल निक्षेप)। तत्पश्चात् सूर्य को अर्घ्य देना चाहिये ॥१५-१६॥

मूलमन्त्रेण देवेशि सूर्यमन्त्रेण वा प्रिये।
शिवबीजं वह्निसंस्थं वामनेत्रविभूषितम् ।।१७।।
बिन्दुनादसमायुक्तं हंसःपदमथोच्चरेत् ।
अनेन मनुना देविं सूर्यायार्घ्यं निवेदयेत् ।।१८।।

हे देवेश्वरी ! हे प्रिये ! मूलमन्त्र अथवा सूर्यमन्त्र से अर्घ्य देना चाहिये। सूर्य मन्त्र इस प्रकार से है–शिवबीज अर्थात् 'ह्' को वह्नि संस्थ (र) करे। इस वामनेत्र से (ई) विभूषित करे। तदनन्तर बिन्दुनाद युक्त करे। अर्थात् चन्द्र बिन्दु लगायें। तत्पश्चात् 'हँसः' पद का उच्चार करे। इससे 'ह्रीं हंसः' मन्त्र का उद्धार होगा। इसी से सूर्यार्घ्य प्रदान किया जाता है ॥१७-१८॥

यथाशक्त्या जपेन्मन्त्रं गायत्रीं परमेश्वरीम् ।
मूलविद्याद्यमुच्चार्य वागीश्वरि च विद्महे ।।१९।।
द्वितीयं बीजमुच्चार्य कामेश्वरि च धीमहि।
तृतीयं बीजमुच्चार्य तन्नः शक्तिः प्रचोदयात् ।।२०।।

तदनन्तर यथाशक्ति परमेश्वरी गायत्री (त्रिपुरा का गायत्री मन्त्र जपे। भूतविद्या के आद्य अक्षर (ऐं) कहकर 'वागीश्वरि विद्महे' कहे। तदनन्तर द्वितीय बीज (क्लीं) का उच्चारण करके कहे 'कामेश्वरी विद्महे'। तदनन्तर तृतीय बीज अर्थात् 'सौः' का उच्चारण करके कहे 'तन्नो शक्तिः प्रचोदयात्'। बाला गायत्री होगी 'ऐं वागीश्वरि विद्महे, क्लीं कामेश्वरि धीमहि, सौः तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्' ॥१९-२०॥

यथाशक्त्या जपेत्पश्चाद्यागमण्डपमाविशेत् ।
धातारं च विधातारं गङ्गां च यमुनां तथा ।।२१।।
द्वारश्रियं देहलीं च पुरुषं वास्तुसंज्ञकम् ।
संपूज्य परमेशानि पूजयेदासनं बुधः ।।२२।।

हे परमेश्वरी ! बाला त्रिपुरा की पूर्वोक्त गायत्री का यथाशक्ति जप करके पूजा मण्डल में प्रवेश करके धाता-विधाता गंगा-यमुना-द्वार लक्ष्मी, देहली (दरवाजा का पार्श्व) तथा वास्तु पूजा करके अभिज्ञ मन्त्री व्यक्ति आसन का पूजन करे ॥२१-२२॥

पराबीजं समुच्चार्य ततश्चाऽऽधारपूर्वकम् ।
शक्तीतिपदमालिख्य कमलासनमालिखेत् ।।२३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ङेन्तं नमःपदं कृत्वा चाऽऽसनस्य मनुः प्रिये ।
उपविश्य ततो देवि भूतान् संत्रासयेद्बुधः ।।२४।।

हे प्रिय ! हे देवी ! पराबीज अर्थात् 'ह्रीं' का उच्चारण करके तदनन्तर 'आधार' के अनन्तर 'शक्ति' पद कहे अर्थात् "आधार शक्ति" कह कर इसे चतुर्थ्यन्त कहे अर्थात् आधार शक्तये'। तदनन्तर कमलासन चतुर्थ्यन्त लगाकर नमः लगाये। मन्त्रोद्धार होगा "ह्रीं" आधार शक्तिये कमलासनाय नमः"। इस मन्त्र से आसन पूजन करे। तदनन्तर आसन पर बैठकर बुद्धिमान व्यक्ति भूतापसारण करे (यह 'अपसर्पन्तु ये भूता' इत्यादि मन्त्र से होगा) ।।२३-२४।।

प्राणायामः भूतशुद्धिश्च–

भूतशुद्धिविधिं कुर्यात्प्राणायामत्रयेण तु ।
वायुबीजं समुच्चार्य षट्कोणादागतं महत् ।।२५।।

हे महेश्वरी ! तदनन्तर प्राणायाम क्रम से (प्राणायाम से) भूतशुद्धि करे। षट्कोण अर्थात् स्वाधिष्ठान चक्र से आ रहे महत् वायुबीज (यं) का उच्चारण करके आसन पर सम्यक्तः बैठकर वामनासिका के द्वारा कुंभक करे ।।२५।।

कृष्णवर्णं महेशानि शोषयेदेनसः तनुम् ।
आसने सम्यगासीनो वामेनाऽऽपूर्य चोदरम् ।।२६।।
कुम्भकेन त्रिरावृत्त्या दक्षिणेन च रेचयेत् ।
कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठेर्यन्नासापुटधारणम् ।।२७।।
प्राणायामः स विज्ञेयस्तर्जनीमध्यमे विना ।
वामकुक्षिस्थितं पापपुरुषं कज्जलप्रभम् ।।२८।।
ब्रह्महत्या शिरो यस्य स्वर्णस्तेयं भुजद्वयम् ।
सुरापानहृदा युक्तं गुरुतल्पकटिद्वयम् ।।२९।।
तत्संसर्गिपदद्वन्द्वमङ्गप्रत्यङ्गपातकम् ।
उपपातकरोमाणं कृष्णश्मश्रुविलोचनम् ।।३०।।

उस वायुबीज द्वारा काले रंग के पापपुरुष की देह का शोषण किया जा रहा है, यह भावना करनी चाहिये। तदनन्तर कुंभक करके दक्षिण नासिका से वायु रेचन करना चाहिये। इस प्रकार तीन बार आवृत्ति करे। अर्थात् वाम नासिका से पूरक, उभय नासिका को बन्द करके कुंभक, तदनन्तर दक्षिण नासा द्वारा–वायुरेचन तदनन्तर पुनः नासा द्वारा–वायु पूरण तदनन्तर दोनों नासिका बन्द करके कुंभक तदनन्तर वाम नासा द्वारा वायुरेचन, तदनन्तर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वामनासा से पूरण उभय नासा द्वारा कुंभक तथा दक्षिण नासा से रेचन। कुंभक को कनिष्ठा एवं अनामिका द्वारा वाम नासिका को तथा अंगूठे से दक्षिण नासा बन्द करके करना होगा। तर्जनी तथा मध्यमा का वर्जन करना होगा। यही प्राणायाम है। पूरक काल में वायु से पापपुरुष को सुखाकर कुंभक से उसके शरीर को दग्ध करने की भावना करनी होगी। यह पापपुरुष उदर के वामभाग में रहता है। उसका शरीर कज्जलवत् है। ब्रह्महत्या उसका मस्तक है। स्वर्ण चोरी उसके दोनो बाहु हैं। मद्यपान उसका हृदय है। गुरुपत्नी गमन उसका कटिद्वय है। गुरुपत्नी संसर्ग ही उसका पदद्वय है। अन्य पाप उसके अंग-प्रत्यङ्ग हैं। उसकी रोमावलि उपपातक रूप है। यही उपपातक उसके दाढ़ी मूँछ तथा कृष्णवर्ण नेत्र है ॥२६-३०॥

खड्गचर्मधरं क्रुद्धं कुक्षौ पापं विचिन्तयेत्।
शोषयेद्वायुबीजेन देहं च परमेश्वरि ।।३१।।
पापेन सहितं शुष्कं कृत्वा तेन क्रमेण हि।
वह्निबीजेन संदग्धं पापेन सहितं शिवे ।।३२।।
पापेन रहितं पश्चात्प्लावयेदमृताम्बुना।
प्राणप्रतिष्ठामन्त्रेण जीवं देहे निधापयेत् ।।३३।।
मुखवृत्तं समुच्चार्य हंसस्तु विपरीततः।
उच्चरेत्परमेशानि विद्येयं त्र्यक्षरी भवेत् ।।३४।।
प्राणप्रतिष्ठामन्त्रोऽयं सर्वकर्माणि साधयेत्।
तेनैव विधिना देवि स्थिरी कुर्यान्निजां तनुम् ।।३५।।

यह पापपुरुष खड्ग तथा ढ़ाल युक्त तथा क्रोध से भरा है। इस पापपुरुष का चिन्तन उदर मध्य में करे। (जो प्रवृत्ति व्यक्ति से नाना पापकर्म कराती है, वही पापपुरुष है)। हे परमेश्वरी! (यं) वायुबीज से उक्त पाप पुरुष का तथा निजदेह का शोषण करे। हे शिवे! पाप के साथ स्वदेह को भी शुष्क करके इसी क्रम से वह्निबीज (रं) से पाप के साथ अपने देह को दग्ध करने की भावना करके देह को पापरहित करना चाहिये।

अब पापरहित इस देह को अमृत जल से (सहस्रार से क्षरित अमृत से) प्लावित करना चाहिये। तदनन्तर प्राण प्रतिष्ठा मन्त्र से ("आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः अमुकदेवतायाः प्राणा इह प्राणाः" इत्यादि से) देह में जीवात्मा को निहित करे।

हे परमेश्वरी! मुखवृन्त अर्थात् 'हौं' का उच्चारण करके 'हंसः' का विपरीत भाव से "हौं हंसः' उच्चारण करे। यह विद्या इस प्रकार के अक्षर की होती है। हे देवी! यह प्राण प्रतिष्ठामन्त्र सर्वकर्म साधक है। इस विधि से अपनी देह को स्थिर करे ॥३१-३५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऋष्यादिन्यास–

विशुद्धदेहो देवेशि न्यासं कुर्यात्समाहितः ।
ऋषिरस्य महेशानि दक्षिणामूर्तिरव्ययः ।।३६।।

हे देवाधीश्वरी ! भूतशुद्धि प्राणायामदि से विशुद्ध होकर एकाग्रमन से ऋष्यादिन्यास करे । हे महेश्वरी ! त्रिपुलाबाला मन्त्र के ऋषि हैं अव्ययदक्षिणामूर्त्ति ।।३६।।

न्यसेच्छिरसि पूज्यत्वात्पङ्क्तिश्छन्दो मुखे प्रिये ।
देवता हृदये बाला त्रिपुरा परमेश्वरी ।।३७।।

इसका छन्द है पंक्ति, त्रिपुराबाला देवता हैं । इसका बीज है ऐं । शक्ति है सौः । कीलक है क्लीं । सर्वाभीष्ट सिद्धि हेतु इसका विनियोग होता है । इसके न्यास में– दक्षिणामूर्त्ति नमः–शिरसि । पङ्क्तिश्छन्दसे नमः–मुखे, त्रिपुराबालादेवतायैनमः-हृदिः इत्यादि ।।३७।।

बीजं तु वाग्भवं शक्तिस्तार्तीयं कीलकं तथा ।
कामराजं महेशानि छन्दो न्यास उदाहृतः ।।३८।।

इस मन्त्र का बीज है ऐं । शक्ति है सौः । कीलक है कामराज क्लीं । हे महेशानी ! इस प्रकार से छन्दोन्यास कहा गया है । (ऋष्यादि न्यास) । मस्तक में ऋषि, मुख में छन्दः, हृदय में देवता, मूलाधार में बीज, पाद में शक्ति, सर्वांग में कीलक न्यास करे ।।३८।।

(यहाँ शक्ति को तार्त्तीय बीज कहा है अर्थात् त्र्यक्षरमन्त्र का तृतीय बीज जो सौः है । जबकि कुछ आधुनिक टीकाकारों ने भ्रमवश क्लीं को शक्ति कह दिया है । जबकि क्लीं बीज कीलक है क्योंकि तंत्रान्तर वचन है कि "ऐं क्लीं सौः इत्यस्य मन्त्रस्य दक्षिणामूर्त्तिः ऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः त्रिपुरा बाला देवता ऐं बीजं सौः शक्तिः क्ली कीलकं पुरुषार्थ सिद्धये विनियोगः)

नाभ्यादिपादपर्यन्तं गलादानाभि चापरम् ।
मूर्धादिगलपर्यन्तं त्र्यक्षरीं विन्यसेत्क्रमात् ।।३९।।

तदनन्तर बीज न्यास करे । अर्थात् 'ऐं क्लीं सौः' मन्त्र कहते-कहते नाभि से पाद पर्यन्त, गले से नाभिपर्यन्त तथा मस्तक से गलापर्यन्त क्रमिक न्यास करे ।।३९।।

अर्थात् नाभि से पाद पर्यन्त 'ऐं' से, गले से नाभि तक 'क्लीं' से तथा मस्तक से गले तक 'सौः' से न्यास करे ।।३९।।

वामपाणितले चैक दक्षपाणितले तथा ।
उभयोः संपुटे विद्यां त्रिबीजां विन्यसेत्प्रिये ।।४०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तदनन्तर वामहस्त तल में 'ऐं' से एक बार, दक्षिण हस्त तल में एक बार तथा उभय हस्त में तीन अक्षर बीजयुक्त (हांथों की अंजलि बनाकर) न्यास करे। यथा 'ऐं नमः वामकरे। क्लीं नमः दक्षिण करें, सौः नमः उभयः करयोः" । हे प्रिये ! यह त्रिबीज का दूसरा न्यास है ॥४०॥

पञ्च बाणान्क्रमेणैव कराङ्गुलिषु विन्यसेत्।
अङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं क्रमेण परमेश्वरि ।।४१।।

हे परमेश्वरि ! अगुष्ठ से कनिष्ठा पर्यन्त हस्तांगुलियों से क्रमशः पञ्चबाणन्यास करे। यथा–

अङ्गुष्ठद्वये — द्रां क्षोभिण्यै नमः ।
तर्जनीद्वये — द्रीं द्राविण्ये नमः ।
मध्यमाद्वये — क्लीं आकर्षिण्ये नमः ।
अनामिकाद्वये — ब्लूं वशीकरण्यै नमः ।
कनिष्ठाद्वये — सः उन्मादिन्यै नमः ।

इस प्रकार न्यास को बाणन्यास कहा गया है। आगे के श्लोक से इसका तात्पर्य ज्ञात होगा ॥४१॥

थान्तद्वयं समालिख्य वन्हिसंस्थ क्रमेण हि।
मुखवृत्तेन नेत्रेण वामेन परिमण्डितम् ।।४२।।
बाणद्वयमिदं प्रोक्तं मादनं भूमिसंस्थितम् ।
चतुर्थस्वरबिन्द्वाढ्यं नावरूपं वरानने ।।४३।।
फान्तं क्रमसमायुक्तं वामकर्णविभूषितम् ।
बिन्दुनादसमायुक्तं सर्गवांश्चन्द्रमाः प्रिये ।।४४।।

थकारान्त अर्थात् द्कार। क्रम से दो दकार; वन्हि संस्थ अर्थात् रकार युक्त करके (द्र)। प्रथम 'द्र' को मुखवृत्त (आ) का योग करे यह होगा 'द्रा'। द्वितीय 'द्र' में वामनेत्र (ई) का योग करके अनुस्वार से भूषित करे। यह होगा 'द्रीं'। अब ये दो बाण कहे गये— द्रां तथा द्रीं। तदनन्तर मादन (क), भूमि (ल), यह 'ल' संस्थित हो 'क' पर अर्थात् 'क्ल'। इसे चतुर्थ स्वर (ई) से युक्त करके चन्द्रबिन्दु युक्त करे। यह होगा क्लीं। तदनन्तर फान्त अर्थात् 'फ' के बाद बाला 'ब' लेकर उसे लकार युक्त करके उसमें वामकर्ण (ऊ) लगाकर चन्द्र बिन्दु युक्त करे। यह होगा 'ब्लूं'। हे प्रिये ! तदनन्तर विसर्ग युक्त (:) चन्द्रमा (स) लिखे अर्थात् 'सः'। (यहां सब बीज का उद्धार कहा है। सम्पूर्ण बाणन्यास आगे कहते है) ॥४२-४५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्च बाणा महेशानि नामानि शृणु पार्वति ।
क्षोभणद्रावणौ देवि तथा कर्षणसंज्ञकः ।।४५।।
वश्योन्मादौ क्रमेणैव नामानि परमेश्वरि ।
कामास्तत्रैव विज्ञेयास्तेषां बीजानि संशृणु ।।४६।।
पराबीजं मध्यबाणं वाग्भवं परमेश्वरि ।
तूर्यबाणं ततश्चैव स्त्रीबीजं च क्रमात्प्रिये ।।४७।।
पञ्च कामा इमे देवि नामानि शृणु वल्लभे ।
काममन्मथकन्दर्पमकरध्वजसंज्ञकाः ।।४८।।
मीनकेतुर्महेशानि पञ्चमः परिकीर्तितः ।
एतान्विन्यस्य देवेशि करन्यासं ततः परम् ।।४९।।

हे महेश्वरी ! हे पार्वती ! हे परमेश्वरी ! अब पञ्चबाण का नाम क्रमशः सुनो। क्षोभण, द्रावण, आकर्षण, वश्य तथा उन्माद। अतएव पञ्चबाण न्यास इस प्रकार से होगा—

अंगुष्ठद्वये — द्रां क्षोभिण्यै नमः ।

तर्जनीद्वये — द्रीं द्राविण्यै नमः ।

मध्यमाद्वये — क्लीं आकर्षिण्यै नमः ।

अनामिकाद्वये — ब्लूं वशीकरण्यै नमः ।

कनिष्ठाद्वये — सः उन्मादिन्यै नमः ।

हे परमेश्वरी ! हे प्रिये ! पराबीज (ह्रीं), मध्यबाण (ऐं), वाग्भव (ऐं) तूर्यबाण (ब्लूं), स्त्री बीज (स्त्रीं) यह बीज क्रम है। हे प्रिये ! ये ही पञ्चकाम हैं। इनके नाम सुनो। हे महेश्वरी ! नाम हैं–काम, मन्मथ, कन्दर्प, मकरध्वज, मीनकेतु। हे देवी ! पञ्चकाम न्यास करके तब करन्यास करे। न्यास इस प्रकार कहते हैं—

अंगुष्ठ द्वये — ह्रीं कामाय नमः ।

तर्जनीद्वये — क्लीं मन्मथाय नमः ।

मध्यमाद्वये — ऐं कन्दर्पाय नमः ।

अनामिकाद्वये — ब्लूं मकरध्वजाय नमः ।

कनिष्ठाद्वये — स्त्रीं मीनकेतवे नमः ।।४५-४९।।

मूलविद्यां द्विरावृत्त्या सर्वाङ्गुलितलेषु च ।
षडङ्गक्रमयोगेन मातृकां विन्यसेत्ततः ।।५०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करन्यास कैसे करे ? मूल विद्या अर्थात् त्र्यक्षर मन्त्र (ऐं क्लीं सौः) की दो बार आवृत्ति होगी, यथा अंगुष्ठ, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा तथा करतलपृष्ठ, इन छः क्रम से करन्यास करे। मूलविद्या है 'ऐं क्लीं सौः। इसकी दो आवृत्ति से करन्यास होगा। यथा—

ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः — दोनो अंगुष्ठ

क्लीं तर्जनिभ्यां नमः — तर्जनीद्वय

सौः मध्यमाभ्यां षट् — मध्यमाद्वय

ऐं अनामिकाभ्यां हुं — अनामिकाद्वय

क्लीं कनिष्ठाभ्यां वौषट् — कनिष्ठाद्वय

सौः करतल करपृष्ठाभ्यां अस्त्रायफट्–करतल तथा करपृष्ठ।

तदनन्तर षड्ग क्रम से मातृका न्यास करें ॥५०॥

मातृकां शृणु देवेशि न्यासात्पापनिकृन्तनीम्।
ऋषिर्ब्रह्माऽस्य मन्त्रस्य गायत्रं छन्द उच्यते॥५१॥
देवता मातृका देवि बीजं व्यञ्जनसंचयः।
शक्तयस्तु स्वरा देवि षडङ्गन्यासमाचरेत्॥५२॥

हे देवेशी ! मातृका न्यास सुनो। इसके करने से सर्वपाप समूह ध्वस्त हो जाते हैं। इसके ऋषि है ब्रह्मा। छन्दः है गायत्री। मातृका देवता, बीज है व्यञ्जन समूह, शक्ति हैं सर्वस्वर। हे देवी ! मातृकान्यास के पूर्व षडङ्गन्यास (हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र, करतल पृष्ठ अस्त्र) न्यास करे। उक्त श्लोक द्वय के आधार पर मातृका का ऋष्यादि न्यास यह है—अस्य मातृकामन्त्रस्य ब्रह्मऋषिः गायत्री छन्दः मातृका सरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः अव्यक्तं कीलकं। सर्वाभीष्टसिद्धये लिपिन्यासे विनियोगः'' (इसमें अव्यक्तं कीलकं सर्वाभीष्टसिद्धये लिपिन्यासे'' यह ज्ञानार्णव में नहीं लिखा है। लेकिन यह अन्य तंन्त्रो में होने के कारण इसे मानना उचित है)।

तदनन्तर शिरसि — ब्रह्मणे ऋषये नमः।

मुखे — गायत्रीच्छन्दसे नमः।

हृदये — मातृका सरस्वत्यै नमः।

मूलाधारे — हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः।

पादयोः — स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः।

सर्वाङ्गे — अव्यक्त कीलकाय नमः ॥५१-५२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अंआंमध्ये कवर्गं च इं ई मध्ये चवर्गकम्।
उं ऊं मध्ये टवर्गं च एं ऐं मध्ये तवर्गकम्।।५३।।
ओं औ मध्ये पवर्गं च क्रमेण परमेश्वरि।
अनुस्वारविसर्गान्ते यशवर्गौ सलक्षकौ।।५४।।
हृदयं च शिरा देवि शिखां च कवचं ततः।
नेत्रमस्त्रं न्यसेन्ङेन्तं नमःस्वाहाक्रमेण तु।।५५।।
वषड्हुंवौषडन्तं च फडन्तं योजयेत्प्रिये।
षडङ्गोऽयं मातृकायाः सर्वपापहरः स्मृतः।।५६।।

अब मातृका का षड़ङ्गन्यास कहते हैं।

अं आं के मध्य मे क ख ग घ ङ
इ ई ,, ,, च छ ज झ ञ
उ ऊ ,, ,, ट ठ ड ढ़ ण
एं ऐं ,, ,, त थ द ध न
ओ आ ,, ,, प फ ब भ म

तदनन्तर अनुस्वार तथा विसर्ग के मध्य में (बिना किसी स्वरवर्ण का आश्रय लिये अनुस्वार तथा विसर्ग का उच्चारण नहीं हो सकता इसलिये) पहले अं तथा अ: के मध्य में 'य र ल व' तथा 'श ष स ह' एवं 'ल क्ष' क्रम से लिखकर यथाक्रम, हृदय, शिरः, शिखा, कवच, नेत्र तथा अस्त्र (करतल तथा कर पृष्ठ) का न्यास करे। यह हृदय प्रभृति शब्द चतुर्थी विभक्त्यन्त होंगे। हृदय न्यासान्त में नमः, शिर न्यासान्त में स्वाहा, शिखा में वषट्, कवच में हूँ, नेत्र में वौषट् तथा अस्त्र में फट् योजित करे। हे प्रिये ! यही मातृका का षड़ङ्ग है। यह सभी शास्त्र में कहा गया है। इन चारों श्लोक से जो मातृका षड़ंग उद्धृत होता है, वह है—

अं कं खं धं ङं आं — हृदयायनमः।
इं चं छं जं झं ञं ईं — शिर से स्वाहा।
उं टं ठं डं ढ़ं णं ऊं — शिखायै वषट्।
एं तं थं दं धं नं ऐं — कवचाय।
ओं पं फं बं भं मं औं — नेत्रत्रयाय वौषट।
अं र्यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं — (करतल कर पृष्ठाभ्यां अस्त्रायफट्)

जो भी ज्ञानार्णव में लिखा है उसमें केवल 'अस्त्राय फट्' ही है। यहां 'करतल कर पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्' यह तन्त्रान्तर का वचन है ॥५३-५६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्व्यष्टपत्राम्बुजे कण्ठे स्वरान्षोडश विन्यसेत्।
द्वादशच्छदहृत्पद्मे कादीन्द्वादश विन्यसेत्।।५७।।

अब मातृकान्यास कहते है। १६ दलयुक्त पद्म में अर्थात् कण्ठदेश के १६ दल पद्म में १६ स्वर विन्यास करे। द्वादश दलयुक्त हृत्पद्म में ककार प्रभृति १२ वर्ण का न्यास करे।।५७।।

दशपत्राम्बुजे नाभौ डकारादीन्यसेद्दश।
षट्पत्रे लिङ्गसंस्थे च बकारादीन्यसेच्च षट्।।५८।।

नाभि में १० दल पद्म में डकार प्रभृति १० वर्णो का न्यास करे। लिंगस्थ षट्दल पद्म में बकार प्रभृति ६ वर्ण न्यस्त करे।।५८।।

आधारे चतुरो वर्णान्यसेद्वादींश्चतुर्दले।
हक्षौ भ्रूमध्यगे पद्मे द्विदले विन्यसेत्प्रिये।।५९।।

आधार के गुह्य देश में अर्थात् मूलाधारस्थ चतुर्दल में वकार प्रभृति ४ वर्णो का न्यास करे। भ्रूमध्य के द्विदल पद्म में 'ह' तथा 'क्ष' इन दो वर्णो का विन्यास करे।।५९।।

मातृकान्यास क्रम—

कण्ठस्थ षोडशदल में—अं नमः, आं नमः, इं नमः, ई. नमः, उं नमः, ऊं नमः, ऋं नमः, ॠं नमः, ऌं नमः, ॡं नमः, एँ नमः, ऐं नमः, ओं नमः, औं नमः, अं नमः, अः नमः।

हृदयस्थ द्वादशदल में—कं नमः, खं नमः, गं नमः, घं नमः, ङ नमः। चं नमः, छं नमः, जं नमः, झं नमः, ञ नमः टं नमः, ठं नमः।

नाभि के दशदल में—डं नमः, ढँ नमः, णं नमः तं नमः, थं नमः दं नमः, धं नमः, नं नमः, पं नमः, फं नमः।

लिंगमूल के षट्दल में—बं नमः। भं नमः, मं नमः, यं नम, रं नमः, लं नमः।

मूलाधार के चतुर्दल में—वं नमः शं नमः, षं नमः, सं नमः।

भ्रूमध्यस्थ द्विदल में—हं नमः, क्षं नमः ।।५२।।

इत्यन्तर्मातृकां न्यस्य सर्वाङ्गन्यासमाचरेत्।
मूर्धनि मुखवृत्ते च नेत्रकर्णेषु पार्वति।।६०।।
नासागण्डोष्ठदन्तेषु मूर्धास्येषु च विन्यसेत्।
पाणिपादयुगस्यान्ते संध्यग्रेषु क्रमात्प्रिये।।६१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस प्रकार से अर्न्तमातृकान्यास करके सर्वाङ्ग न्यास (बाह्यमातृकान्यास) करना चाहिये। हे प्रिये ! मस्तक, समग्र मुखमण्डल, चक्षु, कर्ण, नासिका, कपोल द्वय (गाल), ओष्ठ, दन्त, मस्तक (ब्रह्मरंन्ध्र), मुख तथा हस्तद्वय, पादद्वय के अग्र में, सन्धि तथा अन्त में क्रमशः न्यास करे ॥६०-६१॥

पार्श्वद्वये पृष्ठनाभिजठरेषु क्रमान्न्यसेत् ।
यादीन्सधातुकान्देवि क्रमेणैव ततो न्यसेत् ।।६२।।

हे देवी ! पार्श्वद्वय, पृष्ठ, नाभि तथा उदर में न्यास करे। तदनन्तर धातु के साथ यकारादि का न्यास क्रमशः करे ॥६२॥

त्वगसृग्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः ।
प्राणात्मा चैव जीवात्मा परमात्मा च विन्यसेत् ।।६३।।

त्वक्, असृक् (रक्त), मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र–ये सभी धातु हैं। प्राणात्मा, जीवात्मा, परमात्मा इनका भी विन्यास करे ॥६३॥

हृदये बाहुमूले च तथाऽपरगले प्रिये ।
कक्षयोर्हृदयप्रान्ते पाणिपादयुगे तथा ।।६४।।
जठराननयोर्देवि व्यापकं च क्रमान्न्यसेत् ।
पञ्चाशद्वर्णरूपां च कन्दर्पशशिभूषणाम् ।।६५।।
शुद्धस्फटिकसंकाशां शुद्धक्षौमविराजिताम् ।
मुक्तावज्रस्फुरद्भूषां जपमालां कमण्डलुम् ।।६६।।
पुस्तकं वरदानं च बिभ्रतीं परमेश्वरीम् ।
एवं ध्यात्वा न्यसेत्पश्चाद्विद्यान्यासं सुरेश्वरि ।।६७।।

यकारादि न्यासक्रम कहते हैं। हृदय, बाहुमूल (स्कन्धद्वय), गले का पश्चात् भाग, उदर के उर्ध्व तथा अधः, हृदयप्रान्त, हस्तद्वय, पादद्वय, उदर तथा मुख में क्रमशः न्यास करे ॥

परमेश्वरी का ध्यान इस प्रकार करे—५० वर्ण रूपा, काम तथा चन्द्ररूपी अलंकार से अलंकृता, शुद्ध स्फटिक के समान अरुणवर्णा, शुद्ध पशमीने के वस्त्र से युक्त, मुक्ता एवं हीरों से प्रकाशित, अलंकार से शोभिता, जयमाला–कमण्डलु धारण करने वाली, पुस्तक तथा वरमुद्रा धारिणी परमेश्वरी का ध्यान करके विद्यान्यास करे ॥६४-६७॥

कुर्वीत देंहसंन्नाहं त्रिभिर्बीजैः क्रमात्प्रिये ।
करयोर्विन्यसेदादौ मणिबन्धे तले नखे ।।६८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दक्षे वामे च विन्यस्य कक्षकूर्परपाणिषु।
पुनर्दक्षे च वामे च पादयोश्च तथा न्यसेत्॥६९॥
पादान्ते हृदये लिङ्गे न्यसेद्देवि ततः परम्।
एतेष्वङ्गेषु देवेशि संहारक्रमतो न्यसेत्॥७०॥
विद्यां सृष्टिक्रमेणैव जानीहि परमेश्वरि।
ततो न्यसेन्महादेवि नवयोन्यङ्किताभिधम्॥७१॥

हे प्रिये ! तीन बीज (ऐं क्लीं सौः) द्वारा क्रमशः देह को वक्र करके प्रणाम करे। तदनन्तर पहले दोनो हाथ, केहुनी, करतल, तथा नख में उक्त बीजत्रय का विन्यास करे। दक्षिण, वाम, हांथ के बाहुमूल, केहुनी, करतल, नख में विन्यास करके तब उदर, पृष्ठ, तथा हांथों में विन्यास करे। पुनः दक्षिण तथा वामपद के पादमूल, जानु, अंगुलिमूल, अंगुलिमध्य तथा अंगुलि के अग्र में न्यास करे। हे देवी ! तदनन्तर नादान्त में अर्थात् ॐ के साथ (ऐं क्लीं सौः) को युक्त करके हृदय तथा लिंग में न्यास करे। हे देवी ! इन सब का संहार क्रम से न्यास करे। हे परमेश्वरी ! सृष्टि क्रम में विद्यान्यास होगा। हे महादेवी ! तब नवयोनि न्यास करे॥

यह न्यासक्रम इस प्रकार होगा।

ॐ ऐं क्लीं सौः क्षं नमः — नाभि से मुखपर्यन्त
ॐ ऐं क्लीं सौ लं नमः — मुख से नाभि पर्यन्त न्यास करे।

इस संहार क्रम न्यासोपरान्त "ॐ ऐं क्लीं सौः" बीज से ललाटिक्रम से नाभि से मुख पर्यन्त न्यास करे। अर्थात् वाह्य मातृकान्यास क्रम से न्यास करे। मन्त्र हैं "ॐ ऐं क्लीं सौः" ॥६८-७१॥

कर्णयोश्चुबुके भूयः शङ्खयोर्मुखमण्डले।
नेत्रयोर्नासिकायां च बाहुयुग्मे हृदि प्रिये॥७२॥
तथा कूर्परयोर्नाभौ जान्वोरन्धुनि विन्यसेत्।
पादयोर्देवि गुह्ये च पार्श्वयोर्हृत्स्तनद्वये॥७३॥
कण्ठे च नवयोन्याख्यं न्यसेद् बीजत्रयात्मकम्।
षडङ्गमाचरेद्देवि द्विरावृत्त्या क्रमेण तु॥७४॥
त्रिद्व्येकदशकत्रिद्विसंख्यया शैलसंभवे।
अङ्गुलीनां पुनर्देवि बाणान्कामांश्च विन्यसेत्॥७५॥
ललाटगलहृन्नाभिमूलाधारेषु वै क्रमात्।
मूलेन व्यापकं कृत्वा प्राणायामं समाचरेत्॥७६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे प्रिये ! कर्ण द्वय, अधर, ओष्ठ, श्रोत्रद्वय, मुखमण्डल, नेत्रद्वय, नासिका, बाहुद्वय, हृदय, दोनों केहुनी, नाभि, जानु के विपरीत पार्श्व में, पार्श्वद्वय, हृदय के ऊपर स्तनद्वय में, तथा कण्ठ में बीजत्रयात्मक नवयोनि नामक न्यास करे। "ॐ ऐं क्लीं सौः" से कर्ण प्रभृति १७ स्थान में न्यास करे। यही नवयोनि न्यास है।

हे देवी ! तदनन्तर २ बार आवृति करके क्रम-क्रम से षड़ङ्गन्यास करना चाहिये। अर्थात् ॐ ऐं हृदयाय नमः, ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा, ॐ सौः शिखायै वषट्। ॐ ऐं कवचाय हुं, ॐ क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ सौः करतलकर पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्। यह षड़ङ्गन्यास नवयोनिन्यासोपरान्त करे। हे पर्वतनन्दिनि ! नव योनिन्यास ३,२,१,१०,३,२ संख्या में अर्थात् २१ संख्या में होगा। यद्यपि २१ स्थान में न्यास को नवयोनि न्यास कहते हैं। इस प्रकार २१ में ९ योनि होगी। कर्णद्वय, चक्षुर्द्वय, नासिकाद्वय, मुख, नाभि तथा गुह्य इसे नवयोन्यङ्कित न्यास कहते हैं। हे देवी ! पुनः उंगलियों में पूर्णवत् बाणन्यास तथा कामन्यास करे। यहां पंच कामन्यास ललाट, गला, हृदय, नाभि तथा मूलाधार में हो गये।

अर्थात् ललाट में — ह्रीं कामाय नमः।
गले में — क्लीं मन्मथाय नमः।
हृदय में — ऐं कन्दर्पाय नमः।
नाभि में — ब्लूं मकरध्वजाय नमः।
मूलाधार में — स्त्री मीनकेतवे नमः।

तदनन्तर मूलमन्त्र 'ऐं क्लीं सौः' से व्यापक न्यास करे तथा प्राणायाम करे ॥७२-७६॥

द्वितीय पटल समाप्त।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तृतीयः पटलः

(त्रिपुरेश्वरी ध्यान, चक्रोद्धार, त्रिपुरादेवी ध्यान)

ईश्वर उवाच–

एवं विन्यस्तदेहः सन्समाहितमनास्ततः ।
अन्तर्यागविधिं कुर्यात्साक्षाद्ब्रह्ममयं प्रिये ।।१।।

ईश्वर कहते हैं—हे प्रिये ! इस प्रकार (पूर्वोक्तरूपेण) देह का न्यास करके एकाग्र होकर साक्षात् ब्रह्म भावना युक्त होकर अन्तर्याग करे ॥१॥

मूलाधारे मूलविद्यां विद्युत्कोटिसमप्रभाम् ।
सूर्यकोटिप्रतीकाशां चन्द्रकोटिद्रवां प्रिये ।।२।।
बिसतन्तुस्वरूपां तां बिन्दुत्रिवलयां प्रिये ।
ऊर्ध्वशक्तिनिपातेन सहजेन वरानने ।।३।।
मूलशक्तिदृढत्वेन मध्यबीजप्रबोधतः ।
परमानन्दसंदोहसानन्दं चिन्तयेत्पराम् ।।४।।

मूलाधार में कोटि विद्युत प्रभा के समान, कोटिसूर्य के समान आलोक युक्त, कोटिचन्द्र के समान अमृतधारायुक्त मूलविद्या (कुलकुण्डलिनी) शक्ति स्थित हैं। हे वरानने ! हे प्रिये ! वे मृणालतन्तु के समान अति सूक्ष्म हैं। उनके तीनों ओर तीन बिन्दु युक्त त्रिकोणमण्डल है। ऊर्ध्वशक्ति निपात से (प्रबल भावना से) उन मूलशक्ति को दृढ़भाव से मध्यबीज अर्थात् 'हुं' बीज का उच्चारण करके उसे जाग्रत करे। (यह चिन्तन करे कि वह मूल शक्तिं मूलाधार से उठ रही है) इस जागरण जनित परम आनन्द धारा में आनन्द युक्त रूप से पराशक्ति का चिन्तन करे ॥२-४॥

इत्यन्तर्यजनं कृत्वा बाह्यपूजां समाचरेत् ।
तत्र प्राङ्मुख आसीनश्चक्रोद्धारं समाचरेत् ।।५।।

इस प्रकार से अन्तर्याग करके बाह्यपूजा का आचरण करना चाहिये। इस वाह्य पूजा में पूर्वमुख बैठकर चक्र का उद्धार करे ॥५॥

चक्रोद्धार–

सुस्थले श्रीभवे पट्टे लिखेद्यन्त्रमनुत्तमम् ।
ईशानादग्निपर्यन्तमृजुरेखां समालिखेत् ।।६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ईशादग्नेस्तदग्राभ्यां रेखे आकृष्य देशिकः ।
एकीकृत्य च वारुण्यां शक्तिरेखा परा प्रिये ।।७।।
त्रिकोणाकाररूपेयं तस्या उपरि संलिखेत् ।
त्रिकोणाकाररूपात्तु शक्तिद्वयमुदाहृतम् ।।८।।

उत्तम स्थान में सुन्दर पट्टवस्त्र पर उत्तम यन्त्र लिखे । पहले ईशानकोण से लेकर अग्निकोण तक सर्वत्र सरलरेखा अंकित करें ।

हे प्रिये ! ईशान तथा अग्नि कोण के अग्रभाग से दो रेखा खींच कर गुरु उन रेखाओं को एकीकृत करके पश्चिम में मिलाये । यह श्रेष्ठ शक्ति रेखा एवं त्रिकोणाकार रूप इस त्रिकोणाकार रेखा के ऊपर त्रिकोणाकार रूप दो शक्ति कहीं गयी है ।।६-८।।

पूर्वशक्त्यग्रभागे तु मानयष्टिवदालिखेत् ।
रेखां तु परमेशानि वायुराक्षसकोणगाम् ।।९।।
संधिभेदक्रमेणैव तयोः शक्त्योस्ततः परम् ।
रेखे आकृष्य कोणाभ्यां तदग्रात्पूर्वगे कुरु ।।१०।।

पूर्वशक्ति के अग्रभाग में प्रमाणदण्ड के समान वायु तथा नैर्ऋत कोणगामी रेखा बनायें । हे परमेशानी ! सन्धि भेद क्रम से इन दो शक्ति के बाद अग्रभाग में दोनों कोणों से दो रेखा पूर्वगामी खीचे ।।९-१०।।

वह्निमण्डलमेतत्तु पूर्वाग्रं वीरवन्दिते ।
एकेन वह्निना शक्तिद्वयेनैतद्भवेत्प्रिये ।।११।।

हे वीरवन्दिते ! हे प्रिये ! यह पूर्वाग्र त्रिकोण वह्निमण्डल के नाम से प्रसिद्ध है । एक ही वन्हि द्विशक्ति रूपी है । यह मण्डल, अर्थात् दोनों पूर्वाग्र त्रिकोण एक ही वह्निमण्डल है ।।११।।

नवयोनिविशोभाढ्यं चक्रराजमिदं प्रिये ।
सर्वसौभाग्यजनकं सर्वैश्वर्यप्रदायकम् ।।१२।।
सर्वसिद्धिप्रदं रोगहरणं धनदायकम् ।
एतद्बाह्ये तु संलेख्यं वृत्तं पूर्णेन्दुसंनिभम् ।।१३।।

हे प्रिये ! नवयोनि द्वारा विशोभित यह चक्रराज समस्त सौभाग्य का जनक, समस्त ऐश्वर्य प्रदायक, रोगनाशक तथा धन दायक है । इस वह्निमण्डल के बाहर पूर्णचन्द्र के समान वृत्त बनाये ।।१२-१३।।

तल्लग्नमष्टपत्रं च ग्रन्थिभिश्चाष्टभिर्युतम् ।
ग्रन्थयः प्रणवाभ्यां च संपुटत्वेन कारयेत् ।।१४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस वृत्त से संलग्न करके आठ पत्र आठ ग्रन्थि के द्वारा युक्त करके अंकित करे। ग्रन्थियों को २-२ प्रणव (ॐ) द्वारा सम्पुटित करे ॥१४॥

ग्रन्थयः कुलिशा ज्ञेयाः प्रणवैरेव सुव्रते।
त्रिशूलाष्टकमालिख्य चतुरस्त्रं लिखेत्प्रिये ॥१५॥

हे सुव्रते ! हे प्रिये ! ॐकार से पुटित ग्रंथियों को वज्र कहते है। इस प्रकार से अष्टविन्दु निर्मित करके चतुरस्र बनाये ॥१५॥

चतुर्द्वारविशोभाढ्यं सर्वानन्दकरं तथा।
हसौःकारं त्रिकोणान्तः सांलिख्य वरवर्णिनि ॥१६॥
कामबीजं मध्यमं यदष्टकोणेषु संलिखेत्।
स्वरान् षोडश देवेशि युग्मयुग्ममभेदतः ॥१७॥
दलाष्टकेषु संलिख्य पश्चिमादिप्रदक्षिणम्।
ग्रन्थिस्थानेषु वर्गाणां कादीनां परमेश्वरिः ॥१८॥
विलिखेत्सप्तसंख्यानामाद्यार्णं क्रमतः प्रिये।
क्षकारमष्टमे योज्यं शेषान्वर्णान्क्रमेण तु ॥१९॥

हे वरवर्णिनि ! हे सुन्दरी ! चतुर्द्वार से शोभित करके सबके लिये आनन्दप्रद यन्त्रांकन करें। त्रिकोण के मध्य में "ह्सौः" लिखकर मध्य में काम बीज उसके आठो कोणों पर लिखे। हे देवेशी ! १६ स्वरों को दो-दो करके पश्चिम दिक् से प्रारंभ करके आठो दल (पद्म पत्र) पर लिखे। हे परमेश्वरी ! आठ ग्रंथिस्थान में कादि वर्ग के सप्त संख्यक वर्ण के प्रथम वर्ण क्रम से लिखे (ये सात वर्ण हैं—क-च-ट-प-य-श)। अष्टम दल में क्षकार रूप वर्ण तथा क्रम से शेष बचे वर्णों को लिखे ॥१६-१९॥

त्रिशूलाग्रेषु संलिख्य पश्चिमादिक्रमेण तु।
तद्बाह्ये मातृकावृत्तं विलिख्य परमेश्वरि ॥२०॥

हे परमेश्वरी ! त्रिशूलाग्र समूह में पश्चिमादिक्रम से शेष खकारादि वर्ण लिखकर उसके बाहर (पद्म के बाहर) मातृका वृत्त बनाये ॥२०॥

चतुरस्त्रे महेशानि मातृकां कामगर्भिताम्।
विलिख्य पूजयेद्यन्त्रं हेमरौप्यादिपट्टके ॥२१॥

हे महेशानी ! चतुष्कोण के मध्य में 'क्लीं" मन्त्र से गर्भित मातृका वर्ण लिखकर सुवर्ण अथवा चांदी के पट्ट (पात्र) पर रखकर यन्त्र पूजा करे ॥

ताम्रे वा दर्पणे ताले काश्मीरप्रभवेऽपि वा।
चन्दनाद्यन्विते भूमौ कुङ्कुमेनाथ वा पुनः ॥२२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिन्दूररजसा वाऽपि कस्तूरीघुसृणेन्दुभिः ।
भूर्जे गोरोचनाद्रव्यैः कल्पितं मानसेऽथ वा ।।२३।।
सुवर्णरत्नलेखिन्या सर्वकार्यार्थसाधकः ।
विलिख्य यन्त्रं देवेशि पूजाद्रव्यैः प्रपूजयेत् ।।२४।।

हे देवेशी ! सर्वसिद्धि हेतु साधक ताम्र पात्र, दर्पण, हरिताल, काश्मीर की धातु पर अथवा चन्दनादि युक्त भूमि पर कुकुम से अथवा सिन्दूर रज से, कस्तूरी चूर्ण से अथवा कपूर द्वारा यन्त्रांकन करे। अथवा भोजपत्र पर गोरोचन से यन्त्र लिखे, अथवा मन ही मन यन्त्र की भावना करे। सर्वकार्यार्थ साधक सुवर्ण अथवा रत्न की लेखनी से यन्त्र लिखकर पूजाद्रव्य से उसकी पूजा करे ।।२२-२४।।

कुलागमक्रमेणैव ध्यात्वा ब्रह्मविकाशिनीम् ।
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं बिसतन्तुतनीयतीम् ।।२५।।

कुलागम के अनुसार मृणाल तन्तु के समान सूक्ष्मा ब्रह्मभाव का विकास करने वाली त्रिपुरादेवी (कुण्डलिनी) मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक व्याप्य है, ऐसी जो शक्ति हैं उनका ध्यान करे।

त्रिपुरादेवीध्यानम्–

उद्यदादित्यरुचिरां स्मरेदशुभशान्तये ।
भ्रमद्भ्रमरनीलाभधम्मिल्लामलपुष्पिणीम् ।।२६।।

भ्रमर के समान नीलवर्णा, चंचल केशपाशों में पुष्पों से शोभिता, उदीयमान सूर्य के समान कान्तियुता देवी का स्मरण अशुभ शान्त्यर्थ करता हूँ ।।२६।।

ब्रह्मरन्ध्रस्फुरद्भृङ्गमुक्तारेखाविराजिताम् ।
मुक्तारेखालसद्रत्नतिलकां मुकुटोज्ज्वलाम् ।।२७।।
विशुद्धमुक्तारत्नाढ्यां चन्द्ररेखाकिरीटिनीम् ।
भ्रमद्भ्रमरनीलाभनयनत्रयराजिनीम् ।।२८।।
सूर्यभास्वन्महारत्नकुण्डलालङ्कृतां पराम् ।
शुक्राकारस्फुरन्मुक्ताहारभूषणभूषिताम् ।।२९।।
ग्रैवेयाङ्गदमुक्ताभिः स्फुरत्कान्तिविराजिताम् ।
गङ्गातरङ्गकर्पूरशुभ्राम्बरविराजिताम् ।।३०।।
श्रीखण्डवल्लीसदृशबाहुवल्लीविराजिताम् ।
कङ्कणादिलसद्भूषां मणिबन्धलसत्प्रभाम् ।।३१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रवालपल्लवाकारपाणिपल्लवराजिताम् ।
वज्रवैदूर्यमुक्तालिमेखलां विमलप्रभाम् ।।३२।।
रक्तोत्पलदलाकारपादपल्लवभूषिताम् ।
नक्षत्रमालासंकाशमुक्तामञ्जीरमण्डिताम् ।।३३।।
वामेन पाणिनैकेन पुस्तकं चापरेण तु ।
अभयं च प्रयच्छन्तीं साधकाय वरानने ।।३४।।
अक्षमालां च वरदं दक्षपाणिद्वयेन हि ।
दधतीं चिन्तयेद्देवीं वश्यसौभाग्यवाक्प्रदाम् ।।३५।।
क्षीरकुन्देन्दुधवलां प्रसन्नां संस्मरेत्प्रिये ।।३६।।

ब्रह्मरन्ध्र में प्रकाशमान भ्रमरतुल्य मुक्ताहार रेखा रूप विराजित मुक्तारेखा से सुशोभिता, रत्नतिलक युक्ता, मुकुटोज्वला, विशुद्धमुक्ता तथा रत्नशोभिता, चन्द्ररेखारूप मुकुटधारिणी, भ्राम्यमान भ्रमरतुल्य कृष्णनयनत्रययुक्ता, सूर्यतुल्य उज्वल महारत्न कुण्डल से अलंकृता, परादेवी, शुकतारा के समान प्रकाशमान मुक्ताहार रूपी भूषण भूषिता, कण्ठहार केयूर तथा मुक्ता से दीप्यमान कान्तिवाली, गंगातरंग तथा कर्पूर के समान शुभ्रवस्त्र धारिणी, चन्दन के समान बाहुलता से शोभिता, कंकण प्रभृति दीप्यमान अलंकार युता, मणिबन्ध प्रभा शोभिता, प्रवाल तथा नूतन पल्लव युक्त पाणिपल्लव से दीप्ता, हीरा वैदूर्य–मुक्ता द्वारा निर्मित चन्द्रहार से युक्ता, विमल दीप्तिमती, रक्तपद्म के पत्रों के समान रक्त पादपल्लवों से शोभिता, नक्षत्रों के समान मुक्तानूपुर से भूषिता, पुस्तक, अभयमुद्रा, अक्षमाला तथा वरमुद्रा धारिणी वशीकरण तथा सौभाग्यप्रदा, वाक्य (वाणी) प्रदायिनी देवी का चिन्तन करे। हे वरानने ! हे प्रिये ! दुग्ध–कुन्दपुष्प तथा चन्द्रवत् शुभ्रा प्रसन्नवदना देवी का सम्यक् स्मरण करे ॥२७-३६॥

तृतीय पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतुर्थः पटलः

(पीठदेवता, प्रेतासनवर्णन, सगुण का सृष्टि-स्थिति लय, त्रिपुरेश्वरी पूजाक्रमविधि, आवाह्नादि मुद्रा, षडङ्गदि मुद्रा, क्षेत्रपाल–लोकपाल पूजा)

श्रीदेव्युवाच–

चक्रमण्डलमाख्यातं न पूजा तत्र मण्डले ।
कथिता परमेशान श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ।।१।।

श्री देवी कहती हैं—हे परमेश ! आपने चक्रमण्डल कहा, किन्तु इसकी पूजा की बात नहीं कहा है । मैं इसका पूजा क्रम सुनना चाहती हूँ ॥१॥

ईश्वर उवाच–

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि पूजामण्डलमुत्तमम् ।
पीठपूजां विधायादौ रविदेवीविराजिताम् ।।२।।

ईश्वर कहते हैं—हे देवी ! पूजा मण्डल कहता हूँ । श्रवण करो पहले द्वादश संख्यक देवताओं से शोभित पीठ पूजा का विधान करे ॥२॥

वामा ज्येष्ठा च रौद्री च अम्बिकेच्छा ततः परम् ।
ज्ञाना क्रिया कुब्जिका च ऋद्धिश्चैव विषघ्निका ।।३।।
दूतरी चैव आनन्दा देवि द्वादश शक्तयः ।
मुक्ताफलामलमणिस्फुरच्छत्रं शशिप्रभम् ।।४।।
गङ्गातरङ्गधवलं चामरद्वयमद्रिजे ।
नवरत्नस्फुरद्दीप्ति ताम्बूलस्य करण्डकम् ।।५।।
मल्लिकामालतीजातीशतपत्रादिदामभिः ।
पूर्णं रत्नमयं भाण्डं तथाऽलङ्कारपूरिताम् ।।६।।
पेटिकां व्यजनद्वन्द्वं नवरत्नाभिभूषितम् ।
नीलकण्ठस्य पिच्छैस्तु तथोशीरविराजितम् ।।७।।
कर्पूरमृगनाभ्याढ्यं कुङ्कुमक्षोदमण्डितम् ।
चषकं स्वर्णरचितं कङ्कतीं हीरराजिताम् ।।८।।
कज्जलस्य शलाकां च करण्डं चन्द्रपूरितम् ।
दधानाः परमेशानि शक्तयः पीठसंस्थिताः ।।९।।
पूर्वादिपरितः पूज्या रविसंख्या वरानने ।
संपूज्य मध्ये देवेशि प्रेतसिंहासनं यजेत् ।।१०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे देवी ! वामा-ज्येष्ठा-रौद्री-अम्बिका, इच्छा-ज्ञाना-क्रिया-कुब्जिका-ऋद्धि-विषध्निका-दूतरी तथा आनन्दा, ये १२ पीठ शक्ति हैं। हे पर्वतनन्दिनी ! ये मुक्ताफल तथा निर्मलमणि स्फुरित चन्द्र प्रभातुल्य छत्र, गंगाजलवत् श्वेतवर्ण चामरद्वय, नवरत्न दीप्तियुक्त पानपात्र, मल्लिका-मालती-जूही-पद्म प्रभृति पुष्प माल्यद्वारा आपूरित, रत्नमयपात्र, अलंकार पूर्ण पेटिका, नवरत्नभूषित मयूरपुच्छ समन्वित-वेनामूल शोभित-कर्पूर तथा कस्तूरी युक्त कुंकुम चूर्ण भूषित दो पंखे, सुवर्ण मण्डित चषक, कंधी हीरों से जड़ित, वे कज्जल शलाका, तथा चन्द्रमा से पूरित पिटारी धारण किये हुये हैं। हे परमेशानी ! हे वरानने ! पीठस्थ शक्तियां १२ हैं। इनकी पूजा करें। हे देवेशी ! इनके पूजनोपरान्त प्रेत सिंहासन की पूजा करे ॥३-१०॥

रत्नस्वर्णाकृति स्फारं दीप्तिमच्छुद्धमव्ययम् ।
पञ्चप्रेतासनं साक्षान्मोक्षदायि न संशयः ॥११॥

रत्न तथा स्वर्ण के समान दीप्तिमान शुद्ध अव्यय विपुल पञ्चप्रेतासन मोक्षप्रद है, यह संदेह से परे हैं ॥११॥

श्रीदेव्युवाच–

पञ्च प्रेतान् महेशान ब्रूहि तेषां तु कारणम् ।
निर्जीवा अविनाशस्ते नित्यरूपाः कथं विभो ॥१२॥

श्री पार्वती कहती हैं—हे महेश ! पञ्चप्रेत तथा उनके कारण को कहिये। हे विभो ! यह प्रेत निर्जीव होकर भी कैसे अविनाशी नित्यरूप हों गया ? जीवन रहित पदार्थ नष्ट होता है। अथच इन प्रेतो को नित्यता कैसे मिल गयी ? ॥१२॥

निर्जीवे नाश एवास्ति ते कथं नित्यतां गताः ।
साधु पृष्टं त्वया भद्रे पञ्चप्रेतमयं कथम् ॥१३॥

ईश्वर उवाच–

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।
पञ्च प्रेता वरारोहे निश्चला एव सर्वदा ॥१४॥

ईश्वर कहते हैं–हे भद्रे ! तुमने पंच प्रेतमय सिंहासन के सम्बन्ध में अत्यन्त उत्तम प्रश्न पूछा है।

हे वरारोहे ! ब्रह्मा-विष्णु-रुद्र-ईश्वर तथा सदाशिव, ये पांचो लोग प्रेत हैं। ये सर्वथा निश्चल हैं ॥१३-१४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ब्रह्मणः परमेशानि मातृत्वं सृष्टिरूपकम् ।
वामाशक्तेस्तु विज्ञेयं ब्रह्मा प्रेतो न संशयः ।।१५।।
शिवस्य करणं नास्ति शक्तेस्तु करणं सदा ।
ब्रह्माण्डलक्षनिर्माणं जायते शक्तितः प्रिये ।।१६।।

हे परमेश्वरी ! ब्रह्मा की वामाशक्ति ही सृष्टिरूपी निर्माणकारित्व से युक्त हैं। स्वरूपतः ब्रह्मा सृष्टि में असमर्थ होने के कारण प्रेत हैं। इसमें सन्देह नहीं है ॥

हे प्रिये ! शिव का क्रियाकारित्व नहीं है। शक्ति की ही सर्वदा क्रियाकारित्व है। शक्ति से ही लाखों लाख ब्रह्माण्ड निर्मित होते हैं ॥१५-१६॥

अत एव महेशानि शिवः[1] प्रेतो न संशयः ।
विष्णौ च पालनं नास्ति पालयन्ती परा शिवा ।।१७।।
ज्येष्ठाभिधा महेशानि सैव विष्णुरितीरिता ।
विष्णुस्तु निश्चलो देवि वैष्णवी व्याप्तिकारिणी ।।१८।।

हे महादेवी ! शिवात्मक ब्रह्मा का क्रियाकारित्व न होने के कारण निःसन्दिध रूप से ब्रह्मा प्रेत है। इस प्रकार विष्णु जगत्पालन नहीं करते। शक्ति ही जगत् का पालन करती है।

हे महेशानी ! वे पराशिवा ही ज्येष्ठा कही जाती हैं। वे ही विष्णु कहलाती है। हे देवी ! विष्णु (पुरुष) निश्चल हैं। वैष्णवी (शक्ति) ही व्याप्ति रूपा हैं। वे ही समस्त जगत का पालन करती हैं। वे ही इस विश्वरूप नाटक को करने वाली हैं। जगत् प्रपञ्च उनका ही नाट्य है ॥१७-१८॥

पालयन्ती जगत्सर्वं विश्वनाटककारिणी ।
अत एव महेशानि विष्णुः प्रेतो न संशयः ।।१९।।
रुद्रस्तु परमं तत्त्वं शिवो निश्चल एव हि ।
ग्रसन्ती रुद्रशक्तिस्तु तमोरूपा वरानने ।।२०।।
गुणत्रयं शिवे नास्ति गुणातीतः परमेश्वरः ।
निर्गुणस्य कथं ग्रासो निश्चलस्य वरानने ।।२१।।

हे महेशानी ! शिव तथा पुरुष रूप विष्णु पालन कार्य में समर्थ नहीं हैं। तभी वे प्रेत है। इसी प्रकार परमतत्व रुद्रदेव (शिव) भी निश्चल हैं। हे वरानने ! तमोरूपा रुद्रशक्ति

---

१. 'ब्रह्मा' इति मुद्रितपाठः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही संहारकारिणी हैं । शिव में सत्वादि त्रिगुण नहीं है । वे गुणातीत परमेश्वर हैं । हे वरानने ! निर्गुण किस प्रकार से सृष्टि का ग्रास अथवा संहार कर सकेगा ? निर्गुण तो निश्चल होता है । इसलिये रुद्रशक्ति ही सचराचर त्रैलोक्य का ग्रास करती है ॥१९-२१॥

ग्रसन्ती रुद्रशक्तिस्तु त्रैलोक्यं सचराचरम् ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च गुणातीताः सदा प्रिये ।।२२।।
सगुणाः परमेशानि सृष्टिस्थितिलयात्मकाः ।
ईश्वरोऽपि वरारोहे महाप्रेतः सदाऽनघे ।
शिवे निश्चलता कस्मादीश्वरत्वं भवेत्प्रिये ।।२३।।

हे प्रिये ! ये तीनों देवता गुणातीत हैं । लेकिन है परमेशानी ! सृष्टि स्थिति लय तो सगुण हैं ।

हे शिवे ! हे वर देहे ! निष्पापे ! प्रिये ! ईश्वर भी महाप्रेत है । ईश्वरत्व किस प्रकार से निश्चलता होने के कारण क्रिया कर सकता है । हे प्रिये ! निष्क्रिय–निश्चल में ईश्वरत्व कैसे ? ॥२२-२३॥

यः कर्ता च स्वयं हर्ता स ईशो नान्यथा भवेत् ।
कर्तृहर्तृत्वयुगलं निश्चले न हि सुन्दरि ।।२४।।
ईश्वरत्वं शिवायां तु न शिवे परमेश्वरि ।
अत एव महाप्रेत ईश्वरो नान्यथा भवेत् ।।२५।।
सदाशिवो महाप्रेतः केवलं निश्चलः प्रिये ।
अव्यक्तः परमानन्दो ब्रह्मानन्दमयी शिवा ।।२६।।

हे सुन्दरी ! जो स्वयं कर्त्ता तथा संहर्त्ता हो, वही ईश्वर है । यह अन्यथा सिद्धान्त नहीं है । लेकिन निश्चल में कर्त्तृत्व तथा हर्तृत्व तो होता ही नहीं ।

हे परमेश्वरी ! शक्ति रूपिणी शिवा में ही ईश्वरत्व (कर्त्तृत्वादि) है । शिव में ईश्वरत्व नहीं है । अतएव वे महाप्रेत हैं ।

हे प्रिये ! केवल निश्चल सदाशिव महाप्रेत हैं । वे अव्यक्त परमानन्द रूप है । शिवा (शक्ति) ब्रह्मानन्दमयी है ॥२४-२६॥

शक्त्या विना शिवे देवि वासना न प्रवर्तते ।
अत एव महेशानि महाप्रेतासनं यजेत् ।।२७।।
चक्रमध्ये स्थितं बीजं सदाशिवमहापदम् ।
प्रेतपद्मासनं ङेन्तं हृन्मनुर्मनुरीरितः ।।२८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महासनस्य मन्त्रोऽयं कलार्णः परमेश्वरि ।
सिंहासनं समभ्यर्च्य ततश्चाऽऽवाहनं कुरु ।।२९।।

चक्रमध्य में बीज है । वह है सदाशिव महापद अर्थात् 'हौं' और चतुर्थ्यन्त (ङेन्त) प्रेतपद्मासन' पद । साथ मे हृन्मत्र 'हुं' । मन्त्रोद्धार होगा 'ॐ हौं प्रेतपद्मासनाय हुं' । हे परमेश्वरी ! यह मन्त्र कलादेवी का मन्त्र है अथवा महा आसनमन्त्र है । अब सर्वप्रथम महाप्रेत पद्मासन की अर्चना करके आवाहन करे ।।२७-२९।।

वहन्नाडीक्रमेणैव मूलादिब्रह्मरन्ध्रगाम् ।
संवित्कलां परेशानि सर्वज्ञां कुलसुन्दरीम् ।।३०।।
आवाह्य चक्रमध्ये तु तर्पयेत्कुलसुन्दरीम् ।
आवाहनादिमुद्रास्तु कथयामि तवानघे[1] ।।३१।।

हे परमेशानी ! मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त सुषुम्नानाड़ी के मध्य में व्याप्त ज्ञानकला सर्वज्ञा कुलसुन्दरी कालीकुल आदि में सुन्दरी त्रिपुरादेवी का अध:स्थित वायु का पूरण करके तथा पूरण काल में उस वायु सहित देवी आ रही हैं, यह भावना करके तर्पण करे । हे अनघे ! अब आवाहन आदि की मुद्रा कहता हूँ । सुनो ।।३०-३१।।

ऊर्ध्वाञ्जलिमधः कुर्यादियमावाहनी भवेत् ।
इयं तु विपरीता स्यात्तदा वै स्थापनी मता ।।३२।।

ऊर्ध्वाञ्जलि को अधोदिक् लाये । यह आवाहनी मुद्रा है । अंगुष्ठद्वय को भीतर प्रविष्ट कराकर हाथ की मुष्टि बनाये । यह है सन्निरोधनी मुद्रा । उर्ध्वाञ्जलि को उलटा करके ऊपर नीचे संचालन करना स्थापनी मुद्रा कहलाती है ।।३२।।

मिलितं मुष्टियुगलं संनिधापनरूपिणी ।
अन्तरङ्गुष्ठमुष्टिभ्यां संनिरोधनरूपिणी ।।३३।।
एतस्या एव मुद्रायास्तर्जन्तौ सरले यदा ।
सव्यापसव्यभ्रमणान्मुद्रेयमवगुण्ठनी ।।३४।।

हांथ की दोनों मुट्ठी को मिलाने से सन्निधापन रूप मुद्रा होती है । अंगुष्ठद्वय भीतर प्रविष्ट कराकर दोनो हाथ की मुट्ठी मिलने से सन्निरोधिनी मुद्रा हो जाती है ।।

सन्निरोधिनी मुद्रा में जब दोनों तर्जनी सरलाकृति करके मुष्टिद्वय को दहिने बायें भ्रामित किया जाता है, तब मुद्रा होती है अवगुण्ठनी ।

---

१. 'तथानघे' इति पाठः मुद्रितः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विवृति—अन्य तन्त्रों में इन पंच मुद्रा का नाम है—आवाहनी, सन्निधापनी, संस्थापनी, सन्निरोधनी, सम्मुखीकरणी। इनका विवरण भी ज्ञानार्णव में भिन्न है ॥३३-३४॥

अङ्गमन्त्रैर्न्यसेद्देवि देव्यङ्गे साधकोत्तमः।
संकलीकरणं नाम मुद्रेयं व्याप्तिकारिणी॥३५॥

हे देवी ! साधकोत्तम अस्त्र मन्त्र से देवी का अंगन्यास करे। इस मुद्रा का नाम है सकलीकरण। यह व्याप्तकारिणी है। अर्थात् ऐं हृदयायनमः, क्लीं शिरसे स्वाहा, सौः शिखायै वषट्, ऐं कवचाय हुं, क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्, सौः करतलकरपृष्ठाभ्यामस्त्राय फट्। इस प्रकार से देवी का षड़ङ्गन्यास करने को सकलीकरण मुद्रा कहते हैं ॥३५॥

करावेकत्र संयोज्यावङ्गुष्ठौ बन्धयेत्प्रिये।
परमीकरणं नाम मुद्रेयं तु ततः परम्॥३६॥
परिवर्त्य करौ पश्चात्तर्जनीमध्यमायुगम्।
कनिष्ठानामिकायुग्मं परस्परयुतं कुरु॥३७॥
धेनुमुद्रेवमाख्याता अमृतीकरणं भवेत्।
एता साधारणा मुद्रा दर्शयित्वा ततः परम्॥३८॥
वरदाभयमुद्रे च वरदाभयवत्प्रिये।
पुस्तकवद्वामकरं कुर्यात्समतलं प्रिये॥३९॥
पुस्तकं नाम मुद्रेयं वाग्विलासं प्रयच्छति।
तर्जन्यङ्गुष्ठयोगे तु दक्षहस्ते तु पार्वति॥४०॥
अक्षमालेति मुद्रेयं ज्ञानमुद्रा च वै भवेत्।
मुष्टिं बध्वा दक्षकरे तर्जन्यङ्कुशरूपिणी॥४१॥
अङ्कुशाख्या महामुद्रा त्रैलोक्याकर्षिणी भवेत्।
तर्जनीयुगलं देवि वामांसे शृङ्खलाकृति॥४२॥
पाशमुद्रा समाख्याता त्रैलोक्याकर्षणक्षमा।
यथा हस्तगतं चापं तथा हस्तं कुरु प्रिये॥४३॥

हे प्रिये ! दोनों हथेली संयुक्त करके दोनों अंगूठे को बद्ध करें। यह है परमीकरण मुद्रा। यह मुद्रा प्रदर्शन करके परस्पर अंगुलियों को दूसरे हाथ की उंगली के मध्य करके विपरीत ओर करके तर्जनी द्वय, मध्यमाद्वय तथा कनिष्ठाद्वय तथा अनामिका द्वय को परस्पर युक्त करे। यह है धेनुमुद्रा। इससे अमृतीकरण करते हैं। इन सब को प्रदर्शित करके वरमुद्रा तथा अभयमुद्रा प्रदर्शित करे। हे प्रिये ! बायें हाथ की उँगलियों को पुस्तक की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तरह समतल करे। यह है पुस्तक मुद्रा। यह वाक् विलास प्रदान करती है। हे पार्वती! दक्षिण हांथ की तर्जनी तथा अंगूठे का योग करके अक्षमाला मुद्रा होती है। इसे ज्ञानमुद्रा भी कहते हैं। दाहिने हाथ की मुट्ठी बन्द करके तर्जनी को अंकुश की तरह करने से अंकुश नामक महामुद्रा होती है। यह त्रैलोक्य का आकर्षण करती है। हे देवी! तर्जनीद्वय को शृङ्खलाकृति करके वामस्कन्ध पर स्थापित करने से पाश मुद्रा हो जाती है। इससे त्रैलोक्याकर्षण होता है। हे प्रिये! हस्तस्थित धनुष को जैसे रखा जाता है वैसे ही हाथ को रखें। इस प्रकार से बायें हाथ का सन्निवेश करना चाप मुद्रा है॥३७-४३॥

चापमुद्रेयमाख्याता वामहस्ते व्यवस्थिता।
यथा हस्तगतो बाणस्तथा हस्तं कुरु प्रिये॥४४॥
बाणमुद्रेयमाख्याता रिपुवर्गनिकृन्तनी।
वामहस्ततलं देवि कपालाकृति कारयेत्॥४५॥
कपालमुद्रा देवेशि देव्यानन्दकरी सदा।
हस्ताभ्यां कमलाकारो यदा तत्कमलं भवेत्॥४६॥

हे प्रिये! हाथ में धनुष-बाण रहने पर हाथ की जो स्थिति होती है, वैसे ही उनको करे। इसे वाणमुद्रा कहते हैं। यह शत्रुछेदनकारी है।

हे देवी। हे देवेशी! वाम हस्त के तल को कपाल के आकार का बनाये। यही है कपाल मुद्रा। यह देवी को आनन्द देने वाली है।

हे वरानने! दोनों हाथों को कमल के आकार का करे। यही है कमलमुद्रा। यह लक्ष्मी वर्द्धिनी है॥४४-४६॥

एषा कमलमुद्रा च लक्ष्मीवृद्धिकरी मता।
इति चाऽऽयुधमुद्रास्तु दर्शयित्वा वरानने॥४७॥
गन्धपुष्पाक्षतादीनि दद्यात्स्त्रीसहितः सदा।
उपचारैरलंकारैस्तोषयेत् परमेश्वरीम्॥४८॥
लयाङ्गं कल्पयेद्देहे सम्यक्सन्तर्पयेच्छिवाम्।
परिवारार्चनं पश्चादादावङ्गाकृतिं प्रिये॥४९॥

हे वरानने! इन सब आयुध मुद्रा के प्रदर्शन के पश्चात् स्त्री के साथ गन्ध, पुष्प, आतपतण्डुल प्रदान करे।

पाद्यादि उपचार तथा अलंकारों से परमेश्वरी को अन्तुष्ट करना चाहिये। भावना करे कि देवी साधक की अपनी देह में लीन हो रही हैं। तदनन्तर देवी का तर्पण करना चाहिये।

हे प्रिये! तदनन्तर देवी के परिवार वर्ग का पूजन करे। गुरु पूजा को देवी पूजा के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भी पहले करना चाहिये। तदनन्तर सर्वप्रथम अंगदेवतागण की पूजा करे ॥४७-४९॥

गुरुपूजानन्तरं तु प्रथमं गुरुमर्चयेत्।
प्राग्योनिमध्ययोन्योस्तु मध्ये निजगुरुं यजेत्॥५०॥
विशेषमुद्रां देवेशि दर्शयेत्सर्वसिद्धये।
परिवर्त्य करौ सम्यक्तर्जनीवाहनी समे॥५१॥
मध्यमे कुरु तन्मध्ये योजयेत्तदनन्तरम्।
अन्योन्यामिके देवि कनिष्ठे तु यथास्थिते॥५२॥
अङ्गुष्ठाभ्यां योजिताभ्यां योन्याकारं तु कल्पयेत्।
योनिमुद्रेयमाख्याता परा त्रैलोक्यमातृका॥५३॥
इयमेव हृदि क्षिप्ता त्रैलोक्यक्षोभिणी भवेत्।
त्रैलोक्यद्राविणी नाम मुखस्था परमेश्वरी॥५४॥
भ्रूमध्यस्था महादेवि त्रैलोक्याकर्षिणी भवेत्।
ललाटस्था महादेवि त्रैलोक्यवशकारिणी॥५५॥

पूर्वयोनि तथा मध्ययोनि के मध्य (पूर्व त्रिकोण तथा मध्यत्रिकोण के मध्य) अपने गुरु की पूजा करे। हे देवेशी! सर्वसिद्धि प्राप्ति हेतु विशेष मुद्रा प्रदर्शित करे।

दोनों हाथ की उँगलियों को परस्परतः मिलाकर उनको विपरीत दिक् की ओर करे। तर्जनीद्वय तथा मध्यमाद्वय को समान करके–तर्जनी एवं मध्यमा के मध्य में अनामिकाद्वय को स्थापित करे। कनिष्ठाद्वय को भी यथास्थित करके अंगुष्ठ द्वय द्वारा कनिष्ठ द्वय को युक्त करके उनको योनि के समान बनाये, यही योनिमुद्रा रूपी श्रेष्ठमुद्रा है। यह त्रैलोक्यमातृका रूपा हैं। इसे हृदय में न्यस्त करने पर यह त्रैलोक्य क्षोभिणी हो जाती है। यह परमेश्वरी स्वरूपा है। हे महादेवी! इस योनिमुद्रा को भ्रूमध्य में स्थापित करने से यह त्रैलोक्याकर्षिणी हो जाती है। हे महादेवी! इसे ललाट में स्थापित करने से यह त्रैलोक्यवशंकरी हो जाती है। हे देवी! ब्रह्मरन्ध्र स्थित यह मुद्रा त्रैलोक्य को उन्मादित करती है ॥५०-५५॥

ब्रह्मरन्ध्रस्थिता देवि त्रैलोक्योन्मादकारिणी।
पञ्चमुद्रामयीं मुद्रां योनिमुद्रां च दर्शयेत्॥५६॥

पञ्चमुद्रामयी त्रैक्यक्षोभिणी, त्रैलोक्यमातृका, त्रैलोक्यद्राविणी, त्रैलोक्याकर्षिणी, त्रैलोक्योन्मादकारिणी स्वरूप योनिमुद्रा प्रदर्शन करे। हे पर्वतकन्ये! तदनन्तर पीठ के चतुर्दिक षडङ्गावरण की पूजा करे। (हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र, करतल) ॥५६॥

ततः षडङ्गावरणं परितः पीठमद्रिजे।
अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च पूजयेत्॥५७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अग्रकोणे रतिं यष्ट्वा प्रीतिमुत्तरकोणके ।
मनोभवां दक्षकोणे ततो बाणान् समर्चयेत् ।।५७।।
उत्तरस्यां द्वयं देवि दक्षिणस्यां दिशि द्वयम् ।
अग्रे चैकं क्रमेणैव बाणान् पञ्चाद्रिजे यजेत् ।।५८।।
पञ्च कामांस्तथा देवि बाणवत्परिपूजयेत् ।
अनङ्गकुसुमां देवि तथाऽनङ्गादिमेखलाम् ।।५९।।
अनङ्गमदनां पश्चादनङ्गमदनातुराम् ।
सुभगां पञ्चमीं देवि भगां च भगसर्पिणीम् ।।६०।।

अग्नि, ईशान, नैर्ऋत तथा वायुकोण में तथा चतुर्दिक् अन्य देवगण की भी पूजा करे। इसमें अग्निकोण में रति की पूजा करके ईशान में प्रीति की, नैर्ऋत में मनोभवा की पूजा करके पञ्चबाण पूजन करे। हे देवी ! उत्तर में क्षोभण तथा द्रावण की, दक्षिण में आकर्षण तथा वश्य बाण की, पूर्व में उन्माद बाण की पूजा करनी चाहिये। हे देवी ! इसी प्रकार पञ्च काम पूजन करे। अर्थात् उत्तर में काम–मन्मथ की, दक्षिण में कन्दर्प–मकरध्वज की, पूर्व में मीनकेतु की पूजा करे। हे गिरिकन्ये ! तदनन्तर पूर्वादिक्रम से (पूर्व अग्नि–दक्षिण क्रम से), अनङ्गकुसुमा, अनङ्गादिमेखला, अनङ्गमदना, अनङ्गमदनातुरा, सुभगा, भगा, भगसर्पिणी, भगमाला की पूजा करे ॥५७-६०॥

भगमालां महादेवि पूर्वादिक्रमतो यजेत् ।
अष्टयोनिषु देवेशि ततो ब्राह्म्यादिका यजेत् ।।६१।।

हे देवेशी ! तदनन्तर अष्टयोनि में (पद्म के आठ दल में से मध्यभाग की कल्पना योनिरूप में करे। उन आठ स्थान (दल में) ब्राह्मी आदि की पूजा करनी चाहिये। हे वरानने ! आठ पद्मपत्र में दो-दो के भेद से पूजा करे (भैरव तथा शक्ति युग्मभेद से) ॥६१॥

युग्मयुग्मप्रभेदेन वसुपत्रे वरानने ।
असिताङ्गं तथा ब्राह्मीं रुरुं माहेश्वरीं प्रिये ।।६२।।
चण्डं कौमारिकां चैव क्रोधं वैष्णवदेवताम् ।
उन्मत्तं चैव वाराहीं माहेन्द्रीं च कपालिनम् ।।
भीषणं चैव चामुडां संहारं चाष्टमं यजेत् ।
महालक्ष्मीं महादेवि युग्मानि परिपूजयेत् ।।६३।।

पूर्वादि क्रम से, अर्थात् पूर्व पद्मपत्र में–असिताङ्ग भैरव तथा ब्राह्मी शक्ति की, अग्निकोण पत्र में–रुरुभैरव तथा महाश्वरी शक्ति की, दक्षिण पत्र में–चण्ड भैरव तथा कौमारी शक्ति की नैर्ऋत कोण के पत्र में–क्रोध भैरव तथा वैष्णवी शक्ति की, पश्चिमपत्र में–उन्मत्त भैरव तथा वाराही शक्ति की, वायुकोण के पत्र में–रुपाली भैरव तथा माहेन्द्री

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शक्ति की, उत्तर पत्र में–भीषणभैरव तथा चामुण्डाशक्ति की तथा ईशान कोण में–संहारभैरव तथा महालक्ष्मी शक्ति की पूजा करे ॥६२-६३॥

पश्चिमादिक्रमेणैव ततः पीठाष्टकं यजेत् ।
कामरूपं च मलयं ततः कौलगिरिं तथा ॥६४॥
कुलान्तकं च चौहारं जालन्धरमतः परम् ।
उड्डीयानं द्देवकूटं पीठाष्टकमिदं क्रमात् ॥६५॥

हे महादेवी ! तदनन्तर पश्चिमादि क्रमेण (पश्चिम-वायुकोण–उत्तर–ईशान–पूर्व–अग्नि कोण-दक्षिण–नैर्ऋत–इस क्रम से) आठ पीठों की पूजा करनी चाहिये । क्रम यह है–कामरूप, मलय, कौलगिरि, कुलान्तक, चौहार, जालन्धर, उड्डीयान तथा देवकूट । ये क्रम से आठ पीठ है ॥६४-६५॥

ग्रन्थिस्थानेषु संपूज्यं पश्चिमादिक्रमेण तु ।
त्रिशूलं परितो देवि मातृकावृत्तमण्डले ॥६६॥
भैरवा दश संपूज्याः पश्चिमादिक्रमात् प्रिये ।
हेतुकं चैव वेतालं तन्मध्ये त्रिपुरान्तकम् ॥६७॥
अग्निजिह्वं च कालान्तं तथा चैव कपालिनम् ।
एकपादं भीमरूपं मलयं हाटकेश्वरम् ॥६८॥
दशाभ्यर्च्य महादेवि भैरवान् मातृमण्डले ।
चतुरस्त्रे महेशानि लोकपालाष्टकं यजेत् ॥६९॥
इन्द्रमग्निं यमं देवि राक्षसं वरुणं तथा ।
वायुं कुबेरमीशानं पूर्वादिक्रमतो यजेत् ॥७०॥
ब्रह्माणं चैव विष्णुं च ऊर्ध्वाधः क्रमतो यजेत् ।
वाकारं बीजमुच्चार्य बटुकाय नमो लिखेत् ॥७१॥

हे देवी ! उक्त आठ पीठों की ग्रन्थिस्थान में पश्चिमादि क्रम से पूजा करे ।

हे प्रिये ! पश्चिमादि क्रमेण मातृकावृत्त मण्डल में त्रिशूल के चतुर्दिक् १० भैरवों की पूजा करनी होगी । (इनको तन्त्रान्तर में क्षेत्रपाल कहते हैं । इस ग्रन्थ में भी आगे इनको क्षेत्रपाल ही कहा जायेगा) । इनके नाम हैं–हेतुक, बेताल (इनमें ही त्रिपुरान्तक है), अग्निजिह्व, कालान्त, कपाली, एकपाद, भीमरूप, मलय, हाटकेश्वर । हे महादेवी ! मातृमण्डल में इन दसों का पूजन करके चतुरस्र में आठ लोकपालगण का पूजन करे । (सर्वत्र तो १० लोकपालों का वर्णन है लेकिन यहाँ उर्ध्व तथा अधः के लोकपाल क्रमशः विष्णु एवं ब्रह्मा का नाम नहीं लिया गया है) हे देवी ! पूर्वादिक्रम से इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, वायु, कुबेर तथा ईशान की पूजा करे । उर्ध्व में ब्रह्म तथा अधः में क्रम से विष्णु का पूजन करे ॥ तदनन्तर वहां 'वां वटुकाय नमः–' लिखे ॥६६-७१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यांकारं बीजमुच्चार्य योगिनीभ्यो नमस्तथा ।
क्षांकारं बीजमुच्चार्य क्षेत्रपालाय वै नमः ।।७२।।
गांकारं बीजमुच्चार्य ततो गणपतिं लिखेत् ।
ङेन्त नमः पश्चिमादिदिक्षु पूज्याः क्रमेण तु ।।७३।।

अर्थात् 'वां वटुकाय नमः' से वटुक पूजन करे । (यहां 'लिखेत्' पद का अर्थ पूजा करना ही होगा । पाठान्तर में इसे 'यजेत्' भी किसी प्रति में बतलाया गया है) । इसी प्रकार यां बीज से 'यां योगिनिभ्यो नमः' मन्त्र से योगिनीगण की, 'क्षां क्षेत्रपालायनमः' से क्षेत्रपालों की तथा 'गां गणपतये नमः' से गणपति की पूजा पश्चिमादिक्रमेण करे । अर्थात् पश्चिम में गणपति की, वायुकोण में बटुक की, उत्तर की ओर योगिनी की तथा पूर्व की ओर क्षेत्रपाल की पूजा करे ।।७२-७३।।

चतुरस्त्रे तु संपूज्या विदिक्षु परमेश्वरि ।
वायव्यादिक्रमेणैव वक्ष्यमाणा महेश्वरि ।।७४।।
वसवो द्वादशाऽऽदित्या रुद्राश्चैव ततः प्रिये ।
सर्वे भूता वरारोहे क्रमेण परिपूजयेत् ।।७५।।
पूजां विधाय देवेशीमुपचारैः प्रपूजयेत् ।
उत्तराभिमुखो भूत्वा यदा चक्रं प्रपूजयेत् ।
उत्तराशा तदा देवि पूर्वाशैव व्यवस्थिता ।।७६।।
पश्चिमाशामुखो देवि यदा चक्रं प्रपूजयेत् ।।
पश्चिमाशा तदा देवि पूर्वाशैव व्यवस्थिता ।।
दक्षिणाशामुखो देवि तदा चक्रं प्रपूजयेत् ।।
दक्षिणाशां ततो देवि पूर्वाशैव न संशयः ।।७७।।

हे सुन्दरी ! परमेश्वरी ! हे महेश्वरी ! विदिक् से अर्थात् वायुकोण से प्रारंभ करके कोणो में, चतुष्कोण मण्डल में निम्नांकित देवगण की पूजा करनी होगा । यथा–अष्टवसु, १२ आदित्य, ११ रुद्र हैं । प्रिये ! तदनन्तर सर्वभूत समूह की पूजा करे । यह पूजा करके षोड्शोपचार से देवेशी त्रिपुराबाला की पूजा करे । हे देवी ! तब उत्तरमुख होकर साधक चक्रपूजा करे । तब उत्तर दिशा ही पूर्व दिशा होगी । साधक जब पश्चिममुख पूजा करेगा, तब पश्चिम ही पूर्व दिशा मानी जायेगी । साधक जब दक्षिणमुख पूजा करेगा, तब दक्षिण ही पूर्वदिशा मानी जायेगी । यह निसंदिग्ध है । (आगमतत्वविलास में भी यही मत माना गया है) ।।७४-७७।।

चतुर्थ पटल समाप्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्चमः पटलः

(यजनविधि, धूपनिवेदन, आरात्रिक विधि, षड़ङ्गाहुति, बलिदान विधि)

श्रीदेव्युवाच—

कुमारीक्रम आख्यातो मुद्रासनसमन्वितः ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि बलिदानादिकं विभो ।।१।।

श्री पार्वती कहती हैं—हे विभो ! मुद्रा तथा आसन के साथ आपने कुमारीगण का क्रम कहा । अब बलिदान अर्थात् पूजा का उपचारदान सुनने की इच्छा है ॥१॥

विवृत्ति—चतुर्थ पटल में ब्राह्मी, माहेश्वरी, प्रभृति का जो क्रम कहा गया है, उसमें कुमारीक्रम तथा धेनुमुद्रा प्रभृति का वर्णन है । प्रेतासन भी कहा गया है । अब देवी ने पूजोपचारदानादि के सम्बन्ध में जानना चाहा ॥

ईश्वर उवाच—

धूपं विस्तारयेत्सम्यङ्मूलमन्त्रं हृदि स्मरन् ।
वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यो धूप उत्तमः ।।२।।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।
अनेन मनुना देवि देव्यै धूपं निवेदयेत् ।।३।।

ईश्वर कहते हैं–**हे देवी !** हे वरवर्णिनि ! मूलमन्त्र (त्रिपुराबाला का मूलमन्त्र'' ऐं क्लीं सौः) हृदय में स्मरण करके सम्यक् रीति से धूप प्रदान करे । ''वनस्पति रस से उत्पन्न ग्रहण करिये'' यह कहे । ''वनस्पति रसोत्पन्नो धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्'' यह धूपमन्त्र है ॥२-३॥

सुप्रकाशो महादीपः सर्वत्र तिमिरापहः ।
सबाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।४।।
तथैव दीपमन्त्रोऽयं विद्यान्ते परमेश्वरि ।
आरात्रिकं ततः कुर्यात्सर्वकार्यार्थसिद्धये ।।५।।

''यह अति उत्तम प्रकाशशील, सर्वत्र बाह्य एव आभ्यन्तरीण अन्धकार नाशक, महादीप है । इस तेजोराशि रूप दीप को ग्रहण करें'' । यह दीपदान मन्त्र का अर्थ है । श्लोक ४ पढ़ते हुये दीपदान करे । हे परमेश्वरी ! 'ऐं क्लीं सौः' मन्त्र का उच्चारण करके तब 'सुप्रकाशो' से लेकर ''प्रतिगृह्यताम'' पर्यन्त श्लोक पढ़ते हुई दीप प्रदान करना चाहिये । तत्पश्चात् सर्वसिद्धि प्राप्त करने के लिये आरती करे ॥४-५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सौवर्णे राजते कांस्ये स्थालके परमेश्वरि ।
कुङ्कुमेन लिखेत्पद्मं वसुपत्रं मनोहरम् ।।६।।

हे परमेश्वरी ! स्वर्ण, चांदी, अथवा कांसा की थाली में कुंकुम से शोभन अष्टदल कमल बनाये ।।६।।

चन्द्ररूपं चरुं कृत्वा तन्मध्ये मस्तके शिवे ।
दीपमेकं विनिक्षिप्य वसुपत्रेऽष्ट दीपकान् ।।७।।
यवगोधूममुद्गादिरचिताञ् शर्करायुतान् ।
चषकान्वितमुद्राभिः शोभितान्घृतपूरितान् ।।८।।
अभिमन्त्र्य महेशानि रत्नेश्वर्या ततः परम् ।
श्रीबीजं च पराबीजं संलिख्य वरवर्णिनि ।।९।।
गसौ च मपनाः पश्चादिन्द्रस्थाः क्रमतः प्रिये ।
वामकर्णसमायुक्ता बिन्दुनादविभूषिताः ।।१०।।
बीजपञ्चकमेतत्तु पञ्चरत्नानि सुन्दरि ।
पूर्वबीजे विलोमेन रत्नेशीयं नवाक्षरी ।।११।।

हे शिवे ! पद्म के मध्य में स्वर्ण युक्त चरु रखकर उसके ऊपर एकदीप स्थापित करके पद्म के आठो दलपर एक-एक दीप स्थापित करे । हे देवी ! महेशानी ! यव, गेहूँ, मूंग आदि से बनाये शर्करा युक्त, सुरायुक्त मुद्रा (घृतान्न अथवा भूंजे आटा को मुद्रा कहते हैं) द्वारा शोभित घृत पूरित नैवेद्य को मन्त्र से अभिमन्त्रित करे । हे प्रिये ! हे रत्नेश्वरी ! हे वरवर्णिनी ! श्री बीज (श्रीं) पराबीज (ह्रीं) लिखकर तदनन्तर "ग, स" वर्ण को इन्द्रस्थ (ओकार युक्त) करके बाकी को क्रम से बिन्दुनाद (ं) युक्त वामकर्ण (उ) से युक्त करे । मन्त्रोद्धार होगा "गौं सौ मुं पुं नुं । हे सुन्दरी ! ये पंचबीज गौं सौं मुं पुं नुं पांच रत्नरूप है । पूर्वबीजों को विलोम भाव से लिखने पर नवाक्षरी रत्नेशी बीज होता है । अर्थात् "श्री ह्रीं गौं सौं मुं पुं नुं ह्रीं श्रीं" ।।७-११।। (यहाँ 'ग' तथा 'स' को औकरयुक्त तथा म प न को उकारयुक्त करने का वचन है) ।

मूलमन्त्रेण चाभ्यर्च्य ततश्चाऽऽरात्रिकं चरेत् ।
स्थालकं तु समुद्धृत्य मस्तकान्तं पुनः पुनः ।।१२।।

मूलमन्त्र से (ऐ क्लीं. सौं) दीपमाला की अर्चना करके दीपयुक्त थाली को उठाकर पुनः पुनः देवी की मस्तक पर्यन्त आरती करे ।

नववारं महेशानि ततो नीराजनं चरेत् ।
समस्तचक्रचक्रेशीयुते देवि नवात्मिके ।।१३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आरार्तिकमिदं देवि गृहाण मम सिद्धये।
नीराजनमनुर्देवि विद्यान्ते प्रकटीकृतः ।।१४।।

हे महेश्वरी ! तदनन्तर ९ बार आरती हेतु दीपमाला घुमाये। तब कहे–"समस्त चक्रों की चक्रेश्वरी से युक्त, नव (९) स्वरूप देवि ! मेरी सिद्धि के लिये आप आरती ग्रहण करें। "हे देवी ! पहले मूलमन्त्र कहकर तब यह आरती मन्त्र कहना चाहिये ॥१३-१४॥

आरार्तिके महेशानि चक्रमुद्रा व्यवस्थिता।
वामहस्ताङ्गुष्ठगर्भे कनिष्ठां दक्षिणां नयेत् ।।१५।।
कनिष्ठागर्भगे वामे दक्षाङ्गुष्ठं विनिक्षिपेत्।
अन्योन्यकरयोर्देवि चक्रमुद्रेयमीरिता ।।१६।।

आरती काल में चक्रमुद्रा प्रदर्शित करके आरती करना चाहिये। वाम हाथ के अंगूठे के गर्भ में कनिष्ठा उंगली को विन्यस्त करके उसे दाहिने हाथ में ले तथा दाहिने हाथ के अंगुष्ठ गर्भ में कनिष्ठागुंलि विन्यस्त करके उसे वाम हाथ में लेना होगा। इस प्रकार से हस्तद्वय को परस्पर विपरीतगामी करने से वह चक्रमुद्रा कही जाती है ॥१५-१६॥

आरार्तिकविधिं कृत्वा नैवेद्यं तु निवेदयेत्।
शुद्धस्फटिकसंकाशश्चन्द्ररश्मिसमप्रभः ।।१७।।
लसत्तण्डुलजो देवि चारुमृद्वोदनः प्रिये।
हिङ्गुजीरमरीचाढ्यैरार्द्रकै रुचिरः प्रिये ।।१८।।

हे प्रिये ! आरती करके भगवती को नैवेद्यार्पण करना चाहिये। शुद्ध स्फटिक के समान चन्द्राराशि तुल्य तण्डुल से बना मनोहर मृदु (पका अन्न कड़ा न हो मृदु रहे) अन्न से, हींग जीरा, कालीमिर्च तथा अदरख मिलाकर रुचिकर खाद्य बनाये ॥१७-१८॥

वटकः कुङ्कुमाकारः पायसं हेमसंनिभम्।
दुग्धगम्भीरसुभगं शर्करापूरपूरितम् ।।१९।।
कपिलाघृतसंयुक्तं भूर्जत्वङ्मण्डकाः प्रिये।
शर्करालोलिता देवि सूपं मुद्गोद्भवं तथा ।।२०।।
नानाविधानि पेयानि व्यञ्जनानि बहूनि च।
इत्याद्यन्नरसोपेतं नैवेद्यं कल्पयेद्बुधः ।।२१।।
मनःकल्पितरूपं वा त्रिपुरायै निवेदयेत्।
हेमापात्रगतं दिव्यं परमान्नं सुसंस्कृतम् ।।२२।।
पञ्चधा षड्रसोपेतं गृहाण परमेश्वरि।
विद्यान्ते परमेशानि नैवेद्यमनुरीरितः ।।२३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसका कुंकुम के समान सादा तथा तनिक लाल पिष्टक, सुवर्ण वर्ण पायस बनाये जो गाय के दुग्ध की प्रचुरता से शोभित सुस्वादु तथा मिश्री से पूरित तथा कपिल गौ के घृत से युक्त पकाया गया हो। हे प्रिये! जैसे भोजपत्र पतला होता है, वैसे पतले पिष्टक में शर्करा मिलाये। मूंग की दाल बनाये, नाना प्रकार के पानीय, अनेक प्रकार के व्यञ्जन इत्यादि को बनाये जो नाना अन्नरसों से युक्त हो। बुद्धिमान व्यक्ति को इस प्रकार के नैवेद्य की रचना करनी चाहिये। अथवा अपनी इच्छा के अनुसार नैवेद्य त्रिपुरादेवी को प्रदान करे। हे परमेश्वरी! तब कहे–हे देवी! सुवर्ण के पात्र में दिव्य सुसंस्कृत ५ प्रकार के तथा छः रसयुक्त परमान्न को ग्रहण करिये। हे देवी! 'ऐं क्लीं सौः' के पश्चात् इस मन्त्र को कहे। (जो मूल श्लोक २३ में अंकित है) ॥१९-२३॥

विवृत्ति–कुछ अनुवादकों ने 'मनः कल्पित' का अर्थ किया है मानसिक नैवेद्य प्रदान। लेकिन तन्त्र में मानस कल्पित नैवेद्य का अधिकांश स्थल पर विधान नहीं है।)

परिषिंच्य ततो देवि नित्यहोमं समाचरेत्।
मूलमन्त्रेण देवेशि हुनेत्पञ्चाऽऽहुतिः क्रमात्॥२४॥
प्राणापानौ तथा व्यान उदानञ्च समानकः।
एतत्स्वरूपं जानीयादाहुतीनां च पञ्चकम्॥२५॥

हे देवी! इस प्रकार से नैवेद्य प्रदानोपरान्त नित्यहोम करे। हे देवेशी! मूलमन्त्र से (ऐं क्लीं सौः) ५ आहुति देनी होगी यह पांच आहुति प्राण-अपान–व्यान-उदान तथा समान रूप पंच प्राणस्वरूप है ॥२४-२५॥

विवृति–साधक को नैवेद्य देवी के समक्ष स्थापित करके उसपर मन्त्र द्वारा जल छिड़ककर अर्पित करना चाहिये। यह पांच आहुति प्राणाय स्वाहा, अपानायस्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा कह कर देनी होगी।

षडाहुतीः षडङ्गेन नित्यहोमोऽयमीरितः।
नित्यहोमविधिं कृत्वा बलिदानविधि चरेत्॥२६॥

तत्पश्चात् षडङ्ग से ६ आहुति प्रदान करे। यथा—ऐं हृदयाय स्वाहा, क्लीं शिरसे स्वाहा, सौः शिखायै स्वाहा, ऐं कवचाय स्वाहा, क्लीं नेत्रत्रयाय स्वाहा। यह षड़ङ्ग होम है। इसी प्रकार से नित्य होम कर अनुष्ठान करके बलिदान विधान करे ॥२६॥

ईशाने च तथाऽऽग्नेये नैर्ऋत्ये च तथा प्रिये।
वायव्ये क्रमतो देवि मण्डलानां चतुष्टयम्॥२७॥
श्रीचक्रमभितो देवि त्रिकोणं व्योम चाऽऽलिखेत्।
पूर्वमन्त्रैः समभ्यर्च्य बटुकादिभिरद्रिजे॥२८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एह्येहि देवि पुत्रान्ते वटुकान्तेऽथ नाथ च।
कपिलान्ते जटाभार भासुरान्ते त्रिनेत्र च।।२९।।
ज्वालामुख च सर्वान्ते विघ्नान्नाशय नाशय।
सर्वोपचारसहितं बलिं गृहण द्विधापदम्।।३०।।
वह्निजायान्वितो मन्त्रो बटुकस्य उदाहृतः।
अनेन विधिना देवि बटुकस्य बलिं प्रिये।।३१।।

हे प्रिये ! हे पर्वतकन्ये ! श्री चक्र के चारो ओर ईशान, अग्नि, नैर्ऋत तथा वायुकोण पर चार त्रिकोण मण्डल बनाये। पूर्व मन्त्र अर्थात् 'वां वटुकाय नमः' बीज मन्त्र से वटुक का पूजन करे तथा बलि इस मन्त्र से अर्पित करे–एह्येहि देवीपुत्र बटुकनाथ कपिल जटाभाव् भासुर त्रिनेत्र ज्वालामुख सर्वविघ्नान् नाशय-नाशय सर्वोपचारसहितं बलिं गृहण गृहण स्वाहा। "इस मन्त्र से बटुक को बलि देनी चाहिये। हे प्रिये ! वटुक का यही मन्त्र है। इस विधि से बलि प्रदान करे ॥२७-३१॥

ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि वा
गगनतले भूतले निष्कले वा।
पाताले वाऽनले वा सलिल–
पवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा।।
क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च
कृतपदा धूपदीपादिकेन।
प्रीता देव्यः सदा नः शुभद–
बलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः।।३२।।

ब्रह्माण्ड के ऊर्ध्व में, स्वर्गादि में, अन्तरिक्ष में, भूतल में चन्द्रकला वर्णित स्थल में, पाताल में, अग्नि में, जल में, वायु में, अथवा जिस किसी स्थल में, किवां क्षेत्र, पीठ, उपपीठ में प्रतिष्ठित, वीर श्रेष्ठों से वन्दित देवी गण (योगिनी गण) धूपदीपादि द्वारा, शुभ बलिविधि से प्रसन्न होकर मेरी रक्षा करें ॥३२॥

एतदन्ते महेशानि यां बीजं योगिनी ततः।
भ्यः स्वाहा सर्ववर्णान्ते योगिनीपदमालिखेत्।।३३।।
कवचं चास्त्रमालिख्य वह्निजायां पुनर्लिखेत्।
अनेन मनुना देवि योगिनीनां बलिं हरेत्।।३४।।

हे महेशानि ! इस श्लोक को पढ़कर "यां योगिनीभ्यः स्वाहा सर्वयोगिनिभ्यो 'हुं फट् स्वाहा' मन्त्र से योगिनीगण को बलि प्रदान करें ॥३३-३४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षड्दीर्घस्वरसंभिन्नं क्षकारं विलिखेत्प्रिये ।
स्थानक्षेत्रपदं पालधूपदीपादि चाऽऽलिखेत् ।।३५।।
सहितं बलिमालिख्य गृहण गृहण वदेत् ततो ।
वह्निजायान्वितो मन्त्रः क्षेत्रपालस्य सुन्दरि ।।३६।।

हे सुन्दरी ! हे प्रिये ! छ दीर्घ स्वरयुक्त 'क्ष' वर्ण लिखे अथात् क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः लिखे । तदनन्तर 'स्थान' तदनन्तर 'क्षेत्रपाल' पद लिखकर 'धूपदीपादि' लिखे । तत्पश्चात् 'सहितं बलिं' लिखकर 'गृहण गृहण' कहना होगा तत्पश्चात् 'वन्हिजाया (स्वाहा) लिखे । यह क्षेत्रपाल मन्त्र होगा–''क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्थान क्षेत्रपाल धूपदीपादिसहितं बलिं गृहण गृहण स्वाहा'' । इससे क्षेत्रपाल को बलि प्रदान करे ।।३५-३६।।

अनेन मनुना देवि क्षेत्रपालबलिः स्मृतः ।
गांगींगूंत्रयमालिख्य ङेन्तं गणपतिं ततः ।।३७।।

हे देवी ! इस मन्त्र से अर्थात् 'क्षां क्षीं क्षूं' इत्यादि मन्त्र से शास्त्र में क्षेत्रपाल बलि का विधान कहा गया है । अब 'गां गीं गूं । इन बीजत्रय से चतुर्थ्यन्त गणपति शब्द को कहे । अर्थात् गां गीं गूं गणपतये ।।३७।।

वरान्ते वरदान्ते च सर्वान्ते जनमालिखेत् ।
मे वशं चाऽऽनय प्रोच्य सर्वोपपदमालिखेत् ।।३८।।
चारान्ते सहितं चोक्त्वा बलिं गृहण द्विधापदम् ।
वह्निजायान्वितो मन्त्रो गणपस्य बलिं हरेत् ।।३९।।

तत्पश्चात् 'वर' शब्द के अन्त में वरद शब्द, उसके अन्त में 'सर्व' शब्द, उसके अन्त में 'जनम्' कहे । तदनन्तर 'मे वशं चानय' कहकर 'सर्वोपचार' कहने के अनन्तर ''सहितं' कहकर 'बलिं' कहकर 'गृहण गृहण' कहना होगा । अन्त में वह्निजाया 'स्वाहा' कहकर बलि (पूजोपकरण) प्रदान करे । मन्त्रोद्धार है–गां गीं गूं गणपतये वर वरद सर्वजनं में वशमानय सर्वोपचारसहितं बलिं गृहण गृहण स्वाहा' इस मन्त्र से बलि प्रदान करे ।।३८-३९।।

वामाङ्गुष्ठानामिकाभ्यां बटुकस्य बलिं हरेत् ।
तर्जन्यनामिका चैव मध्यमोपरि योजयेत् ।।४०।।
योन्याकारेण वामेन योगिनीनां बलिर्भवेत् ।
अङ्गुष्ठमध्यमानामा योन्याकारेण योजयेत् ।।४१।।
वाममुष्टिं विधायाऽऽदौ तर्जनीं सरलां कुरु ।
अनया मुद्रया देवि क्षेत्रपालबलिर्भवेत् ।।४२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वाम हांथ के अंगूठे तथा अनामिका द्वारा बटुक को बलि देनी चाहिये । तर्जनी तथा अनामिका को मध्यमा के ऊपर युक्त करे । वामहस्त को इस प्रकार योनि के आकार का करने से जो मुद्रा होती है, उसी से योगिनीगण की बलि होगी । हे देवी ! पहले बायें हाथ की मुट्ठी को बांधकर तर्जनी को सरल करे । इस मुद्रा से क्षेत्रपाल बलि होगी ॥४०-४२॥

तथा मुष्टेस्तु मध्यस्थामङ्गुलीं दण्डवत्कुरु ।
गजतुण्डा महामुद्रा गणपस्य बलिर्भवेत् ।।४३।।

दाहिनी हथेली की मुट्ठी बन्द करके मध्यमागुंलि को दण्डवत् ऊपर की ओर सीधी करे । यह गजतुण्डा नामक महामुद्रा होती है । इससे गणपति को बलि देनी चाहिये ॥

अथवा वामभागे तु मण्डलं चैकमालिखेत् ।
तत्रैव बलिदामं तु कुर्यात्सर्वार्थसिद्धये ।।४४।।

अथवा वामभाग में एक मण्डल अंकित करके वहां समस्त कामना सिद्धि के लिये बलिप्रदान करे ॥४४॥

आत्मविद्यां शिवैस्तत्त्वैर्गुरुं संतर्प्य देवताम् ।
संतोष्याऽऽनन्दसहितः सर्वकर्माणि साधयेत् ।।४५।।

शिवतत्व अर्थात् पञ्चतत्व (मत्स्य, मांस, मद्य, मुद्रा, मैथुन) से गुरु को तृप्त करके आत्मविद्या नामक देवता अर्थात् परमेश्वरी को (पञ्चतत्व द्वारा) सन्तुष्ट करके आनन्द के साथ समस्त कर्म का सम्पादन करे ॥४५॥

अनेन विधिना देवि पूजयेत्परमेश्वरीम् ।
पञ्चसिंहासनोन्नद्धां परमानन्दरूपिणीम् ।।४६।।

हे देवी ! इस पञ्चम पटलोक्त विधान से पंचसिंहासन पर सुसज्जिता (आसीन) परमानन्दरूपिणी परमेश्वरी की पूजा करनी चाहिये ॥४६॥

पञ्चसिंहासनोन्नद्धां चित्कलां चिन्तयेत्सदा ।
वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेत्प्रिये ।।४७।।
तर्पणं तु तथा कुर्यात्सर्वसौभाग्यवान्भवेत् ।।४८।।

हे देवी ! हे प्रिये ! पञ्चसिंहासन पर आसीन चैतन्य कला रूपा देवी का सदा चिन्तन करे । चार लाख जप का पुरश्चरण करे । इसका दशांश (चालिस हजार) होम करना चाहिये ।

होम का दशांश तर्पण (४०००) करना चाहिये । इससे साधक सर्वसौभाग्य प्राप्त करता है ॥४७-४८॥

पञ्चम पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षष्टः पटलः

(पञ्चसिंहासन वर्णन, परिवारार्चन, प्रथम सिंहासन वर्णन)

श्रीदेव्युवाच–

पञ्चसिंहासनगता कथं सा त्रिपुरा परा।
कथयस्व महेशान कथं सिंहासनं भवेत् ।।१।।

श्री देवी कहती है–हे महेश्वर ! वे परा त्रिपुरा देवी किस रूप पञ्चसिंहासन पर स्थित हैं ? वह पंचसिंहासन कैसा है ? कृपया कहिये ॥१॥

ईश्वर उवाच–

यथा श्रीत्रिपुरा बाला तथा त्रिपुरभैरवी।
संपत्प्रदा नाम तस्याः शृणु निर्मलमानसे ।।२।।

ईश्वर कहते हैं—हे निर्मलमानसवाली ! श्री त्रिपुराबाला का रूप जिस प्रकार से सम्पत्प्रद है, त्रिपुराभैरवी देवी भी उसी प्रकार सम्पत्प्रदा हैं। इनका नाम है सम्पत्प्रदा। इनके सम्बन्ध में सुनो। अथवा उनका नाम (मन्त्र) सुनो ॥२॥

शिवचन्द्रौ वह्निसंस्थौ वाग्भवं तदनन्तरम्।
कामराजं तथा देवि शिवचन्द्रान्वितं ततः ।।३।।
पृथ्वीबीजान्तवह्न्याढ्यं तार्तीयं शृणु वल्लभे।
शक्तिबीजे महेशानि शिवं वह्निं च योजयेत् ।।४।।
व्योमादिवह्निसंस्थं तु विशेषं शृणु वल्लभे।
कुमार्याः परमेशानि हित्वा सर्गं तु बैन्दवम् ।।५।।
त्रिपुरा भैरवी देवी महासंपत्प्रदा प्रिये।
अनया सदृशी विद्या त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ।।६।।

हे देवी ! शिव (ह), चन्द्र (स), वह्नि (र) स्थित, तदनन्तर वाग्भव (ऐं) कामराज (क्लीं) तदनन्तर शिव चन्द्र युक्त (ह्स्) पृथिवी बीज (ल)। अन्त में वह्नि युक्त तृतीय बीज। हे वल्लभे ! श्रवण करो। हे महेशानी ! शक्तिबीज (ह्रीं) शिव (ह) तथा वह्नि (र) की योजना करे। हे प्रिये ! आकाशादि वह्नि स्थित विशेष है। हे परमेश्वरी ! इसे विशेष रूप से जान लेने पर इस सर्ग का भेदन हो जाता है। यहां त्रिपुरा भैरवी का मन्त्र संकेत से कहा गया है " है म्रं क्लीं हस क्लीं"। विशेष मन्त्र है 'ह्यल्रीं'। हे प्रिये ! ये त्रिपुरादेवी महासम्पत्प्रदा हैं। इनके समान विद्या तीनों लोकों में दुर्लभ है ॥३-६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ब्रह्मानन्दमयी साक्षात्सर्वसाम्राज्यदायिनी ।
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि महासंपत्प्रदं प्रिये ।।७।।

हे प्रिये ! ये साक्षात् ब्रह्मानन्दमयी, सकल साम्राज्यप्रदान कारिणी, हैं। इनका ध्यान कहता हूँ। यह ध्यान महान् सम्पत्प्रदायक है ।।७।।

आताम्रार्कसहस्राभां स्फुरच्चन्द्रजटाशिखाम् ।
किरीटरत्नविलसच्चित्रचित्रितमौक्तिकाम् ।।८।।
स्रवद्रुधिरपङ्काढ्यमुण्डमालावलीयुताम् ।
नयनत्रयशोभाढ्यां पूर्णेन्दुवदनान्विताम् ।।९।।
मुक्ताहारलताराजत् पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
त्रिवलीखचितालग्नां नानाभरणभूषिताम् ।।१०।।
रक्ताम्बरपरीधानां यौवनोन्मत्तरूपिणीम् ।
पुस्तकं चाभयं वामे दक्षिणे चाक्षमालिकाम् ।।११।।
वरदानरतां नित्यं महासंपत्प्रदां स्मरेत् ।
न्यासपूजादिकं सर्वं कुमार्या इव सुव्रते ।।१२।।

ईषत् रक्तवर्ण के सहस्र सूर्य के समान प्रभायुक्त, जटारूप शिखा दीप्यमान चन्द्र के समान, रत्न के द्वारा शोभमान तथा विचित्र मुक्ता द्वारा चित्रित मुकुटयुक्ता, नयनत्रय द्वारा शोभिता, पूर्णचन्द्रतुल्यमुखमण्डल युक्ता, पीन तथा उन्नत घन स्तन के ऊपर मुक्ताहार से मण्डिता, त्रिवली द्वारा सम्यक् लग्ना, नाना अलंकार से अलंकृता, परिधान में लालवस्त्र धारिणी, यौवन के कारण उन्मत्तकारिणी, पुस्तक, अभय, अक्षमाला धारिणी, वरदानरता, महा सम्पत्प्रदा देवी का चिन्तन करे।

हे सव्रते ! त्रिपुराबाला के न्यास पूजा की तरह त्रिपुरा भैरवी का भी न्यास पूजन करना चाहिये ।।८-१२।।

त्रिपुरा भैरवी देवी पञ्चसिंहासनान्विता ।
प्रथमं शृणु देवेशि ब्रह्मा सृष्टिकरो यदा ।।१३।।
निश्चेतनोऽपि देवेशि तदा त्रिपुरदेवताम् ।
समाराध्याभवत्कर्ता सृष्टेस्तु परमेश्वरि ।।१४।।
ब्रह्माणं तं समाराध्य तपसा महता प्रिये ।
शक्रोऽभूद्देवराजोऽयं पूर्वस्यां दिशि पालकः ।।१५।।
तदा प्रसन्ना त्रिपुरा पूर्वसिंहासनस्थिता ।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि पूर्वसिंहासनस्थिताम् ।।१६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे देवेशी ! त्रिपुरा भैरवी देवी पंचसिंहासन समन्विता है । ब्रह्मा जब सृष्टि करते हैं, उस प्रथम कथा को सुनो ॥१३॥

हे देवेशी ! हे परमेश्वरी ! ब्रह्मा ने निश्चेतन स्थिति में अर्थात् सृष्टि विषयक ज्ञान से रहित होने पर जब इन त्रिपुरदेवता की आराधना किया था, तभी वे सृष्टि के कर्त्ता हो सके थे ।

हे प्रिये ! देवराज इन्द्र ने इन ब्रह्मा की महत् तपस्या द्वारा आराधना करके पूर्वदिक् के दिकपाल का पद प्राप्त किया था ।।

ब्रह्मा की अराधना से तब पूर्व सिंहासनस्था भगवती त्रिपुरा प्रसन्न हो गयीं । हे देवी ! सुनों, पूर्व सिंहासनस्था त्रिपुरा के सम्बन्ध में कहता हूँ ॥१३-१६॥

वाग्भवं बीजमुच्चार्य जीवप्राणसमन्विताम् ।
सकला भुवनेशानि द्वितीयं बीजमुद्धृतम् ।।१७।।
जीवं प्राणं वह्निसंस्थं शक्रस्वरविभूषितम् ।
विसर्गाढ्यं महेशानि विद्या त्रैलोक्यमातृका ।।१८।।
त्रैलोक्यमोहनी देवी परब्रह्मचिदात्मिका ।
चैतन्य भैरवी नाम चेतना निष्कले शिवे ।।१९।।

पहले वाग्भव बीज 'ऐं' का उच्चारण करके जीव-प्राण समन्विता (सं) कला भुवनेशानी अर्थात् 'स्क्लह्रीं' कहे । अब द्वितीय बीज का उद्धार करे । यथा जीव (स) प्राण (ह) को वह्निसंस्थ ('र') से युक्त) करे । इससे इन्द्रस्वर (औ) तथा विसर्ग (:) युक्त करे । इससे त्रैलोक्यमातृका विद्या का उद्धार होगा । यथा—सैं ह् स् क्ल ह्रीं से ह्रौः ।

हे देवी ! चैतन्यात्मक परब्रह्मरूप, त्रैलोक्यमोहिनी, चैतन्यभैरवी नामक देवी निष्कल शिव की चेतना स्वरूप हैं ॥१७-१९॥

उद्यद्भास्वत्सहस्राभां नानालंकारभूषिताम् ।
मुकुटोज्ज्वलसच्चन्द्रलेखां रक्ताम्बरान्विताम् ।।२०।।
पाशाङ्कुशधरां नित्यां वामहस्तकपालिनीम् ।
वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघनस्तनीम् ।।२१।।
एवं ध्यात्वा भजेद्देवीं पूर्वसिंहासनस्थिताम् ।
द्विरावृत्त्या षडङ्गानि न्यसेत्सर्वाङ्गलक्षणाम् ।।२२।।

उन देवी की कान्ति उदीयमान सहस्रसूर्य के समान दीप्तिमान है । ये नाना अलंकार से अलंकृत हैं । इनके मुकुट में उज्वल चन्द्ररेखा स्थित है । ये रक्तवस्त्र धारिणी, पाश–

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अंकुश धारिणी, नित्या, हाथों में कपाल धारिणी, वरदानकारिणी (वर मुद्रा), अभयमुद्रा से शोभान्विता, स्थूल उन्नत घनस्तन युता हैं।

इस प्रकार ध्यान करके पूर्वदिक् स्थित सिंहासनस्थिता देवी का भजन करे। दो बार आवृत्ति से षड़ङ्ग ध्यान करे। ऐं हृदयायनमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। सौः शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्। सौः अस्त्राय फट्। इस प्रकार से सर्वाङ्गलक्षण षड़ङ्गन्यास कहा गया ॥२०-२२॥

यन्त्रमस्याः प्रवक्ष्यामि देवि त्रैलोक्यमोहनम्।
त्रिकोणं चैव षट्कोणं वसुपत्रं वरानने ।।२३।।
चतुरस्त्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत्।
तत्राऽऽवाह्य महादेवीं पूर्ववत्परमेश्वरीम् ।।२४।।
मुद्राः प्रदर्शयेत्पश्चात्परिवारार्चनं यजेत्।
प्रथमावरणं देवि षडङ्गानां तु पूर्ववत् ।।२५।।

हे देवी! त्रैलोक्य मोहन यन्त्र कहते हैं। हे वरानने! पहले त्रिकोण, तदनन्तर षट्कोण, अष्टदलपद्म, चतुष्कोण तथा चतुष्कोण समन्वित मण्डलांकन करे। इस मण्डल में पहले की तरह (जैसे त्रिपुराबाला का आवाहन किया था) आवाहन के समान महादेवी परमेश्वरी का आवाहन करके मुद्रा प्रदर्शित करे। हे देवी! त्रिपुरादेवी के परिवार की पूजा करे। प्रथम आवरण में षड़ङ्ग की पूजा पूर्ववत् अर्थात् "ऐं हृदयाङ्गशक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः। क्लीं शिरोऽशक्तिः-श्रीपादुकां पूजयामि नमः, सौः शिखाङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं कवचाङ्गशक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः। इस प्रकार षड़ङ्ग पूजा करे ॥२३-२५॥

रत्यादिकास्ततः पूज्याः पूर्ववत्परमेश्वरि।
अग्रे वसन्तं वामे तु कामदेवं वरानने ।।
चापं दक्षिणकोणे च बाणान् पूर्ववदद्रिजे।
डाकिनीं राकिनीं चैव लाकिनीं काकिनीं तथा ।।२६।।

हे परमेश्वरी! वरानने! हे पर्वतकन्ये! तदनन्तर पहले की तरह त्रिपुराबला पूजा प्रसंग में रति प्रभृति की पूजा का विधान कहा गया था, उसी प्रकार यहाँ भी रति प्रभृति की पूजा करनी चाहिये। यथा अग्निकोण में रति की, ईशान में प्रीति की, नैर्ऋत में मनोभवा की पूजा करे। साधक अपने आगे वसन्त की, वामभाग में कामदेव की, दक्षिण में अर्थात् नैर्ऋत में धनुष की पूजा करके बाण की पूजा करे। यथा-उत्तर की ओर क्षोभण तथा द्रावण बाण की, दक्षिणदिक् में-आकर्षण तथा वश्य बाण की, पूर्व दिक् में उन्माद नामक बाण की पूजा करे ॥२६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शाकिनीं हाकिनीं देवि पश्चिमादिक्रमाद्यजेत् ।
अनङ्गकुसुमा मुख्या वसुपत्रेषु पूर्ववत् ।।२७।।

पश्चिमादि क्रम से अर्थात् यथाक्रम पश्चिम में डाकिनी की, वायु कोण में राकिनी की, उत्तर में लाकिनी की, ईशान कोण में काकिनी की, पूर्व में शाकिनी की तथा अग्निकोण में हाकिनी शक्ति की पूजा करनी चाहिये ॥२७॥

परभृत्सारसौ चैव शुकमेघाह्वयौ पुनः ।
अपाङ्गभ्रूविलासौ च हावभावौ प्रपूजयेत् ।।२८।।

अष्टदल पद्म के पत्र समूह में पूर्ववत् अनङ्गकुसुमा, अर्थात् आठ पद्मपत्रों में अनंगकुसुमा, अनंगादिमेखला, अनँगमदना, अनंगमदनातुरा, सुभगा, भगा, भगसर्पिणी तथा भगमाला की पूजा करे। इनमें से अनंगकुसुमा प्रधान हैं। तदनन्तर अष्टदलपद्म में पूर्वादिक्रम में पत्रसमूह में यथाक्रमेण कोकिल, सारस, शुक्र, चातक, अपाङ्ग, भ्रूविलास, हाव तथा भाव की पूजा करे ॥२८॥

इन्द्राद्या लोकपालास्तु क्रमेण परिपूजयेत् ।
पूर्वसिंहासने देवि कथिता वीरवन्दिते ।।२९।।

हे वीरवन्दिते ! तदनन्तर दसो दिशाओं में पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादि लोकपाल गण का पूजन करना चाहिये। लोकपालगण पूर्वसिंहासन कहे जाते हैं ॥२९॥

कामेश्वरी च रुद्राणां पूर्वसिंहासनस्थिता ।
एतस्या एव विद्याया बीजद्वयमुदाहृतम् ।।३०।।

एकादशरुद्रों की कामेश्वरी पूर्वसिंहासन पर स्थित हैं। इनकी विद्या के दो बीज 'ऐं क्लीं पहले कहे गये हैं ॥३०॥

तदन्ते परमेशानि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ।
एतस्या एव तार्तीयं रुद्राणां परमेश्वरि ।।३१।।

हे देवी ! चैतन्य देवी की पूजाध्यान प्रभृति त्रिपुराभैरवी की ही पूजा के समान है। हे निष्पापे। त्रिकोण में कुछ विशेष रहस्य है, उसे कहता हूँ ॥३१॥

पूजाध्यानादिकं देवि चैतन्यायाश्च पूर्ववत् ।
त्रिकोणे तु विशेषोऽस्ति कथयामि तवानघे ।।३२।।
अग्रकोणक्रमेणैव नित्यां क्लिन्नां मदद्रवाम् ।
षडङ्गावरणात्पश्चात्पूजयेत्सर्वसिद्धये ।।३३।।
अनेनैव प्रकारेण पूर्वसिंहासनस्थिताम् ।
त्रिपुरां भैरवीं देवीं पूजयेत्परमेश्वरीम् ।।३४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षड़ङ्ग देवता की पूजा के अनन्तर त्रिकोण के अध:कोण में नित्या की, वाम दिक के उर्ध्व कोण में क्लिन्ना की तथा दाहिने वाले उर्ध्वकोण में मदद्रवा की पूजा सर्वासिद्धि के लिये करे।

इस प्रकार से पूर्वसिंहासनस्थिता परमेश्वरी त्रिपुरभैरवी की पूजा करनी चाहिये ।।३३-३४।।

षष्ट पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सप्तमः पटलः

(महात्रिपुरभैरवी की अराधना, ध्यान, द्वितीयसिंहासन वर्णन)

ईश्वर उवाच–

एतामाराध्य देवेशि महात्रिपुरभैरवीम् ।
पालकोऽभून्निश्चलोऽपि प्रेतत्वात्सुरवन्दिते ।।१।।
योगनिद्राछलाद्देवि प्रेतत्वं तस्य निश्चलम् ।
तद्ध्यानेन स्वयं शक्तिरभूत्कुवलयेक्षणे ।।२।।

ईश्वर कहते हैं–हे देवेशी ! हे देववन्दिते ! विष्णु अपने प्रेतत्व के कारण निश्चल होकर भी इन महात्रिपुरभैरवी की अराधना करके जगतत्कर्त्ता हो गये ।।

हे देवी ! हे कमलनयने ! योगनिद्रा की छलना के कारण वे प्रेतत्व से निश्चल थे । महात्रिपुरभैरवी ध्यान के प्रभाव से विष्णु स्वयं शक्ति हो गये ।।१-२।।

तामाराध्य महाविष्णुरघोरेण मुखेन च ।
त्रिपुरो निर्जितो देवि त्रैलोक्यभयकारकः ।।३।।

हे देवी ! महाविष्णु ने महात्रिपुरा की अराधना करके भयकारक त्रिपुर पर जय किया । (पुराणादि में महादेव ने भयकारक त्रिपुर को हत किया था तभी वे त्रिपुरारी कहलाये । इस ग्रन्थ में कहते हैं कि महविष्णु ने अघोरमुख से त्रिपुर पर जय किया था । इससे ज्ञात होता है कि महादेव के वामदेव, सयोजात, ईशान, अधोर तथा तत्पुरुष रूप पंचमूर्त्ति में से अघोरमूर्त्ति महाविष्णु ही हैं ।।३।।

तदा सिंहासने प्रौढ़ा दक्षिणे परमेश्वरि ।
मन्त्रं तस्याः प्रवक्ष्यामि रिपुभारनिकृन्तनम् ।।४।।

हे परमेश्वरी ! त्रिपुर के पराजित होने पर दक्षिण के सिंहासन पर देवी आरुढ़ हो गयी थीं । अब उनका शत्रुमार नाशक मन्त्र कहते हैं ।।४।।

शिवचन्द्रौ मादनान्तं वान्तं वह्निसमन्वितम् ।
शक्तिभिन्नं बिन्दुनादकलाढ्यं वाग्भवं प्रिये ।।५।।
संपत्प्रदाया भैरव्याः कामराजं तदेव हि ।
सदाशिवस्य बीजं तु सिंहासनगतस्य च ।।६।।
एषा विद्या महेशानि वर्णितुं केन शक्यते ।
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि रिपुभारनिकृन्तनम् ।।७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे प्रिये ! शिव (ह्) चन्द्र (स्) मादनान्त (ख) वह्नि (र) समन्वित, शक्ति (ए) मिश्रित, बिन्दुनाद कलायुक्त (ं)यह महात्रिपुरभैरवी कर वाग्भव प्रथम बीज अर्थात् 'ह् स् ख् फ्रें' है। सम्पत् प्रदा भैरवी का बीज "हस्ल्क्रीं" यह महात्रिपुरभैरवी का द्वितीय कामराज बीज है। महासिंहासनगत सदाशिव का बीज अर्थात् 'हेसौः' यह तृतीय बीज है। अतः इनका सम्पूर्ण मन्त्र है–

ह् स् ख् फ्रें ह् स् ल्क्रीं हे सौः। हे महेशानी ! इसका वर्णन कौन कर सकता है ? इसका शत्रुभावछेदक ध्यान से सुनो ॥५-७॥

उद्यत्सूर्यसहस्राभां चन्द्रचूडां त्रिलोचनाम्।
नानालंकारसुभगां सर्ववैरिनिकृन्तनीम् ॥८॥
स्रवद्रुधिरमुण्डालिकलितां रक्तवाससम्।
त्रिशूलं डमरुं चैव खड्गं खेटकमेव च ॥९॥
पिनाकं च शरान्देवि प्राशाङ्कुशयुगं क्रमात्।
पुस्तकं चाक्षमालां च शिवसिंहासने स्थिताम् ॥१०॥
एवं ध्यात्वा महेशानि पूजामण्डलमारभेत्।
त्रिकोणं चैव वृत्तं च वृत्ताष्टदलनीरजम् ॥११॥
वृत्तं भूसदनोपेतमेषा त्रिपुरयन्त्रिका।
वामां ज्येष्ठां च रौद्रीं च काली च वरलोचने ॥१२॥
कलाढ्यां च बलाढ्यां च यजेद्विकरिणीं प्रिये।
बलप्रमथिनीं चैव सर्वभूतान्तमावदेत् ॥१३॥
दमनीं च तथाऽर्चित्वा मनोन्मनीपदान्विताम्।
एवं पीठं समभ्यर्च्य ततः सिंहासनं यजेत् ॥१४॥

उदीयमान सहस्रों सूर्य की प्रभा के तुल्य प्रभायुक्ता, ललाट चन्द्र से युक्त, त्रिनयना, नानाभूषणों से सौभाग्यवती, सर्वशत्रु विनाशिनी, (रक्तधारा प्रवह्यान मुण्डमाला युक्ता, रक्तवस्त्रधारिणी, त्रिशूल, डमरु, खड्ग, खेटक, पिनाक, शर, पाश तथा अंकुशयुगल एवं पुस्तक तथा माला धारिणी, शिवसिंहासनासीना, देवी का ध्यान करे।

हे देवी ! हे महेशानी ! पूजामण्डल अंकित करे। पहले त्रिकोण, तदनन्तर वृत्त, पुनः वृत्त, तदनन्तर अष्टदल पद्म तदनन्तर वृन्त तदनन्तर भूपुर अंकित करे। यही है त्रिपुरायन्त्रा हे वरलोचने ! इस यन्त्र में वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, कालकारिणी, वलविकारिणी, बलप्रमथिनी, सर्वभूतदमनी, मनोन्मनी, इन पीठ देवता की अर्चना करके तदनन्तर सिंहासन पूजन करे ॥८-१४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अघोरविद्यारूपं तु महापापनिकृन्तनम् ।
अघोरे वाग्भवं देवि घोरे तु भुवनेश्वरीम् ।।१५।।
घोरघोरतरेभ्यश्च विलिख्य सुरवन्दिते ।
सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो देव्या बीजयुगं लिखेत् ।
नमस्तेऽस्तुपदं कुर्याद्रुद्ररूपे हसौ लिखेत् ।।१६।।
त्रिंशद्भिश्च त्रिभिर्वर्णैर्विनद्धेयं कथिता प्रिये ।
अनेन मनुना देवि यजेत्सिंहासनं बुधः ।
आवाहनादिकं कुर्यात् क्रमार्चनमतः परम् ।।१८।।

अघोर विद्या का स्वरूप महापाप नाशक है। हे देवी ! हे सुखवन्दिते ! पहले 'अघोर' कहकर वाग्भव (ऐं) कहने के पश्चात् 'घोरे' तथा भुवनेश्वरीम् (ह्रीं) कहे। तत्पश्चात् 'घोरघोरतरेभ्य:' कहकर 'सर्वेभ्य: सर्वशर्वेभ्य:' कहे। तदनन्तर देवी के बीजद्वय 'ह्रीं श्रीं' कह कर 'नमस्तेस्तु' कहने के अनन्तर 'रुद्ररूपे हसौ' कहे, तब मन्त्रोद्वार होगा- 'अघोरे ऐं घोरे ह्रीं घोरघोरतेभ्य: सर्वेभ्य: सर्वशर्वेभ्य: ह्रीं श्रीं नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपे हेसौ:'। हे प्रिये ! हे देवी ! यह अघोरमन्त्र ३३ वर्णो का है। इस मन्त्र से विद्वान व्यक्ति सिंहासन पूजन करे। तत्पश्चात् आवाहनादि करके क्रमश: पूजन करे ॥१५-१८॥

आदावङ्गावृत्तिर्देवि द्विरावृत्त्याऽङ्गपूजनम् ।
रत्यादित्रयमभ्यर्च्य तथाऽनङ्गादिका यजेत् ।।१९।।
ब्राह्म्यादियुग्मं संपूज्य वसुपत्रेषु मातृकाः ।
भूबिम्बे लोकपालांश्च सायुधान्परमेश्वरी ।।२०।।
द्वितीयसिंहासनगां पूजयेद्रुद्रभैरवीम् ।।२१।।

हे देवी ! पहले अंगावृत्ति करनी चाहिये। अर्थात् 'ह्स्ख्फ्रें शिरसे स्वाहा। ह्सौ: कवचाय हुँ। ह् स् क्लरीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्सौ: अस्त्रायफट्। यह पूजा करके रति, प्रीति तथा मनोभवा की पूजा करके (षष्टपटल के श्लोक २८ के अनुसार) अनंगकुसुमा आदि ८ की पूजा करे। कमल के अष्टपत्र पर पूर्वादि क्रमेण ब्राह्मी, वैष्णवी, माहेशी, कौमारी, चामुण्डा, अपराजिता, वाराही, नारसिंही इन अष्ट मातृकाओं की पूजा करनी चाहिये।

हे परमेश्वरी ! तदनन्तर भूपुर पर आयुधो के साथ इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन करे। इसके अनन्तर द्वितीय सिंहासन (दक्षिण सिंहासनस्था) पर रुद्रभैरवी का पूजन करे। महात्रिपुर भैरवी का ही अन्य नाम है रुद्रभैरवी ॥१९-२१॥

सप्तम पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अष्टमः पटलः

(पश्चिम सिंहासन कथन, षट्कूट भैरवीवर्णन)

ईश्वर उवाच–

पश्चिमे भैरवी देवी षट्कूटा परमेश्वरी ।
यत्स्फूर्त्या स शिवो देवि सृष्टिसंहारणक्षमः ।।१।।

ईश्वर कहते हैं—हे देवी ! पश्चिम सिंहासन पर परमेश्वरी षट्कूटा भैरवी स्थित हैं। इनकी ही स्फूर्त्तिरूप (प्रकाश) से शिव सृष्टि–संहार में समर्थ होते हैं ॥१॥

डाकिनीराकिनीबीजे लाकिनीकाकिनीयुगात् ।
बीजे आहृत्य देवेशि योजयेच्चन्द्रसूर्ययोः ।।२।।
आद्यमैकारसंयुक्तमन्यदीकारमण्डितम् ।
शक्रस्वरसमायुक्तं तार्तीयं बीजमालिखेत् ।।३।।
बिन्दुनादकलाक्रान्तं तृतीयं शैलसम्भवे ।
एषा विद्या महेशानि रुद्रसिंहासेन स्थिता ।।४।।

हे देवेशी ! हे पर्वतनन्दिनी ! डाकिनी तथा राकिनी के बीज (ड् तथा र्) तथा लाकिनी (ल्) एवं काकिनी (क्) के बीज का आहरण करके चन्द्र (स) तथा सूर्य (ह) से योजित करे। प्रथम बीज ऐकार संयुक्त, द्वितीय बीज ईकार युक्त तथा तृतीय बीज शक्रस्वर (औ) से युक्त तथा विन्दुनादकला (ँ) युक्त होगा। अत एवं षट्कूटा भैरवी का मन्त्र है– 'ड् र् ल् क् स् हैं ड् र् ल् क् स् हीं ड् र् ल् क् स हौं' होगा। ये ही षट्कूटा भैरवी रुद्रसिंहासन पर स्थित हैं ॥२-४॥

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि सर्वभूतनिकृन्तनम् ।
बालसूर्यप्रभां देवीं जपाकुसुमसन्निभाम् ।।५।।
मुण्डमालावलीरम्यां बालसूर्यसमांशुकाम् ।
सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम् ।।६।।
पाशाङ्कुशौ पुस्तकं च दधानां जपमालिकाम् ।
एवं ध्यात्वा यजेद्देवीं मानसैरुपचारकैः ।।७।।

अब सर्वभूत विनाशक इनका ध्यान करता हूँ। (सर्वभूत विनाशक अर्थात् देहात्मबोध नाशक) बालसूर्य के समान प्रभावाली, जवाकुसुम के वर्ण वाली, मुण्डमालासमूह से रमणीया, बालसूर्य के वर्ण के समान रंगवाले वस्त्रों को धारण करने वाली, सुवर्ण कलस के समान स्थूल तथा उन्नत स्तनों वाली, पाश, अंकुश, पुस्तक, जपमाला धारिणी देवी का ध्यान करके मानसोचारों से पूजा करे ॥५-७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्विरावृत्त्यां षडङ्गानि विधाय परमेश्वरि ।
यन्त्रमस्या वरारोहे त्रिकोणं तत्पुटं लिखेत् ।।८।।
बहिरष्टदलं पद्मं रविपत्रं समालिखेत् ।
चतुरस्त्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।।९।।

हे देवी ! दो बार आवृत्ति से षड़ंग न्यास करे । यथा ड् र् ल् क् स् हैं हृदयाय नमः । ड् र् ल् क् स् हीं शिरसे स्वाहा । ड् र् ल् क् स् हौं शिखायै वषट् । ड् र् ल् क् स् हैं कवचाय हूँ । ड् र् ल् क् स् हीं नेत्रत्रयाय वौषट् । ड् र् ल् क् स् हौं अस्त्रायफट् । इस प्रकार से न्यासोपरान्त देवी का यन्त्राङ्कन करे ।

हे सुन्दरी ! प्रंथमतः एक त्रिकोण बनाकर उसके बाहर भीतर पुनः त्रिकोण बनाये । उसके बाहर अष्टदलपद्म, उसके बाहर द्वादशदल पद्म बनाना होगा । यह बाहर से चतुर्द्वार युक्त चतुरस्त्र से घिरा होगा । इस प्रकार से यह मण्डल होगा ॥८-९॥

षडङ्गावरणं देवि पूर्ववत्पूजयेत्प्रिये ।
रत्यादित्रितयं देवि त्रिकोणे परिपूजयेत् ।।१०।।
डाकिन्याद्यास्तु षट्कोणे वसुपत्रे ततः परम् ।
ब्राह्म्यादियुगलं पश्चाद्रविपत्रे ततः परम् ।।११।।

हे प्रिये ! पहले षड़ङ्गावरण की पूजा करनी चाहिये । अर्थात् 'ड् र् ल् क् स् हैं''– हृदयाङ्ग शक्तयेनमः, इत्यादि षड़ङ्गन्यास की रीति से दो बार आवृत्ति करके पूजा की जाये । हे देवी ! त्रिकोण में नीचे दाहिनी ओर के कोण में रति, वामकोण में प्रीति तथा उर्ध्वकोण में मनोभवा का पूजन करे ॥१०-११॥

बालायाः पीठशक्तीस्तु वामाद्याः पूजयेत्प्रिये ।
चतुरस्त्रे लोकपालान् सायुधान् परमेश्वरि ।।१२।।
एवं पूजाविधिं कुर्याद्भोगमोक्षफलाप्त्ये।
अनेनैव विधानेन नित्याख्यां भैरवीं यजेत् ।।१३।।

तत्पश्चात् षट्कोण में नीचे दाहिनी ओर डाकिनी की बायें उर्ध्व कोण में राकिनी की, दाहिने उर्ध्वकोण में लाकिनी की, त्रिकोण के नीचे दाहिनी ओर काकिनी की, नीचे वामकोण में शाकिनी की तथा नीचे वाले उर्ध्व कोण में हाकिनी की पूजा करे । ये सभी देवी की पीठ शक्ति हैं ।

तदनन्तर अष्टदल कमल के आठ पत्रों में यथाक्रम ब्राह्मी-असिताङ्ग, माहेश्वरी-रुरु, कौमारी-चण्ड, वैष्णवी-क्रोध, वाराही उन्मत्त, माहेन्द्री कपाली, चामुण्डा-भीषण, महालक्ष्मी-संहार, इन युगल की पूजा करनी चाहिये ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसके अनन्तर द्वादश पत्र में वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, कलविकलिनी, बलविकारिणी, बलप्रमथिनी, सर्वभूतदमनी, मनोन्मनी की पूजा करे। हे परमेश्वरी ! तदनन्तर यन्त्र के चारो कोणों में आयुधों के साथ इन्द्रादि लोकपालों का पूजन होगा। भोग-मोक्ष की प्राप्ति हेतु इस पूजा का अनुष्ठान होता है। इस विधान से नित्य भैरवी की पूजा करनी चाहिये ॥१२-१३॥

सर्वसौभाग्यदां नित्यां सर्वसाम्राज्यदायिनीम्।
एतस्या एवं विद्यायाः षड्वर्णान् क्रमतः स्थितान् ॥१४॥
विपरीतान् वद प्रौढे विद्येयं भोगमोक्षदा।
नित्याख्या भैरवी देवि रिपुभारनिकृन्तनी ॥१५॥
न्यासपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ॥१६॥

ये नित्या भैरवी सर्व सौभाग्यप्रदा तथा सर्वसाम्राज्य दायिनी हैं। षट्कूटा के मन्त्र में स्थित वर्णों को विपरीत भाव से कहे। हे प्रौढ़े ! उससे नित्या भैरवी का मन्त्र होगा। यह भोग-मोक्ष दायक है। नित्या भैरवी का मन्त्र हैं 'ह् स् क् ल् र डैं, ह् स् क् ल् र डीं, ह स् क ल् डौं। नित्या भैरवी शत्रुदहना हैं। इनका न्यास पूजा सब षड्कूटा भैरवी विधान वत् होगा ॥१४-१६॥

अष्टम पटल समाप्त।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नवमः पटलः

(सिंहासन विद्याविधान भुवनेश्वरी भैरवीमन्त्र-न्यासादि, अन्नपूर्णा भैरवी मन्त्र-पूजा-पदन्यासादि, आवरण पूजा, चन्द्रकलादि पूजा, पूर्वाद्याम्नाय वर्णन)

ईश्वर उवाच–

शृणु देवि महाविद्यां चिन्तितेष्टफलप्रदाम् ।
यस्या विज्ञानमात्रेण भुवनाधिपतिर्भवेत् ।।१।।

ईश्वर कहते हैं–हे देवी ! चिन्तन मात्र से इष्टफलप्रदा महाविद्या का वर्णन सुनो, जिनके जानने मात्र से साधक भुवनाधिपति होता है ॥१॥

हंसाद्यं वाग्भवं चाऽऽद्यं हसकान्ते सुरेश्वरि ।
भूबीजं भुवनेशानी द्वितीयं बीजमुद्धृतम् ।।२।।

हे सुरेश्वरी ! पहले 'हंस', तदनन्तर वाग्भव (ऐं) योग करने से प्रथम बीज होता है । तदनन्तर 'हसक' लिखकर भूबीज (ल) का योग करके भुवनेशानी (ह्रीं) का योग करने से द्वितीय बीज का उद्धार होता ॥२॥

शिवचन्द्रौ महेशानि शक्रस्वरविभूषितम् ।
बिन्दुनादकलाक्रान्तं तृतीयं बीजमुद्धृतम् ।।३।।
एषा विद्या महेशानि भुवनेश्वरभैरवी ।
मध्यबीजेन देवेशि षड्दीर्घस्वरभेदिना ।।४।।
षडङ्गानि प्रविन्यस्य ध्यायेद्देवीं चतुर्भुजाम् ।
जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमप्रभाम् ।।५।।

हे महेश्वरी ! शक्रशब्द अर्थात् (औकार) द्वारा विभूषित शिव (ह) चन्द्र (स) विन्दुनाद कलाक्रान्त अर्थात् चन्द्रविन्दु युक्त होने पर तृतीय बीज का उद्धार होगा । अतएव भुवनेश्वरी भैरवी का मन्त्रोद्धार होगा । ह्सैं ह् स् क् ल् ह्रीं ह्सौं । हे महेशानी ! यह मन्त्र है (विद्या हैं) भुवनेश्वरी भैरवी का । षड्दीर्घयुक्त मध्यम बीज को युक्त करके षड़ङ्गन्यास करना चाहिये । अर्थात्

'ह् स् क् ल् ह्रां–अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
ह् स् क् ल् ह्रीं–शिर से स्वाहा ।
ह् स् क् ल् ह्रूं–शिखायै वषट् ।
ह् स् क् ल् ह्रैं–कवचाय हुँ ।
ह् स् क् ल् ह्रौं–नेत्र त्रयाय वौषट् ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ह् स् क् ल् हः'–अस्त्राय फट् ।

ऐसे षड़ङ्गन्यास करना चाहिए। षड़ङ्गन्यास करके देवी का ध्यान करे। ये देवी चतुर्भुजा, अनार के पुष्पों की प्रभा से युक्ता हैं ॥३-५॥

चन्द्ररेखाजटाजूटा त्रिनेत्रां रक्तवाससम् ।
नानालंकारसुभगां पीनोन्नतघनस्तनीम् ।।६।।
पाशाङ्कुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां स्मरेत् ।
एवं ध्यात्वाऽर्चयेद्देवीं यन्त्रोद्धारं च पूर्ववत् ।।७।।

उनकी जटा में चन्द्र किरण युक्त है। वे त्रिनेत्रा, रक्तवस्त्रधारिणी, नाना अलंकार से मनोहरा, स्थूल-उन्नत धन-स्तन (स्थूल स्तन) युक्ता, पाश-अंकुश-वर-अभय मुद्राधारिणी हैं। उन मंगला भुवनेश्वरी भैरवी का स्मरण करे। इस प्रकार ध्यान करके देवी की पूजा करनी चाहिये। इनके यन्त्र का स्वरूप भी चैतन्य भैरवी के यन्त्रवत् होगा ॥६-७॥

चैतन्यभैरवी देवी यन्त्रवत्परमेश्वरि ।
सिंहासनं समभ्यर्च्य परिवारार्चनं यजेत् ।।८।।
षडङ्गावरणं देवि पूर्ववत्परिपूजयेत् ।
रत्याद्याः पूजयेद्देवि त्रिकोणे तदनन्तरम् ।।९।।

हे परमेश्वरी ! इनका यन्त्र चैतन्य भैरवी के यन्त्रवत् बनाकर देवी के सिंहासन का पूजन करके परिवार गण की पूजा करे। हे देवी ! पहले की तरह षड़ङ्गमन्त्र से आवरण पूजा करे ! यथा–

ह् स् क् ल् ह्रां–हृदयाङ्गशक्तये नमः ।
स् ह् क् ल् ह्रीं–शिरोङ्ग शक्त ये नमः ।
ह् स् क् ल् हूँ–शिखाङ्गशक्तये नमः ।
ह् स् क् ल् ह्रैं–कवचाङ्ग शक्तये नमः ।
ह् स् क् ल् ह्रौं–नेत्रत्रयाङ्ग शाक्तये नमः ।
ह् स् क् ल हः–अस्त्राङ्ग शक्तये नमः ।

इस प्रकार से षड़ङ्गपूजा करनी होगी तदनन्तर त्रिकोण में रति, प्रीति, मनोभवा का पूजन करे ॥८-९॥

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च पूज्यास्तत्रैव सुन्दरि ।
डाकिन्याद्यास्तथा पूज्या वसुपत्रे ततः परम् ।।१०।।
अनङ्गकुसुमाद्याश्च ब्राह्म्यादियुगलं ततः ।
भूबिम्बे लोकपालांश्च बटुकाद्यांश्च पूजयेत् ।।११।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे सुन्दरी ! त्रिकोण में ही ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र की पूजा करे तदनन्तर डाकिनी, राकिनी, लाकिनी, काकिनी, शाकिनी एवं हाकिनी की पूजा करे। तत्पश्चात् अष्टदल पद्म के अष्टपत्र पर अनंगकुसुमा, अनगादिमेखला, अनंगमदना, अनंगमदनातुरा, सुभगा, भगा, भगसर्पिणी तथा भगमाला की पूजा करे। इसके अनन्तर युगलों का पूजन होगा। यथा, ब्राह्मी-असिताङ्गभैरव, माहेश्वरी-रुरु, कौमारी–चण्ड, वैष्णवी–क्रोध, वाराही–उन्मन्त, माहेन्द्री कपाली, चामुण्डा–भीषण, महालक्ष्मी–संहार, इन युगलों का पूजन होगा।

इसके पश्चात् भूपुर में दस लोकपाल की पूजा करके ब्रह्माणीपुत्र बटुक, माहेश्वरी पुत्र बटुक, वैष्णवीपुत्र बटुक, कौमारीपुत्र बटुक, इन्द्राणी पुत्र बटुक, महालक्ष्मी पुत्र बटुक, वाराहीपुत्र बटुक तथा चामुण्डापुत्र बटुक की पूजा करके क्षेत्रपालगण की पूजा करनी होगा। क्षेत्रपालगण के नाम हैं–हेतुक, त्रिपुरघ्न, अग्निजिह्व, अग्निवेताल, काल, कराल, एकपाद तथा भीमनाथ ॥१०-११॥

योगिनीनां चतुःषष्टिं पूजयेत्सुरवन्दिते।
सदाशिवसखा यस्मात्कुबेरः परमेश्वरि ॥१२॥
येनेयं प्रार्थिता देवी राजराजस्ततो भवेत्।
तेनैव प्रार्थिता विद्या गौरी गौरफलप्रदा ॥१३॥

हे देववन्दिते ! अब ६४ योगिनीगण की पूजा होगी। हे परमेश्वरी ! सदाशिव के सखास्वरूप कुबेर ने इनकी ही प्रार्थना करके राजराज यक्षराज का पद प्राप्त किया था। उन्होंने गौरफल प्रदा विद्या गौरी की भी अर्चना किया था ॥१२-१३॥

अन्नपूर्णेश्वरी नाम सर्वसंपत्प्रदा सताम्।
अनया विद्यया देवि कुबेरो धननायकः ॥१४॥
लोकपालेषु सर्वेषु धनरत्नादिपूर्णता।
तथाऽन्नपूर्णता तस्मिन्सुस्थिराऽस्याः प्रसादतः ॥१५॥

वे गौरी देवी हैं अन्नपूर्णेश्वरी। ये सद्व्यक्तिगण को सर्वसम्पदा देने वाली हैं। इस विद्या के द्वारा अर्थात् अन्नपूर्णा मन्त्र के द्वारा कुबेर धनाधिपति हो गये थे।

हे देवी ! इनकी कृपा से इन्द्रादिलोकपाल गण को धनरत्नादि की पूर्णता है तथा उनका अन्नपूर्णत्व सुस्थिर रहता है ॥१४-१५॥

अन्नपूर्णा महादेवि साक्षात्कामदुघाऽद्रिजे।
मन्त्रमस्याः प्रवक्ष्यामि सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥१६॥
तारं च भुवनेशानीं श्रीबीजं कामराजकम्।
हृदन्ते भगवत्यर्णा माहेश्वरि पदं लिखेत् ॥१७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्नपूर्णेऽग्निजाया च विद्येयं विंशदक्षरी ।
अनया सदृशी विद्या सिद्धिदा नास्ति भूतले ।।१८।।

हे महादेवी ! पर्वतकन्ये ! अन्नपूर्णा साक्षात् काम्यपूरण कारिणी हैं । इनका सर्वसिद्धिप्रद मन्त्र कहता हूँ । तार (ऊ) के पश्चात् भुवनेशानी (ह्रीं) श्रीबीज (श्रीं) कामराज (क्लीं) तदनन्तर हृन्मन्त्र (नमो) कहकर 'भगवति' तथा 'माहेश्वरि' कहे ।

तदनन्तर 'अन्नपूर्णे' पद का उल्लेख करके अन्त में अग्नि जाया (स्वाहा) का उल्लेख करे । इस प्रकार अन्नपूर्णा भैरवी का मन्त्र होगा 'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा' । यह २० अक्षरों की विद्या है । भूतल में ऐसी विद्या है ही नहीं ॥१६-१८॥

भुवनेशी महेशानि षड्दीर्घस्वरभिन्नया ।
षडङ्गानि महेशानि च्छन्दोन्यासानन्तरम् ।।१९।।
ऋषिर्ब्रह्माऽस्य मन्त्रस्य पङ्क्तिश्छन्दो वरानने ।
अन्नपूर्णेश्वरी देवि देवता परिकीर्तिता ।।२०।।
बीजं च भुवनेशानी श्रीबीजं शक्तिरुच्यते ।
कीलकं कामराजं स्यात्षडङ्गानन्तरं ततः ।।२१।।

हे महेशानी ! छन्द प्रभृति न्यास के पश्चात् षट् दीर्घस्वरों से युक्त (आ ई ऊ ऐ औ अः) 'ह्रीं' बीज से षड़ङ्ग न्यास करे । यथा–ह्रां हृदयायनमः, ह्रीं शिरसे स्वाहा, ह्रूं शिखायै वषट् । ह्रैं कवचाय हुं, ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्रः अस्त्रायफट् । हे वरानने ! इस मन्त्र के ऋषि है ब्रह्मा, छन्दः है पंक्ति, अन्नपूर्णेश्वरी देवता हैं तथा ह्रीं बीज तथा श्रीं शक्ति है । कामराज मन्त्र 'क्लीं' कीलक है । इस प्रकार से इनका ऋष्यादि न्यास इस प्रकार होगा–ह्रीं अस्य अन्नपूर्णामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः अन्नपूणेश्वरी देवता ह्रीं बीजं श्रीं शक्तिः क्लीं कीलकं पुरुषार्थ चतुष्टय सिद्धये विनियोगः । इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे ॥१९-२१॥

एकमेकं पुनश्चैकं पुनरेकं द्वयं चतुः ।
चतुश्चतुस्तथा द्वाभ्यां पदान्येतानि पार्वति ।।२२।।
पदानि नव देवेशि नव द्वारेषु विन्यसेत् ।
मूर्धादिगुदपर्यन्तं पुनस्तेषु वरानने ।।२३।।
गुदादिब्रह्मरन्ध्रान्तं पदानां नवकं न्यसेत् ।
ब्रह्मरन्ध्रास्यहृदयमूलाधारेष्वनुक्रमात् ।।२४।।
चतुर्बीजानि विन्यस्य शेषेष्वन्यान् प्रविन्यसेत् ।
गोलकं च ततो देवि विन्यस्य विधिवत्प्रिये ।
प्राणायामं प्रकुर्वीत पूजामण्डलमालिखेत् ।।२५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

न्यास—एक (ॐ) एक (ह्रीं) पुनः एक (श्रीं) पुनः एक (क्लीं) दो (नमः) चार (भगवति) चार (माहेश्वरी) चार (अन्नपूर्णे) दो (स्वाहा) द्वारा। इस प्रकार से ९ पद होते हैं। हे देवेशी ! इन ९ पदों द्वारा नवद्वार में मूर्धा, चक्षुद्वय, कर्णद्वय, नासाद्वय, मुख तथा गुह्य में न्यास करे। यथा—

मस्तके–ॐ नमः। चक्षुद्वये–ह्रीं नमः श्रीं नमः, कर्णद्वये क्लीं नमः नमोनमः, नासिकाद्वये–भगवति नमः, माहेश्वरी नमः। मुखे–अन्नपूर्णेनमः, गुह्ये–स्वाहा नमः। इस प्रकार से न्यास करे। यह पदन्यास अथवा नवन्यास है।

हे वरानने ! मस्तक से गुह्य तथा, पुनः गुह्य से ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त ९ पदों का विन्यास करे। अर्थात् गुह्ये–स्वाहा नमः। मुखे–अन्नपूर्णे नमः। वामनासा–माहेश्वरी नमः। दक्षिणनासा–भगवति नमः। कर्णद्वये–नमोनमः क्लीं नमः। मस्तके–ॐ नमः। इस प्रकार से पुनः विपरीत क्रम से न्यास करे। हे देवी ! तत्पश्चात् ब्रह्मरन्ध्र, मुख, हृदय तथा मूलाधार में यथा क्रमेण ॐ, ह्रीं श्रीं, क्लीं का विन्यास करे। इसे ही नवचक्र न्यास कहा है। इसका क्रम यह है—

ब्रह्मरन्ध–ॐ नमः। मुख–ह्रीं नमः। हृदय–श्री नमः। मूलाधार–क्लीं नमः। भ्रूमध्य–नमो नमः। नासिका–भगवति नमः। कण्ठ–माहेश्वरी नमः। नाभि में–अन्नपूर्णे नमः। लिङ्ग-स्वाहा नमः। तदनन्तर 'ह्रीं' मन्त्र से प्राणायाम करके पूजायन्त्र लिखे ॥२२-२५॥

त्रिकोणं च चतुःपत्रं वसुपत्रं ततः परम्।
कलापत्रं च भूबिम्बं चतुर्द्वारं समालिखेत्॥२६॥

सिंहासनस्य परितः पीठदेवीः समर्चयेत्।
सिंहासने दक्षिणे तु कथिताः पीठनायिकाः।
ता एव पूजयेत्पीठे वामाद्याः परमेश्वरि॥२७॥
जया च विजया चैव अजिता चापराजिता।
नित्या विलासिनी दोग्ध्री अघोरा मङ्गलात्मिका॥२८॥
नवमी परमेशानी सिंहासनसमीपगाः।
समावाह्य यजेद्देवीं ध्यानं कुर्वन्समाहितः॥२९॥

पहले त्रिकोण, चतुर्दल, अष्टदल, षोडशदल भूपुर तथा चार द्वार बनायें।

सिंहासन के चतुर्दिक पीठ देवता की पूजा करनी चाहिये। ये दक्षिण सिंहासन की पीठनायिकायें है। हे परमेश्वरी ! पीठपर इन नामवाली पीठनायिकाओं भी पूजा करें। ये हैं-वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, कलविकरिणी, बलविकरिणी, बलप्रमथिनी, सर्वभूतदमनी तथा मनोन्मनी। हे परमेशानी ! तदनन्तर सिंहासन के निकट स्थिता जय, विजया, अजिता,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपराजिता, नित्या, विलासिनी, दोवध्री, अघोरा तथा मङ्गला की पूजा करे। तदनन्तर अन्नपूर्णा का आवाहन करके एकाग्रभाव से ध्यान करके पूजा करे ॥२६-२९॥

तप्तकाञ्चनवर्णाभां बालेन्दुकृतशेखराम्।
नवरत्नप्रभादीप्तमुकुटां कुङ्कुमारुणाम्॥३०॥
चित्रवस्त्रपरीधानां मदिराक्षीं त्रिलोचनाम्।
सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतघनस्तनीम्॥३१॥
गोक्षीरधामधवलं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम्।
प्रसन्नवदनं शान्तं नीलकण्ठविराजितम्॥३२॥
कपर्दिनं स्फुरत्सर्पभूषणं कुन्दसंनिभम्।
नृत्यतन्तमतिसंहृष्टं दृष्ट्वाऽऽनन्दमयीं पराम्॥३३॥
सानन्दमुद्यल्लोलाक्षीं मेखलाढ्यनितम्बिनीम्।
अन्नदानरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यामलंकृताम्॥३४॥

तप्त स्वर्णवत् कान्तिमान, मस्तक पर बालचन्द्र से शोभिता, नवरत्न प्रभा से उज्वल मुकुटधारिणी, कुंकुमवत् अरुणवर्णा, चित्रविचित्र वस्त्रों को धारण करने वाली, मत्तनेत्रा, त्रिनयना, सुवर्णकलस के समान स्थूल तथा धनस्तनों से समन्विता, गोदुग्धतुल्य श्वेतवर्णा, पञ्चमुख, त्रिलोचन, प्रसन्नमुखी, शान्त, नीलकण्ठ से शोभित, जटाजूट युक्त, सर्पभूषण धारिणी, कुन्द पुष्प जैसा धवल प्रसन्नवदन, महादेव को नृत्यरत देखकर अतिशय आनन्दिता, आनन्द युक्त स्फुरित चञ्चलनेत्रा, कमर में मेखला पहनने वाली, अन्नदान में तत्पर नित्या, तथा भूमि एवं लक्ष्मी–इन दो सखियों द्वारा घिरी, अन्नपूर्णा का ध्यान करे ॥३०-३४॥

एवं ध्यात्वा यजेद्देवि षडङ्गावरणं यजेत्।
अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्ष्वङ्गपूजनम्॥३५॥

हे देवी! यह ध्यान करके अन्नपूर्णा की पूजा करे। इसके पश्चात् षड़ङ्ग देवताओं की पूजा करनी चाहिये। अग्निकोण, ईशान, नैर्ऋत, वायुकोण में, मध्य तथा चतुर्दिक्, यह पूजा करे। ह्रां हृदयायनमः हृदयाशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ईशान में—ह्रीं शिरसे स्वाहा शिरोङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि इति। इत्यादि क्रम से पूजा करे ॥३५॥

अथ वक्ष्ये महेशानि त्रिकोणस्य च पूजनम्।
तारं प्रासादबीजं च हृच्छिवाय ततः परम्॥३६॥
सप्ताक्षरी महाविद्या त्वनया देवि पूजयेत्।
नृत्यन्तमीश्वरं देवि त्रिकोणाग्रे सुरेश्वरि॥३७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे देवी ! ध्यान करके तभी अन्नपूर्णापूजन किया जाना चाहिये। इसके पश्चात् षड़ङ्ग देवों की पूजा करे। अग्निकोण, ईशान, नैर्ऋत, वायु, मध्य तथा चतुर्दिक् अंगपूजा करे। यह पूजा करके अब तीन कोणों की पूजा कहते हैं। तार (ॐ), प्रासाद बीज (हौं), हृत् (नमः) तदनन्तर 'शिवाय' कहकर मन्त्रोद्धार करें–यह होगा–ॐ हौं नमः शिवाय। यह सात अक्षर की महाविद्या है। हे सुरेश्वरी ! इस मन्त्र से त्रिकोण के अग्रकोण में नृत्यरत महादेव की पूजा करे ॥३६-३७॥

ॐ नमः पदमाभाष्य ततो भगवते पदम्।
ततो वराहरूपायं भूर्भुवःस्वःपतिं तथा ॥३८॥
ङेन्तं च भूपतिं च त्वं मे देहीति च दापय।
वह्निजायान्वितो मन्त्रो वराहस्य वरानने ॥३९॥

हे वरानने ! हे देवी ! 'ॐ नमः' पद कहकर तत्पश्श्चात् 'भागवत' कहकर 'वराहरूपाय' तदन्तर चतुर्थ्यन्त 'भूर्भुवःस्वःपति पद कहकर 'भूपतित्वं मेदेहि दापय' को वह्निजाया अर्थात् 'स्वाहा युक्त' करे। यह है वराहमन्त्र। मन्त्रोद्धार है–ॐ नमो भगवते वराहरूपाय, तदनन्तर 'भूर्भुवस्वपतंये' कहकर 'भूपतित्वं' कहकर 'मे देहि दापय च' लगाकर वह्निजाया (स्वाहा) मन्त्र लगाये। यह वराहमन्त्र है ॥३८-३९॥

अनया विद्यया देवि वामकोणे प्रपूजयेत्।
ॐ नमः पदमाभाष्य ङेन्तं नारायणं लिखेत् ॥४०॥
नारायणं दक्षकोणे क्रमेण परिपूजयेत्।
वामदक्षिणयोः पूज्ये भूश्रियौ परमेश्वरि ॥४१॥

अर्थात् "ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवःस्वः पतये भूपति त्वं मे देहि दापय स्वाहा' इस मन्त्र से अधोमुख त्रिकोण के ऊपर के वराहकोण में वराहदेव की पूजा करे। तत्पश्चात् 'ॐ नमः' कहकर चतुर्थ्यन्त नरायण कहे अर्थात् 'नारायणाय'। मन्त्रोद्धार होगा 'ॐ नमो नारायणाय' इससे त्रिकोण के ऊपर दक्षिण कोण में नारायण की पूजा करे। हे परमेश्वरी ! इस त्रिकोण के ऊपर के वाम एवं दक्षिण कोण में पहले भूदेवी की तदनन्तर श्रीदेवी की पूजा करनी होगी ॥४०४१॥

एकेन मनुना देवि कथयामि तवानघे।
ॐ नमो हि पदं चान्नं मे देह्यन्नाधिपान्तङे ॥४२॥
तथेयमान्नं संलिख्य प्रदापय ततः परम्।
वह्निजायान्वितो मन्त्रः संपुटीकृत्य योजयेत् ॥४३॥
ग्लौमात्मकेन रमया वामदक्षिणयोः क्रमात्।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ततश्चतुर्दले पूज्या पश्चिमादिक्रमेण तु ।।४४।।
तारेणं परविद्यां च भुवनेशीं तदात्मना ।
कमलां रमया भद्रे कामेन सुभगां यजेत् ।।४५।।

हे निष्पापे ! इन भूदेवी तथा श्रीदेवी की पूजा एक ही मन्त्र से होगी । 'ॐ नमः' पद तदनन्तर 'अन्नं मे देहि' तथा अन्त में 'अन्नाधिपतये नमः' कहकर 'प्रदापय' तथा वह्निजाया (स्वाहा) द्वारा युक्त मन्त्र को ग्लौं एवं रमा (श्रीं) से वाम एवं दक्षिण में पुटित करके युक्त करे । समस्त मन्त्र होगा 'ग्लौं श्रीं ॐ नमोऽन्नमे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रीं ग्लौं'' । इस एक ही मन्त्र से भूदेवी तथा श्री देवी की पूजा होगी । तदनन्तर चतुर्दल पद्म के चारों पत्र में पश्चिमादिक्रम से अर्थात् पश्चिम–उत्तर पूर्व तथा दक्षिण क्रम से पराविद्या, भुवनेश्वरी, कमला तथा सुभगा का पूजन करे ॥४२-४५॥

वसुपत्रे महेशानि ब्राह्म्याद्याः पश्चिमादितः ।
षोडशारे परेशानि चन्द्रमण्डलरूपिणीः ।।४६।।

पश्चिम पत्र में तार (ॐ) द्वारा परविद्या की अर्थात् 'परविद्यायै नमः से पूजा करे । उसके आगे उत्तर पत्र में 'ह्रीं' भुवनेश्वर्यै नमः' से भुवनेशी की, पूर्वपत्र में कमला की 'श्रीं कमलायै नमः से, दक्षिण पत्र में काममन्त्र क्लीं द्वारा सुभगा की पूजा 'क्लीं सुभगायै नमः से करे ।

हे महेशानी ! तदनन्तर अष्टदल पद्म के अष्टपत्र में पश्चिमादिक्रमेण (पश्चिम, वायुकोण, उत्तर, ईशान, कोण, पूर्व, अग्निकोण, दक्षिण, नैर्ऋत कोण) ब्राह्म्यादि की अर्थात् ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, माहेन्द्री, चामुण्डा, तथा महालक्ष्मी की पूजा करके हे परमेश्वरी ! षोड़शदल पद्म के १६ पत्रों में चन्द्रकलाओं का पूजन करे ॥४६॥

कलाः षोडश संपूज्याः पश्चिमादिक्रमेण हि ।
अमृता मानसी पुष्टिस्तुष्टिः प्रीती रतिस्तथा ।।४७।।
श्रीश्च ह्रीश्च स्वधा रात्रिर्ज्योत्स्ना हैमवती तथा ।
छाया च पूर्णिमा नित्या अमावास्या च षोडशी ।।४८।।
शेषवर्णैः प्रपूज्यास्तु अन्नपूर्णान्तशब्दकाः ।
चतुरस्त्रे लोकपालान्क्रमेण परिपूजयेत् ।।४९।।

षोड़शदल पद्म के दलों में पश्चिमादि क्रमेण चन्द्र की कलाओं की पूजा करनी चाहिये । इनका नाम यथाक्रमेण है–अमृता, मानसी (मानदा भी कहते हैं), पुष्टि, तुष्टि, प्रीति, रति, श्री, ह्री, स्वधा (मतान्तर से सुधा), रात्रि, ज्योत्स्ना, हैमवती, छाया, पूर्णिमा, नित्या तथा अमावस्या । शेष वर्ण द्वारा अर्थात् अन्नपूर्णा के २० अक्षर के मन्त्र के पहले

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४ अक्षरों को छोड़कर बाकी के एक-एक वर्ण को पूर्व में लगाकर अन्त में 'अन्नपूर्णा' शब्द लगाकर पूजा करनी चाहिये। यथा–नं अमृतायै अन्नपूर्णायै नमः। मों मानस्यै अन्नपूर्णायै नमः। इसी प्रकार 'भं पुष्ट्यै अन्नपूर्णायै नमः। गं तुष्ट्यै अन्नपूर्णायै नमः। वं प्रीत्यै अन्नपूर्णायै नमः। तिं रत्यै अन्नपूर्णायै नमः। श्रियै अन्नपूर्णायै नमः। हें ह्रियै अन्नपूर्णायै नमः। श्वं स्वंधायै अन्नपूर्णायै नमः। रि रात्र्यै अन्नपूर्णायै नमः। अं ज्योत्स्नायै अन्नपूर्णायै नमः। न्नं हैमवत्यै अन्नपूर्णायै नमः। पुं छायायै अन्नपूर्णायै नमः। र्णें पूर्णिमायै अन्नपूर्णायै नमः। स्वां नित्यायै अन्नपूर्णायै नमः। हां अमावस्यायै अन्नपूर्णायै नमः। इस प्रकार से प्रारंभ में एक-एक अक्षर लगाकर षोडश कला पूजन होगा। तदनन्तर चतुरस्त्र अर्थात् चारकोण के मण्डल मध्य में इन्द्र-अग्नि-यम-नैर्ऋत-वरुण-वायु-कुबेर-ईशान-ब्रह्मा तथा अनन्त–इन दस दिक्पाल गण का पूजन करना चाहिये ॥४७-४९॥

इत्युत्तरपतेः सम्यक्पूजितान्नसुवर्णदा।
स्वशक्त्या या करोत्येव राजराजं धनाधिपम्॥५०॥
सिद्धिप्रदा सिद्धिविद्या ममाप्यन्नप्रदा प्रिये।
भुवनेश्वरभैरव्या भेदान्तरमथोच्यते॥५१॥

अन्नपूर्णादेवी इस प्रकार से कुबेर से पूजित होकर अन्न एवं सुवर्णप्रदा हो गयीं। इन अन्नपूर्णा देवी ने अपनी शक्ति से धनाधिपति कुबेर को यक्षराज पद प्रदान किया था।

हे प्रिये! ये अन्नपूर्णा देवी सिद्धिप्रदा, सिद्धविद्या तथा मुझे भी अन्न प्रदात्री हैं। अब भुवनेश्वरी भैरवीं के अन्य भेद कहे जाते हैं ॥५०-५१॥

सहाद्या सैव देवेशि तदा स सकलेश्वरी।
ध्यानपूजादिकं सर्वमेतस्या एव पार्वति॥५२॥

हे देवेशी! हे पार्वती! इस भुवनेश्वरी मन्त्र के प्रारंभ में 'स ह' होने पर यह सकलेश्वर विद्या होती है। इनका मन्त्र है–'ह्सैं ह् स् क् ल ह्रीं ह्सौं' 'हस' के स्थान पर 'स ह' होने पर यही विद्या सकलेश्वरी हो जाती है। इनका ध्यान पूजनादि भुवनेश्वरीवत् ही है ॥५२॥

उत्तरस्यां वरारोहे सिंहासनमिदं दिशि।
संपत्प्रदा भैरवी च विद्धि कौलेशभैरवी॥५३॥

हे वरारोहे! उत्तर दिक् में यह सिंहासन सम्पत्प्रदा भैरवी का सिंहासन है। यह कौलेश भैरवी का भी सिंहासन है ॥५३॥

हसराद्या भैरवी सा त्रिषु बीजेषु पार्वति।
इयं तु सहराद्या स्यात्पूजाध्यानादिकं तथा॥५४॥

हे पार्वती! इन भुवनेश्वरी विद्या के मन्त्र के आदि में 'हस' तथा सम्पत्प्रदा भैरवी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तथा कौलेशभैरवी की विद्या के तीन बीज के आदि में 'स ह' रहेगा। इनकी पूजा तथा ध्यानादि भुवनेश्वरी भैरवी के ही अनुरूप हैं ॥५५॥

एतस्या एव विद्याया आद्यन्ते रेफवर्जिते।
तदेयं परमेशानि नाम्ना सकलभैरवी ॥५५॥

हे परमेशानी ! इन कौलेशभैरवी के भी मन्त्र के आदि में 'र' कार रहित मन्त्र होगा। यही मन्त्र सकलभैरवी तथा सम्पत्प्रदा भैरवी का भी होगा। मन्त्र यथा–'स हैं स् ह् क् ल् ह्रीं स् ह्रौं'। मतान्तर से कौलेश भैरवी का मन्त्र है 'र् स् हैं स् ह् क् ल् ह्रीं स् ह्रौं ॥५५॥

संपत्प्रदा भैरवी च ध्यानपूजादिकं प्रिये।
पञ्चसिंहासनमयी महात्रिपुरभैरवी ॥५६॥

हे प्रिये ! सकलभैरवी, सम्पत्पदा भैरवी का ध्यान-पूजन भुवनेशी के ही समान है। महात्रिपुरभैरवी पञ्चसिंहासनमयी हैं ॥५६॥

चतुराम्नायविद्याभिर्मान्यं सिंहासनं प्रिये।
हस्त्रीमात्मकमुच्चार्य सह्लीमात्मकमद्रिजे ॥५७॥
शक्तिः सकलह्लीमन्ते चतुर्बीजमुदाहृतम्।
श्रीबीजं कुरु तार्तीयं नित्या वेदाक्षरी भवेत् ॥५८॥
उन्मनी नाम विद्येयं भोगमोक्षफलप्रदा।
पूर्वाम्नाये महाविद्या दक्षिणाम्नाय उच्यते ॥५९॥

तन्त्रों को ४ भाग में किया गया है। ये हैं–पूर्वाम्नाय–दक्षिणाम्नाय–पश्चिमाम्नाय–उत्तराम्नाय। इसी प्रकार मन्त्र भी चतुर्धा विभक्त हैं। यद्यपि आम्नाय का अर्थ वेद है, तथापि यहां तन्त्र को आम्नाय कहा है।

हे प्रिये ! चार आम्नाय की विद्या द्वारा सिंहासन की पूजा की जाये। हे पर्वतकन्ये ! पहले 'ह्स्रीं' का उच्चारण करके तब "स् ह्लीं" का उच्चारण करे। शक्ति अर्थात् 'सौः स् क् ल् ह्लीं' अन्त है। 'श्रीं' को तृतीय बीज करे। यही चार बीज हैं। ये चारों ही वेदाक्षरी कहे जाते हैं। इन चारों का सम्पूर्ण आकार यह है—

'ह्स्रीं स् ह्लीं श्रीं सौः स् क् ल् ह्लीं'।

इस विद्या को उन्मनी विद्या कहते हैं। यह भोग-मोक्ष दायिनी है। यह पूर्वाम्नाय की महाविद्या है। अब दक्षिणाम्नाय सुनो ॥५७-५९॥

वाग्भवं बीजमुच्चार्य क्लिन्ने कामस्य बीजकम्।
मदद्रवे कुले हस्त्रौ विद्येयं भोगिनी प्रिये ॥६०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दक्षिणाम्नायविद्येयं पश्चिमाम्नाय उच्यते ।
वाग्भवं च परा श्रीश्च हसखफ्रोमिति प्रिये ।।६१।।
हस्त्रौभस्तास्ततो देवि पञ्चैते प्रणवाः स्मृताः ।
भगवत्यम्ब आलिख्य पृथक्पदमथेश्वरि ।।६२।।

वाग्भव (ऐं) का उच्चारण करके 'क्लिन्ने' तब काम बीज (क्लीं) कहकर 'मदद्रवे कुले हस्रौ' कहे । मन्त्रोद्धार होगा 'ऐं क्लिन्ने क्लीं मदद्रवे कुले हस्रौ'' । यह विद्या भोगप्रदा है । हे प्रिये ! यह दक्षिणाम्नाय की विद्या है । अब पश्चिमाम्नाय की विद्या कहते हैं । वाग्भव (ऐं) परा (ह्रीं) श्रीः ह् स् ख् फ्रें ह् स्रौभः'' इसका मन्त्रोद्धार होगा 'ऐं ह्रीं श्रीः ह् स् ख् फ्रें ह् स्रौभः' हे ईश्वरी ! अब एक पृथक् पद 'भगवत्यम्ब' लिखे ।।६०-६२।।

चतुर्थं प्रणवं चैव हसकफ्रोमिति प्रिये ।
कुब्जिके चैव हस्त्रां च हस्त्रीं हस्त्रौ ततः परम् ।।६३।।
अघोरे चैव घोरे च त्वघोरमुखि चाऽऽलिखेत् ।
हस्त्रां हस्त्रीं किणिद्वन्द्व विच्चे द्वात्रिंशदक्षरी ।।६४।।
पूर्वोक्तैः प्रणवैर्देवि संपुटीकृत्य संस्मरेत् ।
कुब्जिकेयं महाविद्या पश्चिमाम्नायदेवता ।।६५।।

हे प्रिय अब 'ह् स् ख् फ्रे.' इस चतुर्थ पद का उल्लेख करके कुंब्जिके 'ह्स्रां च ह्स्रीं ह्स्रौं' कहे । तदन्तर 'अघोरे घोरे त्वघोरमुखि' कहकर 'ह्स्रां हस्रीं किणि किणि विच्चे' करे। यही है ३२ अक्षर की विद्या मन्डोद्धार होगा 'भगवत्यम्ब ह्स्खफ्रें कुब्जिके ह्स्रां च ह्स्रीं ह्स्रौं अघोरे घोरे च त्वघोरमुखि ह्स्रां ह्स्रीं किरणें किणि किणि विच्चे ऐं ह्रीं श्रीः ह्स्खफ्रें हस्रौभः ।।६३-६५।।

खफ्रेमात्मकमुच्चार्य महाचण्डपदं लिखेत् ।
योगेश्वरीपदं पश्चाद्विद्येयं कालिका प्रिये ।।६६।।
उत्तराम्नायविद्येयं नाम्ना कालीति विश्रुता ।
एताभिः परमेशानि पूज्यं सिंहासनं सदा ।।६७।।

हे प्रिये ! 'खफ्रें' का उच्चारण करके 'महाचण्ड' कहकर 'योगेश्वरि' कहे । मन्त्रोद्धार है 'खफ्रें महाचण्ड योगेश्वरि' यह कालिका विद्या है । इसे उत्तराम्नाय विद्या कहते हैं, जो काली नाम से प्रसिद्ध है । हे परमेश्वरी ! इन सब विद्या से सिंहासन (पञ्चक) की पूजा करे ।

नवम पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दशमः पटलः

(शिवशक्त्यात्मक जगत्, महात्रिपुरा पूजाक्रम, मन्त्रोद्धार, मेरुमन्त्र व्याख्या, श्रीचक्र वर्णन, कोणादि में मातृका वर्ण विभाग व्यवस्था)

श्रीदेव्युवाच–

त्रिपुरा द्विविधा देव भवता प्रकटी कृता।
त्रिविधेति यदुक्तं तत्प्रकटी कुरु शंकर ।।१।।

देवी कहती हैं–हे देव ! हे शंकर ! आपने दो प्रकार से त्रिपुरा को (बाला त्रिपुरा, त्रिपुराभैरवी) प्रकट किया है अर्थात् वर्णन किया है। अब तीसरे प्रकार की त्रिपुरा के सम्बन्ध में कहिये ।।१।।

ईश्वर उवाच–

परं ब्रह्मस्वरूपं यन्नादबिन्दुत्रयात्मकम्।
शिवशक्तिमयं तत्तु कथयामि तवानघे ।।२।।

ईश्वर कहते हैं–नाद तथा बिन्दुत्रयस्वरूप अथवा नाद बिन्दु कला स्वरूप जो पर ब्रह्मस्वरूप है, वह शिवशक्तिमय है। हे निष्पापे ! उसे कहता हूँ ।।२।।

व्याप्य तिष्ठति विश्वं सा शिवं च परमेश्वरि।
पूर्वं गुणैस्तु कथिता शिवशक्त्यात्मकं शृणु ।।३।।

हे परमेश्वरी ! वह शक्ति समग्र विश्व तथा शिव को व्याप्त करके अवस्थित है। पूर्व गुण के द्वारा अर्थात् सगुण रूप से शक्ति की कथा कहता हूँ। शक्ति ही शिवशक्तिरूप है। उसे सुनो ।।३।।

हकारादिसकारान्ता मातृका शक्तिरव्यया।
हकारः परमेशानि केवलं शिव उच्यते।।४।।

हे परमेशानी ! आदि में हकार अन्त में सकार अर्थात् 'ह स' रूप जो मातृका वर्ण है, वही है अव्यय शक्ति रूप। केवल 'ह' को शिव कहते हैं ।।४।।

आद्यन्ताक्षरभावेन तदाऽहं सकलात्मकः।
यदुच्यते मातृकार्णैस्तत्सर्वमहमीश्वरि ।।५।।

हे ईश्वरी ! आदि (अ) तथा अन्तिम अक्षर (ह) जब यह 'अह' कहते हैं, तब मैं शिव सकल पदार्थ रूप हो जाता हूँ। जब समस्त मातृकाओं द्वारा (अ से क्षपर्यन्त) कहा जाता है तब सब कुछ मैं ही हूँ ।।५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हकारः परमेशानि शून्यरूपी सदाऽव्ययः ।
सकारः शक्तिरूपत्वात्परावाची विसर्गवान् ।।६।।

हे परमेशानी ! हकार सर्वदा अव्यय शून्य है । विसर्ग युक्त सकार (सः) शक्तिस्वरूप परम अव्यक्त है ।।६।।

उत्पत्तेः कारणं यस्माच्छक्तिरित्यभिधीयते ।
आत्मानं दर्शयेद्योगः सोऽहंशब्देन सुन्दरि ।।७।।

हे सुन्दरी ! जगत् की उत्पत्ति का कारण शक्ति है । इसी से उसे शक्ति कहा जाता है । सोऽहं शब्द के जप द्वारा जो ध्यान है । उससे आत्मसाक्षात्कार होता है ।।७।।

बिन्दुत्रयसमायोगान् महात्रिपुरसुन्दरी ।
नादरूपेण सा देवी हकारार्धस्वरूपिणी ।।८।।

तीन बिन्दु के सम्यक् योग के कारण ही महात्रिपुरसुन्दरी बिन्दुत्रयात्मक है । ये देवी नादरूपेण हकार की अर्द्धस्वरूपिणी हैं । (हकारार्द्ध हैं, यह अनुच्चार्य भी है) । ∵ तीन बिन्दु के नीचे जो अर्द्धचन्द्राकार है वही है 'ह' अक्षर के तनिक ऊपर का अर्द्धस्वरूप है । यही नाद का प्रतीक है । नाद है शक्ति स्वरूप ।।८।।

हकारः परमेशानि शिवरूपी यतस्तदा ।
तस्यार्धाङ्गं महाशक्तिर्हकारार्धस्वरूपिणी ।।९।।

हे परमेशानी ! हकार शिवस्वरूप है । उसके अर्द्ध को अर्थात् हकार के ऊपरी अर्द्धभाग को महाशक्ति कहते है । (अर्द्धमात्रास्थितानित्या) महाशक्ति हकार की अर्द्धस्वरूपा हैं ।।९।।

अत एव महाविद्या महात्रिपुरसन्दरी ।
नित्येति कथ्यते देवि चित्कला परमेश्वरी ।।१०।।

शिव नित्य हैं । महाशक्ति उनकी अर्द्धस्वरूपा हैं । इसीलिये महात्रिपुरसुन्दरी महाविद्या नित्या है । हे देवी ! महात्रिपुरसुन्दरी परमेश्वरी चित्कला चैतन्य रूपा हैं तथा शिव की कला हैं ।।१०।।

श्रीगुरोः कृपया भद्रे संप्रदायकुलान्वितः ।
प्रातरुत्थाय देवेशि गुरुं नत्वा स्वनामभिः ।।११।।
संध्यास्नानादिकं देवि विधाय मनुवित्तमः ।
सर्वशृङ्गारवेषाढ्यः कर्पूरघुसृणादिभिः ।।१२।।
महार्हैश्चन्दनाद्यैश्च दीप्ताङ्गः कुङ्कुमारुणः ।
नवरत्नविभूषाढ्यो रक्ताम्बरविराजितः ।।१३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ताम्बूलरागवदनो मदिरानन्दमानसः ।
यागमन्दिरमागत्य लाक्षाचित्रविचित्रितम् ।।१४।।
अनेकधूपबहलं पुष्पप्रकरपूरितम् ।
गोमयेन च संलिप्तं चारुपुष्पवितानितम् ।।१५।।
मनोहरे मृदुश्लक्ष्ण आसने उपविश्य तु ।
मन्त्रोद्धारं प्रकुर्वीत सर्वकार्यार्थसिद्धये ।।१६।।

हे भद्रे ! हे देवेशी ! श्री गुरुकृपा से गुरुपरम्परानुसार यन्त्रादि का उपदेश जिसने पाया है, वह शिष्य नित्यप्रातः शय्या से उठकर गुरु के निजनाम से उनको प्रणाम करे । यथा 'ऐं अमुकानन्दनाथ श्रीगुरुं नमामि' इस प्रकार से गुरु का नाम लेकर उनको प्रणाम तथा पूजनादि करे । यह विधान है । श्रेष्ठ मन्त्रज्ञ व्यक्ति सन्ध्यास्नानादि नित्यकर्म करके कर्पूर-कुकुम द्वारा समस्त शृंगार युक्त वेशधारण करके महामूल्य चन्दन प्रभृति अंग में अनुलेपन करके कुंकुम के द्वारा शरीर को अरुण वर्ण करके रक्तवस्त्र धारण करके नानारत्न अलंकार से अलंकृत होकर ताम्बूल से मुख को रंजित करके मद्यपान से आनन्दित मन वाला होकर लाक्षा द्वारा चित्र-विचित्र बहुधूपयुक्त पुष्पों से परिपूर्ण, गोमयलिप्त, मनोहर पुष्परचित वितान से युक्त पूजा मण्डप में आये । यहाँ मनोहर मृदु तथा मसृण आसनपर बैठकर समस्त कार्यसिद्धिहेतु मन्त्रोद्धार करे ॥११-१६॥

आद्यं वाग्भवमुच्चार्य कामराजं द्वितीयकम् ।
कुमार्यास्तु तृतीयं तु त्रिपुरा परमेश्वरी ।।१७।।
करशुद्धिकरी विद्या प्रथमा परमेश्वरि ।
कुमारी तु द्वितीया स्यात्त्रिपुरेशी महेश्वरि ।।१८।।

हे परमेशानी ! त्रिपुरा का प्रथम बीज 'ऐं' कहकर द्वितीय बीज 'क्लीं' कहे । तृतीय बीज 'सौः' होगा ।

हे महेश्वरी ! हे परमेश्वरी ! प्रथम विद्या 'ऐं' करशुद्धिकरी कही गयी है । द्वितीया विद्या 'क्लीं' मन्त्र कुमारी त्रिपुरेशी कही जाती है ।।१७-१८।।

त्रिपुरेश्यादिमं त्यक्त्वा भुवनेशीं परिक्षिपेत् ।
अनयाऽऽत्मासनं दद्यात्त्रिपुरेश्या षडङ्गकम् ।।१९।।

उक्त प्रथम बीज 'ऐं' को हटाकर वहां पर भुवनेशी बीज 'ह्रीं' लगाये । इस 'ह्रीं' बीज से आत्मा को आसन प्रदान करे । अब त्रिपुरेशी बीज 'सौः' से षड़ङ्ग न्यास करे । यथा 'सां हृदयायनमः, सीं शिरसे स्वाहा, सूं शिखायै वषट्, सैं कवचाय हुं, सौं नेत्रत्रयाय वौषट् । सः अस्त्राय फट् ॥१९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रिपुरेशी महेशानि त्रिबीजा हस्थिता यदा ।
चक्रासनगतां देवि विद्धि त्रिपुरवासिनीम् ।।२०।।

हे देवी ! जब यह 'सौः' हकार में स्थित होकर तीन बीज युक्त होता है अर्थात् 'ह् सौः' ('ह स औं' ये तीन बीज हैं), चक्रासन स्थित इस बीज को त्रिपुरवासिनी जानो ।।२०।।

त्रिपुरेशी महेशानि वाग्भवे कामराजके ।
शिवचन्द्रसमायुक्ता तार्तीये शिवरूपिणी ।।२१।।
सर्वमन्त्रासनगता त्रिपुरा श्रीरियं प्रिये ।
आत्मासनगतायास्तु हित्वा तार्तीयमद्रिजे ।।२२।।

हे महेशानी ! त्रिपुरामन्त्र जब वाग्भव (ऐं) कामराज (क्लीं) तथा शिवचन्द्र 'हस' से युक्त होता है तथा जब तृतीय बीज 'सौः' शिवरूपी अर्थात् हकार से युक्त होता है तब सम्पूर्ण मन्त्र होता है "ह् सैं ह् स् क्लीं ह् सौः" । हे प्रिये ! सर्वमन्त्रासनगत यह विद्या श्रीत्रिपुरा कहलाती है। हे गिरिकन्ये तृतीय अर्थात् 'ह् सौः' का त्याग करके जो आत्मासनगत विद्या है–वह है ह् सैं ह् स् क्लीं ।।२१-२२।।

बलेमात्मकमारोप्य साध्यसिद्धासनस्थिता ।
त्रिपुरामालिनी प्रोक्ता सिद्धाख्यां त्रिपुरां शृणु ।।२३।।

इस मन्त्र में 'बलेम' योग करके जब साध्य सिद्धासनस्थ होता है, तब यह मन्त्र त्रिपुरमालिनी "ह् सैं ह् स् क्लीं ब्लें" कहलाता है। अब सिद्धित्रिपुरा मन्त्र सुनो ।।२३।।

भुवनेशी श्रिया युक्ता कुमारी च तथोत्तमा ।
मूर्तिविद्या समुद्दिष्टा माया लक्ष्मीः परास्थिता ।।२४।।

श्री बीज युक्त भुवनेशी (ह्रीं) तथा उत्तमा कुमारी (त्रिपुरा मन्त्र) (ऐं क्लीं सौः) तथा माया (ह्रीं), लक्ष्मी (श्रीं) रूप मूर्ति विद्या युक्त होने पर "ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः ह्रीं श्रीं" प्रकार से सिद्ध त्रिपुरा मन्त्रोद्धार होता है ।।२४।।

अनया विद्यया देवि यजेत्त्रिपुरसिद्धिकाम् ।
मायालक्ष्म्योस्तु बीजे द्वे शक्तिबीजं तृतीयकम् ।।
त्रिपुराद्या त्र्यम्बिकेयमष्टमी परिकीर्तिता ।।२५।।

हे देवी इस विद्या से सिद्धत्रिपुरा की पूजा करे। माया (ह्रीं) लक्ष्मी (श्रीं) बीज तृतीय शक्ति बीज (ह्रीं), त्रिपुराद्य (ऐं) तथा त्र्यम्बिके', सब मिलाकर मन्त्रोद्धार होता है 'ह्रीं श्री ह्रीं ऐं त्र्यम्बिके' यह अष्टमी विद्या है ।।२५।।

संपत्प्रदा भैरवी या तस्यास्तार्तीयबीजके ।
बिन्दुं हित्वा तत्र सर्गं निक्षिपेत्सुरसुन्दरि ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनयाऽऽवाहनं देवि कारयेत्सुरवन्दिते ।।२६।।

सम्पत्प्रदा भैरवी का जो मन्त्र है, उसके तृतीय बीज से बिन्दु का त्याग करके विसर्ग लगाये। हे सुरसुन्दरी ! हे देववन्दिते ! इस मन्त्र के द्वारा अर्थात् 'ऐं क्लीं सौः' द्वारा आवाहन करें ॥२६॥

मूर्तिविद्या समुद्दिष्टा माया लक्ष्मीः परा स्थिता ।
अनया विद्यया देवि यजेत्त्रिपुरसिद्धिदाम् ।।२७।।

माया (ह्रीं) लक्ष्मी (श्रीं) इसके पहले रहने से यह मूर्त्ति विद्या कहलाती है। "ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः ह्रीं श्रीं" मन्त्र के द्वारा सिद्ध त्रिपुरा की पूजा करे ॥२७॥

सिद्धाम्बावाहिनीमूर्तिर्विद्या च सुरसुन्दरि ।
मूलविद्यां शृणु प्रौढे सकलागमसेविताम् ।।२८।।

हे सुरसुन्दरी ! त्रिपुरासिद्धविद्या को सिद्धाम्बा, वाहिनी मूर्त्ति तथा विद्या कहते हैं। हे प्रौढ़े ! (सर्वजगद्वहन शीले) सकलतन्त्र सेवित मूलविद्या (श्रीविद्या) को सुनो ! ॥२८॥

सर्वदर्शनवन्द्यां च चित्कलामव्ययां प्रिये ।
भूमिश्चन्द्रः शिवो माया शक्तिः कृष्णाध्वमादनौ ।।२९।।
अर्धचन्द्रश्च बिन्दुश्च नवार्णो मेरुरुच्यते ।
महात्रिपुरसुन्दर्या मन्त्रा मेरुसमुद्भवाः ।।३०।।

हे प्रिये ! यह मूलविद्या सभी दर्शनों में वन्दनीया, चित्कला तथा अव्यया है। भूमि (ल), चन्द्र (स), शिव (ह), माया (ई), शक्ति (ए), कृष्णाध्वा (र), मादन (क), अर्द्धचन्द्र (ँ) बिन्दु (ं)। इन ९ को मेरु कहा गया है अर्थात्–"ल स ह ई ए र कँ। (यहाँ ँ को दो वर्ण गिना जाता है) यह मेरु मन्त्र है। महात्रिपुरसुन्दरी के सभी मन्त्र इसी मेरु मन्त्र से उद्भूत हैं ॥२९-३०॥

लकारात्पृथिवी देवि सशैलवनकानना ।
पञ्चाशत्पीठसंपन्ना सर्वतीर्थमयी परा ।।३१।।
सर्वगङ्गामयी सर्वक्षेत्रस्थानमयी शिवे ।
सकाराच्चन्द्रतारादिग्रहराशिस्वरूपिणी ।।३२।।

लकार से पर्वत वन तथा कानन युक्त ५० पीठ क्षेत्रों से समन्विता सकल तीर्थमयी, सर्वगंगामयी (नदियों को गंगा कहा गया) सकल पुण्यक्षेत्रमयी पृथिवी का तात्पर्य है। 'स' वर्ण से चन्द्रतारक प्रभृति ग्रहराशि स्वरूपा देवी का तात्पर्य है (यह भूमिचन्द्र आदि प्रत्येक ९ अक्षरों का अर्थ कहा गया है) ॥३१-३२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हकाराच्छिवसंवादव्योममण्डलसंस्थिता ।
ईकाराद्विश्वकर्त्रीयं माया तुर्यात्मिका प्रिये ।।३३।।
एकाराद्वैष्णवी शक्तिर्विश्वपालनतत्परा ।
रकारात्तेजसा युक्ता परं ज्योतिः स्वरूपिणी ।।३४।।

हे प्रिये ! 'ह' वर्ण से व्योममण्डल परम्व्योमस्थ शिवदेवता का तात्पर्य है । 'ई' कार से विश्वकर्मी तुर्यात्मिका माया कही गयी है ।

एकार से विश्वपालन तत्परा वैष्णवी शक्ति से तात्पर्य है । र वर्ण से तेज के द्वारा युक्त परज्योतिरूपी देवता से तात्पर्य है ।।३३-३४।।

ककारात्कामदा कामरूपिणी स्फुरदव्यया ।
अर्धचन्द्रेण देवेशि विश्वयोनिरितीरिता ।।३५।।

हे देवेशी ! कवर्ण से कामदा कामरूपा प्रकाशात्मक अव्यय देवता से तात्पर्य है । अर्द्धचन्द्र द्वारा विश्वयोनि, अर्थात् कारणात्मिका देवी से तात्पर्य है ।।३५।।

बिन्दुना शिवरूपेण शून्यरूपेण साक्षिणी ।
अनया सह सर्वत्र व्याप्तिनिश्चलताऽऽत्मना ।।३६।।

बिन्दु (̣) शिवस्वरूप है । उसके द्वारा साक्षीस्वरूप का तात्पर्य है । इस साक्षी के साथ सर्वत्र सभी वस्तु की व्याप्ति है । यह साक्षी है निष्कल स्वरूप ।।३६।।

एवं परब्रह्मरूपा मेरुणाऽनेन सुव्रते ।
एभिर्नवात्मकैर्वर्णैर्जायते त्रिपुरामनुः ।।३७।।

हे सुव्रते ! इस मेरुमन्त्र के द्वारा परब्रह्मस्वरूपा देवी बोधिता होती हैं । इन ९ वर्ण से त्रिपुरा का मन्त्र सम्पन्न होता है ।।३७।।

अन्यथा नैव निष्पत्तिर्नास्ति श्रीत्रिपुरामनौ ।
श्रीचक्रमपि देवेशि मेरुरूपं न संशयः ।।३८।।
लकारः पृथिवीबीजं तेन भूबिम्बमुच्यते ।
सकारश्चन्द्रमा भद्रे कलाषोडशकात्मकः ।।३९।।
तस्मात्षोडशपत्रं तु हकारः शिव उच्यते ।
अष्टमूर्तिः सदा भद्रे तस्माद्वसुदलं भवेत् ।।४०।।
ईकारस्तु महामाया भुवनानि चतुर्दश ।
पालयन्तो परा तस्माच्छक्रकोणं भवेत्प्रिये ।।४१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्य प्रकार से त्रिपुरा मन्त्र की निष्पत्ति नहीं होती। हे देवेशी ! श्रीचक्र भी यही मेरुस्वरूप है। इसमें सन्देह नहीं है।

हे भद्रे ! लकार पृथिवी का बीज है। इस लकार से विश्व (भूपुर) का तात्पर्य है। सकार का अर्थ है षोडशकला वाले चन्द्र।

हे भद्रे ! इसलिये सकार से षोडशदल पद्म का तात्पर्य होता है। हकार का तात्पर्य है शिव। वे शिव अष्टमूर्ति रूप है। (यथा–पृथिव्यादि पांचतत्व+सोम+यजमान+सूर्य=८) इसी हकार से ही अष्टदल पद्म है।

हे प्रिये ! महामाया ईकार हैं। ये जड़ नहीं चिद्रूपिणी हैं। चतुर्दश भुवन का परिपालन करती हैं। उनसे अर्थात् ईकार से श्रीचक्र के कोण होते हैं ॥३८-४१॥

शक्तिरेकादशस्थाने स्थित्वा सूतै जगत्त्रयम्।
विश्वयोनिरिति ख्याता सा विष्णुर्दशरूपकम् ।।४२।।
रकारात्परमेशानि चक्रं व्याप्य विजृम्भते।
दशकोणकरी यस्माद्रकारो ज्योतिरव्ययः ।।४३।।

शक्ति एकादश स्थान पर रहकर अर्थात् एकादश स्वरूप होकर त्रिजगत् प्रसव करती है। अत: वे विश्वयोनि हैं। हे परमेशानी ! विष्णु दशरूपात्मक चक्र को व्याप्त करके स्थित हैं। रकार अर्थात्–विष्णु। ये रकार रूप विष्णु दशकोण (दशार) हैं। रकार अव्यय ज्योति रूप है ॥४२-४३॥

कलादशान्वितो वह्निर्दशकोणप्रकारकः ।
ककारान्मदनो देवि शिवश्चाष्टस्वरूपकः ।।४४।।

हे देवी ! वह्नि दशकला रूप है। दशकोण उसके प्रकार हैं। ककार से मदन तथा अष्टमूर्त्ति रूप शिव से तात्पर्य है।

योनिवश्यं तदा चक्रे वसुयोन्यङ्कितं भवेत्।
अर्धमात्रा गुणान्सूते नादरूपा यतस्ततः ।।४५।।
त्रिकोणरूपा योनिस्तु बिन्दुना बैन्दवं भवेत्।
कामेश्वरस्वरूपं तु विश्वाकारस्वरूपकम् ।।४६।।
श्रीचक्रं तु वरारोहे श्रीविद्यार्णवसंभवम्।
तत्र प्राङ्मुख आसीनश्चक्रराजं समालिखेत् ।।४७।।
भूप्रदेशे समे वर्ये सिन्दूररजसाऽथ वा।
कुङ्कुमस्य रजोभिस्तु भूमौ चक्रं समालिखेत् ।।४८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यहां 'योनिवश्य' की जगह 'योनिरस्यं' शुद्धपाठ प्रतीत होता है। यह तर्क संगत लग रहा है अर्थात् चक्र ही योनि है। यह चक्र अष्टयोनिमय है। अर्द्धमात्रा नादरूपा है। वह समस्त गुणों की सृष्टि करता है। नादरूपा अर्द्धमात्रा से ही गुण समूह उत्पन्न होते हैं। योनि त्रिकोणरूपा है। यह योनि बिन्दु युक्त है अत: वैन्दव कहलाती है। कामेश्वर (शिव) का स्वरूप समस्त जगदाकृति रूप है।

हे वरारोहे ! श्री चक्र विद्यामन्त्रों से उत्पन्न है। पूर्व की ओर मुख करके चक्रराज श्री चक्र को लिखे।

समतल अत्युत्तम भूमि में सिन्दूर चूर्ण द्वारा अथवा कुंकुम चूर्ण से चक्राँकन करना चाहिये ॥४५-४८॥

ऋजुरेखं नेत्ररम्यं सन्धिभेदसमं ऋजु।
अथ वा हेमरौप्याभ्यां ताम्रेण बहुधातुभिः ॥४९॥
पट्टं विरच्य श्रीखण्डरक्तचन्दनसंभवे।
पट्टे संस्थाप्य विलिखेल्लेखन्या हेमया प्रिये ॥५०॥

श्री चक्र यन्त्र की रेखाये सरल तथा देखने में सुन्दर हों। जैसे वेगगामी बाण सन्धि भेदन करता सरलता से चला जाता है। (टेढ़ा नहीं होता, सीधा जाता है) उसी प्रकार सरल रेखा हो। अथवा स्वर्ण, चांदी, ताम्र अथवा बहुधातुओं से चक्र अंकित करे।

हे प्रिये ! अथवा एक पीठ (पटरा) बनाकर (रक्तचंन्दन अथवा चन्दन का) सुवर्ण की लेखनी से श्रीयन्त्र अंकित करे ॥४९-५०॥

रोचनाकुङ्कुमाभ्यां तु कस्तूरीचन्दनेन्दुभिः।
ईशानादग्निपर्यन्तमृजुरेखां समालिखेत् ॥५१॥
ईशादग्नेस्तदग्राभ्यां रेखे आकृष्य देशिकः।
एकीकृत्य च वारुण्यां शक्तिरेखा परा प्रिये ॥५२॥

रोचना (गोरोचन) तथा कुंकुंम से कस्तूरी चन्दन तथा कर्पूर से ईशान कोण से लेकर अग्निकोण पर्यन्त एक सरल रेखा खींचो।

आचार्य ईशान तथा अग्नि के अग्रभाग से (पूर्वोक्त रेखा के दोनों सिरे से) दो रेखा खींचकर उसे (अधोदिक्) एक करे। हे प्रिये ! इस प्रकार करने से वह शक्तिरेखा (त्रिकोण) हो जायेगी ॥५१-५२॥

त्रिकोणाकाररूपेयं तस्या उपरि संलिखेत्।
त्रिकोणाकाररूपं तु शक्तिद्वयमुदाहृतम् ॥५३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्वशक्त्यग्रभागे तु मानयष्टिवदालिखेत् ।
रेखा तु परमेशानि वायुराक्षसकोणगाम् ।।५४।।
सन्धिभेदक्रमेणैव तयोः शक्त्योस्ततः परम् ।
रेखे आकृष्य कोणाभ्यां तदग्रात्पूर्वगे कुरु ।।५५।।

यह त्रिकोणा कार रूप (अधोमुख त्रिकोण) है । इसके ऊपर त्रिकोणाकाररूप दो रेखा खींचे । यह शक्तिद्वय कहलाती है ।

प्रथम त्रिकोण के अग्रभाग में प्रमाणयष्टि की तरह एक रेखा खीचनी चाहिये (प्रमाण यष्टि नापने वाली स्केल) । यह रेखा वायुकोण तथा नैर्ऋत कोणगामी होगी । हे परमेशानी ! तत्पश्चात् सन्धिभेद करके इन दो शक्ति से (कोणो से) दो रेखा खींचकर उनको पूर्व की ओर संयुक्त करना चाहिये ।।५३-५६।।

वह्निमण्डलमेतत्तु पूर्वाग्रं वीरवन्दिते ।
चक्रत्रयभभूत्तत्र ततः शृणु वरानने ।।५६।।

हे वीरवन्दिते ! हे वरानने ! इसे पूर्वाग्र अग्निमण्डल कहते हैं । इस प्रकार वहाँ तीन चक्र होंगे । अब आगे सुनो ।।५६।।

पूर्वशक्तीशवह्निभ्यां कोणाभ्यां सुरवन्दिते ।
पूर्वरेखां तु विस्तार्य तथा पश्चिमवह्नितः ।।५७।।
वायुराक्षसकोणाभ्यां रेखां पश्चिमगां तथा ।
विस्तार्य योजयेद्देवि संधिभेदक्रमेण तु ।।५८।।
योन्यग्रगां पूर्वदेशे दक्षिणोत्तरतः क्रमात् ।
तथा रेखे वह्निसंस्थे पश्चिमस्यां दिशि क्रमात् ।।५९।।
कोणाग्राभ्यां योजयित्वा दशकोणं तथा भवेत् ।
तथैव देवदेवेशि द्वितीयं दशकोणकम् ।।६०।।

हे देवी ! हे देववन्दिते ! पूर्व की ओर स्थित ईशान तथा अग्नि कोण पूर्व रेखा को आगे बढ़ा कर सन्धि स्थल पर उसे मिला दे । ईशान तथा अग्नि कोण से रेखा बढ़ाये, तदनन्तर सन्धिस्थल पर मिलाये ।

योनि की अग्रगामी रेखा पूर्वदेश से दक्षिण तथा उत्तर क्रम से अंकित करे तथा पश्चिम दिक् क्रम से अग्नि कोणस्थ दो रेखा खींचकर कोण के अग्रद्वय द्वारा युक्त करने से दस कोण होते हैं । हे देवदेवेशी ! इस प्रकार से द्वितीय दस कोण होगा ।।५७-६०।।

ईशानवन्हिगे रेखे पूर्वयोन्यग्रयोः क्रमात् ।
विस्तार्य योजयेत्पश्चात्पश्चिमायां दिशि क्रमात् ।।६१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वायुराक्षसकोणाग्ने रेखे विस्तार्य सुन्दरि ।
पश्चिमाग्रे तथा देवि योजयेदिन्द्रदिग्गते ।।६२।।
एकत्र पूर्वकोणाग्रचुम्बिनी तु मनोहरा ।
योजयेद्देवदेवेशि यथा पङ्क्त्यस्त्रकं भवेत् ।।६३।।
दक्षकोणस्य देवेशि त्यक्त्वा कोणचतुष्टयम् ।
दशकोणान्तरे देवि मध्ये रेखे प्रकाशयेत् ।।६४।।
द्वे दक्षिणे विभागे तु तथा चोत्तरभागके ।
षट्कोणस्य ततो देवि सन्धिभेदक्रमेण तु ।।६५।।
योनिं वह्निं च संयोज्य शकारं जायते सदा ।
कक्षामध्यगता रेखा ऋजुरूपास्तु योजयेत् ।।६६।।
ऋज्वाकृति यथा देवि जायतेऽतिमनोहरम् ।
संमुखं पञ्चशक्त्यग्रं प्राग्वक्त्रं चतुरग्निकम् ।।६७।।
बिन्दुत्रिकोणे वस्वारचक्रमेतद्वरानने ।
चक्रमध्यं तु जानीहि दशारयुगलं तथा ।।६८।।

हे देवी ! हे सुन्दरी ! पूर्व योनिके अग्रद्वय में ईशान तथा अग्नि कोणगत दो रेखा क्रम से विस्तृत करके पश्चिम दिक्क्रम से योजना करे । वायु तथा नैर्ऋत कोण के आगे दो रेखा का विस्तार करके पश्चिम दिक् के अग्रभाग पूर्व दिक् रूप से योजित करे ।

हे देवदेवेशी ! एक स्थान पर पूर्व कोण के अग्रभाग का स्पर्श करने वाली रेखा की योजना करने से उसमें पांच कोण होते हैं ।

हे देवेशी ! दक्षिण कोण के चार कोणों को छोड़कर पूर्वकोण में दो रेखा खीचे ।

हे देवी ! छः कोण के दक्षिण भाग में दो तथा उभय भाग में दो रेखा सन्धिभेद क्रम से अंकित करके योनि तथा वन्हिमण्डल को संयुक्त करे जिससे १४ कोण हो जायेंगे । कक्षा के मध्यस्थित सरलरेखाओं को संयुक्त करना चाहिये ।

हे देवी ! यह चक्र जिससे सरलाकृति एवं मनोहर हो जाये, ऐसा करना होगा । सामने शक्ति का ५ अग्रभाग होगा । पूर्व में चार अग्निमण्डल होगा ।

हे वरानने ! बिन्दु-त्रिकोण तथा आठ कोण का चक्र होगा । चक्र में दो दशकोण दशार होंगे ।।६१-६८।।

शक्रयोन्यङ्कितं देवि बाह्यमध्यगतं भवेत् ।
एतच्चक्रं महेशानि सर्वसौभाग्यवर्धनम् ।।६९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्वसाम्राज्यदं देवि सर्वोपद्रवनाशनम्।
अनेकरत्नमाणिक्यसुवर्णपरिपूरकम् ।।७०।।
महामोक्षप्रदं देवि वाग्विलासकरं महत्।
एतद्बाह्ये महेशानि वृत्तं पूर्णेन्दुसंनिभम्।।७१।।
तद्युक्तं कुरु मीनाक्षि वसुपत्रं मनोहरम्।
ततः षोडशपत्रं तु विलिखेत्सुरवन्दिते।।७२।।
तद्बाह्ये देवदेवेशि निवृत्तं मातृकान्वितम्।
चतुरस्त्रं चतुर्द्वारसहितं परमेश्वरि।।७३।।
चतुःषष्टियुताः कोट्यो योगिनीनां महौजसाम्।
चक्रेस्मिन्संनिविष्टास्ताः साधकं मानयन्ति हि।।७४।।
चतुरस्त्रं मातृकार्णैर्मण्डितं सिद्धिहेतवे।
मुक्तामाणिक्यघटितं समस्थलविराजितम्।।७५।।

हे देवी ! हे महेशानी ! यह चक्र बाहर तथा मध्य में १४ योनि द्वारा अंकित होगा। यह सर्वसौभाग्य वृद्धिकारी है।

हे देवी ! यह समस्त साम्राज्य प्रदाता है। समस्त उपद्रव नाशक है। यह पूजक को अनेक रत्न, माणिक्य तथा सुवर्ण से पूर्ण कर देता है। यह महामुक्ति भी प्रदान करता है। वाक्शक्ति की भी विचित्रता प्रदान करता है। हे महेश्वरी ! इस चक्र के बाहर पूर्णचन्द्र के समान गोलाकृति मण्डल तथा उस मण्डल के मनोहर अष्टदल पद्म विरचित करे। हे मीनाक्षी ! हे देववन्दिते ! तदनन्तर गोलाकार मण्डल (वृत्त) तथा षोडशदल पद्म बनाये। हे देवदेवेशी ! उसके बाहर मातृका वर्ण युक्त तीन गोलाकार मण्डल बनाये। हे परमेश्वरी ! उसके बाहर चार द्वार युक्त चतुरस्र अंकित करे। इस चक्र में महातेजस्विनी कोटि योगिनी तथा ६४ योगिनी स्थित रहती हैं। वे साधक को संवर्द्धित करती है। मातृकाओं द्वारा भूषित चतुष्कोण, मुक्ता एवं माणिक्य द्वारा गठित समस्थल पर विराजित होकर यह सिद्धि का कारण हो जाता है ।।६९-७५।।

त्रैलोक्यमोहनं नाम कल्पद्रुमफलप्रदम्।
षोडशारं चन्द्रबिम्बरूपं तु सकलालयम्।।७६।।
सर्वाशापूरकं भद्रे स्त्रवत्पीयूषवर्षणम्।
अष्टपत्रं महेशानि जपाकुसुमसंनिभम्।।७७।।
सर्वसंक्षोभणं नाम सर्वकामप्रपूरकम्।
एतत्त्रयं महेशानि सृष्टिचक्रं सुखप्रदम्।।७८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह चतुष्कोण त्रैलोक्य मोहनकारी है। कल्पवृक्ष के फल के समान फलद है। हे भद्रे ! चन्द्र के विम्ब के समान १६ तारा (सरलरेखा) युक्त यह मण्डल सबका आश्रय है। समस्त आशा का पूरक है। क्षरणशील अमृत वर्षण के समान है। हे महेशानी ! जवा पुष्पवत् अष्टपत्र सबका संक्षोभण करते हैं। इसका नाम है सर्व संक्षोभण ये समस्त कामना की पूर्ति करने वाले हैं। हे महेशानी ! ये तीन अर्थात् चतुरस्र, षोडशदल तथा अष्टपत्र ही सृष्टि चक्र हैं। ये सुखप्रद हैं ॥७६-७८॥

पूर्वाम्नायाधिदेव्या तु मण्डितं सर्वसिद्धिदम्।
चतुर्दशारं देवेशि दाडिमीकुसुमप्रभम् ॥७९॥
अनन्तफलदं भद्रे सर्वसौभाग्यसंप्रदम्।
दशारं तप्तहेमाभं सिन्दूरसदृशं प्रिये ॥८०॥
सर्वार्थसाधकं चक्रं मनश्चिन्तितदं सदा।
द्वितीयमपि पङ्क्त्यस्त्रं जपाकुसुमसंनिभम् ॥८१॥
सर्वरक्षाकरं चक्रं महाज्ञानमयं शिवे।
एतत्त्रयं महेशानि स्थितिचक्रं सुखप्रदम् ॥८२॥
दक्षिणाम्नायपूज्यं तु यथेप्सितफलप्रदम्।
अष्टकोणं वरारोहे बालार्ककिरणारुणम् ॥८३॥
पद्मरागसमप्रख्यं सर्वरोगहरं सदा।
उद्यत्सूर्यसहस्त्राभं बन्धूककुसुमप्रभम् ॥८४॥
सर्वसिद्धिप्रदं चक्रं सकलालयमीश्वरि।
त्रिकोणं सर्वसंभूतिकारणं भूतिदं सदा ॥८५॥

हे देवेशी ! पूर्वाम्नाय के अधिदेवता द्वारा भूषित यह सृष्टिचक्र सकल सिद्धि प्रदाता है। अनार के पुष्प के समान १४ अरायुक्त चक्र अनन्त फलदायक है। हे भद्रे ! सिन्दूर के समान, तप्तस्वर्णतुल्य प्रभायुक्त दस अरायुक्त चक्र समस्त पुरुषार्थ का साधक है। मन में जो इच्छा की जाये वह सर्वदा प्रदान करता है। हे शिवे ! जवापुष्प के समान द्वितीय पंचकोण रूप चक्र भी सर्वरक्षाकारक है तथा महाज्ञानमय है। हे महेशानी ! चतुर्दश अरायुक्त, दश अरायुक्त तथा पंचकोण को स्थिति चक्र कहा गया है। यह सुखप्रद है।

दक्षिणाम्नाय के देवता द्वारा पूज्य यह चक्र इच्छा के अनुसार फल प्रदाता है। हे सुन्दरी ! बाल सूर्य की किरण के समान अरुणवर्ण, पद्मराग मणि प्रभातुल्य अष्ट कोण सदा सर्वरोगहारी है। यह उदीयमान हजारों सूर्य के समान दीप्तिमान, बन्धूकपुष्पवर्ण वाला है। हे देवेशी ! ईश्वरी ! यह अष्ट कोण रूप चक्र सर्वसिद्धि प्रदान करता है। यह सभी का आश्रय है। त्रिकोणरूप चक्र समस्त ऐश्वर्य का कारण है ॥७९-८५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बिन्दुचक्रं वरारोहे सर्वानन्दमयं परम् ।
सदाशिवमयं चक्रनायकं परमेश्वरि ।।८६।।
एतच्चक्रं तु संहाररूपं ब्रह्ममयं सदा ।
पश्चिमाम्नायसंसेव्यं त्रयमुत्तरसेवितम् ।।८७।।

हे वरारोहे ! बिन्दु चक्र अतिशय सर्वानन्दमय है। यह सदा शिवमय है। यह चक्रनायक (श्रेष्ठ चक्र) है। हे परमेश्वरी ! ये तीन अर्थात् अष्ट कोण, त्रिकोण तथा बिन्दुचक्र सर्वदा ब्रह्ममय संहाररूप चक्र हैं। ये उत्तरवर्त्ती तीन चक्र पश्चिमाम्नाय देवता द्वारा संसेव्य है ॥८६-८७॥

अस्मिंश्चक्रे षड्ध्वानो वर्तन्ते वीरवन्दिते ।
चक्रपत्रेषु देवेशि पदाध्वा तु निगद्यते ।।८८।।

हे वीरवन्दिते ! हे देवेशी ! इस चक्र में ६ मार्ग विद्यमान है। चक्र के पत्रों को पदनामक मार्ग कहते हैं ॥८८॥

चक्रत्रिसंधिभागेषु भुवनाध्वा व्यवस्थितः ।
वर्णाध्वा मातृकारूपी कथयामि तवानघे ।।८९।।
वर्गाष्टकं मातृकाया दिक्षु सिद्धं यतः क्रमात् ।
पार्थिवं तन्मयं विद्धि षोडशारं कलात्मकम् ।।९०।।
अष्टपत्रं कादिवर्णैः क्षान्तैर्दिक्षु विदिक्षु च ।
कादिढान्ताः शक्रवर्णाः शक्रकोणेषु संस्थिताः ।।९१।।

हे निष्पापे ! चक्र के तीन सन्धिभाग में भुवन नामक अध्वा (मार्ग) स्थित है। अब मातृकारूपी वर्णमार्ग कहता हूँ ॥ मातृका के आठ वर्ग (अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग) आठ दिक् में सिद्ध हैं। ये आठ+आठ=१६ अरायुक्त कलास्वरूप को पार्थिव वर्गमय कहा है। पद्म के आठ पत्र में पूर्वादि चारदिक् एवं अग्निकोण प्रभृति चार कोणों में अ से क्ष पर्यन्त वर्ण क्रमशः युक्त करे। १४ कोणों में क से ढ तक १४ वर्ण क्रमशः अंकित करना चाहिये ॥८९-९१॥

णकारादिभकारान्ता दशवर्णा दशारके ।
मकारादिशकारान्ता द्वितीयेऽपि दशारके ।।९२।।

प्रथम दशकोण में 'ण' से 'म' पर्यन्त १० वर्ण क्रम से अंकित होगें। द्वितीय दशकोणों में 'म' से 'क्ष' पर्यन्त १० वर्ण क्रमशः अंकित होंगे ॥९२॥

वर्णाष्टकं चाष्टकोण त्रिकोणे कथयामि ते ।
अकथादित्रिकोणान्तं हक्षयुग्मं तु मध्यगम् ।।९३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आठ कोणों में अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ये आठ वर्ण अंकित करे। अब त्रिकोण का वर्णन करता हूँ। त्रिकोण के (अधोमुख त्रिकोण के) वाम भाग की रेखा में अ से अः तक, ये १६ वर्ण तथा दक्षिण भाग की रेखा मे 'ख' से 'स' पर्यन्त १६ वर्ण लिखे। त्रिकोण के मध्य 'ह' 'क्ष', ये दो वर्ण लिखे ॥९३॥

वर्णाध्वा कथितो देवि मातृकापीठरूपकः ।
षट्त्रिंशत्तत्वभरितं चक्रं मूलानुसारतः ॥९४॥

हे देवी ! मातृकापीठ रूप वर्णाध्वा कहा गया। मूल के अनुसार यह श्रीचक्र ३६ तत्वों से युक्त है ॥९४॥

तत्त्वाध्वा कथितो देवि तत्त्वरूपो वरानने ।
पञ्चसिंहासनोन्नद्धकलाध्वा चक्रशासनात् ॥९५॥

हे देवी ! हे वरानने ! तत्व रूप तत्वाध्वा कहा गया। यह चक्र पंचसिंहासन से युक्त है तथा पञ्च कला रूप अध्वा से युक्त है। पंच अध्वा (मार्ग) कहा जाता है–पदाध्वा, भुवनाध्वा, वर्णाध्वा, तत्त्वाध्वा तथा कलाध्वा ॥९५॥

साबाला भैरवीयुक्ता महात्रिपुरसुन्दरी ।
त्रिपुरा त्र्यम्बिकान्साढ्या चक्रं प्राप्य विजृम्भते ॥९६॥

त्रिपुराबाला, त्रिपुराभैरवी, महात्रिपुर सुन्दरी, त्रिपुरात्र्यम्बिका इस चक्र में विलसित होती हैं ॥९६॥

मन्त्राध्वाऽयं समाख्यातो निश्चयेन सदाऽनघे ।
एवं षडध्वविमलं श्रीचक्रं परिचिन्तयेत् ॥९७॥

हे निष्पापे ! यह त्रिपुरा बाला प्रभृति त्रिपुरा का विलास निश्चित रूप से मन्त्राध्वा रूपेण कहा गया। इस प्रकार से ६ अध्वा (मार्ग) द्वारा निर्मल इस चक्र का चिन्तन करे। (ये ६ अध्वा हैं–पदाध्वा, भुवनाध्वा, वर्णाध्वा, तत्वाध्वा, कलाध्वा, मन्त्राध्वा।) ॥९७॥

उत्तराशामुखो देवि यदा चक्रं समुद्धरेत् ।
उत्तराशा तदा देवि पूर्वाशैव निगद्यते ॥
ईशानकोणं देवेशि तदाऽऽग्नेयं न संशयः ॥९८॥

हे देवी ! जब साधक उत्तर मुख समासीन होकर एक चक्र अंकित करें। तब इस उत्तर दिक् को ही पूर्व कहा जायेगा। हे देवेशी ! तब ईशानरोण ही अग्निकोण होगा। इसमें सन्देह नहीं ॥९८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पश्चिमादिङ्मुखो मन्त्री यदा चक्रं समुद्धरेत् ।
पश्चिमाशा तदा ज्ञेया पूर्वाशैव न संशयः ।
वायुकोणं तदाग्नेयमैशानं राक्षसं भवेत् ।।९९।।

जब मन्त्री साधक पश्चिम की ओर मुख करके यह चक्र अंकित करेगा, तब पश्चिम दिक् ही पूर्वदिक् कहा जायेगा । इसमें सन्देह नहीं है । तब वायुकोण होगा अग्निकोण तथा नैर्ऋत कोण होगा ईशान कोण ॥९९॥

दक्षिणाभिमुखो मन्त्री यदा चक्रं समुद्धरेत् ।
पूर्वाशैव तदा सा दिग्रक्षःकोणं तु वह्निवत् ।।१००।।

जब मन्त्रज्ञ साधक दक्षिण की ओर मुख करके यह चक्र अंकित करेगा तब नैर्ऋत कोण ही अग्नि कोण होगा तथा दक्षिण दिक् ही पूर्व दिशा होगी ॥१००॥

एतच्चक्रं मेरुरूपं श्रीविद्यार्णैः समुद्धृतम् ।
सर्वागममयं देवि कथितं वीरवन्दिते ।।१०१।।

हे देवी ! हे वीरवन्दिते ! यह चक्र मेरुरूप है अर्थात् सभी मन्त्रसाधना की चरमभूमि रूप है । यह श्रीविद्यामन्त्र के द्वारा युक्त है । समस्त आगम, समस्त तन्त्र का तात्पर्य यह चक्र है । यही तुमसे कहना है ॥१०१॥

दशम पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एकादशः पटलः

(त्रिपुरा नवाक्षर वर्ण)

ईश्वर उवाच–

एभिर्वर्णैस्तु देवेशि त्रिपुरा कथ्यतेऽधुना ।
नवाक्षरो महामेरुरयं ब्रह्माण्डगोलकः ।।१।।
चतुरस्त्रं च कोदण्डं त्रिकोणं तत्पुटं मुखम् ।
निरालाम्बं तवाऽऽख्यातमेतद्ब्रह्माण्डमण्डलम् ।।२।।
लकारश्चतुरस्त्रं स्यात्पृथ्वीबीजतया प्रिये ।
अर्धमात्रा तु कोदण्डं स्त्रवत्पीयूषवर्षिणी ।।३।।

ईश्वर कहते हैं–हे देवेश्वरी ! इन सब वर्ण द्वारा अब त्रिपुरादेवी का वर्णन किया । यह ब्रह्माण्डगोलक नव अक्षरयुक्त महामेरु रूप है ।

चतुष्कोण धनु स्वरूप है । त्रिकोण उसके अधोमुख स्वरूप है । यह ब्रह्माण्ड मण्डल निराश्रय है । यह तुमसे कहा है ।

हे प्रिये ! पृथिवी का बीज रूप लकार चतुष्कोण स्वरूप है । अर्द्धमात्रा है अमृतधारा वर्षणकारी कोदण्ड रूप ।।१-३।।

त्रिकोणरूपी वह्निः स्यात्त्रिकोणत्वात्परा शिवा ।
एकारश्च रकारश्च ईकारश्च त्रयं भवेत् ।।४।।

अग्नि है त्रिकोणरूपी । त्रिकोण अर्थात् पराशक्ति शिवास्वरूप । यह पराशिव ऐकार रकार तथा ईकार रूप है । अर्थात् त्रिकोण का एक-एक कोण क्रमश 'ऐ र तथा ई' स्वरूप है । इन तीनों की समष्टि है पराशिवा ।।४।।

मायाविकाररूपेण षट्कोणाश्रयरूपिणी ।
हकारो व्योमरूपत्वाद् बिन्दुश्च मुखमण्डले ।।५।।

हकार है आकाशस्वरूप । अतः यह माया के विकार रूप से षट्कोण का आश्रय है । बिन्दु है देवी का मुखमण्डल रूप ।।५।।

इच्छारूपेण कामस्तु सर्वत्र परमेश्वरि ।
तस्मान्मादनव्याख्यातमेतद्वै मेरुमण्डलम् ।।६।।

हे परमेश्वरी ! काम इच्छा रूपेण सर्वत्र विद्यमान है । तभी यह मेरु मण्डल मादन (क्षोभकारक) नाम से विख्यात है ।।६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि बीजं कामेश्वरीमतम् ।
सकला भुवनेशानि कामेशीबीजमुत्तमम् ।।७।।

हे देवी ! हे भुवनत्रयेश्वरी ! अब कामेश्वरी के अभिमत को सुनो ! क तथा ल के साथ ई, अर्थात् क्लीं । यह है कामेश्वरी का उत्तम बीज ।।७।।

अनेन सकला विद्याः कथयामि विशेषतः ।
शक्त्यर्णस्तुर्यवर्णोऽयं कलमध्ये सुलोचने ।।८।।
वाग्भवं पञ्चवर्णं तु कामराजमथोच्यते ।
मादनं शिवचन्द्राद्यं शिवान्तं मीनलोचने ।।९।।
कामराजमिदं भद्रे षड्वर्णं सर्वमोहनम् ।
शक्तिबीजं वरारोहे चन्द्राद्यं सर्षसिद्धिदम् ।।१०।।
चतुरक्षररूपं तु त्र्यक्षरी त्रिपुरा परा ।
सर्वतीर्थमयी देवि सर्वदेवस्वरूपिणी ।।११।।

इसके द्वारा सकल विद्या कहूँगा । अर्थात् नवाक्षर त्रिपुरामन्त्र द्वारा 'ल स ह ई ए र कँ' (ये सात अक्षर हैं किन्तु 'क' पर लगे अर्द्धचन्द्र विन्दु को लेकर सब ९ है) इस नवार्ण मेरु मन्त्र के द्वारा 'सकल' मन्त्र कहे गये हैं । हे सुनयने ! क तथा ल के मध्य शक्ति (ए) वर्ण तथा चतुर्थ वर्ण (ई) तथा वाग्भव (ऐं), सब मिलाकर होगा 'क ए ई ल ऐं' । इस पंचाक्षर मन्त्र को वाग्भवकूट कहते हैं । तत्पश्चात् कामराज मन्त्र कहा जाता है–मादन (कं, शिव (इ), चन्द्र (स) आद्य, शिव (ह), अन्त अर्थात् कं ह स ह इन द्वयवर्ण युक्त (दो ह युक्त) कामराज मन्त्र । हे मीनलोचने ! हे भद्रे ! यह कामराजकूट सबका मोहन करने वाला है । हे सबका मोहन करने वाली ! (यह कामराज कूट है) हे सुन्दरी ! आदि में चन्द्र अर्थात् सकार युक्त जो मादन शिव चन्द्र अर्थात् स् क् ह् स् इन चार वर्ण से युक्त है, वह शक्ति बीज कूट है । यह सर्व सिद्धि प्रद है । त्रिपुरा का मन्त्र है त्र्यक्षर 'ऐं क्लीं सौः' । हे देवी ! यह त्रिपुरा सर्वतीर्थमयी, सर्वयज्ञमयी, संवित् स्वरूप, सर्वज्ञानस्वरूपा है ।।८-११।।

सर्वशास्त्रमयी विद्या सर्वयोगमयी परा ।
सर्वयज्ञमयी संवित्सर्वज्ञानस्वरूपिणी ।।१२।।

ये साक्षात् सर्वदेवमयी, सकल सौभाग्यप्रदात्री हैं । हे देवेश्वरी ! इनकी उपासना करने से साधक सर्वांग सुन्दर कामराज हो जाता है । यह त्रयक्षरी विद्या नित्य ब्रह्म स्वरूपा है ।।१२।।

एकादश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वादशः पटलः

(त्रिपुरासुन्दरी विद्या वर्णन, लोपामुद्राविद्या, चतुष्कूटा विद्या)

श्री देव्युवाच–

एतस्या देवदेवेश भेदान् कथय सुन्दर ।
केन केनोपासितेयं विशदी कुरु तत्त्वतः ।।१।।

श्री देवी कहती हैं–हे देव देवेश्वर ! हे सुन्दर ! यह पूर्वकथित कामराजकूट, शक्तिकूट तथा त्रिपुरा विद्या के वाग्भव भेदों का वर्णन करियें यह विद्या किसके द्वारा उपासित रही है, वह यथार्थतः विषद रूप से कहिये ।।१।।

ईश्वर उवाच–

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि लोपामुद्राभिधां वराम् ।
कामराजाख्यविद्यायाः शक्तिं तुर्यां च सुन्दरि ।।२।।
हित्वा मुखे शिवेन्द्वाढ्या लोपामुद्रा प्रकाशिता ।
अगस्त्योपासिता विद्या त्रैलोक्यक्षोभकारिणी ।।३।।

ईश्वर कहते हैं–हे देवी ! हे सुन्दरी ! लोपामुद्रा नाम्नी पराविद्या कहता हूँ सुनो । कामराज नामक जो विद्या क ए ई ल ह्रीं' है, उसकी शक्ति (ए) तूर्य (ई) का परित्याग करे । अर्थात् पहले शिव (ह), इन्दु (स) युक्त करे इससे लोपामुद्रा विद्या (ह् स् क् ल ह्रीं) प्रकाशित होती है । यह विद्या अगस्त्य द्वारा उपासिता है । यह निःसंदिग्ध है । यह त्रैलोक्य क्षोभनकारी है ।।२-३।।

एषा विद्या कामराजपूजितैव न संशयः ।
विद्याद्वयमिदं भद्रे दुर्लभं भुवनत्रये ।।४।।

यह विद्या 'ह सकल ह्रीं' पहले भारद्वाज द्वारा पूजित है । इसमें सन्देह नहीं है । हे रुद्र ! यह कामराजकूट तथा लोपामुद्रा नाम्नी दोनों विद्या त्रिभुवन में प्रसिद्ध है ।

कामराजाख्यविद्याया वाग्भवेन वरानने ।
विद्योद्धारं प्रवक्ष्यामि शक्तिमादनमध्यगम् ।।५।।
शिवं कुर्याद्वाग्भवे तु शिवाद्यं कामराजकम् ।
चन्द्राद्यं तु तृतीयं स्याद्विद्येयं मनुपूजिता ।।६।।

हे वरानने ! कामराज विद्या का उद्धार वाग्भवकूट विद्या द्वारा कहता हूँ । शक्ति ए तथा मादन क के मध्य शिव ह लगाये । आदि में ह लगाकर कामराज के वाग्भवकूट

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ईकार के आदि में चन्द्र 'स' होगा। अतः मंत्र होगा "ह क ह ए स ई ल ह्रीं"। यह **मनुपूजित** है ॥५-६॥

सहाद्यं वाग्भवं देवि चन्द्राद्यं शिवमध्यगम्।
मादनं कामराजे तु शक्तिबीजं सहाननम्॥७॥
चन्द्राराधितविद्येयं भोगमोक्षफलप्रदा।
हसाद्यं वाग्भवं विद्धि शिवाद्यं सहमध्यगम्॥८॥
मादनं कामराजे तु तार्तीयं शृणु पार्वति।
हसाद्यं शक्तिबीजं तु कुबेरेण प्रपूजिता॥९॥
कामराजाख्यविद्यायास्तार्तीयं सुरवन्दिते।
शक्तिबीजं सहाद्यं स्याद्विद्याऽगस्त्यप्रपूजिता॥१०॥

हे देवी! आदि में 'स ह' तदनन्तर वाग्भव (ऐं), चन्द्र आदि में तथा शिवमध्य में लगाये ऐसा जो मादन (क) है (अर्थात् सह के साथ जो क है) अर्थात् स ह के साथ 'क' लगाये। कामराज का आनन अर्थात् ऐं शक्ति बीज चन्द्रविन्दु युक्त हो। मंत्रोद्धार होगा 'स ह ऐं स ह क ऐं'। यह विद्या मन्त्र है। चन्द्रमा द्वारा आराधित यह विद्या भोग मोक्ष प्रदात्री है। हे पार्वती! कामराजाख्य विद्या के वाग्भव कूट के आदि में ह स रहने से शक्तिकूट होता है यथा–"ह स क ए ई ल ह्रीं"। आदि में शिव (ह) तदनन्तर 'स' तदनन्तर 'क' तदनन्तर 'ए ई ल ह्रीं'। अर्थात् ह स क ह ए ई ल ह्रीं–यह कामराजकूट है। इसका वाग्भव कूट अर्थात् 'ह स क ए ई ल ह्रीं' ही तृतीय शक्ति कूट है। यह **कुबेर द्वारा** पूजित है। हे देववन्दिते! कामराज विद्या का वाग्भव कूट ही कामराज कूट है। यह अगस्त्य द्वारा पूजित है। इसे द्वितीय लोपामुद्रा कहते हैं ॥७-१०॥

लोपामुद्रा प्रभावेन् साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणी।
कामराजाख्यविद्याया वाग्भवे मादनं त्यज॥११॥
चन्द्रं तत्रैव संयोज्य कामराजे ततः परम्।
हित्वा चन्द्रं मुखे कुर्याद्विद्येयं नन्दिपूजिता॥१२॥

यह विद्या (लोपामुद्रा विद्या) साक्षात् ब्रह्मरूपा है। जो इसकी उपासना करते हैं, वे ब्रह्मरूप हो जाते हैं। कामराज विद्या के वाग्भव कूट में मादन (क) को हटाकर उसके स्थान में चन्द्र का योग करे। (चन्द्र=स)। इससे होगा 'स ए ई ल ह्रीं'। तदनन्तर शिव के (ह) के बाद वाले चन्द्र (स) को प्रारंभ में लगाये। अर्थात् 'स ह क ह ल ह्रीं'। यह कामराज कूट हो गया और 'सकल ह्रीं' यह शक्ति कूट पूर्ववत रह गया। यह विद्या **नन्दी द्वारा** पूजिता है ॥११-१२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कामराजाख्यविद्याया हित्वा भूमिं तृतीयके ।
शक्तिकण्ठे स्थितां देवि चन्द्राधः कुरु तत्र च ।।१३।।
इन्द्राराधितविद्येयं भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
लोपामुद्राख्यविद्याया द्वितीयाया महेश्वरि ।।१४।।
कामराजे भृगुं हित्वा तार्तीये शक्रगः शिवः ।
एषा विद्या वरारोहे त्रिपुरा सूर्यपूजिता ।।१५।।

कामराज विद्या के तृतीय शक्तिकूट में भूमि (ल) का त्याग करके उसे चन्द्र के नीचे करे। इससे विद्या होगी क ए ई ल ह्रीं, ह स क ह ल ह्रीं, स क ल ह्रीं। यह **इन्द्र द्वारा** उपासिता है। यह भोग तथा मोक्ष प्रदा है। हे महेश्वरी ! द्वितीय लोपामुद्रा के कामराज कूट में ह कार के पश्चात् भृगु (स) को हटाकर उसे आदि में करके द्वितीय हकार कर त्याग करे। तृतीय शक्ति कूट में शिव (ह) शक्रगत अर्थात् लकार गत होगा। अत:

"ह स क ए ई ल ह्रीं, स ह क ए ई ल ह्रीं, स ह क ए ई स ह्रीं" यह विद्या होगी त्रिपुरानाम्नी यह **सूर्यद्वारा पूजिता** है ।।१३-१५।।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि चतुष्कूटां च शाङ्करीम् ।
लोपामुद्रां द्वितीयां तु विलिख्य सुरवन्दिते ।।१६।।
पुनर्विलिख्य तामेव चतुर्थे पञ्चमे स्थिताम् ।
हित्वा तु भुवनेशानीमेकोच्चारेण प्रपूजिता ।।१७।।
चतुष्कूटा महाविद्या शङ्करेण प्रपूजिता ।
लोपामुद्रां पुनर्देवि विलिख्य तदनन्तरम् ।।१८।।
नन्दिकेश्वरविद्यां च षट्कूटा वैष्णवी भवेत् ।
दुर्वाससा पुरा देवि निष्कूटा पूजिता परा ।।१९।।

हे देवी ! हे देववन्दिते ! शंकर द्वारा उपासिता चतुष्कूटा कहता हूँ। श्रवण करो। द्वितीय लोपामुद्रा लिखकर चतुर्थ तथा पंचम स्थित भुवनेशी (ह्रीं) को हराकर एक उच्चारण करे। यही चतुष्कूटा **शंकर पूजिता** विद्या है। यथा क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स ह स क ल ह्रीं कं ए ई ल ह स क ह ल स ह स क ल ह्रीं'

हे देवी ! पुनः लोपामुद्रा विद्या लिखकर तदनन्तर नन्दिकेश्वर विद्या लिखे यथा क ए ई ल ह्रीं, ह स क ह ल ह्रीं, स क ल ह्रीं, स ए ई ल ह्रीं, स ह क ह ल ह्रीं, स क ल ह्रीं, । यह विद्या है षट्कूटा वैष्णवी। हे देवी ! पूर्व में **महर्षि दुर्वासा ने** परा निष्कूटा विद्या की पूजा किया था ।।१६-१९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कामराजाख्यविद्यायास्त्रिकूटेषु वरानने।
या स्थिता भुवनेशानि द्विधा कुरु महेश्वरी।।२०।।
बिन्दुहीना नादहीना दुर्वासःपूजिता भवेत्।
एतैर्द्वादशसंख्याकैर्मन्त्रैस्तु सुरवन्दिते।।२१।।
द्वादशान्ता स्थिता देवि परब्रह्मस्वरूपिणी।
राज्ञीयं सर्वविद्यानां सर्वाम्नायैस्तु सेविता।।२२।।
सर्वागममहामन्त्रवन्दिता देववन्दिता।
सर्वयोगैर्नता नित्या केवलं ब्रह्मरूपिणी।।२३।।

हे वरानने! कामराज विद्या के तीन कूट में जो भुवनेशानी (ह्रीं) है, उसे विन्दुहीन तथा नादहीन करके दो भाग में करे। तब यह विद्या इस प्रकार होगी–'क ए ई ल ह् री ह स क ह ल ह् री स क ल ह् री यह विद्या दुर्वासा द्वारा पूजित है। (यहां ह्रीं को नादविन्दु रहित तथा विभक्त करके 'ह्री' किया गया है।

हे देवी! ये १२ संख्यक मन्त्र अगस्त्योपासित, कामराजपूजित, मनुपूजित, चन्द्रराधित, कुबेर पूजित, अगस्त्यपूजित, नन्दिपूजित, इन्द्राराधित, सूर्य पूजित, शंकर पूजित, षट्कूटा वैष्णवी, दुर्वासा पूजित हैं। इस सब मन्त्रों द्वारा पूजित अन्त में द्वादश युक्त (द्वादश प्रकार की) यह विद्या परब्रह्म स्वरूपा है। यह सभी विद्याओं की राज्ञी, चारों आम्नायों में पूजिता है। यह सभी तन्त्रों के महामन्त्रों से वन्दित, देवताओं द्वारा भी वन्दित है। सभी योग इस विद्या को प्रणाम करते हैं। यह नित्य केवल स्वरूपिणी है।

एवं त्रिधा महाविद्या विद्या त्रिपुरसुन्दरी।
इयमेव महादेवी त्रिकूटा परमेश्वरी।।२४।।

इस प्रकार से त्रिपुरा महाविद्या रूप मन्त्र तीन प्रकार के हैं। यथा वाग्भवकूट, कामराज कूट तथा शक्तिकूट। यही महादेवी परमेश्वरी त्रिकूटा हैं।

वक्तुं न शक्यते सर्वैर्ब्रह्मविष्ण्वादिभिः सदा।
नो वाचा मनसा बुद्ध्या तुर्या वक्तुं न शक्यते।।२५।।
साक्षाद्ब्रह्ममयी देवी षोडशार्णस्वरूपिणी।
मनसैव महेशानि स्मृत्वाऽहं तु सदाशिवः।।२६।।

लेकिन जो चतुर्थ प्रकार इस महाविद्या का है, उसे ब्रह्मा-विष्णु आदि कोई भी जान नहीं पाते। शब्द द्वारा, मन द्वारा, बुद्धि द्वारा चतुर्थ विद्या को नहीं कहा जा सकता। यह चतुर्था विद्या साक्षाद् ब्रह्ममयी १६ अक्षर स्वरूपा है। हे महेश्वरी! मैं केवल मन से इनका स्मरण करके सदाशिव हो गया हूँ॥२५-२६॥

द्वादश पटल समाप्त।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रयोदशः पटलः

(षोडशी विद्या विवरण, श्री विद्या गोपनीयत्व, विद्या मन्त्र माहात्म्य)

श्री देव्युवाच–

परब्रह्मतया साक्षाच्छ्रीविद्या षोडशाक्षरी।
कथय त्वं महादेव यद्यहं तव वल्लभा ।।१।।

त्रिकूटाः कथिताः सर्वाश्चतुष्कूटा च शाङ्करी।
षट्कूटा वैष्णवी चैव मनवः कथिता विभो ।।२।।
एतास्तु सकला विद्यास्त्रिविधास्तु श्रुता मया।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि श्रीविद्यां षोडशाक्षरीम् ।।३।।

श्री देवी कहती हैं–हे महादेव ! मैं यदि आपकी प्रिय हूँ, तब यह बताने की कृपा करिये कि साक्षात् परब्रह्मरूप षोडश अक्षर वाली श्रीविद्या क्या है ? ।।

हे विभो ! आपने सभी त्रिकूटा, शंकर पूजिता चतुष्कूटा, षट्कूटा वैष्णवी के मन्त्रादि को कहा।

मैने सभी विद्या के तीन प्रकार (वाग् भवादि प्रकार त्रय) को आप से सुना। अब षोडशाक्षरी श्रीविद्या सुनने की इच्छा है ।।१-३।।

ईश्वर उवाच–

शठत्वेन वरारोहे श्रीविद्यामन्त्रविद्बुधः।
योगिनीनां भवेद्भक्ष्यः श्रीगुरोः शासनात्प्रिये ।।४।।

ईश्वर कहते हैं–हे प्रिये ! हे वरारोहे ! यदि श्रीविद्या के ज्ञाता शठ हों तब वे योगिनीगण के भक्ष्य होते हैं। यह श्रीगुरु शासन है। (आदेश है) ।।४।।

षोडशार्णां महाविद्यां न दद्यात्कस्यचित् प्रिये।
राज्ञे राज्यप्रदायापि पुत्राय प्राणदाय वा ।।५।।

हे प्रिये ! षोडशवर्णात्मक विद्या किसी को प्रदान न करे। राज्य प्रदानकारी राजा को भी, पुत्र को भी अथवा प्राणदान के बदले भी यह विद्या प्रदान न करे ।।५।।

देयं तु सकलं भद्रे साम्राज्यमपि पार्वति।
शिरोऽपि प्राणसहितं न देया षोडशाक्षरी ।।६।।
उच्चार्यमाणा ये मन्त्रास्ते सर्वे वाचिकाः प्रिये।
उच्चाररहितं वस्तु श्रीविद्या षोडशाक्षरी ।।७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सवर्णाऽपि वरारोहे वस्तु साक्षान्निरक्षरम् ।
भृङ्गोपभुक्तपुष्पं तु शिवेऽयोग्यं यथा भवेत् ।।८।।
तथा निरक्षरं वस्तु ह्यक्षरैरपि संयुतम् ।
उदके लिखितं यद्वन्मन्त्रोच्चारस्तथा भवेत् ।।९।।
भोगमोक्षप्रदा विद्या श्रीविद्या षोडशाक्षरी ।
विना गुरूपदेशेन शापो भवति निश्चयात् ।।१०।।

हे पार्वती ! हे भद्रे ! सब कुछ दे दे, साम्राज्य भी प्रदान कर दे, प्राणों के साथ मस्तक भी अर्पित कर दे लेकिन षोडशाक्षरी किसी को नहीं देना चाहिये ।

जिन सब मन्त्रों का उच्चारण किया जाता है, वे वाचिक हैं । षोडशाक्षरी तो उच्चारण रहित है ।

हे शिवे ! वरारोहे ! वर्णयुक्त होकर भी यह विद्या वर्ण रहिता है । जैसे भ्रमर द्वारा उपभोग में लाया पुष्प देव विषय में अयोग्य होता है (पूजा योग्य नहीं है क्योंकि उसका पराग शोषित हो जाता है) जैसे अक्षर को जल में लिखने पर भी उसका कोई पता नहीं होता, उसी प्रकार श्री विद्या का मन्त्रोच्चारण भी कार्यप्रद नहीं होता । (यह अनुच्चार्य विद्या है) ।

षोडशाक्षरी यह विद्या भोग-मोक्षप्रदा है । इसे गुरु दीक्षा के बिना केवल पुस्तक में पढ़ कर जपना अभिशाप प्रदान करता है ।।६-१०।।

चन्द्रान्तं वारुणान्तं च शक्रादिसहितं पृथक् ।
वामाक्षि बिन्दुनादाढ्यं विश्वमातृकलात्मकम् ।।११।।
चतुर्विधप्रकारेण शृणु देवि प्रकथ्यते ।
त्वं मनोहारिणी यस्मात्कथ्यते भुवि दुर्लभम् ।।१२।।
विद्यादौ योजयेद्देवि साक्षाज्जाग्रत्स्वरूपिणी ।
उत्पत्तिर्जागरो बोधो व्यावृत्तिर्मनसः' सदा ।।१३।।

चन्द्रान्त (ह), वारुणान्त (श) शक्रादि (र) वाभाक्षि (ई) विन्दु से तथा नाद से युक्त 'ह्रीं, श्रीं' विश्वमातृका हैं । हे देवी ! तुम इसे सुनो । तुम मनोहारिणी हो । यह पृथिवी पर दुर्लभ है ।

हे देवी ! पूर्वोक्त १२ प्रकार की विद्या के आदि में इनकी योजना करे । ये 'ह्रीं श्रीं' साक्षात् जाग्रत् स्वरूपा हैं । इन विद्या का उत्पत्ति स्थान है जाग्रतावस्था । सर्वदा मन की निवृत्ति इस विद्या का ज्ञान है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(जैसे अगस्त्यो पासिता विद्या है 'ह स क ल ह्रीं' इसके प्रारंभ में 'ह्रीं श्रीं' लगाने पर स्वरूप होगा 'ह्रीं श्रीं ह स क ल ह्रीं' यह मन्त्र साक्षात् जाग्रत् स्वरूप है। ऐसे ही बाकी ११ मन्त्रों में 'ह्रीं श्रीं' प्रारंभ में लगाने से वे भी साक्षात् जाग्रत स्वरूप हो जाते हैं ॥११-१३॥

कलाचतुष्टयं जाग्रदवस्थायों व्यवस्थितम् ।
जाग्रत्सत्त्वगुणा प्रोक्ता केवलं शक्तिरूपिणी ।।१४।।
त्रिकूटा सकला भेदाः पञ्चकूटा भवन्ति हि ।
वैष्णवी वसुकूटा स्यात्षट्कूटा शांकरी भवेत् ।।१५।।
द्वितीयोऽयं प्रकार स्याद्दुर्लभो भुवनत्रये ।
एषैव शिवरूपा तु व्यापकत्वात्सुरेश्वरि ।।१६।।

जाग्रदावस्था में चार-चार कला व्यवस्थित रहती है। चार कला है त्रिकूटा, पञ्चकूटा, षट्कूटा, अष्टकूटा। ये जाग्रद्वत्–सत्वगुणात्मक शक्तिरूपा कला हैं।

सभी त्रिकूट मन्त्र, वाग्भव, कामराज, शक्तिकूट 'ह्रीं श्रीं' का योग करके पञ्चकूट हो जाते हैं। वैष्णवी षट्कूटा विद्या अष्टकूटा हो जाती है। शांकरी विद्या षट्कूटा होती है। शांकरी विद्या चतुष्कूटा होती है तथापि 'ह्रीं श्रीं' का आदि में योग करके षट्कूटा हो जायेगी।

हे सुरेश्वरी ! इन द्वादशो विद्या के प्रारंभ में 'ह्रीं श्रीं' का योग करने पर प्राप्त षोडशीविद्या त्रिभुवन में दुर्लभा है। यह शिवरूपा व्यापक होने के कारण त्रिभुवन दुर्लभ है ॥१४-१६॥

निश्चला सर्वभूतेषु सदाशिवमयी परा ।
सुषुप्तिरूपिणी साक्षाद्ब्रह्मरूपा यतः प्रिये ।।१७।।

यह पञ्चकूटा, षट्कूटा तथा अष्टकूटा विद्या समस्त प्राणीगण में निश्चला है। निश्चला अर्थात् स्थिता है। चलित होकर स्थान परिवर्त्तन नहीं करती। सदा विद्यमान रहती है। यह उत्तम तथा सदाशिवमयी है। हे प्रिये ! यह सुषुप्ति रूपा (कुण्डलिनी रूप में सुषुप्ता रहने वाली), साक्षात् ब्रह्मस्वरूपा है ॥१७॥

मरणं विस्मृतिर्मूर्छा निद्रा च तमसा वृता ।
सुषुप्तिस्तु कला ज्ञेया सुषुप्तिः शिवरूपिणी ।।१८।।

इस विद्या का विस्मरण ही मृत्यु है। तमोद्वारा आवृत (तमोगुण आच्छन्नता) निद्रा इसकी मूर्च्छा है। सुषुप्ति इसकी कला है। (सुषुप्ति दो प्रकार की होती है। एक जागतिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दूसरी मन में वृत्ति का न होना चित्तवृत्ति निरोध) सुषुप्ति अर्थात् मन की वृत्ति का अभाव ही इसकी शिवरूपता है ॥१८॥

केवलत्वेन जाग्रत्स्यात्पञ्चकूटा च शाम्भवी ।
सुषुप्त्यन्ते जागरादौ स्वप्नावस्था रजोमयी ।।१९।।

यह शांभवी पञ्चकूटा विद्या अपने केवल रूप में (अपने स्वात्मरूप में) जाग्रत है और जागृति के प्रारंभिक क्षण में तथा सुषुप्ति के अन्त में (अर्थात् जब जागृति न हो लेकिन उसका प्रारंभ हो रहा हो तब, तथा जब सुषुप्ति का अन्त हो गया हो लेकिन जागरण न हुआ हो तब) यह स्वप्नावस्था है ॥१९॥

अभिलाषो भ्रमश्चिन्ता विषयेषु पुनः स्मृतिः ।
कलाचतुष्टयं स्वप्नावस्थायां तु विधीयते ।।२०।।

स्वप्नावस्था में इच्छा, भ्रम, चिन्ता, विषयों का पुनः स्मरण ये चार कलायें (स्वप्नांश) विहित होते हैं ॥२०॥

शिवरूपा शक्तिरूपा महात्रिपुरदेवता ।
वेदादिमण्डिता देवि शिवशक्तिमयी सदा ।।२१।।
सप्त भेदास्तु सकलाः षट्कूटाः परमेश्वरि ।
वैष्णवी नवकूटा स्यात्सप्तकूटा च शाङ्करी ।।२२।।

हे देवी ! महात्रिपुर देवता शिवरूपा तथा शक्तिरूपा हैं। यह वेदादि (ॐ) से युक्त होकर शिवशक्तिमयी हो जाते हैं। अर्थात् पूर्व में द्वादश मन्त्र के पूर्व में 'ह्रीं श्रीं' आदि के योग से पञ्चकूट इत्यादि होता है। अब उसके प्रारंभ में ॐ कार योग करने पर होगा 'ॐ ह्रीं श्रीं ह स क ल ह्रीं'। ऐसे ही बाकी ११ विद्याओं में 'ॐ ह्रीं श्रीं' योग करने पर ये सभी मन्त्र भेद षट्कूटा हो जाते हैं। हे परमेश्वरी ! 'ॐ ह्रीं श्रीं' को प्रारंभ में जोड़ने से षट्कूटा वैष्णवी विद्या नवकूटा हो जाती है। चतुःष्कूटा शांकरी विद्या भी सप्तकूटा हो जाती है ॥२१-२२॥

अस्याः स्मरणमात्रेण गजदानं शतं भवेत् ।
भेदत्रयं तु कथितं तूर्यां विद्यां शृणु प्रिये ।।२३।।
यस्या विज्ञानमात्रेण ब्रह्म साक्षान्न संशयः ।
सुषुप्त्यादौ जागरान्ते स्फुरत्तामात्रलक्षणा ।।२४।।
अवस्थाशेषतां प्राप्ता तुर्या तु परमा कला ।
भावाभावविनिर्मुक्ता गुणातीता निगद्यते ।।२५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे प्रिये ! इन षट्कूटा, नौकूटा, सप्तकूटा विद्याओं के स्मरण करने से ही एक सौ हाथियों को दान करने जितना फल प्राप्त हो जाता है। इन तीन भेदों के सम्बन्ध में कहा। हे प्रिये ! अब चतुर्थी विद्या सुनो।

साधक चतुर्थी विद्या के जानने मात्र से साक्षात् ब्रह्म हो जाता है। यह चतुर्थी विद्या सुषुप्ति के आदि में तथा जागरण के अन्त में अर्थात् चित्त विक्षेप के अन्त में तथा चित्तलय के पूर्व प्रकाशमात्र स्वरूपा (स्थिति) है।

यह चतुर्थी विद्या चित्त की इस अवस्थाविशेष (सन्धि, सुषुप्ति तथा जागरण की सन्धि) में प्राप्त होती है। यह परमा कला भाव–अभाव से रहित तथा गुणातीत है ॥२३-२५॥

वैराग्यं च मुमुक्षत्वं शमादि विमलं मनः।
सदसद्वस्तुनिर्धारस्तुर्यायास्तु कला इमाः ॥२६॥

वैराग्य, मुक्ति की इच्छा, शम, दम, उपरति, तितिक्षा, समाधान, श्रद्धा द्वारा निर्मल किया मन, सत्–असत् का निर्धारण, यह सब चतुर्थी विद्या की कलाये हैं ॥२६॥

आद्यबीजद्वयं भद्रे विपरीतक्रमेण हि।
विलिख्य परमेशानि ततोऽन्यानि समुद्धरेत् ॥२७॥

हे भद्रे ! हे परमेश्वरी ! पहले बीजद्वय 'ह्रीं श्रीं' को विपरीत क्रम से "श्रीं ह्रीं" प्रकार से लिखकर तब अन्य बीजों का उद्धार करे ॥२७॥

अन्तर्मुखा वरारोहे कुमारी त्रिपुरेश्वरी।
एभिस्तु पञ्चसंख्याकैर्बीजैः संपुटिता जयेत् ॥२८॥
षट्कूटा परमेशानि विद्येयं षोडशाक्षरी।
त्रिकूटा सकला भद्रे षोडशार्णा भवन्ति हि ॥२९॥

हे वरारोहे ! कुमारी त्रिपुरेश्वरी अर्थात् त्रिपुराबालाबीज 'ऐं क्लीं सौः' के अन्तः के अर्थात् मध्य के क्लीं बीज को आदि में करके लिखे। अर्थात् 'क्लीं ऐं सौः'। यह ५ बीज अर्थात् 'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः' बीज द्वारा सभी बारहों विद्याओं को पुटित करके पूजा करनी चाहिये।

जैसे 'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह स क ह ल ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः' यह षोडशाक्षरी विद्या है। हे भद्रे ! सभी त्रिकूट विद्याओं को सम्पुटित करने पर षोडशाक्षरी विद्या हो जाती है ॥२७-२९॥

वैष्णव्येकोनविंशार्णा शैवी सप्तदशाक्षरी।
वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ॥३०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वर्णितुं नैव शक्येयं श्रीविद्या षोडशाक्षरी ।
वैष्णवी पञ्चमी चैव कः शक्तो गुणवर्णने ।।३१।।

वैष्णवी विद्या १९ अक्षरों की तथा शैवी विद्या १७ अक्षरों की होती है । इस षोडशी विद्या को हजारों करोड़ मुखों द्वारा, शत कोटि जिह्वाओं द्वारा वर्णित नहीं किया जा सकता है । उच्चारण योग्य स्थूल रूप प्राप्त कर लेनें पर भी इसके गुणवर्णन को नहीं किया जा सकता ॥३०-३१॥

यतो निरक्षरं वस्तु परा तत्र तु कारणम् ।
मूकीभूता हि पश्यन्ति मध्यमा मध्यमा भवेत् ।।३२।।

(वैश्वरी पद वाच्य) पराविद्या अक्षर शून्य होने के कारण परा कहलाती है । साधक मूक होकर उसका दर्शन करते हैं । मध्यमा भूमि में यह स्थूलशब्द रूप (वैखरीरूप) से उच्चार्य नहीं है तथापि अक्षर शून्य भी नहीं है । लेकिन सूक्ष्मशब्दगम्य है अर्थात् मननावस्था जैसा अन्य को सुनाई न देने वाला यह शब्द है ॥३२॥

ब्रह्मविद्यास्वरूपेण भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
एकोच्चारेण देवेशि वाजपेयस्य कोटयः ।।३३।।

हे देवेशी ! यह १६ अक्षरों वाली विद्या श्रीविद्या ही ब्रह्मविद्यारूप से भोग तथा मोक्ष फल देती है । इसका एकबार का उच्चारण हजारों बाजपेय यज्ञफल देता है ॥३३॥

अश्वमेधसहस्राणि प्रादक्षिण्यं भुवस्तथा ।
काश्यादितीर्थयात्राश्च सार्धकोटित्रयान्विताः ।।३४।।
तुलां नार्हन्ति देवेशि नात्र कार्या विचारणा ।
एकोच्चारेण गिरिजे किं पुनर्ब्रह्म केवलम् ।।३५।।
षोडशार्णा महाविद्या न प्रकाश्या कदाचन ।
गोपितव्या त्वया भद्रे स्वयोनिरिव पार्वति ।।३६।।

इसका एक बार का उच्चारण हजारों अश्वमेघ तथा समस्त पृथिवी प्रदक्षिणा का फल तथा साढ़े तीन करोड़ काशी आदि तीर्थों की यात्रा का फल प्रदान करता है ॥

हे देवेशी ! जो इस श्रीविद्या का एक बार उच्चारण करता है, उससे जो फल मिलेगा, उसकी तुलना ही नहीं है । इसपर विचार नहीं करना चाहिये । इसका फल और क्या कहें, ब्रह्म भी उसके बराबर नहीं है ।

हे भद्रे ! हे पार्वती ! यह १६ अक्षरों वाली महाविद्या है । इसका कही भी प्रकाशन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

न करे। तुम भी इसे उतना गुप्त रखो जितना गुप्त स्त्रीगण अपनी योनि को रखती हैं ॥३४-३६॥

शिवशक्तिसमायोगाद्यद्यत्कर्म प्रजायते ।
वेद्यं तत्र भवेत्तद्वच्छ्रीविद्यां षोडशाक्षरीम् ।।३७।।
विना गुरूपदेशेन श्रीविद्या षोडशाक्षरी ।
दृष्ट्वा प्रजपते यस्तु स भक्ष्यो योगिनीगणैः ।।३८।।
श्रीगुरोः कृपया लब्ध्वा सर्वसाम्राज्यदायिनी ।
भुवनत्रयसौभाग्यं ददाति विपुलां श्रियम् ।।३९।।

शिव-शक्ति योग (सहस्त्रार में समाधि से शिव शक्ति का मिलन) से जो कर्म उत्पन्न होता है, उसे कोई नहीं जान सकता। उसी प्रकार षोडशाक्षरी भी ज्ञेय नहीं हैं।

गुरु की दीक्षा के बिना जो इस विद्या को पुस्तकादि में पढ़कर जपता है, वह योगिनीगण का भक्ष्य हो जाता है।

श्रीगुरु की कृपा से यह विद्या प्राप्त होने पर यह समस्त साम्राज्य, त्रिभुवन का समस्त सौभाग्य तथा विपुल ऐश्वर्य प्रदान करता है ॥३७-३९॥

साक्षान्मदनसौभाग्यं त्रैलोक्याकर्षणक्षमम् ।
सुधातरङ्गिणीवेयं शब्दचातुर्यदायिनी ।।४०।।

यह विद्या त्रैलोक्य के आकर्षण में समर्थ है। साक्षात् महेन्द्र के समान सौभाग्य प्रदान करती है। यह अमृत सरिता के समान अविच्छिन्न शब्द चतुरता प्रदात्री है ॥४०॥

सौभाग्यभाग्यसंपन्नकलापटलदायिनी ।
परब्रह्मणि लीनत्वं ददाति यश उत्तमम् ।।४१।।

यह सौभाग्य तथा ६४ कलायें प्रदान करती है। विद्यासमूह देती है। परब्रह्म में सल्लीन करती है। उत्तम यश देने वाली है ॥४१॥

प्रपञ्चसागरे लीनानुद्धरेद्वेदमातृका ।
यस्याः सामर्थ्यतो देवि भुवनानि चतुर्दश ।।४२।।
अभूवन्परमेशानि तेषां कारणरूपिणी ।
चतुःसागरसामर्थ्यं कृपालोकनतो भवेत् ।।४३।।

ये वेदमाता हैं तथा संसार समुद्र में मग्न व्यक्तिओं का उद्धार करने वाली हैं। हे परमेश्वरी ! हे देवी ! जिनके सामर्थ्य से चौदहों भुवन की उत्पत्ति कही गयी है, वे ही सब

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की कारण स्वरूपा हैं। इनकी कृपादृष्टि से चार समुद्रों की शक्ति उत्पन्न हो जाती है ॥४२-४३॥

ब्रह्माण्डकोटिजननी महामोक्षप्रदायिनी ।
निःसरन्ति महामन्त्रा विस्फुलिङ्गा यथा प्रिये ॥४४॥
वह्नेः सकाशाद् बहवो विद्यास्तु बहवस्तथा ।
वाग्भवात्तु समुत्पन्नास्तस्माद्वाग्भवमुच्यते ॥४५॥
मातृकार्णास्तथा भद्रे वाग्भवान्निसृताः क्रमात् ।
अत एव महेशानि शब्दब्रह्ममयी प्रिये ॥४६॥

हे प्रिये ! ये कोटि-कोटि ब्रह्माण्डो की जननी, महामोक्ष दायिनी हैं। जैसे एक ही अग्नि से हजारों-हजार चिनगारी निकलती है, उसी प्रकार इन भगवती से अनेक विद्यासमूह उत्पन्न होते हैं। वाग्भव बीज से समस्त विद्या की उत्पत्ति होती है, इसी कारण से श्री विद्या को वाग्भव कहा गया है। वाग्भव से मातृका वर्ण भी क्रमशः निःसृत होते हैं। अतः ये भगवती शब्द ब्रह्ममयी हैं ॥४४-४६॥

पालयन्ती जगत्सर्वं तथा त्रैलोक्यमोहिनी ।
मोहयन्ती कामकला पुत्रपौत्रप्रवर्धिनि ॥४७॥

ये समस्त जगत् का पालन करती हैं। ये त्रैलोक्य मोहिनी हैं। कामकला रूपेण जगत् को मोहित करती हैं। ये पुत्रपौत्र प्रवृत्ति कारिणी हैं ॥४७॥

स्त्रीपुंभावेन सकलं ग्रथितं कामसूत्रके ।
तदा सौभाग्यसंपन्ना ब्रह्मस्थाननिवासिनी ॥४८॥
सौभाग्यगर्वगहना विश्वयोनिरितीरिता ।
चतुर्वाङ्मयनिष्ठेयं त्रैलोक्यवशकारिणी ॥४९॥
साक्षात्संविन्मयी ज्ञानरूपिणी भोगदायिनी ।
महासंपत्प्रदा नित्या साक्षादक्षररूपिणी ॥५०॥

समस्त जगत स्त्री-पुरुष रूप से काम्र के सूत्रों से गुथा है। लेकिन यह सौभाग्य सम्पन्ना विद्या ब्रह्मलोक में स्थिता हैं। यह सौभाग्यगर्व गर्विता, विश्वयोनि, चतुर्वाक्, तथा त्रैलोक्य को वश में करने वाली हैं।

ये साक्षात् संवितमयी, ज्ञानरूपा, भोगप्रदा, महासम्पत्प्रदा, नित्या, साक्षात् अक्षर ब्रह्मरूपा हैं ॥४८-५०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षोडशार्णा मया भद्रे श्रीविद्या कथिता परा ।
निधानमिव चोरेभ्यो रक्षणीया तथा प्रिये ।।५१।।

हे भद्रे ! हे प्रिये ! मैने षोडशाक्षरी उत्तम विद्या कहा । जैसे लोग मूल्यवान् रत्नों की रक्षा चोरों से करते हैं । उसी प्रकार इस विद्या की रक्षा करे ।।५१।।

न देया यस्य कस्यापि देया प्राणप्रदायिने ।
निर्मलाय स्वभक्ताय प्राणेभ्योऽप्यधिकाय च ।।५२।।

जिस किसी को यह विद्या नहीं देनी चाहिये । जो प्राण प्रदान करें (शरणागत हों), जो निर्मल, भक्त, जो प्राणों से भी प्रिय हों, उनको यह विद्या प्रदान करना चाहिये ।

त्रयोदश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतुर्दशः पटलः

(कलस स्थापनविधि, षडङ्गादिन्यास, षोढ़ान्यास, नक्षत्रन्यास, राशिन्यास, पीठन्यास, कामरतिन्यास, नवयोनिन्यास)

श्रीदेव्युवाच–

चक्रमण्डलमाख्यातं न पूजा तत्र मण्डले।
कथिता परमेशान श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ।।१।।

श्री देवी कहती हैं–हे परमेश्वर ! आपने चक्रमण्डल का वर्णन तो कर दिया, लेकिन उसका पूजाविधान नहीं कहा। मैं आपसे इस चक्रमण्डल का पूजाविधान सुनना चाहती हूँ ।।१।।

ईश्वर उवाच–

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि पूजाविधिमनुत्तमम्।
तदङ्गकलशादीनां स्थापनं प्रथमं भवेत् ।।२।।

ईश्वर कहते हैं–हे देवी ! अत्युत्तम पूजाविधि सुनो। इस पूजा का अंग जो कलस प्रभृति है। उसका स्थापन पहले होता है ।।२।।

तद्विधानं शृणु प्राज्ञे यथाविधि समासतः।
मण्डलं वामतः कृत्वा जलेन चतुरस्त्रकम् ।।३।।
बृहत्कराभ्यां देवेशि तत्राऽऽधारं मनोहरम्।
सौवर्णरौप्यताम्रादिरचितं पूजयेत्प्रिये ।।४।।
वह्निमण्डलरूपं तु कलादशकमर्चयेत्।
धूम्रा च नीलवर्णा च कपिला विस्फुलिङ्गिनी ।।५।।
ज्वाला हैमवती कव्यवाहिनी हव्यवाहिनी।
रौद्री संकर्षिणी चैव वैश्वानरकला दश ।।६।।
आभिः कलाभिः सहितं वह्निं तत्र प्रपूजयेत्।
कलशं हेमजं वाऽन्यं स्थापयेत्तत्र सुन्दरि ।।७।।

हे प्रज्ञासम्पन्ने ! इस कलस स्थापन की पद्धति को संक्षेप में सुनो। बाईं ओर जल से चतुष्कोण मण्डल बनाकर दोनों हाथों से वहां सुवर्ण, रजत अथवा ताम्र का मनोहर आधार स्थापित करके पूजा करनी चाहिये। हे देवेशी ! हे प्रिये ! उस आधार पर दशकला मण्डित अग्निमण्डल की पूजा करे। अग्नि की १० कलाये हैं धूम्रा, नीलवर्णा, कपिला,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विस्फुलिंगिनी, ज्वाला, हैमवती, कव्यवाहिनी, हव्यवाहिनी, रौद्री, संकर्षिणी। इन दस कला के साथ उस आधार पर अग्निपूजा करे। तदनन्तर हे सुन्दरी ! उस आधार पर सुवर्ण का अथवा अन्यधातु का कलस स्थापित करे। 'मं वन्हिमण्डलाय दशकलात्मने नमः। 'धूम्रायै नमः' इत्यादि क्रम से पूजा होगी ॥३-७॥

पूजयेत्सूर्यरूपं तु कलाभिः परमेश्वरि।
तपिनी तापिनी चैव विबुधा बोधिनी तथा ॥८॥
कलिनी शोषणी चैव वारुण्याकर्षिणी तथा।
माया विश्वावती हेमा प्रभा सौरकला इमाः ॥९॥

हे परमेश्वरी ! कलस समूह के साथ कलश में सूर्य की पूजा 'अं द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः' से करके ॐ तपिन्यै नमः इत्यादि क्रम से तापिनी, विवुधा, बोधिनी, कलिनी, शोषणी, वारुणी, आकर्षिणी, माया, विश्वावती हेमा, प्रभा की पूजा करे। ये सूर्यकला हैं ॥८-९॥

कलशं तु समापूर्य जलेन कमलेक्षणे।
तत्रस्थममृतं साक्षाच्चन्द्ररूपं विचिन्तयेत् ॥१०॥
चन्द्रमण्डलमभ्यर्च्य कलाभिः सुरवन्दिते।
अमृता मानसी तुष्टिः पुष्टिः प्रीति रतिस्तथा ॥११॥
श्रीश्च ह्रींश्च स्वधा रात्रिर्ज्योत्स्ना हैमवती तथा।
छाया च पूर्णिमा नित्या अमावास्या च षोडशी ॥१२॥
एभिः समभ्यर्च्य मन्त्रैर्यजेदानन्दभैरवम्।
शिवचन्द्रौ मातृकान्तं कलाशक्राम्बुवह्नयः ॥१३॥
वायुश्च वामकर्णेन योजितो बिन्दुल्लाच्छितः।
बीजमेतत्समुच्चार्य तथा चाऽऽनन्दभैरवम् ॥१४॥
ङेन्तं शिखामन्त्रयुक्तं पुनर्बीजं तु संलिखेत्।
चन्द्रं हित्वाऽऽदिमं कुर्यात्कर्णे वामाक्षि योजयेत् ॥१५॥

हे पद्मनयने ! जल के द्वारा कलस भर कर इस कलस स्थित जल का चिन्तन साक्षात् चन्द्रस्वरूप करे।

हे देववन्दिते ! कलासमूह के साथ चन्द्रमण्डल की पूजा इस कलस स्थित जल में करना चाहिये। (ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः। अमृतायै नमः) इस प्रकार से अमृता, मानसी, तुष्टि, पुष्टि, प्रीति, रति, श्री, ह्री, स्वधा, रात्रि, ज्योत्स्ना, हैमवती, छाया, पूर्णिमा, नित्या, अमावस्या, ये चन्द्र की कलाये हैं। उपरोक्त मन्त्र में एक-एक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कला का नाम लगाकर क्रमशः पूजा करनी चाहिये। (अमृतायै के स्थान पर क्रमशः एक-एक कला का नाम उच्चारित करके पूजा करे)।

इनकी पूजा करके आनन्द भैरव की पूजा करनी होगी। शिव (ह), चन्द्र (स), मातृकान्त (क्ष), काल (म), शक्र (ल), अम्बु (व), वह्नि (र), वायु (य), वामकर्ण (उ) द्वारा युक्त, विन्दु (ँ) युक्त ये बीज। मन्त्रोद्धार है–'ह स क्ष म ल व र यूँ' इस बीज का उच्चारण करके चतुर्थ्यन्त आनन्द भैरव अर्थात् 'आनन्द भैरवाय' कहकर इसमें शिखामन्त्र युक्त 'वषट्' लगाये। अब पूर्णमन्त्र होगा 'ह स क्ष म ल व र यूँ आनन्द भैरवाय वषट्'। इससे आनन्द की पूजा की जाये। तत्पश्चात् आनन्द भैरवी की पूजा करे। पुनः बीज 'स ह क्ष व र यीं' लिखकर आदि में (अलग) 'स' लिखे अर्थात् 'स हक्षमलवरयीं'। यह बीज होगा। अब आनन्द भैरव के बीज में ऊकार के स्थान पर वामाक्षि (ई) को योजित करने से विद्या होगी–

'सहक्षमलवरयीं आनन्द भैरवाय वौषट्'। अथवा मन्त्र होगा 'सहक्षमलवरयीं सुधादेव्यै वौषट्'' ॥१०-१५॥

सुरादेव्यै ततो वौषडियमानन्दभैरवी।
अनेन चन्द्रं संपूज्य पूजार्हः कलशो भवेत्॥१६॥

तदनन्तर 'सुधादेव्यै वौषट्' कहे। यही हैं आनन्द भैरवी। इस प्रकार चन्द्र पूजन से कलस पूजायोग्य होता है॥१६॥

विधाय वामभागे तु चतुरस्त्रं तु मण्डलम्।
यन्त्रिकां तत्र संस्थाप्य शङ्खं तत्र विनिक्षिपेत्॥१७॥
शुद्धोदकेन संपूर्य पूजयेत्कारणान्वितम्।
षडङ्गं तत्र संपूज्य सामान्यार्घ्यमिदं प्रिये॥१८॥

पूजक के बायीं ओर चतुष्कोणमण्डल बनाकर उस मण्डल में श्रीयन्त्र स्थापित करके वहां जल हेतु शंख स्थापना की जाये। कारण युक्त (मद्ययुक्त) शंख को जल से पूर्ण करे। इस शंख से षडङ्ग पूजन किया जायेगा।

ह्रां हृदयायनमः, हृदयाङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं शिरसे स्वाहा, शिवोऽङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रूं शिखायै वषट्, शिखाङ्ग शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रैं कवचाय हुं, कवचाङ्गशक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, नेत्रत्रयाङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रः करतल पृष्ठाभ्याम् अस्त्रायफट्, अस्त्राङ्ग शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इन मन्त्रो द्वारा गन्धपुष्प अथवा पञ्चोपचार से पूजा करे। हे प्रिये ! यही है सामान्यार्घ्य ॥१७-१८॥

अथ वक्ष्ये महेशानि विशेषार्घ्यस्य लक्षणम्।
आत्मश्रीचक्रयोर्मध्ये चतुरस्त्रं तु मण्डलम्॥१९॥
सामान्यार्घ्यस्य तोयेन देशिको भूमिजानुकः।
वहत्करोर्ध्वपुटतो यन्त्रिकां तत्र योजयेत्॥२०॥
त्रिकोणवृत्तषट्कोणं चतुरस्त्रं तु मण्डलम्।
वह्निं तत्र विचिन्त्याथ पूजयेद्यन्त्रिकामयम्॥२१॥

हे महेशानी ! अब विशेषार्घ्य का लक्षण सुनों। अपने तथा श्रीचक्र के बीच चतुष्कोण का मण्डल बनाये गुरु मिट्टी पर अपने जानु रखकर सामान्यार्घ्य के जल से वहां दोनों हाथों से यन्त्र अंकित करे अथवा स्थापित करे।

वहां त्रिकोण, गोल, षट्कोण तथा चतुष्कोण मण्डल बनाये। वहां अग्नि का चिन्तन करके उस अग्नि में यन्त्रमय रूप की पूजा करे ॥१९-२१॥

पूर्ववत्परमेशानि त्रिकूटां मध्यगां यजेत्।
व्यस्तकूटैर्यजेत्तत्र त्रिकोण परमेश्वरि॥२२॥
द्विरावृत्त्या षडङ्गानि षट्कोणेषु प्रपूजयेत्।
सौवर्णं राजतं वाऽपि पात्रं संस्थापयेत्प्रिये॥२३॥

हे परमेशानी ! पूर्ववत् वहाँ पर त्रिकूट की अर्थात् वाग्भव, कामराज तथा शक्तिकूट की पूजा करनी चाहिये। हे परमेश्वरी ! त्रिकोण के एक-एक कोण में वाग्भवादि एक-एक कूट की पूजा वहाँ करे। षट्कोण में षड़ङ्ग पूजा दो बार आवृत्ति से करे। अर्थात् 'ऐं क्लीं सौः' के एक-एकवर्ण से एक-एक कोण में पूजा करके एक बार आवृत्ति करने से तथा पूजा करने से ६ कोणीय पूजा सम्पन्न होगी। जैसे–'ऐं हृदयाय नमः, हृदयाङ्ग शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। इस प्रकार से तदनन्तर वहां सुवर्ण किंवा रजतपात्र स्थापित करे ॥२२-२३॥

सूर्यरूपं प्रपूज्याथ यन्त्रं पूर्ववदालिखेत्।
समस्तव्यस्तकूटैस्तु पूजयेत्पूर्वत्क्रमात्॥२४॥

उस पात्र में सूर्य पूजा करके तदनन्तर पूर्व की तरह श्री विद्या लिखे। उस यन्त्र के त्रिकोण के एक-एक कोण में क्रमशः वाग्भव कूट, कामराजकूट तथा शक्तिकूट पूजा करके मध्य में समस्त त्रिकूट की पूजा करे ॥२४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विशेषेण पयापूर्य चन्द्रं द्रवमयं प्रिये।
पूर्ववद्यन्त्रमालिख्य त्रिकूटां यन्त्रमध्यगाम्॥२५॥

हे प्रिय! विशेषत: द्रव्यमय चन्द्र अर्थात् सुधाद्रव्य (सुरा) को कलस मे भर कर पूर्ववत् इस कलस पर बिल्वदण्ड से श्रीविद्या यन्त्र को अंकित करके उस यन्त्र में त्रिकूट विद्या (वाग्भव कामराज शक्ति कूट) को अंकित करे॥२५॥

त्रिकोणं चिन्तयेत्तत्तु त्रिकूटैः पूजितं प्रिये।
अकथादित्रिरेखाढ्यं हक्षाभ्यन्तरमुत्तमम्॥२६॥

इस कलस में त्रिकोण का चिन्तन करके उस त्रिकोण के तीन कोण में एक-एक कूट की पूजा करनी चाहिये। इस कलस में अधोमुख त्रिकोण के बायें अर्थात् पूजक के दक्षिण भाग की रेखा में 'अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः' इन १६ वर्ग्णों का चिन्तन करके लिखे। ऊपर की रेखा में कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं, इन १६ वर्ण को तथा दक्षिण अर्थात् पूजक के वाम भाग की रेखा में–थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं, ये १६ वर्ण लिखे। तदनन्तर त्रिकोण में 'हं क्षं' लिखे॥२६॥

द्विरावृत्त्या षडङ्गानि षट्कोणेषु प्रपूजयेत्।
आत्मानं हंसमनुना आनन्देन च पूजयेत्॥२७॥

षट्कोण के एक-एक कोण पर क्रमशः "ऐं हृदयानमः, हृदयाङ्ग शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा, शिरोङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। सौः शिखायै वषट्, शिखाङ्ग शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः। ऐं कवचाय हुँ, कवचाङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्, नेत्रत्रयाङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। सौः अस्त्राय फट् अस्त्राङ्ग शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। इसी प्रकार से 'ऐं क्लीं सौः' बीज की दो आवृत्ति करके पूजा करे। आत्मा की पूजा 'हंसः' से तथा आनन्दमन्त्र 'हंसः सोऽहं आनन्दोऽस्मि' से करना चाहिये॥२७॥

मूलविद्यां यजेत्तत्र षोडशार्णां जपेत्ततः।
धूपदीपौ निवेद्याथ नमस्कृत्यार्घ्यकं बुधः॥२८॥

तदनन्तर वहां कलस में त्रिपुराभैरवी मूलविद्या की पूजा करे। तदनन्तर षोडशी मन्त्र जपें। यथा–"श्रीं ह्रीं क्लीं सें सौः ह स क ल ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः" इत्यादि को जपे। बुद्धिमान व्यक्ति इसके अनन्तर धूप-दीप नैवेद्य अर्घ्य प्रदान करके नमस्कार करे॥२८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मुद्राः संदर्शयेत्तत्र साक्षाद्ब्रह्ममयं भवेत् ।
प्रोक्षयेत्तेन चाऽऽत्मानं पूजोपकरणानि च ।।२९।।

तदनन्तर वहां चतुरस्त्रिका, वृत्ता, सम्पुटा, सम्पुटाञ्जलि, तथा योनि मुद्रा का प्रदर्शन करे। समस्त उंगलियों के साथ मिट्टी पर दोनों हथेली रखकर कर 'ह्रां नमः' मन्त्र से प्रणाम करना ही **चतुरस्त्रिका** मुद्रा है। मिट्टी पर दोनों हाथ जोड़कर रखकर 'ह्रीं नमः' से प्रणाम करना **वृता मुद्रा** है। मिट्टी पर अंजलि बद्ध रूप करद्वय रखकर 'ह्रूं नमः' से प्रणाम करना **सम्पुटा मुद्रा** है। कनिष्ठद्वय के मूल में दोनो वृद्धागुलि न्यस्त करके अंजलिबद्ध हाथ से मिट्टीपर 'ब्लूं नमः' से प्रणाम करना सम्पुटाञ्जलि मुद्रा है। योनिमुद्रा बनाकर मिट्टी पर हाथ रखकर 'सः' नमः से प्रणाम करे। इन मुद्रा का प्रदर्शन करके साधक ब्रह्ममय हो जाता है। अब उस कलस स्थित (विशेषार्ध्य) जल से स्वयं का तथा पूजोपकरणों का प्रोक्षण करना चाहिये ॥२९॥

सर्वत्र प्रोक्षणं कुर्यात्सर्वं ब्रह्ममयं भवेत् ।
आत्मानं तु समभ्यर्च्य भूतान्संत्रासयेत्ततः ।।३०।।
मूलविद्यास्त्रमुच्चार्य दिग्बन्धं स्फोटनादिभिः ।
तन्मुखः संनतो देवि भूतशुद्धिं तु पूर्ववत् ।।३१।।

समस्त द्रव्य तथा सर्वत्र प्रोक्षण करके ब्रह्ममय हो जाये। आत्मा की अर्चना करके तदनन्तर भूतों का अपसारण करे। (अन्तरिक्षगत, पृथिवीगत सभी भूतों को हटाना अपसरण है)।

मूलविद्या-"ऐं क्लीं सौः फट्' का उच्चारण करके चुटकी देकर दिग्बन्धन करे। हे देवी ! रीढ़ की हड्डी सीधे करके देवी की ओर (कलस की ओर) मुख करे तथा पूर्ववत् भूतशुद्धि करे ॥३०-३१॥

ततो न्यासादिकं कुर्यात्संनाहं तु शरीरके ।
करशुद्धिकरीं विद्यां मध्यमादितलान्तकम् ।।३२।।
अङ्गुलीषु द्विरावृत्त्या करशुद्धिरियं प्रिये ।
अत आत्मासनं दद्यात्ततश्चक्रासन प्रिये ।।३३।।

तत्पश्चात् शरीर में सम्यक्तः सज्जित भाव से न्यास प्रभृति करे। करशुद्धिकरी विद्या अर्थात् मध्यमा करतल प्रभृति न्यास करे। मूलमन्त्र 'ऐं क्लीं सौः' मन्त्र से दो बार आवृत्ति करके कर शुद्धि करे। यथा-ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। सौः मध्यमाभ्यां बषट्। ऐं अनामिकाभ्यां हुं। क्लीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सौः कर तलकर पृष्ठाभ्यामस्त्राय फट्। हे प्रिये ! यही है कर शुद्धि। तदनन्तर आत्मासन अर्थात् स्वयं को देवी के आसन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रूप में प्रदान करके मन ही मन भावना द्वारा देवी को 'ऊ चक्रासनाय नमः' मन्त्र से चक्रासन प्रदान करे ॥३२-३३॥

सर्वमन्त्रासनं दद्यात्साध्यसिद्धासनं यजेत् ।
पादयोर्जङ्घयोर्जान्वोर्लिङ्गे न्यस्य चतुष्टयम् ।।३४।।
कुमार्यास्त्रिपुरेशान्याः षडङ्गानि च पूर्ववत् ।
अथ वक्ष्ये महेशानि श्रीविद्यान्यासमुत्तमम् ।।३५।।

त्रिपुराबाला देवी को सर्वमन्त्रासन देना होगा। मन्त्र है–ऐं क्लीं सौः सर्वमन्त्रासनाय नमः'। तदनन्तर उनके साध्यासन तथा सिद्धासन का पूजन करे। मन्त्र है–ऐं साध्यासनाय नमः, ऐं सिद्धासनाय नमः। तदनन्तर साधक पादद्वय में–पादासनाभ्यां नमः, जंघाद्वय में–जङ्घासनाभ्यां नमः, जानुद्वय में–जान्वासनाभ्यां नमः, लिङ्ग में–लिङ्गासनाय नमः इन मन्त्रों से चार न्यास करके पूर्ववत् त्रिपुराबाला का न्यास करे। यथा–ऐं सर्व ज्ञान शक्ति श्री महात्रिपुरसन्दरी हृदयाय नमः। क्लीं नित्यसुतृप्ति शक्ति–श्री महात्रिपुर सुन्दरी शिरसे स्वाहा। सौः अनादि बोधशक्ति–श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी शिखायै वषट्। ऐं स्वतन्त्र शक्ति श्री महात्रिपुरसुन्दरी कवचाय हुं। क्लीं अलुप्त शक्ति श्री महात्रिपुर सुन्दरी नेत्रत्रयाय वौषट्। सौः अनन्तशक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी अस्त्राय फट्। हे महेश्वरी ! अब उत्तम श्रीविद्यान्यास सुनो ॥३४-३५॥

सम्पूर्णां चिन्तयेद्विद्यां ब्रह्मरन्ध्रेऽरुणप्रभाम् ।
स्त्रवत्सुधां षोडशार्णां महासौभाग्यदां स्मरेत् ।।३६।।

ब्रह्मरन्ध्र में अरुण वर्णा, सम्पूर्णा अमृत क्षरणकारिणी, षोडशाक्षरी, महासौभाग्यप्र. विद्या का चिन्तन तथा स्मरण करे।

वामांसदेशे सौभाग्यदण्डिनीं भ्रामयेत्ततः ।
रिपुजिह्वाग्रहां मुद्रां पादमूले न्यसेत्प्रिये ।।३७।।

हे प्रिये ! तदनन्तर वामभाग में (कर्ण में) सौभाग्यदायिनी मुद्रा (बायें हाथ की मुट्ठ बांधकर तर्जनी को सीधी करके बाये कान पर घुमाना) करके पादमूल पर रिपु जिह्वाग्रह मुद्रा (बाये हाथ के अंगूठे को भीतर करके मुट्ठी बांधे, दाहिने हांथ की मुट्ठी बांधकर तर्जनं को बाहर सीधी करके इस तर्जनी को बायें हाथ की मुट्ठी में धारण करे) द्वारा न्यास करन होगा ॥३७॥

त्रैलोक्यस्य त्वहं कर्ता ध्यात्वैवं तिलके न्यसेत् ।
सम्पूर्णामेव वदने वेष्टनत्वेन विन्यसेत् ।।३८।।
पुनः सम्पूर्णया देहे गलोर्ध्वे विन्यसेत्ततः ।
पुनः सम्पूर्णया देहे व्यापकत्वेन विन्यसेत् ।।३९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्यापकान्ते योनिमुद्रां मुखे क्षिप्त्वाऽभिवन्द्य च ।
श्रीविद्यापूर्णरूपोऽयं न्यासः सौभाग्यवर्धनः ।।४०।।

'मैं त्रैलोक्य का कर्त्ता हूँ' यह ध्यान करके मस्तक का न्यास करना होगा । सम्पूर्ण मुखपर उंगली वेष्ठन पूर्वक न्यास करे । तदनन्तर इस सम्पूर्णामुद्रा (उगलियों को चतुर्दिक् घुमाना) देह में गले के उर्ध्व में विन्यास करे । इसी सम्पूर्णा मुद्रा से ही देह में व्यापक न्यास करना होगा । व्यापकन्यासोपरान्त मुख पर क्षेपण करके त्रिपुरा की वन्दना करे । यह है श्रीविद्यास्वरूप न्यास । यह सौभाग्य वर्द्धन करने वाला है ॥३८-४०॥

परिभ्राम्यानामिकां तु मूर्धानं परितः प्रिये ।
ब्रह्मरन्ध्रे क्षिपेद्देवि मणिबन्धे न्यसेत्ततः ।।४१।।
ललाटेऽनामिका कुर्यात्षोडशार्णा स्मरन्बुधः ।
संमोहनाख्यो देवेशि न्यासोऽयं क्षोभकारकः ।।४२।।

हे देवी ! हे प्रिये ! हे देवेशी ! मस्तक के चतुर्दिक अनामिका उंगली घुमाकर उसे ब्रह्मरंध्र पर स्थापित करे । तत्पश्चात् मणिबन्ध पर न्यास करना चाहिये । कपाल पर अनामिका स्थापित करे । इस स्थिति में बुद्धिमान व्यक्ति को षोडशाक्षरी श्रीविद्या का स्मरण करना होगा । यह है सम्मोहन नामक न्यास । यह क्षोभक है । अर्थात् मन्त्र के तामसभाव का विनाशक भी है ॥४१-४२॥

त्रैलोक्यमरुणं ध्यायेच्छ्रीविद्यां मनसि स्मरेत् ।
पादयोर्जङ्घयोर्जान्वोः कट्योरन्धुनि पृष्ठके ।।४३।।
नाभौ पार्श्वद्वये चैव स्तनयोरंसयोस्तथा ।
कर्णयोर्ब्रह्मरन्ध्रे च वदनेऽक्षिणि पार्वति ।।४४।।
ततः कण्ठप्रदेशे तु करवेष्टनयोः क्रमात् ।
संहारोऽयं महान्यासो बीजैः षोडशभिः क्रमात् ।।४५।।
श्रीविद्याया षोडशार्णैर्न्यासैर्विश्वेश्वरो भवेत् ।
सृष्ट्यन्तां विन्यसेद्देवि मातृकां पूर्ववत्प्रिये ।।४६।।
मातृकार्णस्वरूपां च वर्गाष्टकसमन्विताम् ।
वशिनीं मातृकां न्यस्येद् बीजाष्टकसमन्विताम् ।।४७।।

त्रैलोक्य का चिन्तन अरुण वर्ण रूप में करके मन ही मन श्रीविद्या का स्मरण करे । हे पार्वती ! पादद्वय, जंघाद्वय, जानुर्द्वय, कटिद्वय, पश्चात् भाग, पृष्ठ, नाभि, पार्श्वद्वय,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्तनद्वय, स्कन्धद्वय, कर्णद्वय, ब्रह्मरन्ध्र, मुख, चक्षु, कण्ठ, तथा हस्तद्वय वेष्ठन में (तलों में) क्रमशः श्रीविद्या के १६ बीजों से अर्थात् १६ अक्षरों से न्यास करे। यह संहार नामक महान्यास है। इससे साधक विश्वेश्वर के समान हो जाता है।

न्यास यह है। पादद्वये–श्रीं नमः। जंघाद्वये–ह्रीं नमः। जानुद्वये–क्लीं नमः। कटिद्वये–ऐं नमः। मूलाधारे–सौः नमः। पृष्ठे–हं नमः। नाभिद्वये–सं नमः। पार्श्वद्वये–कं नमः। स्तनद्वये–लं नमः। स्कन्धद्वये– हं नमः। कर्णद्वये-रीं नमः। ब्रह्मरन्ध्रे-श्रीं नमः। मुखे–ह्रीं नमः। चक्षुर्द्वये–क्लीं नमः। कण्ठदेशे-ऐं नमः। कब्जिद्वये–सौः नमः।

हे प्रिये ! पूर्व की तरह मातृका न्यास करना होगा (अं नमः, आं नमः इत्यादि। आठ वर्ग (अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, रवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग) युक्त मातृका वर्णरूप अष्टबीज समन्वित वशिनी मातृका न्यास करे। (आगे के श्लोकों में यह न्याय विवृत होगा) ॥४७॥

अवर्गान्ते लिखेद्बीजं वह्निफान्तं क्षमान्वितम्।
वामकर्णविशोभाढ्यं बिन्दुनादाङ्कितं प्रिये ॥४८॥
वशिनीं पूजयेद्वाचां देवतां देवि सुव्रते।
कवर्गान्ते महेशानि कामेशीबीजमुत्तमम् ॥४९॥
मेरूद्धतं समुच्चार्य वाग्देवीं पूजयेत्ततः।
च वर्गान्ते धान्तलान्तं क्षमातुर्यस्वरान्वितम् ॥५०॥
मोदिनीं पूजयेद्वाचां देवतां तदनन्तरम्।
टवर्गान्ते वायुतोयं मुखसंस्थं महेश्वरि ॥५१॥
वामकर्णेन्दुबिद्धाढ्यं विमलां वागधीश्वरीम्।
तवर्गान्ते जमक्ष्माद्यं वामनेत्रविभूषितम् ॥५२॥
बिन्दुनादाङ्कितं बीजं वाग्देवीमरुणां यजेत्।
पवर्गान्ते व्योमचन्द्रं क्षमातोयाग्निमुख्यकम् ॥५३॥
उकारस्वरसंयुक्तं बिन्दुनादकलाङ्कितम्।
जयिनीं पूजयेद्वाचां देवतां वीरवन्दिते ॥५४॥
यवर्गान्ते जान्तकालरेफवायुसमन्वितम्।
ऊमाढ्यं देवतां वाचां सर्वेशीं परिपूजयेत् ॥५५॥
क्षमोवह्निगतं तुर्यं बीजेन परिमण्डितम्।
बिन्दुनादकलाक्रान्तं कौलिनीं वाचमर्चयेत् ॥५६॥
शवर्गान्ते महेशानि न्यसेत् सर्वार्थसिद्धये।
शिरोललाटभ्रूमध्यकण्ठहृन्नाभिगोचरे ॥५७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आधारे व्यूहकं यावन्न्यसेद्देवीः क्रमात्प्रिये ।
षोढान्यासं ततः कुर्याद्येन ब्रह्माण्डरूपकः ।।५८।।
विराट्स्वरूपी वर्णात्मा शिवः साक्षान्न संशयः ।
गणेशः प्रथमो न्यासः सर्वविघ्नविनाशनः ।।५९।।

अवर्ग के अन्त में वह्नि (र) फान्त (ब), क्षमा (ल) वामकर्ण (उ) विशोभायुक्त विन्दु (.), नाद (˘) युक्त बीज लिखकर वाग्देवता की पूजा करनी चाहिये । यह शिर पर अर्थात् ब्रह्मरन्ध्र में (न्यास) होगा । अतः इसका रूप यह है–ब्रह्मरन्ध्रे–अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः र ब लूं वशिनी वाग्देवतायै नमः' इस मन्त्र से न्यास होगा।

हे प्रिये ! हे देवी ! हे सुव्रते ! हे महेशानी ! क वर्ग के अन्त में उत्तम कामेशी बीज (क ल) मेरु (ह्रीं), को युक्त करके उच्चारण करे तथा तब वाग्देवी की पूजा करे । यह ललाट में होगा अतः–ललाटे–"कं खं गं घं ङं कल ह्रीं कामेश्वरीवाग् देवतायै नमः ।" इस मन्त्र से न्यास होगा ।

हे महेश्वरी ! चवर्ग के अन्त में घान्त (न), लान्त (व), क्षमा (ल), तुर्यस्वर (ई), मोदिनी, तदनन्तर वागदेवता से पूजा करे । यह भ्रूमध्य में होगी । अतः भ्रूमध्ये "चं छं जं झं ञं नवलीं मोदिनी वाग् देवतायै नमः इस मन्त्र से न्यास होगा ।

हे देवी ! टवर्ग के अन्त में वायु (य) तोय (व) मुखस्थित (ल) वामकर्ण (उ) इन्दु (˘), बिन्दु (ँ) से विमला वागेश्वरी की पूजा कण्ठ में होगी । अतः कण्ठे–"टं ठं डं ढं णं य व लूं विमलावाग्देवतायै नमः" से न्यास होगा ।

तवर्ग के अन्त में ज म क्ष्म (ल) वामनेत्र (ई), विन्दु (ँ) नाद (˘) युक्त बीज से हृदय में अरुणावाग्देवी का पूजन करे । अतः हृदये "तं थं दं धं नं जमलीं अरूणावाग्-देवतायै नमः" से न्यास होगा ।

हे वीरवन्दिते ! ४ वर्ग के अन्त में व्योम (ह), चन्द्र (स) क्षमा (ल), तोय (व), अग्नि (र) मुख्यविन्दु (.), नाद (˘) कलायुक्त उकार संयुक्त बीज, इससे नाभि में जयिनी वाग्देवता की पूजा करे । नाभि–"पं फं बं भं मं ह स ल व रुं जयिनी वाग्देवतायै नमः ।" से न्यास होगा ।

यवर्ग के अन्त में जान्त (झ), काल (म), रेफ (र), वायु (य) तथा ॐ युक्त सर्वेशी वागदेवता का पूजन मूलाधार में होगा । मूलाधारे–"यं रं लं वं झ म र यूं सर्वेश्वरी वाग् देवतायै नमः" से न्यास करे ।

हे महेशानी ! श वर्ग के पश्चात् क्ष, म, वह्नि (र) तूर्य (ई) विन्दु (ँ) नादकला युक्त बीजमण्डित कौलिनीवाग्देवता की पूजा सर्वाङ्ग में होगी, यथा सर्वाङ्गे–शं षं सं हं लं क्षं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्षमरीं कौलिनी वाग्देवतायै नमः' मन्त्र से न्यास करे। यह न्यास सर्वकार्य सिद्धि के लिये मस्तक, ललाट, भ्रूमध्य, कण्ठ, हृदय, नाभि, आधार तथा सर्वाङ्ग में क्रम से करे॥

तदनन्तर षोढ़ान्यास करना होगा जिससे साधक ब्रह्माण्डरूप होगा।

विराट रूप वर्ण साक्षात् शिव है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। पहले सर्वविघ्ननाशक गणेश का न्यास करे ॥४८-५९॥

अरुणादित्यसंकाशान्गजवक्त्रांस्त्रिलोचनान् ।
पाशाङ्कुशवराभीतिकराञ्शक्तिसमन्वितान् ॥६०॥
ध्यात्वा प्रविन्यसेद्देवि मातृकान्यासवत्ततः ।
विघ्नेश्वरस्तथा श्रीश्च विघ्नराजस्तथा ह्रिया ॥६१॥

हे देवी ! अरुणसूर्य सदृश, गजमुख, त्रिलोचन, पाश-अंकुश,वर, तथा अभय, मुद्रा धारी, शक्ति समन्वित गणपति मूर्त्ति का ध्यान करके तब मातृका न्यासवत् ही न्यास करना होगा। क्रमशः विघ्नेश्वर तथा श्री का तथा ह्री के साथ विघ्नराज का न्यास होगा। यथा, मस्तके-'ऐं ह्रीं श्रीं अं विघ्नेश्वर श्रीभ्यां नमः'' । मुखवृत्ते-''ऐं ह्रीं श्रीं आं विघ्नराजह्रीभ्यां नमः। इस प्रकार बाकी न्यास करे ॥६०-६१॥

विनायकस्तथा तुष्टिः शान्तियुक्तः शिवोत्तमः ।
विघ्नकृत्पुष्टियुक्तस्तु विघ्नहृच्च सरस्वती ॥६२॥

विनायक युक्त तुष्टि, शान्ति युक्त शिवोत्तम, पुष्टियुक्त विघ्नकृत् तथा सरस्वति विघ्नहृत् का न्यास होगा। अर्थात् दक्षिण चक्षु-'ऐं ह्रीं श्रीं इं विनायक तुष्टिभ्यां नमः। वाम चक्षु 'ऐं ह्रीं श्रीं ईं शिवोत्तमशान्तिभ्यां नमः। दक्षिणकर्णे-ऐं ह्रीं श्रीं उं विघ्नकृत् पुष्टिभ्यां नमः। वामकर्णे-ऐं ह्रीं श्रीं ऊं विघ्नहृत् सरस्वतीभ्यां नमः।

इस प्रकार न्यास होगा ॥६२॥

विघ्नराड्रतियुक्तस्तु मेधावान् गणनायकः ।
एकदन्तश्च कान्तिश्च द्विदन्तः कामिनीयुतः ॥६३॥
गजवक्त्रो मोहिनी च निरञ्जनजटा ततः ।
कपर्दी तु तथा तीव्रा दीर्घवक्त्रस्ततः प्रिये ॥६४॥

इनका न्यास करे रति युक्त विघ्नराट् मेघा गणनायक, एकदन्त-कान्ति, कामिनी-द्विदन्त। अतः दक्षिण नासिका-ऐं ह्रीं श्रीं-विघ्नराड्रतिभ्यां नमः। वामनासिका-ऐं ह्रीं श्रीं ॠं गणनायक मेघाभ्यां नमः। दक्षिणगण्डे-ऐं ह्रीं श्रीं ऌं एकदन्त कान्तिभ्यां नमः। वामगण्डे-ऐं ह्रीं श्रीं ॡं द्विदन्त कामिनिभ्यां नमः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे प्रिये ! ओष्ठे–ऐं ह्रीं श्रीं एं गजवक्त्रमोहिनिभ्यां नमः । अधरे–ऐ ह्रीं श्रीं ऐं निरञ्जन जटाभ्यां नमः । उर्ध्वदन्त पंक्ति में–ऐं ह्रीं श्रीं ओं कपर्दितीव्राभ्यां नमः । अधोदन्त पंक्ति में–ऐं ह्रीं श्रीं औं दीर्घवक्त्रज्वालिनीभ्यां नमः, इस प्रकार न्यास होगा ॥६३-६४॥

ज्वालिनीसहितः पश्चान्नन्दासंकर्षणौ ततः ।
वृषध्वजश्च शुभगा गणनाथेन संयुता ।।६५।।
कामरूपिणिका पश्चाद्गजेन्द्रः शुभ्रया युतः ।
शूर्पकर्णस्तु जयिनी त्रिनेत्रः सत्ययाऽन्वितः ।।६६।।
लम्बोदरश्च विघ्नेशी महानादस्वरूपिणी ।
चतुर्मूर्त्तिः कामदा च सदाशिवयुता ततः ।।६७।।
मदविह्वलनाम्नी च आमादविकटे ततः ।
दुर्मुखश्च तथा घूर्णा सुमुखो भृन्मिांस्ततः ।।६८।।
प्रमोदश्च तथा भूमीरेकपादस्तथा सती ।
द्विजिह्वश्च रमायुक्तः शूरश्चैव तु मानुषी ।।६९।।
वीरेण सहिता पश्चाच्छैलजे मकरध्वजः ।
षण्मुखश्च विकर्णा च वरदो भृकुटी तथा ।।७०।।
वामदेवस्तथा लज्जा वक्रतुण्डस्तथा परम् ।
दीर्घघोणान्वितः पश्चाद्विरण्डकधनुर्धरा ।।७१।।
सेनानीर्यामिनीयुक्तो ग्रामणी रात्रिसंयुतः ।
मत्तश्च चण्डिकायुक्तो विमत्तश्च शशिप्रभा ।।७२।।

ब्रह्मरन्ध्र में–'ऐं ह्रीं श्रीं अं संकर्षणनन्दाभ्यां नमः' ।
मुख–'ऐं ह्रीं श्रीं अं वृषध्वज शुभगाभ्यां नमः' ।
दक्षिणस्कन्धे–'ऐं ह्रीं श्रीं कं गणनाथकामरूपिणीभ्यां नमः' ।
दक्षिण कूर्परि (कोहुनी)–'ऐं ह्रीं श्रीं खं गजेन्द्रशुण्डाभ्यां नमः' ।
दक्षिण मणिबन्ध–'ऐं ह्रीं श्रीं गं शूर्पकर्णजयिनिभ्यां नमः' ।
दक्षिण अंगुलिमूल–'ऐं ह्रीं श्रीं घं त्रिनेत्रसत्याभ्यां नमः' ।
दक्षिण अंगुल्याग्र–'ऐं ह्रीं श्रीं ङं लम्बोदर विघ्नेशीभ्यां नमः' ।
वामस्कन्धे–'ऐ ह्रीं श्रीं चं महानादस्कन्ध रूपिणीभ्यां नमः' ।
वामकूर्पर (केहुनी) 'ऐं ह्रीं श्रीं छं चतुर्मूर्त्तिकामदाभ्यां नमः' ।
वाममणिबन्धे–'ऐं ह्रीं श्रीं जं सदाशिवमदविह्वलाभ्यां नमः' ।
वामअङ्गुलिमूल–'ऐं ह्रीं श्रीं झं आमोद विकटाभ्यां नमः' ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वाम अंगुल्याग्र–'ऐं ह्रीं श्रीं ञं दुर्मुखधूर्णाभ्यां नमः'।
दक्षिण कटि के अधोभाग में–'ऐं ह्रीं श्रीं टं सुमुखभूतिनिभ्यां नमः'।
दक्षिणजानु–'ऐं ह्रीं श्रीं ठं प्रमोदभूमिभ्यां नमः'।
दक्षिणगुल्फ–'ऐं ह्रीं श्रीं डं एकपदसतीभ्यां नमः'।
दक्षिण पद की अंगुलिमूल–'ऐं ह्रीं श्रीं ढं द्विजिह्वरमाभ्यां नमः'।
दक्षिण पद का अङ्गुल्याग्र–'ऐं ह्रीं श्रीं णं शूरमानुषीभ्यां नमः'।
वामकटि का अधोभाग–'ऐं ह्रीं श्रीं तं वीरमकरध्वजाभ्यां नमः'।
वामजानु–'ऐं ह्रीं श्रीं थं षण्मुखविकर्णाभ्यां नमः'।
वामगुल्फे–'ऐं ह्रीं श्रीं दं वरदभृकुटीभ्यां नमः।
वामपद की अंगुलिमूल–'ऐं ह्रीं श्री धं वामदेव लज्जाभ्यां नमः'।
वामपद का अङ्गुल्याग्र–'ऐं ह्रीं श्रीं नं वक्रतुण्डदीर्घघोणाभ्यां नमः'।
दक्षिणपार्श्व–'ऐं ह्रीं श्रीं पं द्विरण्डक धनुर्धराभ्यां नमः'।
वामपार्श्व–'ऐं ह्रीं श्री फं सोनानीयामिनीभ्यां नमः'।
पृष्ठ–'ऐं ह्रीं श्रीं बं ग्रामणीरात्रीभ्यां नमः'।
नाभि–'ऐं ह्रीं श्रीं भं मत्त चण्डिकाभ्यां नमः'।
उदर–'ऐं ह्रीं श्रीं मं विमत्तशशिप्रभाभ्यां नमः'।
इस प्रकार न्यास करे ॥६५-७२॥

मत्तवाहनलोले च जटी च चपलेक्षणा।
शुण्डि ऋज्वीयुतः पश्चात्खड्गी दुर्भगयाऽन्वितः ॥७३॥
वरेण्यश्चैव सुभगा वृषकेतुस्तथा शिवा।
भक्ष्यप्रियश्च दुर्गा च मेघनादश्च कालिका ॥७४॥
गणेशः कालकुब्जा च गणपो विघ्नहारिणी।
मातृवर्णैर्न्यसेद्देवि ग्रहन्यासं ततो न्यसेत् ॥७५॥

हृदये–'ऐं ह्रीं श्रीं यं मत्तवाहनलोलाभ्यां नमः'।
दक्षिणस्कन्धे–'ऐं ह्रीं श्रीं रं जटि चपलेक्षणाभ्यां नमः'।
ककुदे–'ऐं ह्रीं श्रीं लं मुण्डिझज्वीभ्यां नमः'।
वामस्कन्धे–'ऐं ह्रीं श्रीं वं खड्गिदुर्भगाभ्यां नमः'।
हृदयादिदक्षिणहस्ते–'ऐं ह्रीं श्रीं शं वरेण्य सुभगाभ्यां नमः'।
हृदयादि वामहस्ते–'ऐं ह्रीं श्रीं षं वृषकेतुशिवाभ्यां नमः'।
हृदयाणि दक्षिणपादे–'ऐं ह्रीं श्रीं सं भक्ष्यप्रियदुर्गायां नमः'।
हृदयादि वामपादे–'ऐं ह्रीं श्रीं हं मेघनाद कालिकाभ्यां नमः'।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हृदयादि उदरे–'ऐं ह्रीं श्रीं लं गणेश कालकुब्जाभ्यां नमः'।

हृदयादि मुखे–'ऐं ह्रीं श्रीं क्षं गणपविघ्नहारिणीभ्यां नमः'।

इति षोढान्यास। इस प्रकार से मातृकावर्ण से न्यास होगा हे देवी ! तदनन्तर ग्रहन्यास करे ।।७३-७५।।

पद्मरागं सितं रक्तं श्यामं पीतं च पाण्डुरम् ।
धूम्रकृष्णं कृष्णधूम्रं धूम्रधूम्रं विचिन्तयेत् ।।७६।।
रविमुख्यान्कामरूपान्सर्वाभरणभूषितान् ।
वामोरुन्यस्तहस्तांश्च दक्षहस्ताभयप्रदान् ।।७७।।
स्वरैरर्कं हृदि न्यस्य यवर्गेण शशी ततः ।
भ्रूमध्येऽथ कवर्गेण भौमं नेत्रत्रये न्यसेत् ।।७८।।
चवर्गेण बुधो हृत्स्थष्टवर्गेण बृहस्पतिः ।
हृदयोपरि देवेशि तवर्गेण गले भृगुः ।।७९।।
पवर्गेण शनिर्नाभौ राहुर्वक्त्रे शवर्गतः ।
लक्षाभ्यां तु गुदे केतुर्न्यसेदेवं वरानने ।।८०।।

रविप्रधान, कामरूपी सर्वाभरणभूषित, ऊरु पर स्थापित वामहस्त, तथा दक्षिण हांथों से वरप्रद नवग्रह के वर्णों को क्रमशः कहते हैं। पद्मरागवर्ण (सूर्य), श्वेतवर्ण (चन्द्र), रक्तवर्ण (मंगल), बुध (श्याम वर्ण), बृहस्पति (पीत वर्ण) शुक्र (पाण्डुवर्ण), शनि (धूम्रवर्ण तथा कृष्ण), राहु (कृष्ण अथच धूम्र वर्ण), केतु (अतिशय धूम्रवर्ण) चिन्तन करे। तदनन्तर स्वरवर्ण द्वारा हृदय में सूर्य का न्यास होगा, यथा-हृदये-ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः आं आदित्य रुचिभ्यो नमः।

यवर्ग से चन्द्र का भ्रूमध्ये–ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं सों सोमरमाभ्यां नमः।

मंगल का कवर्ग से नेत्रत्रय में–ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं अं अङ्गारक रक्ताभ्यां नमः।

चवर्ग से बुध का हृदय में–ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं बुं बुध ज्ञानरूपाभ्यां नमः।

रवर्ग से वृहस्पति का हृदय से ऊपर कण्ठ में–ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं बृं बृहस्पतियशस्विनीभ्यां नमः।

तवर्ग से शुक्र का गले में–ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं शुं शुक्राह्लादिनिभ्यां नमः।

प वर्ग से शनि का नाभि में–ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं शं शनैश्चर शक्तिभ्यां नमः।

शवर्ग द्वारा राहुन्यास मुख मे–ऐं ह्रीं श्री श षं सं हं रां राहुकृष्णाभ्यां नमः।

ल-क्ष द्वारा केतुन्यास गुह्य में–ऐं ह्रीं श्रीं लं क्षं कें केतुवायवीभ्यां नमः ।।७६-८०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अथ नक्षत्रवृन्दस्य न्यासं कुर्यात्सुखप्रदम् ।
ज्वलत्कालाग्निसंकाशाः सर्वाभरणभूषिताः ।।८१।।
नतिपाण्योऽश्विनीमुख्या वरदाभयपाणयः ।
युग्मं युग्मं तथा युग्मं युग्मयुग्मेन रोहिणीम् ।।८२।।
एकमेकं तथा द्वन्द्वमेकं पुष्यान्तमुच्यते ।
ललाटे चक्षुषोः पश्चाद्वामदक्षिणकर्णयोः ।।८३।।
नासाद्वये च देवेशि तथा कण्ठे क्रमान्न्यसेत् ।
पुष्यान्तं च प्रविन्यस्य खगार्णाभ्यां तु सार्पकम् ।।८४।।
दक्षस्कन्धे घङाभ्यां तु मघां स्कन्धे द्वितीयके ।
चपूर्वाफाल्गुनीं दक्षे कूर्परे छजसंयुताम् ।।८५।।
उत्तरफाल्गुनीं वामे कूर्परे विन्यसेत्प्रिये ।
झञवर्णास्थितो हस्तो मणिबन्धेऽथ दक्षिणे ।।८६।।
चित्रां टठस्थां वामे च मणिबन्धे न्यसेत्प्रिये ।
डकारेण युतां स्वातीं दक्षहस्ते प्रविन्यसेत् ।।८७।।
ढणयुक्तां विशाखां तु वामहस्ते प्रविन्यसेत् ।
तथदस्थानुराधां तु नाभौ विन्यस्य पार्वति ।।८८।।

अब नक्षत्रों का सुखप्रद न्यास कहते हैं। पहले इनका ध्यान करे। ये प्रज्वलित कालाग्नि के समान, सर्वाभरण भूषित, नत हस्तवाले ये अश्विनी आदि नक्षत्र वरप्रदायक तथा अभय मुद्रा वाले हैं। पहले दो-दो वर्ण से तदनन्तर रोहिणी का चार वर्ण से न्यास होगा। तदनन्तर १, तदनन्तर १, तदनन्तर २, तदनन्तर एक वर्ण द्वारा पुष्य का न्यास करे।

हे कपाल, चक्षुर्द्वय, वाम तथा दक्षिण कर्ण में, नासिका द्वय में, कण्ठ में क्रम से न्यास करे। हे देवेशी ! अतः—

ललाट–ऐं ह्रीं श्रीं अं आं अश्विन्यै नमः।
दक्षिण चक्षु–ऐं ह्रीं श्रीं इं ईं भरण्यै नमः।
वाम चक्षु–ऐं ह्रीं श्रीं उं ऊं कृत्तिकायै नमः।
दक्षिणकर्णे–ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ॠं लृं ॡं रोहिण्यै नमः।
वामकर्णे–ऐं ह्रीं श्रीं एं मृगाशिरायै नमः।
दक्षिण नासिका–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं आर्द्रायै नमः।
वामनासिका–ऐं ह्रीं श्रीं ओ औं पुनर्वसवे नमः।
कण्ठे–ऐं ह्रीं श्रीं कं पुष्यायै नमः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुष्या पर्यन्त न्यास करके ख-ग वर्ण द्वारा आश्लेषा का न्यास दक्षिण कंन्धे में करे। तदनन्तर घ ङ वर्ण से वाम स्कन्ध मे मघा का न्यास करे। दक्षिण कूर्पर मे च वर्ण से पूर्व फाल्गुनी का, वामकूर्पर मे छ ज वर्ण से उत्तर फाल्गुनी का न्यास करे।

हे प्रिये! झ ञ वर्ण से दक्षिण मणिबन्ध में हस्तानक्षत्र का, ट ठ वर्ण से वाम मणिबन्ध में चित्रा का न्यास, डकार से दक्षिण हस्त में स्वाती का, ढ ण द्वारा वाम हस्त में विशाखा का, त थ द द्वारा नाभि मे अनुराधा का न्यास करे।

यथा दक्षिणस्कन्धे–ऐं ह्रीं श्रीं खं गं अश्लेषायै नमः।
वामस्कन्धे–ऐं ह्रीं श्रीं घं ङं मधायै नमः।
दक्षिण कूर्परे–ऐं ह्रीं श्रीं चं पूर्व फल्गुन्यै नमः।
वामकूर्पर में–ऐं ह्रीं श्री छं जं उत्तर फल्गुन्ये नमः।
दक्षिण मणिबन्ध–ऐं ह्रीं श्री झं ञं हस्तायै नमः।
बायें हाथ के मणिवन्ध में–ऐं ह्रीं श्री टं ठं चित्रायै नमः।
दक्षिण हस्ततल में–ऐं ह्रीं श्रीं डं स्वात्यै नमः।
वाम हस्ततल में–ऐं ह्रीं श्रीं ढं णं विशाखायै नमः।
नाभि मे–ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं अनुराधायै नमः।
इस प्रकार से न्यास करे ॥८१-८८॥

धकारेण युतां ज्येष्ठां न्यसेद्दक्षकटौ प्रिये।
नपफस्थं तथा मूलं न्यसेद् वामकटौ प्रिये।।८९।।
पूर्वाषाढां वकारेण दक्षोरौ विन्यसेत्प्रिये।
भकारेणोत्तराषाढां वामोरौ तदनन्तरम्।।९०।।

हे प्रिये! दक्षिण कटिदेश में धकार से युक्त ज्येष्ठानक्षत्र का न्यास करके वाम कटिदेश में न प फ वर्ण से मूला नक्षत्र का न्यास करना चाहिये। वकार द्वारा पूर्वाषाढ़ा का दक्षिण उरूमें, वाम उरूमें भकार द्वारा उत्तराषाढ़ा का न्यास करे ॥८९-९०॥

मकारयुक्तं श्रवणं दक्षजानुनि विन्यसेत्।
यरस्थितां धनिष्ठां तु वामजानुनि विन्यसेत्।।९१।।

दक्षिण जानु में मकार वर्ण से श्रवणा का न्यास, वाम जानु में 'य र' वर्ण से धनिष्ठा का न्यास होगा।९१॥

लकारेण ततो देवि शतभिषं न्यसेत्प्रिये।
दक्षजङ्घागतां पश्चात्पूर्वभाद्रपदां ततः।।९२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वशवर्णस्थितां न्यस्य वामजङ्घागतां क्रमात्।
षसहस्थोत्तराभाद्रपदां दक्षिणापादके ।।९३।।
क्षकारेण ततो बिन्दुविसर्गाभ्यां च रेवती।
वामपादे प्रविन्यस्य योगिनीन्यासमाचरेत् ।।९४।।

हे देवी ! हे प्रिये। तदनन्तर लकार के द्वारा शतभिषा का न्यास दक्षिप जंघा में करके, तदनन्तर 'व श' वर्ण के द्वारा वामजंघा में पूर्वभाद्रपद नक्षत्र का न्यास करे। तदनन्तर क्रमशः दक्षिणपाद में 'ष स ह' वर्ण द्वारा उत्तर भाद्रपद नक्षत्र का न्यास करे। तदनन्तर वामपाद में क्षकार एवं विन्दु विसर्ग द्वारा रेवती का न्यास करके योगिनी का न्यास करे ।।

न्यास निम्न प्रणाली से होगा–यथा दक्षिण कटि मे–ऐं ह्रीं श्रीं घं ज्येष्ठायै नमः। वामकटि में–ऐं ह्रीं श्री नं पं फं मूलायै नमः। दक्षिण उरू में–ऐं ह्रीं श्रीं वं पूर्वाषाढ़ायै नमः। वाम उरू में–ऐं ह्रीं श्रीं भं उत्तराषाढायै नमः। दक्षिण जानु में–ऐं ह्रीं श्रीं मं श्रवणायै नमः। वाम जानु में–ऐं ह्रीं श्रीं यं रं घनिष्ठायै नमः। दक्षिण जंघा में–ऐं ह्रीं श्रीं लं शतभिषायै नमः। वाम जंघा में–ऐं ह्रीं श्रीं वं शं पूर्व भाद्रपदायै नमः। दक्षिण पाद में–ऐं ह्रीं श्रीं षं सं हं उत्तर भाद्रपदायै नमः। वामपादे–ऐ ह्रीं श्रीं लं क्षं अं अः रेवत्यै नमः। इति नक्षत्रन्यास। तदनन्तर योगिनीन्यास आगे कहा जायेगा ।।९२-९४।।

सितासितारुणा ब्रभ्रूचित्रापीताश्च चिन्तयेत्।
चतुर्भुजाः समैर्वक्त्रैः सर्वाभरणभूषिताः ।।९५।।
डांडींबीजद्वयं चोक्त्वा डमला वरयाः प्रिये।
वामकर्णेन्दुनादाढ्यं डाकिन्यै नम इत्यपि ।।९६।।
स्वरान्ते तु प्रवक्तव्यं मान्ते रक्षपदद्वयम्।
त्वगात्मने कण्ठदेशे विशुद्धौ विन्यसेत्प्रिये ।।९७।।
कण्ठवर्णै राकिनीं तु रकाराद्यक्षरैः क्रमात्।
पूर्ववद्बीजसंयुक्तैरसृगात्माऽत्र संवदेत् ।।९८।।
अनाहते न्यसेत्यश्चाड्डाकारादिफकारकैः।
लाकिनी च तथा देवि मांसात्मा मणिपूरके ।।९९।।
बंलंवर्णैः काकिनीं तु स्वाधिष्ठाने तथाविधाम्।
भेदस्वरूपां विन्यस्य वसवर्णैस्तु साकिनीम् ।।१००।।
अस्थिरूपां च पूर्वोक्तबीजेनाऽऽधारके न्यसेत्।
हक्षवर्णास्थितां तद्वन्मज्जारूपिणिकां यजेत् ।।१०१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भुवोर्मध्ये महेशानि हाकिनीं द्विदले न्यसेत् ।
पूर्ववद्बीजसंयुक्तां तद्वच्छुक्रात्मिकां यजेत् ।।१०२।।
सर्वधातुगतां देवीं शुक्लवर्णां तु याकिनीम् ।
ब्रह्मरन्ध्रे महेशानि न्यासोऽयं योगिनीयुतः ।।१०३।।

हे प्रिये ! योगिनीगण का चिन्तन श्वेत, अरुण, पिङ्गल, चित्र तथा पीतवर्ण रूप में करे। सभी चतुर्भुज, समानमुख तथा समस्त आभरण युक्त हैं, यह चिन्तन करे। 'डां डीं' यह बीजद्वय कहकर डमलवरय एव य के अन्त में वामकर्ण (उ) तथा चन्द्र तथा नाद-युक्त डाकिन्यै नमः कहे। स्वर के अन्त में 'मां' कहकर 'रक्षरक्ष' कहकर 'त्वगात्मने' कहकर विशुद्ध चक्र (कण्ठ) में न्यास करे।

राकिनी का कण्ठवर्ण से रकार प्रभृति अक्षर से क्रमशः पूर्वोक्त बीज को संयुक्त करके 'असृगात्मने' कहकर अनाहतचक्र में न्यास करे। तत्पश्चात् डकारादि फकार पर्यन्त वर्ण के द्वारा पूर्ववत् मणिपूर चक्र में लाकिनी का मांसात्मारूप से न्यास करे। इस प्रकार स्वाधिष्ठान बं से लं तक के वर्ण द्वारा मदस्वरूपा काकिनी का न्यास होगा। तदनन्तर व से स पर्यन्त वर्ण द्वारा अग्निरूपा शाकिनी का पूर्वोक्त बीज से मूलाधार चक्र में न्यास करे। तदनंतर भ्रूमध्य में 'ह क्ष' वर्ण से मज्जारूपिणी हाकिनी को पूर्ववत् बीजयुक्त करके न्यास करे। तदनन्तर शुक्लवर्णा याकिनी की पूजा करे। यह विवरण आगे कहते हैं।

योगिनी न्यास इस प्रकार से होगा—

कण्ठदेश-विशुद्ध चक्र में–ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं डां डीं डमलवरयूँ रक्षरक्ष त्वगात्मने डाकिन्यै नमः।

हृदय–अनाहत चक्र में–ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं रां रीं रमल वरयूं मां रक्ष रक्ष असृगात्मने राकिन्यै नमः ।।

नाभि-मणिपूर चक्र में–ऐं ह्रीं श्रीं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं लां लीं लमलवरयूँ मा रक्ष रक्ष मांसात्मने लाकिन्यै नमः ।।

लिङ्गमूल स्वाधिष्ठान में–ऐं ह्रीं श्रीं वं भं मं यं रं लं कां कीं कमलवरयूँ मां रक्षरक्ष भेद आत्मने काकिन्यै नमः।

गुह्य के मूलाधार में–ऐं ह्रीं श्रीं वं शं षं सं सां सीं समलवरयूँ मां रक्ष रक्ष अस्थ्यात्मने साकिन्यै नमः। (मतान्तर से शाकिन्यै)

भ्रूमध्य-द्विदल में–ऐं ह्रीं हं लं क्षं हां हीं हमलवरयूं मां रक्षरक्ष मज्जात्मने हाकिन्यै नमः।

ब्रह्मरन्ध्र में सर्वधातुगत शुक्लवर्णा याकिनी का न्यास ब्रह्मरन्ध्र में करे। हे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महेशानी ! यह योगिनी युक्त न्यास है। अतः ब्रह्मरन्ध्र में ऐं ह्रीं श्रीं अः यां यीं यमलवरयूं मां रक्ष रक्ष सर्वधात्वात्मने याकिन्यै नमः। इस प्रकार न्यास करे। यही योगिंनी न्यास है। (तन्त्रसार प्रभृति में इस न्यास का उल्लेख नहीं है) ॥९५-१०३॥

राशिन्यासं ततः कुर्यात्सर्वरक्षाकरं सदा।
रक्तश्वेतहरिद्वर्णपाण्डुचित्राशितान्स्मरेत् ॥१०४॥
पिशङ्गपिङ्गलौ बभ्रुकर्बुरासितधूम्रकान्।
अकारादिचतुष्केण विन्यसेत्सुरवन्दिते ॥१०५॥
मेषं दक्षिणपद्गुल्फे ततो द्वन्द्वेन वै वृषम्।
न्यसेज्जानुनि वेदैस्तु मिथुनं वृषणे ततः ॥१०६॥
द्वाभ्यां कर्काटकं कुक्षौ द्वाभ्यां स्कन्धे च सिंहकम्।
अनुस्वारविसर्गाभ्यां शवर्गेण च कन्यकाम् ॥१०७॥
दक्षिणे तु शिरोभागे विन्यसेद्वीरवन्दिते।
तथा वामशिरोभागे कवर्गेण तुलाभृतम् ॥१०८॥
चवर्गेण तथा स्कन्धे वृश्चिकं विन्यसेत्प्रिये।
टवर्गेण तथा कुक्षौ धन्विनं विन्यसेत्प्रिये ॥१०९॥

अब सर्वरक्षाकारक राशिन्यास करना चाहिये। द्वादश राशि का यथाक्रमेण रक्त, श्वेत, हरित, पाण्डु, विचित्र, सित (अतिशय शुभ्र), नीलपीत मिश्रित (पिशद), पिंगल, वभ्रु (तनिक पिंगल), चित्र, कृष्ण, तथा धूम्रवर्ण से चिन्तन करे। हे देववन्दिते ! दक्षिण पाद के गुल्फ में अकारादि चारवर्ण से मेष का न्यास, दो वर्ण द्वारा दक्षिण जानु में वृष का, चार वर्ण से दक्षिण वृषण में (अण्डकोष) मिथुन का, दो वर्ण से दक्षिण उदर में कर्क का, दो वर्ण से दक्षिण कन्धे में सिंह का, अनुस्वार, विसर्ग तथा शवर्ण से दक्षिण मस्तक भाग में कन्याराशि का न्यास करे। हे वीरवन्दिते ! वाममस्तक भाग में क वर्ग से तुला का, वामस्कन्ध में चवर्ग से वृश्चिक का, वामकुक्षि में ट वर्ग से धनुराशि का न्यास करे। अतः मेष से धनुराशि तक के न्यास को कहते हैं। यथा–दक्षिण पैर की एड़ी में–ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं मेषराशये नमः। दक्षिण जानु–ऐं ह्रीं श्रीं उ ऊ वृष राशये नमः। दक्षिण अण्डकोष–ऐं ह्रीं श्रीं ऋ ॠ ऌ ॡ मिथुनराशये नमः। उदर के दक्षिण भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं एं ऐं कर्कट राशये नमः। दक्षिणस्कन्ध में–ऐं ह्रीं श्रीं ओं औं सिंह राशये नमः। मस्तक के दक्षिणभाग में-ऐं ह्रीं श्रीं अं अः शं ष सं हं ल क्षं कन्याराशये नमः।

मस्तक के वामभाग में–ऐ ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं तुलाराशये नमः।

वामस्कन्ध में–ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झ ञं वृश्चिकराशये नमः। उदर के वामभाग में–

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं धनुराशये नमः ॥१०४-१०९॥

मकरं तु तवर्गेण वृषणे विन्यसेत्क्रमात् ।
पवर्गेण तथा कुम्भं वामजानुनि विन्यसेत् ॥११०॥
यवर्गेणं क्षकारेण मीनं गुल्फेऽथ वामके ।
अथ पीठानि विन्यस्येत्सर्वतीर्थमयानि हि ॥१११॥

वाम अण्डकोष में तवर्ग द्वारा मकरराशि का, वामजानु में प वर्ग द्वारा कुंभराशि का, वामगुल्फ में य वर्ग से तथा क्षकार से मीनराशिन्यास करे ॥११०-१११॥

सितासितारुणाश्यामहारित्पीतान्यनुक्रमात् ।
पुनः पुनः क्रमाद्देवि पञ्चाशत्पीठसंचयः ॥११२॥

अतः मकर से मीनराशि पर्यन्त का न्यास कहते हैं। यथा–वामअण्डकोष में–ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं मकरराशये नमः। वामजानु में–ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं कुम्भराशये नमः। वामगुल्फ में–ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं क्षं मीनराशये नमः।

यही है राशि न्यास।

पीठ समूह को श्वेत, कृष्ण अरुण, श्याम, सब्ज वर्ण, पीतवर्ण रूप से क्रमशः स्मरण करना चाहिये। हे देवी ! पीठ समूह ५० हैं ॥११२॥

पीठानि संस्मरेद्विद्वान् सर्वमातृकया युतान् (?) ।
मातृकार्णैर्न्यसेद्विद्वान् सर्वकामार्थसिद्धये ॥११३॥

विद्वान व्यक्ति समस्त मातृका वर्ण द्वारा युक्त पीठों पर मातृका वर्ण द्वारा न्यास करके समस्त काम्य प्राप्त करते हैं ॥११३॥

कामरूपं महापीठं पीठं वाराणसीं ततः ।
नेपालं च तथा पीठं तथा वै पौण्ड्रवर्धनम् ॥११४॥
पुरस्थिरं तथा पीठं चन्द्रस्थिरमतः परम् ।
पूर्णशैलं महापीठमर्बुदं च ततः परम् ॥११५॥
आम्रातकेश्वरं पीठमेकाम्रं च ततः परम् ।
विस्त्रोतःपीठमनघं कामकोटं ततः परम् ॥११६॥
कैलासभृगुकेदारं पीठं चन्द्रपुरं ततः ।
श्रीपीठं च तथोंकारं जालन्धरमतः परम् ॥११७॥
मालवं च ततः पीठं कुलान्तं देवकोटकम् ।
गोकर्णं च महापीठं मारुतेश्वरमेव च ॥११८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अट्टहासं च विरजं राजगेहं महापथम् ।
पीठं कोल्लगिरिं प्रोक्तमेलापुरमतः परम् ।।११९।।
कामेश्वरं महापीठं महापीठं जयन्तिका ।
पीठमुज्जयनी चैव चरित्रं क्षीरकाभिधम् ।।१२०।।
हस्तिनापुरपीठं च उड्डीशं च प्रयागकम् ।
षष्ठीशं पीठश्रीशैलं मायापूरजलेश्वरम् ।।१२१।।
मलयं च महापीठं श्रीशैलं मेरुकं गिरिम् ।
महेन्द्रं वामनं चैव हिरण्यपुरमेव च ।।१२२।।
महालक्ष्मीमयं पीठमुड्डीयानमतः परम् ।
छायाच्छत्रपुरं पीठं तथैव परमेश्वरि ।।१२३।।
पञ्चाशत्पीठविन्यासं मातृकाविन्यसेत् सदा ।
षोढान्यासो महादेवि न्यस्त्वा साक्षात्स्वयं शिवः ।।१२४।।

पहले कामरूप तदनन्तर वाराणसी, नेपाल, पौण्डवर्द्धन, पुरस्थिर पीठ, चन्द्रस्थिर, पूर्णशैल महापीठ, अर्बुदपीठ, आम्रातकेश्वर पीठ, एकाम्र पीठ (पापशून्य), तिस्रोत: पीठ, कामकोट पीठ, कैलास, भृगु, केदार, चन्द्रपुर, श्रीपीठ, ओङ्कारपीठ, जालन्धरपीठ, माल-व, कुलान्त, देवकोटक, गोकर्ण, मारुतेश्वर, अट्टहास, विरज, राजगेह, महापथ, कोल्लगिरि, एलापूर, कामेश्वर, जयन्तिका, उज्जयिनी, चरित्र, क्षीरक, हस्तिनापुर पीठ, उड्डीश, प्रयाग, षष्टीश, मायापुर, जलेश्वर, मलयमहापीठ, श्रीशैल, मेरुक, महेन्द्र, वामन, हिरण्यपुर, महालक्ष्मीमय, उड्डीयान, छायाच्छत्रपुर, । हे परमेश्वरी ! मातृका वर्ण युक्त करके ५० पीठन्यास करे । हे महेशानी ! यह षोढ़ान्यास (षोढ़ान्यास, षोढ़ान्यास, ग्रहन्यास, नक्षत्रन्यास, योगिनी न्यास, राशिन्यास, पीठन्यास, सब मिलाकर यहां षोढ़ान्यास ही कहा जायेगा ।) करके साधक साक्षात् शिवरूप हो जाता है ॥११९-१२४॥

अथ कामान्यसेद्देवी दाडिमीकुसुमप्रभान् ।
वामाङ्कशक्तिसहितान्पुष्पबाणेक्षुकार्मुकान् ।।१२५।।

अब पीठन्यास कहते हैं ।

मस्तक–ऐं ह्रीं श्रीं अं कामरूप पीठाय नमः ।
मुखवृत्त–ऐं ह्रीं श्रीं आं वाराणसी पीठाय नमः ।
दक्षिण चक्षु में–ऐं ह्रीं श्रीं इं नेपाल पीठाय नमः ।
वामचक्षु में–ऐं ह्रीं श्रीं ईं पौण्ड्रवर्द्धन पीठाय नमः ।
दक्षिण कर्ण–ऐं ह्रीं श्रीं उं पुरस्थिर पीठाय नमः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वामकर्णे–ऐं ह्रीं श्रीं ऊं चन्द्रास्थिर पीठाय नमः।
दक्षिणनासा–ऐं ह्रीं श्री ॠं पूर्णशैल पीठाय नमः।
वामनासा–ऐं ह्रीं श्रीं ॠं अर्बुद पीठाय नमः।
दक्षिण गाले (कपोल) ऐं ह्रीं श्रीं ऌ आम्रातकेश्वर पीठाय नमः।
वामगाले–ऐं ह्रीं श्रीं ॡं एकाम्र पीठाय नमः।
ओष्ठ–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं त्रिस्रोतः पीठाय नमः।
अधर–ऐं ह्रीं श्रीं (ऐं) कामकोट पीठाय नमः।
उर्ध्वदन्तपंक्ति–ऐं ह्रीं श्रीं ओं कैलास पीठाय नमः।
अधः दन्त पंक्ति–ऐं ह्रीं श्रीं औं भृगुपीठाय नमः।
ब्रह्मरन्ध्रे–ऐं ह्रीं श्रीं अं केदार पीठाय नमः।
मुखे–ऐं ह्रीं श्रीं अः चन्द्रपुर पीठाय नमः।
दक्षिण स्कन्धे–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं कं श्रीं पीठाय नमः।
दक्षिण कूर्पर–ऐं ह्रीं श्रीं खं ओङ्कार पीठाय नमः।
दक्षिण मणिबन्ध में–ऐं ह्रीं श्रीं गं जालन्धर पीठाय नमः।

दक्षिण हाथ की उंगली में तथा–

दक्षिण मणिबन्ध में ऐं ह्रीं श्रीं घं मालव पीठाय नमः।

दक्षिण हांथ की उंगलियों के–

अग्रभाग में–ऐं ह्रीं श्रीं ङ कुलान्तपीठाय नमः।
वामस्कन्ध में–ऐं ह्रीं श्रीं चं देवकोटक पीठाय नमः।
वाम हाथ के कूर्पर में–ऐं ह्रीं श्रीं छं गोकर्ण पीठाय नमः।
वाये हाथ के मणिबन्ध में–ऐं ह्रीं श्रीं जं मारुतेश्वर पीठाय नमः।
वाम हाथ के अंगुलि मूल में–ऐं ह्रीं श्रीं ॠं झं अट्टहास पीठाय नमः।
बायें हाथ के अङ्गुल्याग्र में–ऐं ह्रीं श्रीं ञं विरजपीठाय नमः।
दक्षिणपाद के मूल में–ऐं ह्रीं श्रीं टं राजगेह पीठाय नमः।
दक्षिण पैर के जानु में–ऐं ह्रीं श्रीं ठं महापथ पीठाय नमः।
दक्षिण पाद के गुल्फ में–ऐं ह्रीं श्रीं डं कोल्लगिरि पीठाय नमः।
दणि पाद के अंगुलि मूल में–ऐं ह्रीं श्रीं ढं ऐलापुर पीठाय नमः।
दक्षिण पाद के अंगुल्याग्र में–ऐं ह्रीं श्रीं णं कामेश्वर पीठाय नमः।
वामपाद के मूल में–ऐं ह्रीं श्रीं तं जयन्ती पीठाय नमः।
वामपद के जसु में–ऐं ह्रीं श्रीं थं उज्जयिनी पीठाय नमः।
वामपाद के गुल्फ में–ऐं ह्रीं श्रीं दं चरित्र पीठाय नमः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वामपाद के अंगुलि मूल में–ऐं ह्रीं श्रीं धं क्षीरका पीठाय नमः ।
वामपाद के अंगुलि के अग्र में–ऐं ह्रीं श्रीं नं हस्तीनापुर पीठाय नमः ।
दक्षिण पार्श्वे–ऐं ह्रीं श्रीं पं उड्डीश पीठाय नमः ।
वामपार्श्वे–ऐं ह्रीं श्रीं फं प्रयाग पीठाय नमः ।
पृष्ठे–ऐं ह्रीं श्रीं बं षष्टीश पीठाय नमः ।
नाभि–ऐं ह्रीं श्रीं भं मायापुर पीठाय नमः ।
उदरे–ऐं ह्रीं श्रीं मं जलेश्वर पीठाय नमः ।
हृदये–ऐं ह्रीं श्रीं यं मलय पीठाय नमः ।
दक्षिणस्कन्धे–ऐं ह्रीं श्रीं रं श्रीशैल पीठाय नमः ।
ककुद में–ऐं ह्रीं श्रीं लं मेरु पीठाय नमः ।
वामस्कन्ध में–ऐं ह्रीं श्रीं वं वामनपीठाय नमः
हृदयादि दक्षिण हस्तमें–ऐं ह्रीं श्रीं शं वामन पीठाय नमः ।
हृदयादि वामहस्त में–ऐं ह्रीं श्रीं षं हिरण्यपुर पीठाय नमः ।
दृदयादि दक्षिणपाद में–ऐं ह्रीं श्रीं सं महा लक्ष्मीमय पीठाय नमः ।
हृदयादि वामपाद में–ऐं ह्रीं श्रीं हं उड्डीयान पीठाय नमः ।
हृदयादि उदर में–ऐं ह्रीं श्रीं लं छायाच्छत्रपुर पीठाय नमः ।
हृदयादि मुख में–ऐं ह्रीं श्रीं क्षं काश्मीर पीठाय नमः ।

हे देवी ! तदनन्तर वाम अंग में शक्तिगण के साथ पुष्पबाणधारी इक्षुधनु समन्वित दाड़िमपुष्पवत् प्रभायुक्त काम की सभी मूर्त्तियों का न्यास करे ॥१२५॥

शक्तयः कुङ्कुमनिभाः सर्वाभरणभूषिताः ।
नीलोत्पलकरा ध्येयास्त्रैलोक्याकर्षणक्षमाः ।।१२६।।

काम की शक्तियां कुंकुम वर्ण वाली, सर्वाभरणभूषिता, हाथ में नील कमल धारण करने वाली त्रिलोकी के आकर्षण में समर्थ हैं, ऐसा ध्यान करे ॥१२६॥

न्यसेत्कामरतिं पश्चात्कामप्रीतिं सुरेश्वरि ।
कान्तश्च कामिनीयुक्तो भ्रान्तो वै मोहिनीयुतः ।।१२७।।
कामाङ्ग कमले तद्वत्कामचारो विलासिनी ।
कर्णकल्पलते तद्वत्कोमलश्यामले तथा ।।१२८।।
कामवर्धनसंयुक्ता विज्ञेया तु शुचिस्मिता ।
कामश्च विस्मितायुक्तो विशालाक्षीयुतो रमः ।।१२९।।
रमणो लेलिहायुक्ता रतिनाथदिगम्बरे ।
रतिप्रियश्च वामा च रात्रिनाथश्च कुब्जिका ।।१३०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्मरेण च युता कान्ता रमणः सत्यया युतः ।
निशाचरश्च कल्याणी नन्दनो भोगिनी तथा ।।१३१।।
नन्दकः कामदायुक्तो मदनश्च सुलोचना ।
सुलावण्यायुतो देवि तथा नन्दसुताभिधः ।।१३२।।

हे सुरेश्वरी ! तदनन्तर कामरति का न्यास करके क्रमशः काम-प्रीति, कान्त-कामिनी, भ्रान्त–मोहिनी, कामाङ्ग-कमला, कामचार-विलासिनी, कर्ण-कल्पलता, कोमल–श्यामला, कामवर्द्धन–शुचिस्मिता, काम–विस्मिता रम-विशालाक्षी, रुमण–लेलिहा, रतिनाथ-दिगम्बरा, रतिप्रिय-वामा, रात्रिनाथ कुब्जिका, स्मर-कान्ता, रमण-सत्या, निशाचर-कल्याणी, नन्दन भोगिनी, नन्दन-कामदा, मदन-सुलोचना, नन्दसुत–सुलावण्या, इन युग्मों का न्यास करे ॥१२७-१३२॥

निशाचरश्च मर्दिन्या रतिर्हंसस्ततः परम् ।
कलहः प्रियया युक्तः पुष्पधन्वा च काङ्क्षिणी ।।१३३।।
महाधनुश्च सुमुखा ग्रामणीर्नलिनीयुतः ।
भीमश्च जटिनीयुक्तो भ्रामणः पालिनीयुतः ।।१३४।।
भ्रमणः शिखिनीयुक्तो शान्तमुग्धे ततः परम् ।
भ्रामणो रमया युक्तो भृगुर्भूमा ततः परम् ।।१३५।।
भ्रान्तश्चामरलोला च भ्रमावहसुचञ्चले ।
मोहनो दीर्घजिह्वा च मोचकश्च तथा सती ।।१३६।।
तथा मुग्धश्च लोलाक्षी मोहमर्दनभृङ्गिणी ।
मोहकश्च चपेटा च मन्मथो नाथया युतः ।।१३७।।
मातङ्गमालिनीयुग्मं भृङ्गा च कलहंसिनी ।
गायकेन समायुक्ता तथा वै विश्वतोमुखी ।।१३८।।
गजःनन्दिकया युक्तो गीतिश्च तदनन्तरम् ।
नर्तकः सह रञ्जिन्या खेलः कान्तिसमन्वितः ।।१३९।।
उन्मत्तः कलकण्ठे च मत्तकश्च वृकोदरी ।
मेघः श्यामान्वितो देवी विमलश्रीः क्रमात्प्रिये ।।१४०।।

तदनन्तर निशाचर–मर्दिनी, हंस-रति, कलह-प्रिया, पुष्पधन्वा–कांक्षिणी, महाधनु-सुमुखा, ग्रामणी-नलिनी, भीम-जटिनी, भ्रामण-पालिनी, भ्रमण-शिखिनी, शान्ति-मुग्धा, भ्रामण-रमा, भृगु-भूमा, भ्रान्त–अमरलोला, भ्रमावह–सुचञ्चला, मोहन–दीर्घजिह्वा, मोचक-सती, मुग्ध-लोलाक्षी, मोहमर्दन-भृङ्गिणी, मोहक-चपेटा, मन्माथ-नाथा, मातङ्ग-मालिनी,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भृङ्गी-कलहंसिनी, गायक-विश्वतोमुखी, गीति-गजनन्दिका, नर्त्तक-रञ्जिनी, खेल-कान्ति, उन्मत्त-कलकण्ठा, मत्तक-वृकोदरी, मेघश्याम-विमल श्री, इस प्रकार क्रम से युग्म-युग्म का न्यास करे। हे प्रिये! हे निष्पापे! हे देवी! मातृकावर्ण से मातृकान्यास करे। इससे त्रैलोक्य क्षुब्ध होता है ॥१३३-१४०॥

मातृकार्णैर्न्यसेद्देवि मातृकावत्सदाऽनघे।
अनेन न्यास योगेन त्रैलोक्यक्षोभको भवेत् ॥१४१॥

(श्लोक १२७ से १४० तक कामरति का न्यास कहा गया है। प्रयोगविधि यह है। ललाटे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं कामरतिभ्यां नमः। मुखवृत्ते–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं आं कामप्रीतिभ्यां नमः। दक्षिण चक्षु–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं हें कान्तकामिनीभ्यां नमः। वामकुक्षे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ईं भ्रान्तमोहिनिभ्यां नमः। दक्षिण कर्णे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लं उं कामाङ्कमलाभ्यां नमः। वामकर्णे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऊं कामचारविलासिनीभ्यां नमः। दक्षिण नासा–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऋं कर्णकल्पलताभ्यां नमः। वामनासा–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॠं कोमल श्यामलाभ्यां नमः। दक्षिणगण्डे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऌं कामवर्धनशुचिस्मिताभ्यां नमः। वामगण्डे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॡं कामविस्मिताभ्यां नमः। ओष्टे-ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं एं रम विशालाक्षीभ्यां नमः। अधरे-ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं रमणलेलिहाभ्यां नमः। उर्ध्वदन्तपङ्क्ति–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ओं रतिनाथ दिगम्बराभ्यां नमः। अघोदन्तपङ्क्ति–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं औं रतिप्रिय वामाभ्यां नमः।

ब्रह्मरन्ध्रे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं रतिनाथ कुब्जिकाभ्यां नमः। मुखे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अः स्वरकान्ताभ्यां नमः। दक्षिण बाहुमूल-ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं कं रमणसत्याभ्यां नमः। दक्षिण हाथ की केहुनी-ऐं ह्रीं श्री क्लीं खं नन्दनभोगिनीभ्यां नमः। दाहिने हाथ की ऊंगलीमूल-ऐं ह्रीं श्री क्लीं घं नन्दककामदाभ्यां नमः। दक्षिण हस्त की अंगुलि के आगे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ङ मदनसुलोचनाभ्यां नमः। वामबाहुमूल–ऐं ह्रीं श्री क्लीं चं नन्दसुतसुलावण्याभ्यां नमः। वाहहस्त कूर्पर (केहुनी)-ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं छं निशाचंरमर्दिनीभ्यां नमः। वामहस्त मणिबन्ध–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं जं हंसरतिभ्यां नमः। वामहस्त अंगुलिमूल–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं झं कलहप्रियाभ्यां नमः। वामहस्त का अंगुल्याग्र–ऐं ह्रीं भी क्लीं ञं पुष्पधन्वकाङ्क्षिणीभ्यां नमः। दक्षिण पादमूल-ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं रं महाधनुसुमुख्याभ्यां नमः। दक्षिण जानु–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ठं ग्रामणी नलिनीभ्यां नमः। दक्षिण पादका गुल्फ–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं डं भीमजटिनिभ्यां नमः। दक्षिण पाद का अंगुलिमूल–ऐं ह्रीं श्री क्लीं ढ़ं भ्रामणपालिनिभ्यां नमः। दक्षिण पाद का अंगुल्याग्र–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं णं भ्रमणशिखिनिभ्यां नमः। वामपाद मूल–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं तं शान्तमुग्धाभ्यां नमः। वामजानु–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं थं भ्रामणरमाभ्यां नमः। वामगुल्फ–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं दं भृगुभूमाभ्यां नमः। वामपाद का अंगुलिमूल–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं घं भ्रान्तामरलोलाभ्यां नमः। वामपाद का अंगुल्याग्र–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नं भ्रमावह सुचञ्चलाभ्यां नमः। दक्षिण पार्श्व–

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं पं मोहनदीर्घजिह्वाभ्यां नमः । वामपार्श्व–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं फं मोचकसतीभ्यां नमः । पृष्ठ–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं बं मुग्धलोलाक्षीभ्यां नमः । नाभि–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं मं मोहमर्दन भृङ्गिणीभ्यां नमः । उदर–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं मं मोहक चपेटाभ्यां नमः । हृदये–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं यं मन्मथनाथाभ्यां नमः । दक्षिणस्कन्ध–ऐ ह्रीं श्रीं क्लीं रं मातङ्गमालिनीभ्यां नमः । ककुद–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं त्वं भृङ्गिकलहंसिनिभ्यां नमः । वामस्कन्ध–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं वं गायकविश्वतोमुखिभ्यां नमः । हृदयादि दक्षिण हस्त-ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं शं गीतिगजनन्दिकाभ्यां नमः । हृदयादि वामहस्त–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं षं नर्त्तकरञ्जिनिभ्यां नमः । हृदयादि दक्षिणपादे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सं खेलकान्तिभ्यां नमः । हृदयादि वामपाद–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं उन्मत्तकलकण्ठाभ्यां नमः। हृदयादि उदर–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं लं मत्तकवृकोदरीभ्यां नमः । हृदयादि मुखे–ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं क्षं मेघश्यामविमल श्रीभ्यां नमः ॥१४१॥

बालायास्त्रिपुरेशान्या नवयोन्यङ्कितं न्यसेत् ।
श्रोत्रयोश्चुबुके चैव शङ्खास्येषु दृशोर्नसि ।।१४२।।
असंद्वये च हृदये न्यसेत्कूर्परकुक्षिषु ।
जान्वन्धुपादगुह्येषु पार्श्वहृत्सु स्तनद्वये ।।१४३।।
कण्ठे च नवयोन्याख्यं न्यसेद्बीजत्रयात्मकम् ।
पुनर्बालां समुच्चार्य षोडशार्णां प्रविन्यसेत् ।।१४४।।
पुनर्बालां समुच्चार्य चतुरस्त्रं च चिन्तयेत् ।
गोलकं न्यासयोगेन श्रीचक्रं परिचिन्तयेत् ।।१४५।।
षट्चक्रेषु ललाटे च सीमन्ते च शिरोबिले ।
नव स्थानानि संकल्प्य न्यसेद्देवि ततः परम् ।।१४६।।
श्रीविधां ब्रह्मरन्ध्रे च पृष्ठतो गुरवः क्रमात् ।
तिथिनित्यास्ततो देवि मातृकास्वरसंयुताः ।।१४७।।
मातृकावन्न्यसेद्वक्त्रे सर्वसौभाग्यदायकाः ।।१४८।।

अब त्रिपुरा बाला का नवयोनिविशिष्ट न्यास करना होगा । दोनों कान, अधरोष्ठ, पुनः दोनों कान, मुख, दोनों नेत्र, नासिका, स्कन्धद्वय, हृदय, केहुनी, उदर, जानु, जानु का पिछला भाग, पादद्वय, गुह्य, पार्श्वद्वय, हृदय, स्तनद्वय, तथा कण्ठ में न्यास करे। बीजत्रयरूप (ऐं क्लीं सौः) नवयोन्याख्य न्यास करे । (इस ग्रंथ मे पहले नवयोन्यङ्कितन्यास कहा जा चुका है)।

पुनः बाला अर्थात् 'ऐं क्लीं सौः' का उच्चारण करके षोडशाक्षर न्यास करना होगा। पुनः बाला का उच्चारण करके चतुष्कोण का चिन्तन करे । इस मन्त्र से चतुष्कोण, गोलक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

का चिन्तन करे–ऐं क्लीं सौः श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह सकल ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ऐं क्लीं सौः" ।

न्यासयोग अर्थात् शरीर मध्य षट्चक्र के छ स्थानों पर ललाट, सीमन्त तथा ब्रह्मरन्ध्र इन ९ स्थानों पर संकल्प पूर्वक न्यास करना होगा हे देवी ! तदनन्तर पृष्ठ, ब्रह्मरन्ध्र में मातृकास्वर युक्त करके गुरु के साथ तिथिनित्या का श्री विद्यान्यास मातृका न्यास की ही तरह मुख में करे । यह सर्व सौभाग्यप्रद है । यथा–ऐं ह्रीं श्रीं अं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह स क ल ह्रीं श्री ह्रीं क्लीं ऐं सौः नमः- इति ललाटे । इस प्रकार मुखवृत्त प्रभृति पर आं इं इत्यादि १६ स्वरयुक्त न्यास करना चाहिये । १५ तिथि तथा जया नामक नित्या तिथि का भी न्यास करना होगा । यथा—

ऐं ह्रीं श्रीं अं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह स क ल ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः प्रतिपत्तिथये नमः । इत्यादि रूप से प्रत्येक तिथि का तथा नित्या का न्यास करे ।

चतुर्दश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्चदशः पटलः

(श्रीविद्यान्यास विवरण, नित्यामन्त्र, त्वरितामन्त्र, कामेश्वरी नित्यकलादि न्यास, नवमुद्राविधि, अन्य मुद्राविधि)

ईश्वर उवाच–

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि नित्यामण्डलमुत्तमम् ।
कामेश्वरी महाविद्या सर्वलोकवशंकरी ।।१।।

हे देवी ! श्रेष्ठ नित्यामन्त्र कहा जाता है । (आनन्दाश्रम की प्रति मे 'नित्यामण्डलम' लिखा है । लेकिन तन्त्रसार में उद्घृत ज्ञानार्णव तन्त्र के श्लोक में 'नित्यमन्त्र मनुत्तमम्' है) हे देवी ! इसका श्रवण करो । कामेश्वरी महाविद्या सभी लोकों को वश में करने वाली है ।।१।।

बालां तारं च हृत्प्रान्ते कामेश्वरिपदं लिखेत् ।
इच्छाकामफलप्रान्ते प्रदेसर्वपदं लिखेत् ।।२।।
ततः सत्त्ववशं ब्रूयात्करिसर्वजगत्पदम् ।
क्षोभणान्ते करि ब्रूयाद्धुंकारत्रितयं लिखेत् ।।३।।
पञ्च बाणान्समालिख्य संहारेण कुमारिकाम् ।
एषा कामेश्वरी नित्या प्रसङ्गात्कथिताऽद्रिजे ।।४।।

बाला (ऐं क्लीं सौः), तदनन्तर तार (ऊ) लिखकर हृत् (नमः) लगाये तथा अन्त में 'कामेश्वरि' लिखे । तत्पश्चात् 'इच्छाकामफल' कहकर 'प्रदे सर्व' कहे । इसके पश्चात् 'सत्ववशं' के अनन्तर 'करि सर्वजगत्' लिखकर 'क्षोभण' पदान्त में 'करि' लिखे । तत्पश्चात् 'हुं हुं हुं' लिखकर पंचबाण 'द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः' लिखकर विपरीत क्रम में बालामन्त्र 'सौः क्लीं ऐं' लिखना होगा । हे पर्वतृकन्ये ! यह कामेश्वरी नित्यामन्त्र प्रसंगक्रमात् तुमसे कहा । मन्त्रोद्धार है–"ऐं क्लीं सौः ॐ नमः कामेश्वरि इच्छाकामफल प्रदे सर्व सत्ववशङ्करि सर्वजगत्क्षोभणकरि हुं हुं हु द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं" ।।२-४।।

वाग्भवं भगशब्दान्ते भुगे भगिनि चाऽऽलिखेत् ।
भगोदरीति वर्णान्ते च भगमाले भगावहे ।।५।।
भगगुह्ये भगप्रान्ते योनिप्रान्ते भगान्तिके ।
निपातिनि च सर्वान्ते ततो भगवशंकरि ।।६।।

अव **भगमालिनी मन्त्र** कहते हैं–वाग्भव (ऐं) कहकर 'भग' तथा 'भुगेभागिनि' कहकर 'भगाङ्गे भगमाले भगावहे, भगगुह्ये भग योनि' कहकर 'भगान्तिके निपातिनि' कहे । तदनन्तर अन्त में 'सर्व भगवशंकरि' कहना होगा ।।५-६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भगरूपे ततो लेख्यं नीरजायतलोचने।
नित्यक्लिन्ने भगप्रान्ते स्वरूपे सर्व चाऽऽलिखेत्।।७।।
भगानि मे ह्यानयेति वरदेति समालिखेत्।
रेत सुरेते भग च क्लिन्ने क्लिन्नद्रवे ततः।।८।।
क्लेदय द्रावयाथो च सर्वसत्त्वान्भगेश्वरि।
अमोघे भगविच्चे च क्षुभ क्षोभय सर्व च।।९।।
सत्त्वान्भगेश्वरि ब्रूयाद्वाग्भवं ब्लूंजमादिमम्।
भेब्लूं भोब्लूं च हें क्लिन्ने च ततः परम्।।१०।।
सर्वाणि च भगान्यन्ते मे वशं चाऽऽनयेति च।
स्त्रीबीजं च हर प्रान्ते बलेमात्मकमक्षरम्।।११।।
भुवनेशीं समालिख्य विद्येयं भगमालिनी।
प्रसङ्गात्कथिता पञ्चचत्वारिंशच्छताक्षरी।।१२।।

हे पद्मपत्रायतलोचने ! अब 'भंगरूपे' कहकर 'नित्यक्लिन्ने भग स्वरूपे सर्वं' कहने के अनन्तर 'भगानि मे ह्यानय वरदे' कहे। तत्पश्चात् 'रते सुरते भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे' कहकर 'क्लेदय द्रावय सर्वसत्वान् भगेश्वरि अमोघे भगविच्चे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्त्वान् भगेश्वरि कहे। अब ऐं ब्लूं जं भें ब्लूं भों ब्लूं हें ब्लूं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि' कहकर 'मे वशं च आनय' लिखे। तत्पश्चात् स्त्रीबीज (स्त्रीं) कहने के पश्चात् 'हर ब्लें ह्रीं' लिखे। यह है भगमालिनी विद्या। यह विद्या १४५ अक्षर की है। मन्त्रोद्धार यह है–

ऐं भगभुगे भगिनि भगोदरि भगाङ्गे भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशङ्करि भगरूपे नित्यक्लिन्ने भगस्वरूपे सर्वभगानि मे ह्यानय वरदे रते सुरेते भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय सर्वसत्वान भगेश्वरि अमोघे भगविच्चे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्वान् भगेश्वरी ऐं ब्लूं ज भें ब्लूं भों ब्लूं हें ब्लूं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि मे वशमानय स्त्रीं हर ब्लें ह्रीं ॥७-१२॥

पराबीजं समुच्चार्य नित्यक्लिन्ने मदद्रवे।
अग्निजायान्वितो मन्त्रो नित्यक्लिन्नेयमीरिता।।१३।।
सर्वसौभाग्यदात्री च सर्वैश्वर्यप्रदायिनी।
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य तथाऽङ्कुशयुगं लिखेत्।।१४।।
तन्मध्ये विलिखेद्देवि भरोमात्मकमक्षरम्।
चवर्गमन्त्यहीनं तु विलिखेद्वह्निसंस्थितम्।।१५।।
चतुर्दशस्वरोपेतं बिन्दुनादाङ्कितं पृथक्।
वह्निजायान्वितो मन्त्रो भेरुण्डायाः फलप्रदः।।१६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पराबीज (ह्रीं) का उच्चारण करके 'नित्यक्लिन्ने मदद्रवे' कहकर अग्नि जाया (स्वाहा) युक्त मन्त्र नित्यक्लिन्ना का है। यह सर्वसौभाग्यप्रद सर्वैश्वर्यदायक भी है। मन्त्रोद्धार है–'ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा'। अब भेरुण्डा नित्यामन्त्र कहते हैं–प्रथमतः प्रणव (ॐ) कहकर अंकुशयुगल (क्रों क्रों) कहे। हे देवी! उसके मध्य में भरोम (भ्रों) कहे। तदनन्तर वह्नि (र) से युक्त चवर्ग को ले (लेकिन अन्तिम 'ञ' को नहीं लेना है। इसमें चतुर्दश स्वर 'औ' लगाकर चवर्ग का विन्दुनाद युक्त करे। अन्त में वह्नि जाया (स्वाहा) लगाये। यह भेरुण्डा देवता का मन्त्र है, तथा फलप्रद है। मन्त्रोद्धार है ॐ क्रों क्रों भ्रों च्रों छ्रों ज्रों झ्रों स्वाहा ॥१३-१६॥

भुवनेशीं समुच्चार्य चतुर्थ्या वह्निवासिनीम्।
हृदन्तोऽयं मनुर्देवि नित्येयं वह्निवासिनी ॥१७॥
प्रणवं भुवनेशानि फरेमात्मकमक्षरम्।
सविसर्गः शशी पश्चान्नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ॥१८॥
वह्निजायान्विता विद्या सर्वैश्वर्यप्रदायिनी।
महाविद्येश्वरी नित्या प्रसङ्गेन मयेरिता ॥१९॥

अब वन्हिवासिनी मन्त्र कहते हैं–हे देवी! भुवनेशी (ह्रीं) कहकर 'वह्निवासिनी' को चतुर्थ्यन्त करे (वह्निवासिन्यै)। अब अन्त में हृत् (नमः) लगाये। यह वह्निवासिनी मन्त्र है। मन्त्रोद्धार–ह्रीं वह्निवासिन्यै नमः। ये नित्या देवी हैं अतः इनकी यह विद्या भी नित्या है।

महाविद्येश्वरी मन्त्र सुनो। प्रणव (ॐ) भुवनेशी (ह्रीं) फरेम् (फ्रें) तदनन्तर विसर्ग युक्त शशि (सः) कहकर 'नित्यक्लिन्ने मदद्रवे' कहने के पश्चात् वह्निजाया (स्वाहा) युक्त करे। यह विद्या ऐश्वर्य प्रदात्री है। यह भी नित्या विद्या है। मैने प्रसंगवशात् इसे कहा। मन्त्रोद्धार है–"ॐ ह्रीं फ्रें सः नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा" ॥१७-१९॥

पराबीजं समुच्चार्य शिवदूतीं च ङेयुताम्।
हृदन्तोऽयं मनुर्देवि दूतीयं सर्वकामदा ॥२०॥

अब शिवदूती मन्त्र कहते हैं। हे देवी! पराबीज (ह्रीं) कहकर चतुर्थ्यन्त शिवदूती कहे (शिवदूत्यै) तदनन्तर हृत् (नमः) कहे। यह मन्त्र सर्वकामप्रदाता है। मन्त्रोद्धार है "ह्रीं शिवदूत्यै नमः" ॥२०॥

ओंकारबीजमुच्चार्य परां कवचमालिखेत्।
खे च छे क्षः समालिख्य स्त्रीबीजं च समालिखेत् ॥२१॥
हूंकारं क्षे परा चास्त्रं विद्येयं द्वादशाक्षरी।
त्वरिता नाम नित्येयं त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ॥२२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्वसिंहासनमयी बालेव कुलसुन्दरी।
बालया पुटितां कुर्यात्तथा वै नित्यभैरवी।।२३।।
पञ्च बाणाश्च देवेशी नित्या शक्राक्षरी भवेत्।
त्रैलोक्यविमला विद्या नित्याख्या परमेश्वरी।।२४।।

त्वरिता मन्त्र सुनो। ॐ का उच्चारण करके परा (ह्रीं) कहे। तब कवच (हुं) कहकर 'खे च छे क्ष' कहकर स्त्री बीज (स्त्रीं) कहना होगा। तत्पश्चात् 'हुंक्षे' कहकर परा (ह्रीं) कहे। अन्त में फट् कहे। यह द्वादशाक्षरी विद्या है। यह नित्या त्वरिता विद्या त्रिलोक दुर्लभा है। मन्त्रोद्धार है–"ऊं ह्रीं हुं खे च छे क्ष स्त्रीं हुं क्षे ह्रीं फट्"।

सर्व सिंहासनमयी बाला ही कुल सुन्दरी हैं। कुल सुन्दरी मन्त्र ही बाला का मन्त्र है। यथा 'एं क्लीं सौं'। नित्याभैरवी मन्त्र है–ह् स् क् र् डैं ह् स् क् ल् र् डीं ह् स् क् ल् र् डौं। इसमें पंचबाण जोड़े। यथा द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः। इसे बाला (ऐं क्लीं सौंः) से पुटित करने से १४ अक्षरों वाली नित्याविमला का मन्त्रोद्धार होगा।

मन्त्रोद्धार है–ऐं क्लीं सौंः ह् स् क् ल् र् डैं ह् स् क् ल् र् डीं ह् स् क् ल् र् डौं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं॥२१-२४॥

पञ्चाक्षरी बाणबीजैर्नित्येयमपरा प्रिये।
प्रणवं भुवनेशानी फरेमात्मकमक्षरम्।।२५।।
स्त्रूमात्मकं द्वितीयं च भुवनेश्यङ्कुशं ततः।
नित्यशब्दं समुद्धृत्य संबुद्ध्या तु मदद्रवाम्।।२६।।
कवचं चाङ्कुशं पञ्चदशैर्नीलपताकिनी।
वान्तं कालसमायुक्तं वह्निवायुगतं ततः।।२७।।
पृथक्पञ्चसमायुक्तं ततः शक्रस्वरान्वितम्।
बिन्दुनादाङ्कितं बीजं नित्येयं विजया प्रिये।।२८।।

हे प्रिये! पांच अर्थ के बाण बीज से नित्याविमला का अन्य मन्त्रोद्धार होता है यथा द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः'। अब नीलपताकिनी का मन्त्र कहते हैं। यह १५ अक्षरों का मन्त्र इस प्रकार से है 'ॐ ह्रीं फ्रें ब्लूम् आं ह्रीं क्रों नित्येमदद्रवे हुं क्रों'। अन्य प्रकार से "ऊं ह्रीं फ्रें स्त्रूं स्त्रूं ह्रीं क्रों नित्यमदद्रवे हुं"।

अब नित्य विजया मन्त्र सुनो

बान्त (भ्) काल (म्) वह्नि (र्) वायु (य) गत् पृथक् पंञ्च अर्थात् ल् व् र् य् ह् (पृथिव्यादि पंचतत्व) युक्त शक्रस्वर (औ) बिन्दु (ँ) (नाद) (-) युक्त बीज नित्य विजया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

का मन्त्र है। अतः यह 'भ म् ग्रौं ल् व् र् य् हौं' होगा। पाठान्तर के अनुसार 'भ् म् रौं' ॥२५-२८॥ (मन्त्रमहोदधि के मत से हसख्फ्रें विजयायै नमः)

चन्द्रवारुणसंयुक्तं तारबीजं समालिखेत्।
चतुर्थ्या तु ततो देवि विलिखेत्सर्वमङ्गलाम्॥२९॥
हृदन्तोऽयं मनुर्देवि नित्येयं सर्वमङ्गला।
तारं हृद्भगवत्यन्ते ज्वालामालिनी देवि च॥३०॥
द्विरुच्चार्य च सर्वान्ते भूतसंहारकारिके।
जातवेदसि संलिख्य ज्वलन्तिपदयुग्मकम्॥३१॥
ज्वलेतिप्रज्वलद्वन्द्वं हुंकारद्वितयं लिखेत्।
वह्निबीजत्रयं हुं च अस्त्रस्वाहान्वितो मनुः॥३२॥
इयं नित्या महादेवि ज्वालामालिनिका परा।
कवर्गान्तं स्वरान्तं च शक्रस्वरविभूषितम्॥३३॥
बिन्दुनादकलाक्रान्तं विचित्रा परमेश्वरी।
अकारादिषु सर्वेषु स्वरेषु क्रमतो न्यसेत्॥३४॥
अःस्वरे परमेशानि श्रीविद्यां विश्वमातृकाम्।
स्वरवद्विन्यसेन्नित्या नीरजायतलोचने॥३५॥
प्रकटाद्या न्यसेत्पश्चादाधारादिषु मन्त्रवित्।
स्थितिन्यासं ततः कुर्याच्छ्रीविद्याषोडशाक्षरैः॥३६॥

हे देवी ! चन्द्र (स) वरुण (व्) संयुक्त तार (ॐ) लिखे। तदनन्तर चतुर्थी विभक्ति युक्त सर्वमङ्गला (सर्वमङ्गल्यायै) लिखकर हृत् (नमः) लिखे। यह सर्वमंङ्गला नित्या मन्त्र है। मन्त्रोद्धार है–स्वों सर्वमङ्गलायै नमः।

ज्वालामालिनी मन्त्र–पहले तार (ऊ) तदनन्तर हृत् (नमः) लिखकर 'भगवति' लिखकर दो बार ज्वालामालिनी देवि 'लिखे तदनन्तर सर्व भूतसंहारिके जातवेदसि' लिखकर 'ज्वलन्ति' को दो बार लिखकर 'ज्वल' लिखे तदननन्तर 'प्रज्वल' दो बार लिखने के पश्चात् 'हुं' को तीन बार, वह्नि बीज (रं) को तीन बार लिखकर 'हुं फट् स्वाहा' लिखे। हे महादेवी ! यह नित्यपरा ज्वालामालिनी मन्त्र है। अतः नित्या ज्वालामालिनी मन्त्रोद्धार है–ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि देवि सर्वभूतसंहारकारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वलन्ति ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुं हुं हुं रं रं रं हुं फट् स्वाहा''।

अब विचित्रा मन्त्र– क वर्गान्त (च) स्वरान्त (क) शक्रस्वरयुक्त (औ) बिन्दु (.) नाद युक्त मन्त्र इन विचित्रा देवी का है। मन्त्रोद्धार है 'चं कौं' अकारादि १५ स्वर से क्रमशः न्यास करे (अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ऐ ऐ ओ औ अं–इसमें अः नहीं रहेगा)। अब

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'अः' से श्रीविद्या का न्यास करे। तदनन्तर मन्त्रज्ञ व्यक्ति आधार प्रभृति में श्रीविद्या के षोडशाक्षर मन्त्र से स्थिति न्यास करे। आगे १६ नित्यकला न्यास लिखते हैं ॥२९-३६॥

पञ्चाङ्गुलीषु करयोर्ब्रह्मरन्ध्रे मुखे हृदि।
त्रयं विन्यस्य नाभ्यादिपादान्ते चैकमद्रिजे ॥३७॥
गलादिनाभिपर्यन्तमपरं हि ततः परम्।
ब्रह्मरन्ध्रादिकण्ठान्तमेकं विन्यस्य पादयोः ॥३८॥
अङ्गुलीषु च विन्यस्य न्यासोऽयं स्थितिकारकः।
सृष्टिन्यासं ततः कुर्यात्सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥३९॥

(१) ऐं ह्रीं श्रीं अं ऐं क्लीं सौः ऊं नमः कामेश्वरि इच्छाकामफलप्रदे–सर्वसत्ववशङ्करि सर्वजगत्क्षोभणकरि हुं हुं हुं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूंसः सौः क्लीं ऐं कामेश्वरीनित्यकलायै नमः।

(२) ऐं ह्रीं श्रीं आं ऐं भगभूगे भंगिनि भगोदरि भगाङ्गे भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशङ्करि भगरूपे नित्यक्लिन्ने भगस्वरूपे सर्वभगानि में ह्यानय वरदे रेते सुरेतो भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय सर्वसत्वान् भगेश्वरि अमोघे भगविच्चे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्वान् भगेश्वरी ऐं ब्लूं जं भें ब्लूं जं भों ब्लूं हें ब्लूं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि में वशमानय स्त्रीं हर ब्लें ह्रीं भगमालिनी नित्यकलायै नमः।

(३) ऐं ह्रीं श्रीं इं ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा नित्यक्लिन्ना नित्य कलायै नमः।

(४) ऐं ह्रीं श्रीं ईं ऊं क्रों क्रों भ्रों (मतान्तर से द्रौं) च्रौं छ्रौं ज्रौं भ्रौं स्वाहा भेरुण्डानित्य कलायै नमः।

(५) ऐं ह्रीं श्रीं उं ह्रीं वन्हिवासिन्यै नमः वह्निवासिनी नित्यकलायै नमः।

(६) ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ऊँ ह्रीं फ्रें सः नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा महाविद्येश्वरीनित्य कलायै नमः।

(७) ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ह्रीं शिवदूत्यै नमः शिवदूतीनित्यकलायै नमः।

(८) ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ऊँ ह्रीं हुं खे च छे क्ष स्त्रीं हुं क्षे ह्रीं फट् त्वरितानित्य कलायै नमः।

(९) ऐं ह्रीं श्रीं ऌं ऐं क्लीं सौः कुलसुन्दरी नित्यकलायै नमः।

(१०) ऐं ह्रीं श्रीं ॡं ह स क ल र डैं ह स क ल र डीं ह स क ल र डौं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं त्रैलोक्यविमलानित्य कलायै नमः।

(११) ऐं ह्रीं श्रीं एं ऊं ह्रीं फ्रें ब्लूम् आं ह्रीं क्रों नित्ये मदद्रवे हुं क्रों नीलपताकिनी नित्यकलायै नमः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(१२) ऐं ह्रीं श्रीं ऐं भ म ग्रौं (मतान्तर से रौं) ल व र हौं नित्यविजयानित्य कलायै नमः ।

(१३) ऐं ह्रीं श्रीं ओं स्वों सर्वमङ्गलायै नमः सर्वमङ्गलानित्यकलायै नमः' ।

(१४) ऐं ह्रीं श्रीं औं नमो भगवति ज्वालामालिनि देवि सर्वभूत संहारकारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वलन्ति ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुं हुं हुं रं रं रं हुंफट् स्वाहा ज्वालामालिनि नित्य कलायै नमः ।

(१५) ऐं ह्रीं श्रीं अं चं कौं विचित्रा नित्यकलायै नमः ।

(१६) ऐं ह्रीं श्रीं अः श्रीविद्या नित्यकलायै नमः ।

(३६वें श्लोक में प्रकटादि का न्यास कहा गया है, लेकिन इस ग्रन्थ में क्रम वर्णित नहीं है अतः तन्त्रसार से देखकर लिखा जा रहा है)

प्रकटयोगिनी न्यास–

मूलाधारे–ऐं ह्रीं श्रीं प्रकटयोगिनीभ्यो नमः ।
स्वाधिष्ठानचक्रे (लिङ्गे)–ऐं ह्रीं श्रीं गुप्तयोगिनिभ्यो नमः ।
मणिपुरचक्रे (नाभि)–ऐं ह्रीं श्रीं गुप्तयोगिनिभ्यो नमः ।
अनाहत चक्रे (हृदये–ऐं ह्रीं श्रीं सम्प्रदाययोगिनिभ्यो नमः ।
विशुद्ध चक्रे (कण्ठे)–ऐं ह्रीं श्रीं कुल कौलिनियोगिनिभ्यो नमः ।
आज्ञाचक्रे (भ्रूमध्ये)–ऐं ह्रीं श्रीं निखर्वयोगिनिभ्यो नमः ।
नादे (भ्रू के ऊपर)–ऐं ह्रीं श्रीं रहस्य योगिनिभ्यो नमः ।
ब्रह्मरन्ध्रे (भ्रू के ऊपर)–ऐं ह्रीं श्री परमार्तिरहस्ययोगिनिभ्यो नमः ।

(३६ वे श्लोक में कहा गया है कि श्री विद्या के १६ अक्षरों द्वारा स्थिति न्यास करे। यह कहां कैसे करना है। उसे कहते हैं।

हाथ की ५ उगलियों से ५ अक्षर का विन्यास होगा।

ब्रह्मरन्ध्र, मुख तथा हृदय पर ३ अक्षर का विन्यास करके नाभि से पादपर्यन्त अक्षर का न्यास करे। हे पर्वतकन्ये ! गले से नाभि पर्यन्त और एक अक्षर का न्यास किया जायेगा। तदनन्तर ब्रह्मरन्ध्र से कण्ठ पर्यन्त एक अक्षर का विन्यास करके पादद्वय की उंगलियों में ५ अक्षर का विन्यास होगा। यह स्थितिकारक न्यास करके सर्व सिद्धिप्रद सृष्टि न्यास करे।

स्थिति न्यास विधि–

श्री ह्रीं क्लीं ऐं सौः–अंगुष्ठाभ्यां नमः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्री ह्रीं क्लीं ऐं सौः–तर्जनीभ्यां स्वाहा ।
श्री ह्रीं क्लीं ऐं सौः–मध्यमाभ्यां वषट् ।
श्री ह्रीं क्लीं ऐं सौः–अनामिकाभ्यां हुं ।
श्री ह्रीं क्लीं ऐं सौः–कनिष्ठाभ्यां वौषट् ।
ब्रह्मरंन्ध्रे–हं सं कं नमः ।
मुखे–हं सं कं नमः ।
हृदये–हं सं कं नमः ।
नाभ्यादिपाद पर्यन्त–लं नमः ।
गलादिनाम पर्यन्त–ह्रीं नमः ।
ब्रह्मरन्ध्रादि कण्ठ पर्यन्त–श्रीं नमः ।
पादद्वय की उंगलियां–ह्रीं क्लीं ऐं सौः नमः ॥३७-३९॥

ब्रह्मरन्ध्रेऽलिके नेत्रश्रुतिघ्राणोष्ठकेषु च ।
दन्तान्तरोर्ध्वके देवि जिह्वायां गलकूपके ॥४०॥
पृष्ठे सर्वाङ्गहृदयस्तनकुक्षिषु लिङ्गके ।
श्रीविद्यार्णैर्न्यसेद्देवि मन्त्रं सर्वसमृद्धये ॥४१॥

सृष्टि न्यास को ब्रह्मरन्ध्र, मुखवृत्त, नेत्रद्वय, कर्णद्वय, नासिकापुटद्वय, ओष्ठद्वय, दन्तों के बाहर तथा भीतर, गलकूप, पृष्ठ, सर्वाङ्ग, हृदय, स्तनद्वय, उदर, लिंग पर श्रीविद्या के मन्त्राक्षरों से सर्वसमृद्धि हेतु न्यास करे ।

सृष्टि न्यास–

ऐं ह्रीं श्रीं अं श्रीं नमः–ब्रह्मरन्ध्र
ऐं ह्रीं श्रीं आं ह्रीं नमः–मुखवृत्त
ऐं ह्रीं श्रीं इं क्लीं नमः–दक्षिण चक्षु
ऐं ह्रीं श्रीं इं क्लीं नमः–वाम चक्षु
ऐं ह्रीं श्रीं ईं ऐं नमः–दक्षिण कर्ण
ऐं ह्रीं श्रीं ई ऐं नमः–वामकर्ण
ऐं ह्रीं श्रीं उं सौः नमः–नासिकापुटद्वय
ऐं ह्रीं श्रीं ऊं हं नमः–ओष्ठद्वय
ऐं ह्रीं श्रीं ऋं सं नमः–दान्त के भीतर
ऐं ह्रीं श्रीं ॠ कं नमः–दान्त के बाहर
ऐं ह्रीं श्रीं ऌ लं नमः–जिह्वा
ऐं ह्रीं श्रीं ॡ ह्रीं नमः–गलकूप

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐं ह्रीं श्रीं एं श्री नमः–पृष्ठ
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ह्रीं नमः–सर्वाङ्ग
ऐं ह्रीं श्रीं ओं क्लीं नमः–हृदये–
ऐं ह्रीं श्रीं औं ऐं नमः–स्तनद्वये
ऐं ह्रीं श्रीं अं सौः नमः–उदरे
ऐं ह्रीं श्रीं अः नमः–लिङ्गे ॥४०-४१॥

सर्वाङ्गे विन्यसेत्पश्चाद्व्यापकत्वेन सुन्दरि ।
प्राणानायम्य विधिवन्मुद्रासन्नद्धविग्रहः ॥४२॥

हे सुन्दरी ! तदनन्तर सर्वांग में व्यापक न्यास करके प्राणायाम के पश्चात् विधिवत् मुद्रा प्रदर्शन करना होगा ॥४२॥

संक्षोभद्रावणाकर्षवश्योन्मादमहाङ्कुशाः ।
खेचरी बीजरूपा च योनिमुद्रेत्यनुक्रमात् ॥४३॥

संक्षोभ-द्रावण-आकर्षण-वश्य-उन्माद-महाङ्कुश, खेचरी, बीज, योनि, क्रमशः ९ मुद्रा का प्रदर्शन करे ॥४३॥

बीजानि वक्ष्ये क्रमतो मुद्राणां परमेश्वरि ।
पञ्चबाणैः पञ्च मुद्राः क्रोमात्मकमक्षरम् ॥४४॥
आद्यं तु रुद्रभैरव्या बीजं सादाशिवं ततः ।
ततस्तु वाग्भवं देवि क्रमेण हि चतुष्टयम् ॥४५॥
चतुर्मुद्रासु बीजानि नवमुद्रास्वनुक्रमात् ।
अथ वक्ष्ये महेशत्नि मुद्राविवरणं क्रमात् ॥४६॥
वामहस्तेन मुष्टिं तु बद्ध्वा कर्णप्रदेशके ।
तर्जनीं सरलां कृत्वा भ्रामयेत्तन्त्रवित्तमः ॥४७॥
सौभाग्यदण्डिनी मुद्रा न्यासकाले तु सूचिता ।
अन्तरङ्गुष्ठमुष्ट्या तु निरुध्य जगतीमिमाम् ॥४८॥
रिपुजिह्वाग्रहा मुद्रा न्यासकाले तु सूचिता ।
पाणिद्वयं महेशानि परिवर्तनयोगतः ॥४९॥
योजयित्वा तर्जनीभ्यामनामे वारयेत्प्रिये ।
मध्यमे योजयेन्मध्ये कनिष्ठे तदधस्तथा ॥५०॥

हे परमेश्वरी ! मुद्राओं के बीजमन्त्र को क्रमशः कहता हूँ ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संक्षोभ मुद्रा का बीज द्रां। द्रावणमुद्रा बीज=द्रीं।

आकर्षण मुद्रा–क्लीं। वश्यमुद्रा–ब्लूं। उन्मादमुद्रा–सं:।

महाङ्कुश मुद्रा–क्रों। खेचरीमुद्रा–ह् स् र व् फ्रें ह् स् क् ल् रीं हसौः। बीज रूपामुद्रा बीज–हसौः। योनिमुद्रा बीज–ऐं। हे महेश्वरी! अब मुद्रा विवरण सुनो। बायें हाथ की मुट्ठी बन्द करके तर्जनी को सरलाकृति करके कान के पास भ्रामित करे–यह है सौभाग्य दण्डिनी मुद्रा। बायें हाथ की मुट्ठी में अंगूठा बन्दकर दाहिने हाथ की मुट्ठी बाधे लेकिन तर्जनी सरला (सीधी) रहे। अब बायीं मुट्ठी से इस तर्जनी को बाँधने से रिपुजिह्वाग्रहा मुद्रा होती है।

हे प्रिये! हे महेशानी! दोनो हस्त बदले अर्थात् दोनों को मिला कर तर्जनी द्वय से अनामा अंगुलिद्वय धारण करे। मध्यमाद्वय को आपस में मिलाये। उसके नीचे कनिष्ठा को धारण करे ॥४४-५०॥

अङ्गुष्ठावपि संयोज्य त्रिधा युग्मक्रमेण तु।
त्रिखण्डा नाम मुद्रेयं त्रिपुराह्वानकर्मणि ॥५१॥

अंगुष्ठ द्वय को संयुक्त करके दोनों हाथ की तर्जनी, मध्यमा तथा अनामिका को मध्य मे रखे। यह त्रिखण्डा मुद्रा देवी के आवाहनार्थ प्रयुक्त होती है ॥५१॥

विरलौ तु करौ कृत्वा मध्यमे मध्यमे कुरु।
अङ्गुष्ठाभ्यां कनिष्ठे च संपीड्य सरले ततः ॥५२॥
तर्जन्यौ दण्डवत्कुर्यान्मध्यमस्थ ह्यनामिके।
सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा त्रैलोक्यक्षोभकारिणी ॥५३॥

दोनो हाथों में कुछ फांक रखकर दोनों को आपस में सम्मुखीन करके मध्यमा अंगुलीद्वय को वक्र करे। दोनों हाथ के अंगूठे से दोनों हाथ की कनिष्ठा को दबाये अर्थात् संयुक्त करके तर्जनी द्वय को दण्ड के समान सीधी करे। अनामिका द्वय को मध्यमा अंगुली पर रखना होगा। यह सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा है। यह सर्वसंक्षोभिणी कही गयी है ॥५२-५३॥

मध्यमे तर्जनीयुक्ते सरले स्यात्तदा भवेत्।
सर्वविद्राविणी मुद्रामोहयेत्सचराचरम् ॥५४॥
मध्यमे तर्जनीयुग्मे वक्रे कुर्यात्सुलोचने।
एतस्या एव मुद्रायास्तदा कर्षणकारिणी ॥५५॥

पूर्वोक्त सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा बनाकर तर्जनीयुक्त मध्यमाद्वय को सरल करना सर्वविद्रावणी मुद्रा है। यह चराचर को द्रावित करती है।

हे सुलोचने! मध्यमा तथा तर्जनी को अंकुश जैसा वक्र करे। यह आकर्षणकारिणी मुद्रा है। ५४-५५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विपरीतौ तलौ कृत्वा चाङ्गुली ह्न्मुखा यजेत् ।
परिवर्तनमार्गेण क्रमेण निबिडास्ततः ।।५६।।
अङ्गुष्ठावग्रदेशे तु तर्जन्यावङ्कुशाकृती ।
सर्वा एकत्र संयोज्य सर्ववश्यकरी भवेत् ।।५७।।

करतल द्वय को विपरीत भाव से परस्परतः सम्मुखीन करके दोनों हाथों की उंगलियों को परस्पर संयुक्त करके परस्पर हस्त द्वय को विपरीत भाव से संयुक्त करे । तदनन्तर अंगुष्ठद्वय के अग्रभाग को धारण करके तर्जनीद्वय को अंकुशाकृति करे । समस्त उंगलियों को संयुक्त करके सर्ववश्यकरी मुद्रा होती है ।।५६-५७।।

पुटाञ्जलिकरौ कृत्वा मध्यमागर्भसंस्थिते ।
परस्परकनिष्ठे तु तर्जन्यग्रगते ततः ।।५८।।
अनामिके तु सरले मध्यमामुखदेशगौ ।
अङ्गुष्ठौ परमेशानि सर्वोन्मादनकारिणी ।।५९।।

हस्तद्वय को अंजलिबद्ध करके मध्यमाद्वय के बीज कनिष्ठाद्वय को दबा कर तर्जनीद्वय के अग्रभाग में अनामिका द्वय को सीधी रखे । मध्यमा द्वय के सिरे पर अंगूठों का सिर रखे । हे परमेशानी ! यह सर्वोन्मादिनी मुद्रा होती है ।।५८-५९।।

एतस्या एव मुद्राया अनामातर्जनीक्रमात् ।
अङ्कुशाकारूपा तु मुद्रेयं तु महाङ्कुशा ।।६०।।

सर्वोन्मादिनी मुद्रा में अनामिका तथा तर्जनी को क्रमशः अंकुशाकृति करे । यह महांकुशा मुद्रा है ।।६०।।

वामं भुजं दक्षभुजे दक्षिणं वामदेशतः ।
निवेश्य योजयेत्पश्चात्परिवर्त्य क्रमेण हि ।।६१।।
कनिष्ठानामिकायुग्मे तर्जनीभ्यां निरोधयेत् ।
मध्यमे सरले कृत्वा योनिवत्सरलौ ततः ।।६२।।
अङ्गुष्ठौ खेचरी मुद्रा पार्थिवस्थानयोजिनी ।
प्रियेयं सर्वदेवानां खेचरत्वप्रदायिनी ।।६३।।

बाया हाथ दाहिने पर तथा दाहिना बाये पर निविष्ट करके योजित करे । अब दोनों को विपरीत मुखीन करके कनिष्ठा तथा अनामिका को तर्जनीद्वय से निरुद्ध करना चाहिये । मध्यमा उंगलिद्वय को सीधी करके अंगूठों को योनि की तरह सीधा करने से खेचरी मुद्रा होती है जो मूलाधार योजिनी है । यह सर्वदेवप्रिय है । इससे आकाशगामित्व मिलता है ।।६१-६३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परिवर्त्याञ्जलिं कृत्वा कनिष्ठाग्रगते ततः ।
मध्यमे स्थापयेद्देवि कनिष्ठे धारयेत्ततः ।।६४।।
अनामिकाभ्यां सुदृढं तर्जनीमध्यमायुगम् ।
अङ्गुष्ठाभ्यां समायोज्यमर्धचन्द्राकृतिं प्रिये ।।६५।।
बीजमुद्रेयमाख्याता सर्वानन्दकरी प्रिये ।
परिवर्त्य करौ सम्यक्तर्जनीवामने समे ।।६६।।
मध्यमे कुरु तन्मध्ये योजयेत्तदनन्तरम् ।
अन्योन्यानामिके देवि कनिष्ठे तु यथास्थिते ।।६७।।
अङ्गुष्ठाभ्यां योजिताभ्यां योन्याकारं तु कारयेत् ।
योनिमुद्रेयमाख्याता परा त्रैलोक्यमातृका ।।६८।।

हे देवी ! हे प्रिये ! अंजलि परिवर्त्तित करे अर्थात् दोनों हाथों को परस्परतः विपरीत दिक् करके कनिष्ठाद्वय के आगे मध्यमाद्वय को स्थापित करके कनिष्ठाद्वय को अनामिकाद्वय से दृढ़ता से बद्ध करे। तदनन्तर अंगुष्ठद्वय, तर्जनी तथा मध्यमांगुलि को संयुक्त करके अर्द्धचन्द्राकार करे। यही बीजमुद्रा है। हे विप्र ! यह सबको आनंद देने वाली है ॥

हस्तद्वय परस्पर परिवर्त्तित करे अर्थात् अंगुलियाँ एक दूसरे में मिलाकर तर्जनीद्वय के मध्य में मध्याद्वय करके योजित करे। अनामिकाद्वय से तर्जनीद्वय को मिलाये। कनिष्ठाद्वय यथास्थित रखकर अंगुष्ठद्वय से कनिष्ठा द्वय को युक्त करके योनि के आकार का करे। यही योनिमुद्रा है। यह अति उत्तम तथा त्रैलोक्य मातृकारूप है ॥६६-६८॥

एवं विन्यस्तदेहः सन् मुद्रासन्नद्धविग्रहः ।
अन्तर्यागविधिं कुर्याद्येन साक्षात्स्वयं विभुः ।।६९।।

इस प्रकार शरीर को मुद्राबद्ध करके न्यासयुक्त होकर अन्तर्याग (मानस पूजा) करे। इससे साधक साक्षात् विष्णुरूप हो जाता है।

पञ्चदश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षोडशः पटलः

(श्रीविद्या यजनविधान, समाधिद्वय–श्री विद्याध्यान, आवाहन मुद्रादितिथि–नित्यगण पूजाविधि–गुरुपूजा, आम्नायदेवपूजा, नानाबीज, महाविद्या, साध्यादिविचार, अंगावरण पूजा, कलादेवपूजा, चतुर्दशास्थशक्तिपूजा, निगर्भयोगिनी पूजा, विद्यापूजा, आरात्रिक, नैवेद्य, बलि चक्र)

श्री देव्युवाच–

अन्तर्यागविधिं देव बहिर्यागविधिं तथा ।
सकलं कथयेशान यद्यहं तव वल्लभा ।।१।।

श्री देवी कहती हैं–हे देव ! ईशान ! यदि आपकी मैं प्रिया हूँ तब कृपापूर्वक अन्तर्याग तथा बहिर्याग कहियें ।।१।।

ईश्वर उवाच–

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यजनं चाऽऽन्तरं महत् ।
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं बिसतन्तुतनीयसीम् ।।२।।
उद्यत्सूर्यप्रभाजालविद्युत्कोटिप्रभामयी ।
चन्द्रकोटिप्रभाद्रावां त्रैलोक्यैकप्रभामयीम् ।।३।।
अशेषजगदुत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणीम् ।
ध्यायेन्मनो यथा देवीं निश्चलं जायते तथा ।।४।।

ईश्वर कहते हैं–मूल से (मूलाधार से) लेकर ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त उद्यत् सूर्य के प्रभाजाल (किरण) के समान, कोटिविद्युत प्रभामयी, कोटि चन्द्र वत् शीतल किरणों से युक्त, त्रैलोक्य को प्रभामय करने वाली जगत् की सृष्टि पालन तथा संहारकारिणी भगवती का ध्यान करे। यह मन स्थिर करने का उत्तम विधान है।

विवृति–यह कुण्डलिनी रूपी चेतना संवित् शक्ति का विवरण है। यही विश्वकुण्डलिनी तथा देह कुण्डलिनी रूप से द्विविध है। अन्तर्याग में देह कुण्डलिनी का तथा बहिर्याग में विश्वकुण्डलिनी का ध्यान गुरुगण कहते हैं। यह रहस्य गुरुगम्य है, अत: इसके सम्बन्ध में संकेत मात्र दिया जा सकता है। यथार्थ देह कुण्डलिनी में प्रवेश होता है नासिका द्वादशान्त से। यही से सुषुम्ना का संन्धान मिलता है। सुषुम्ना से ही मूलाधार का सन्धान प्राप्त होगा। इसका छोर पकड़ना होगा। यह छोर नासिका द्वादशान्त पर प्राप्त होता है। यह प्रात:स्मरणीय पं गोपीनाथ कविराज के श्रीमुख से सुना। आलोचित श्लोक में भगवती को उत्पत्ति स्थिति संहार कारिणी कहा गया है। यही श्री चक्र का सृष्टि क्रम तथा संहार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्रम है। विश्वकुण्डलिनी से स्वसंवित को देह कुण्डलिनी में लाना सृष्टि क्रम है। देह कुण्डलिनी से विश्व कुण्डलिनी में संवित् का संक्रमण यह संहार क्रम है। इन दोनों का अनुभव कर्त्ता साधक ही स्थिति क्रम है।

यही सृष्टि स्थिति संहार रूप भगवती की लीला है। यह साधन दृष्टि से कहा गया। भौतिक दृष्टि से जगत् की सृष्टि स्थिति तथा संहारकारिणी भगवती चिद्रूपा कुण्डलिनी ही हैं। साधन दृष्टि से साधक का बोध ही स्थिति है। बोध में स्थित होना ही यथार्थ मन:स्थिति है। वहीं मन बिना प्रयास स्थिर हो जाता है। बोधोदय अहर्निश द्वादशान्त से हो रहा है। वही यथार्थ ध्यान भूमि है ॥२-४॥

सहजानन्दसंदोहमन्दिरं भवति क्षणात्।
मनो निश्चलतां प्राप्त शिवशक्तिप्रभावतः ।।५।।

जब इस द्वादशान्त में श्वास-निःश्वास के आवागमन पर संकेन्द्रित साधक तल्लीन हो जाता है तथा भगवती की इस उन्मेष-निमेष मयी स्थिति की (श्वास-निश्वास) उत्सभूमि द्वादशान्त में स्थित हो जाता है तब वह श्वास-निश्वास रूप शिव शक्ति के सामरस्यवशात् आनन्द सुधा से परिप्लावित हो जाता है।

समाधिर्जायते तत्र संज्ञाद्वयविजृम्भितः।
स्वयंप्रज्ञातनामैको ह्यसंप्रज्ञातनामधृत् ।।६।।
स्वयंप्रज्ञातसंज्ञस्तु शक्त्याधिक्येन जायते।
असंप्रज्ञातनामैको शिवाधिक्येन वै भवेत् ।।७।।

यह आनन्द संभोग ही समाधि है। इसके भी दो भेद हैं स्वयंप्रज्ञात तथा असंप्रज्ञात। शक्ति अर्थात् आनन्दास्वादन की अधिकता ही स्वयं प्रज्ञात समाधि है। क्योंकि शक्ति का स्वभाव है उच्छलन। इसे योगाचार्यगण सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। लेकिन जब यह आस्वादन नहीं रहता, जो अद्वय भूमि में विलीन हो जाता है, जहां आस्वादन करने वाला एकीभूत हो जाता है आस्वाद्य तथा आस्वादन जैसा द्वन्द्व जब विद्यमान नहीं रह जाता, तब असम्प्रज्ञात समाधि होती है। यही शिव प्राधान्य है ॥६-७॥

स्वयंप्रज्ञातभेदस्तु तीव्रस्तीव्रतरो भवेत्।
असंप्रज्ञातभेदस्तु मन्दो मन्दतरस्तथा ।।८।।

अधिकारी भेद से स्वयं प्रज्ञात समाधि के तीव्र तथा तीव्रतर दो भेद हैं जबकि असंप्रज्ञात के दो भेद हैं मन्द-मन्दता।

विवृत्ति–स्वयं प्रज्ञात समाधि शक्ति प्रधान है। अतः उसमें शक्तिगुण सृष्टि तथा विकास का समावेश रहता है। वह तीव्र से तीव्रतर होती जाती है। लेकिन असम्प्रज्ञात

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

समाधि में संहार क्रम कार्यरत रहता है। जो मन्द से मन्दतर अर्थात् उन्मनी स्थिति की ओर ले जाती है जहां मात्रा है ही नहीं। यही यथार्थ अन्तर्लीनता है।

(संज्ञा प्रज्ञा न यत्रैवं स्वयंप्रज्ञोऽभिधीयते।
असंप्रज्ञो हि भूयस्तु स्थितप्रज्ञः प्रतिष्ठितः ।।९।।
प्रज्ञाप्रज्ञानमेवेदमसंस्मयमिति द्वयम्।
संज्ञाद्वयमिदं देवि शिवतत्त्वेन वै भवेत् ।।१०।।)

(यह श्लोक ९ तथा १० आनन्दाश्रम की प्रति में ब्रैकेट में छापे गये हैं 'संज्ञा प्रज्ञा न' पाठ का अर्थ है कि जहां नाम तथा प्रज्ञा नहीं है वह स्वयं प्रज्ञा समाधि है। जो उचित प्रतीत नहीं होता। क्योंकि पातंजल के अनुसार सम्प्रज्ञात समाधि में ध्येय तथा ध्यान का भान होता है लेकिन यहां श्लोक में विपरीत भाव है।)

जिस समाधि में प्रज्ञा अधिकरूप से प्रतिष्ठित है तथा स्थिर है उसे असंप्रज्ञात समाधि कहते हैं।

हे देवी! प्रज्ञा (ज्ञान) प्रज्ञान (बुद्धि) को असंस्मय कहते हैं। ये दोनों शिवतत्व रूप होते हैं (इन दोनों श्लोकों का अर्थ वर्त्तमान विषयवस्तु से असंम्बद्ध प्रतीत हो रहा है। तभी आनन्दाश्रम की प्रति में इसे कोष्ठगत छापा गया है) ।।९-१०।।

हास्यरोदनरोमाञ्चकम्पस्वेदादिलक्षणः।
तीव्रस्तीव्रतरो देवि समाधिरुपलक्षितः ।।११।।

हे देवी! हास्य, रोदन, रोमाञ्च, कम्प, स्वेद प्रभृति जिस समाधि में होते हैं, वह विलक्षण होने से तीव्र-तीव्रतर (स्वयं प्रज्ञात) लक्षित होती है ।।११।।

निमेषवर्जिते नेत्रे वपुस्तल्लक्षणं स्थिरम्।
मन्दो मन्दतरो देवि समाधिः परिकीर्तितः ।।१२।।

हे देवी! जिस समाधि में नेत्रद्वय निमेषशून्य हो जाते हैं, शरीर निश्चल स्पन्दनशून्य हो जाता है, वही है मन्द-मन्दतर समाधि।

शाम्भवेन च वेद्येन सुखी भूयान्निरन्तरम्।
अन्तर्यागविधिं कृत्वा बहिर्यजनमाचरेत् ।।१३।।

तन्त्र में अत्यन्त गूढ़ रहस्य है शिव-शक्ति। यही परम रहस्य है। इसे ही ज्ञेय कहते हैं (शांभव भी कहते हैं)। महादेव यहां यह उपदेश प्रदान कर रहे हैं कि शिवशक्ति ध्यान में निरन्तर सुधी हो जायें। यह शिवशक्ति का अनन्य चिन्तन ही है अन्तर्याग। अब बहिः पूजा कहेगें ।।१३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एवं विन्यस्तदेहः सन्सर्वात्मा साधकोत्तमः ।
ध्यायेन्निरामयं वस्तु जगत्त्रयविमोहिनीम् ।।१४।।

पूर्वोक्त प्रकार से मुद्रादि सम्पन्न करके देह विन्यास से सर्वात्मा होकर त्रिजगत् मोहनकारिणी श्रीविद्या शक्ति रूप दोषशून्य वस्तु का ध्यान करे ।।१४।।

अशेषव्यवहाराणां स्वामिनीं संविदं पराम् ।
उद्यत्सूर्यसहस्राभां दाडिमीकुसुमप्रभाम् ।।१५।।
जपाकुसुमसंकाशां पद्मरागमणिप्रभाम् ।
स्फुरत्पद्मनिभां तप्तकाञ्चनाभां सुरेश्वरीम् ।।१६।।
रक्तोत्पलदलाकारपादपल्लवराजिताम् ।
अनर्घ्यरत्नखचितमञ्जीरचरणद्वयाम् ।।१७।।
पादाङ्गुलीयकक्षिप्तरत्नतेजोविराजिताम् ।
कदलीललितस्तम्भसुकुमारोरुकोमलाम् ।।१८।।
नितम्बबिम्बविलसद्रक्तवस्त्रपरिष्कृताम् ।
मेखलाबद्धमाणिक्यकिङ्किणीनादविभ्रमाम् ।।१९।।
अलक्ष्यमध्यमां निम्ननाभिं शातोदरीं पराम् ।
रोमराजिलतोद्भूतमहाकुचफलान्विताम् ।।२०।।
सुवृत्तनिबिडोत्तुङ्गकुचमण्डलराजिताम् ।
अनर्घ्यमौक्तिकस्फारहारभारविराजिताम् ।।२१।।
नवरत्नप्रभाराजद् ग्रैवेयकविभूषणाम् ।
श्रुतिभूषामनोरम्यकपोलस्थलमञ्जुलाम् ।।२२।।
उद्यदादित्यसंकाशताटङ्कसुमुखप्रभाम् ।
पूर्णचन्द्रमुखीं पद्मवदनां वरनासिकाम् ।।२३।।
स्फुरन्मदनकोदण्डसुभ्रुवं पद्मलोचनाम् ।
ललाटपट्टसंराजद्रत्नाढ्यतिलकाङ्किताम् ।।२४।।
मुक्तामाणिक्यघटितमुकुटस्थलकिङ्किणीम् ।
स्फुरच्चन्द्रकलाराजन्मुकुटां च त्रिलोचनाम् ।।२५।।
प्रवालवल्लीविलसद्बाहुवलीचतुष्टयाम् ।
इक्षुकोदण्डपुष्पेषुपाशाङ्कुशचतुर्भुजाम् ।।२६।।
सर्व देवमयीमम्बां सर्वसौभाग्यसुन्दरीम् ।
सर्वतीर्थमयीं दिव्यां सर्वकामप्रपूरिणीम् ।।२७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्वमन्त्रमयीं नित्यां सर्वागमविशारदाम् ।
सर्वक्षेत्रमयीं देवीं सर्वविद्यामयीं शिवाम् ।।२८।।
सर्वयागमयीं विद्यां सर्वदेवस्वरूपिणीम् ।
सर्वशास्त्रमयीं नित्यां सर्वागमनमस्कृताम् ।।२९।।
सर्वाम्नायमयीं देवीं सर्वायतनसेविताम् ।
सर्वानन्दमयीं ज्ञानगह्वरां संविदं पराम् ।।३०।।

समस्त व्यवहार की स्वामिनी, परम ज्ञानरूपा, उदीयमान सहस्त्र सूर्य कान्ति युक्त, अनारपुष्प के समान वर्ण वाली, जवापुष्प के समान, पद्मरागमणि प्रभातुल्या, प्रस्फुटित कमलवत्, तप्तस्वर्ण के समान कान्तिवाली देवों की ईश्वरी, जिनके पादपल्लव रक्तकमल के समान हैं, जिनमें अमूल्य रत्न जटित नूपुर स्थित हैं, तथा उसमें पहने अंगूरियक इतने रत्नों से जटित हैं, जिनकी प्रभा से पादपद्म शोभायमान हो रहा है। जो केले के तने के समान मनोहर उस युगल वाली, जिनका नितम्ब परिष्कृत रक्तवस्त्र से शोभित है, जिनकी करधनी में बंधी माणिक्य की किंकिणी मधुर शब्द कर रही है, शरीर के मध्य भाग में अलक्ष्य (जिसे देखा न जा सके) ऐसी गभीर गहरी नाभि वाली, कृश उदर से युक्त, समस्त संसार में श्रेष्ठ, रोमसमूहात्मकलता से कम्पित विशाल कुच युगल रूपी फल से युक्त, सुगोल तथा घन उच्च कुचद्वय से शोभिता, मुक्तानिर्मित अमूल्य सुन्दर हार जिनके गले में विराजित है, नवरत्न की प्रभा से युक्त ग्रीवास्थ हाररूप भूषण से भूषित, मनोरम कर्णालंकार गले में लम्बित होने के कारण उसके द्वारा मनोहर लगने वाली, उदीयमान आदित्य भी प्रभा के समान मनोहर दीप्ति वाले कर्णभूषण से अलंकृता, पूर्ण चन्द्रानन वाली, पद्म के समान प्रकाशमान मुखवाली, सुन्दर नासिका युता, मदन के प्रभायुक्त धनु के समान वक्र भ्रू से शोभिता, कमलनेत्र, दीप्यमान रत्ननिर्मित तिलकों से सजी, मुक्ता, माणिक्य से बना मुकुट जो घुघरु युक्त है, धारण करने वाली, जो मुकुट प्रकाशमान चन्द्रकला से दीप्त है, त्रिनेत्रा, प्रवाल के वर्ण की कमनीय ४ बाहुओं से युक्त, हाथों में इक्षुधनु, पुष्पबाण, पाश, अंकुश धारिणी हैं। ये देवी जननी, सर्वस्वरूपा, सकल सौभाग्य सुन्दरी, सकल तीर्थमयी, अलौकिकी, सभी कामना को पूरा करने वाली, सर्वमन्त्रमयी, नित्या, सर्वशास्त्र निपुणा, सर्वक्षेत्रा, सर्वविद्यावती देवी, मंगलाशिवा, सकलयोगरूपा, ज्ञानरूपा, सर्वदेवस्वरूपा, सकल शास्त्रात्मिका, नित्या, सर्वशास्त्र नमस्कृता, सकलवेदमयी, देवी, समस्त भुवनों में सेविता, सर्वानन्दमयी, गंभीर ज्ञान पूर्णा परासंवित् रूपा हैं ॥१५-३०॥

एवं ध्यात्वा परामम्बां वहन्नासापुटं क्रमात् ।
आवाह्य चक्रमध्ये तु मुद्रया हि त्रिखण्डया ।।३१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संस्थितां चिन्तयेत्तत्र श्रीपीठान्तर्निवासिनीम् ।
मुद्राः संदर्शयेद्देवि तर्पणैस्तु त्रिधा यजेत् ।।३२।।

पूर्वोक्त प्रकार से परा अम्बा का ध्यान करके वाम नासिका से वायु भीतर खीचकर देवी का आवाहन त्रिखण्डा मुद्रा से चक्र में करे। यह भावना करनी चाहिये कि देवी पीठ में स्थित हैं। हे देवी ! तदनन्तर आवाहनादि पञ्चमुद्रा प्रदर्शन करके पूजा करे तथा तीन बार तर्पण करे ।।३१-३२।।

लयाङ्गं कल्पयेद्देहे देव्यास्तु परमेश्वरि ।
गन्धपुष्पाक्षतादींश्च देव्यै सम्यङ् निवेदयेत् ।।३३।।
उपचारैः षोडशभिः संपूज्य परदेवताम् ।
तर्पणानि पुनर्दद्यात्त्रिवारं मूलविद्यया ।।३४।।

हे परमेश्वरी ! देवी के अंग में (देह में) सभी अंगदेवता लीन हैं, यह भावना करे तथा देवी को गन्ध-पुष्प-अक्षत प्रभृति विधान पूर्वक निवेदित करे। १६ उपचारों से इनकी पूजा करके पुनः मूलमन्त्र 'ऐं क्लीं सौः' से तर्पण (३ बार) करे। मन्त्र है "ऐं क्लीं सौः श्री महात्रिपुरसुन्दरी तर्पयामि" ।।३३-३४।।

एतस्मिन्समये देवि तिथिनित्यां प्रपूजयेत् ।
कामेश्वर्यादिका नित्या विचित्रान्ताः परेश्वरि ।।३५।।
प्रतिपत्पौर्णमास्यन्ततिथिरूपाः प्रपूजयेत् ।
विभाव्य च महात्र्यस्त्रं पूर्वदक्षोत्तरं क्रमात् ।।३६।।
रेखासु विलिखेत्तत्र पञ्चपञ्च क्रमेण हि ।
अकराद्या उवर्णान्ता दक्षिणस्यां विचिन्तयेत् ।।३७।।

हे देवी ! हे परमेश्वरी ! इस समय कामेश्वरी प्रभृति से विचित्रा पर्यन्त तिथिनित्या देवीगण की पूजा प्रतिपत से पौर्णमासी पर्यन्त नाम लेकर क्रमशः करे। पूर्व–दक्षिण-उत्तर क्रमेण महात्रिकोण की कल्पना करके यह तीन रेखा क्रमिक रूप से लिखे। तदनन्तर रेखात्रय में ५-५ तिथि नित्याओं की क्रमशः पूजा करनी होगी। दक्षिण दिक् की रेखा में अ से उ पर्यन्त (अ आ इ ई उ) ५ वर्ण में ५ तिथिनित्या का चिन्तन करे ।।३५-३७।।

ततश्च पूर्वरेखायामूकारादिकपञ्चकम् ।
विलिख्योत्तररेखायां शक्त्यादि विलिखेत्ततः ।।३८।।
अनुस्वारान्तमन्त्रस्तु विसर्गे षोडशीं यजेत् ।
वामावर्तेन देवेशि नित्याः षोडश कीर्तिताः ।।३९।।
प्रतिपत्तिथिमारभ्य पौर्णमास्यन्तमद्रिजे ।
एकैकां पूजयेन्नित्यां महासौभाग्यमाप्नुयात् ।।४०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तदनन्तर पूर्व रेखा में ऊकारादि ५ वर्ण (ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ) लिखे।

अनुस्वार पर्यन्त १५ मन्त्र से १५ तिथिनित्या की पूजा होगी। विसर्ग से षोडशी तिथिनित्या की पूजा होगी। हे देवेशी ! वामावर्त्त में १६ नित्या कही गयी हैं। इनकी पूजा वामावर्त्त क्रम से होगी॥

प्रतिपदा से आरंभ करके पूर्णिमा पर्यन्त एक-एक नित्या की पूजा करे। हे पर्वतकन्ये ! इस प्रकार की पूजा से महान सौभाग्य मिलता है ॥३८-४०॥

कृष्णपक्षे महेशानि पूजयेत्तिथिमण्डलम्।
विचित्राद्या वरारोहे यावत्कामेश्वरी भवेत् ॥४१॥
पूजनीया विलोमेन भक्त्या तु परमेश्वरि।
कलाः षोडश देवेशि यस्तु चन्द्रकलाः क्रमात् ॥४२॥
तिथिनित्यां त्रिधा देवि पूजयेद्भाग्यहेतवे।
पुनः श्रीत्रिपुरानित्या यजेत्सौभाग्यहेतवे ॥४३॥
स सौभाग्यं महादेवि प्राप्नोति गुरुशासनात्।
कामेश्वर्यादिका नित्याः पूजयित्वा क्रमात्ततः ॥४४॥
एतस्मिन्समये देवि गुरुन्संपूजयेद्बुधः।
पुष्पसंकोचयोगेन कथयामि तवानघे ॥४५॥

हे महेश्वरी ! कृष्णपक्ष में तिथियों की पूजा करे। हे सुन्दरी ! कृष्ण पक्ष में विचित्रा से प्रारंभ करके विलोमभाव से कामेश्वरी पर्यन्त की भक्ति से पूजा करनी चाहिये। हे देवेशी ! चन्द्रमा की १६ कलायें ही १६ नित्या है। जो व्यक्ति गुरु के उपदेश से इन कलाओं की पूजा करेगा, सौभाग्यशाली होगा।

यह कामेश्वरी आदि नित्या की क्रम से (तीन-रेखा में तीन क्रम से) भाग्यवृद्धि हेतु पूजा करनी चाहिये। हे देवी ! पुनः सौभाग्य के लिये श्री त्रिपुरा की पूजा करे॥

तिथिनित्या पूजाविधि–त्रिकोण की दक्षिण रेखा में (प्रतिपद) अकार में– 'ऐं ह्रीं श्रीं अं ऐं क्लीं सौः ॐ नमः कामेश्वरी इच्छाकाम फलप्रदे सर्वसत्ववशङ्करी सर्वजगत्क्षोभणकरी हुं हुं हुं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं कामेश्वरीनित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

द्वितीयातिथि के आकार में–ऐं ह्रीं श्रीं आं ऐ भगभूगे भागीनि भगोदरि भगाङ्गे भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशङ्करि भगरूपे नित्यक्लिन्ने भगस्वरूपे सर्वभगानि में ह्यानय वरदे रेते सुरेते भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय सर्वसत्वान् भगेश्वरि अमोघे भगविच्चे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्वान् भगेश्वरि ऐं ब्लूं जं भें ब्लूं भों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ब्लूं हें ब्लूं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि मे वशमानय स्त्री हर ब्लें ह्रीं भगमालिनिनित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

तृतीय तिथि में–इ कार में–ऐं ह्रीं श्रीं इं ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा नित्यक्लिन्नानित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

चतुर्थी में–ईकार मे–ऐं ह्रीं श्रीं ईं ओं क्रों क्रों भ्रां च्रौं छ्रौं ज्रौं भ्रौं स्वाहा भेरुण्डानित्य कला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

पञ्चमी में उकार में–ऐं ह्रीं श्रीं उं ह्रीं बह्निवासिन्यै नमः बह्निवासिनी नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

त्रिकोण की पूर्व रेखा में षष्टी में ऊकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ओं ह्रीं फ्रें सः नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा महाविद्येश्वरी नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

सप्तमी में ऋकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ह्रीं शिवदूत्यै नमः शिवदूती नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

अष्टमी में ॠ कार में–ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ऊं ह्रीं हुं खे च छे क्ष स्त्रीं हुं क्षे ह्रीं फट् त्वरिता नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

नवमी में ऌकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ऌं ऐं क्लीं सौः कुलसुन्दरीनित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

दशमी में ॡकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ॡं ऐं क्लीं सौः ह् स् क् ल् र् मैं ह् स् क् ल् र् डीं ह् स् क् ल् र् डौं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं नित्यविमलानित्यकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

त्रिकोण की उत्तर रेखा में–एकादशी **में एकार में**–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ऊँ ह्रीं फ्रें ब्लूम् (मतान्तर से स्रूम), आं ह्रीं क्रों नित्ये मदद्रवे हुं क्रों नीलपताकिनीनित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

द्वादशी मे ऐकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं भ् म् य्रौं (मतान्तर से भ् म् रौं) ल् व् र् य् हौं नित्यविजयानित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

त्रयोदशी में ओकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ओं स्वों सर्वमङ्गलायै नमः सर्वमङ्गला नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

चतुर्दशी में औकार में–ऐं ह्रीं श्रीं औं ऊँ नमो भगवति ज्वालामालिनि देवि ज्वालामालिनि देवि सर्वभूतसंहारकारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वलन्ति ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुं हुं हुं रं रं रं हुं फट् स्वाहा ज्वालामालिनीनित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्णिका मे अं (अनुस्वार मे)–ऐं ह्रीं श्रीं अं चं क्रौं विचित्रा नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः । इसके पश्चात् विसर्ग चन्द्र की नित्यकला में–ऐं ह्रीं श्रीं अः ऐं क्लीं सौः श्री महात्रिपुरसुन्दरी नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः । (यह पूजा त्रिकोण मध्य मे होगी)

यहां से कृष्णपक्ष—**कृष्णपक्ष की प्रतिपदा अं मे (अनुस्वार में)** (त्रिकोण की उत्तर रेखा में)–ऐं ह्रीं श्रीं अं चं कौं विचित्रा नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

द्वितीया मे औकार में–ऐं ह्रीं श्रीं औं ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि देवि ज्वालामालिनि देवि सर्वभूत संहार कारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वलन्ति ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुं हुं हुं रं रं रं हुं फट् स्वाहाः ज्वालमालिनिनित्य कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

तृतीया मे ओकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ओं स्वों सर्वमङ्गलायै नमः सर्व मङ्गलानित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

चतुर्थी मे एकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं भ् म् य्रौं (भ् म रौं मलान्तर से) ल् व् र् य् हौं नित्यविजयानित्यकला–श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

पञ्चमी मे एकार में–ऐं ह्रीं श्रीं एं ओं ह्रीं फ्रें ब्लूम् ('ब्रूम' मतान्तर से) आं ह्रीं क्रों नित्ये मदद्रवे हुं क्रों नीलपताकिनी नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

त्रिकोण की पूर्व रेखा में–षष्टी में लृकार में–ऐं ह्रीं श्रीं लॄं ऐं क्लीं सौः ह् स् क् ल् र् मैं ह् स् क् ल् र् डीं ह् स् क् ल् र् डौं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं नित्यविमलानित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

सप्तमी मे लृकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ऌं ऐं क्लीं. सौः कुलसुन्दरी नित्य कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

अष्टमी को ॠकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ऊं ह्रीं हुं खे च छे क्ष स्त्री हुं क्षे ह्रीं फट् त्वरितानित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

नवमी मे ऋकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ह्रीं शिवदूत्यै नमः शिवदूती नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

दशमी में ऊकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ह्रीं फ्रें सः नित्याक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा महाविद्येश्वरी नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

त्रिकोण की दक्षिणरेखा में–**एकादश मे उकार में**–ऐं ह्रीं श्रीं उं ह्रीं वह्निवासिन्यै नमः वह्निवासिनीनित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

द्वादशी मे ईकार में–ऐं ह्रीं श्रीं ईं ऊं क्रों क्रों भ्रों च्रौं छ्रौं ज्रौं भ्रौं स्वाहाभेरुण्डा नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रयोदशी मे इकार में—ऐं ह्रीं श्रीं इं ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा नित्यक्लिन्नानित्यकलाश्रीपादुका पूजयामि नमः ।

चतुर्दशी में 'आ' कार में—ऐं ह्रीं श्रीं आं ऐं भगभुगे भगिनि भगोदरी भगाङ्गे भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशङ्करि भगरूपे नित्यक्लिन्ने भगस्वरूपे सर्वभगानि में ह्यानम वरदे रेते सुरेते भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय सर्वसत्वान् भगेश्वरी अमोघे भगविच्चे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्वान् भगेश्वरि ऐं ब्लूं जं भें ब्लूं भों ब्लूं हें ब्लूं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि मे वशमानय स्त्रीं हर ब्लें ह्रीं भगमालिनि नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

अमावस्या मे 'अ' कार में—ऐं ह्रीं श्रीं अं ऐं क्लीं सौः ऊं नमः कामेश्वरि इच्छा कामफलप्रदे सर्वसत्ववशङ्करि सर्वजगत्क्षोभणकरि हुं हुं हुं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं कामेश्वरीनित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः (इति तिथिनित्यानां पूजाविधिः) ।

हे निष्पापे ! त्रिपुरानित्या का पूजन करके ज्ञानी साधक गुरुगण की पूजा करे । गुरुपंक्ति असंख्य है । उन सबकी पूजा संभव नहीं है । इसलिये प्रधान-प्रधान की ही पूजा करे । जैसे पुष्प में असंख्य दल होते हैं । इसलिये पुष्प को संकुचित करना पड़ता है, वैसे ही गुरु पंक्ति को भी संकुचित (संक्षेप) करके कहता हूँ ।।४१-४५।।

रश्मिवृन्दं दलमितं गुरवस्तु शताधिकाः ।
तस्मांत्संकोचयेत्पुष्पममिताः सिद्धिहानिदाः ।।४६।।

जैसे सूर्य रश्मि अनेक हैं । तथापि उसे वृन्द-संघरूप में संकुचित करते हैं, जैसे पुष्प के दलों को समेट कर संकुचित (थोड़े स्थान में रखते हैं) करते हैं, उसी प्रकार गुरुवृन्द को भी संकुचित किया गया है । अपरिमित गुरु से सिद्धि नहीं मिलती । सिद्धि हानि होती है ।।४६।।

नष्टसंततिविज्ञेया मिताः सर्वसमृद्धिदाः ।
पुष्पं संकोचयेन्नोचेद्द्वादशे नष्टसंततिः ।।४७।।

गुरु परम्परा की धारा में कुछ संख्या परिमित गुरु की ही अर्चना समृद्धिदायक है । अतः पुष्प के समान गुरुपंक्ति को समेट कर पूजा करे । असंख्य गुरु लेने पर उनकी पूजादि संभव नहीं है । इससे उनकी सन्तति परम्परा नष्ट होगी ।।४७।।

संतत्या नष्टरूपः सन्न भवेद्देवताप्रियः ।
अत एव मया सम्यक्पुष्पं संकुचितं प्रिये ।।४८।।

जिसकी गुरु परम्परा नष्ट हो गयी है, वह देव प्रिय नहीं होता । हे प्रिये ! मैं सम्यक्भाव से गुरु परम्परा को संकुचित करके कहता हूँ ।।४८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कामराजख्यविद्याया गुरवस्तु समृद्धिदाः ।
मध्यप्राक्त्र्यश्रमध्ये हि गुरुपङ्क्तिं त्रिधाऽर्चयेत् ।।४९।।

एकादश पटल में कामराजकूट मन्त्र तथा द्वादश पटल में लोपामुद्रा मन्त्र चर्चा की गयी है । उसमें कामराज मन्त्र के गुरुगण समृद्धि प्रद हैं । चक्र में, पूर्व भाग तथा त्रिकोण के तीन प्रकार में, अर्थात् चक्रमध्य में दिव्यौघ, चक्र के पूर्व भाग में सिद्धौघ, चक्र मध्यस्थ त्रिकोण के मध्य में मानवौध गुरुगण की पूजा करे ।।४९।।

परारब्धान्पूजयेदादौ परापरविभक्तिकान् ।
ततोऽपरांस्त्रिधा देवि गुरुन् संपूजयेत्प्रिये ।।५०।।

पहले पर नामक गुरुगण का पूजन करके परापर गुरुगण का, तदनन्तर अपरनामक गुरुगण की पूजा करनी चाहिये । हे देवी ! हे प्रिये ! तीन भाग में गुरुगण का पूजन करना चाहिये ।।५०।।

दिव्यौघे तु परान्विद्धि सप्तसंख्यान्वरानने ।
आनन्दनाथशब्दान्ता गुरवः पुरुषाः प्रिये ।।५१।।

हे वराननें ! हे प्रिये ! सात दिव्यौध गुरुगण का पूजन परसंज्ञा से होगा । पुरुष गुरु के नाम के अन्त में 'आनन्दनाथ' लगाना होगा ।।५१।।

स्त्रियः पराम्बाशब्दान्ता विज्ञेया वीरवन्दिते ।
परप्रकाशो देवेशि ततः परशिवो मतः ।।५२।।
परा शक्तिस्तथा देवि कौलेश्वर इति प्रिये ।
शुक्ला देवि कुलेशानकामेश्वर्यम्बिकाः क्रमात् ।।५३।।
मुनिसंख्यास्तु गुरवः पराख्या दिव्यरूपिणः ।
भोगक्लिन्नस्तु समयो वेदाख्यः सहजस्तथा ।।५४।।
परापराख्यसिद्धौघे मानवौघे शृणु प्रिये ।
गगनो विश्वविमलौ मदनो भुवनस्तथा ।।५५।।
लीला स्वात्माप्रियः पश्चान्नागसंख्यास्तु मानवाः ।
अपराः परमेशानि नियता अक्षरा इमे ।।५६।।
एतत्त्रयं तु नियतं देशिकानां हिताय च ।
मयोद्धृतं महेशानि पुष्पं संकुचितं प्रिये ।।५७।।

हे वीरवन्दिते ! स्त्रीगुरु के नाम के अन्त में अम्बा शब्द प्रयुक्त होगा । पर संज्ञक ७ गुरु ये हैं–परप्रकाश, परशिव, पराशक्ति, कौलेश्वर, शुक्लादेवी, कामेशान, कामेश्वरी । इनका पूजा विधान यह है (ये दिव्यौध गुरु है)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. ऐं ह्रीं श्रीं–परप्रकाशानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
२. ऐं ह्रीं श्रीं–परशिवानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
३. ऐं ह्रीं श्रीं–पराशक्त्याम्बा श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
४. ऐं ह्रीं श्रीं–कौलेश्वरानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
५. ऐं ह्रीं श्रीं–शुक्लादेव्याम्बा श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
६. ऐं ह्रीं श्रीं–कामेशानानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
७. ऐं ह्रीं श्रीं–कामेश्वर्यम्बा श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

हे प्रिये ! भोग–क्लिन्न–समय–वेद–सहज, ये हैं परापराख्य सिद्धौघ गुरु । पूजाविधि यह है ।

१. ऐं ह्रीं श्रीं भोगानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
२. ऐं ह्रीं श्रीं क्लिन्नानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
३. ऐं ह्रीं श्रीं समयानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
४ ऐं ह्रीं श्रीं वेदानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
५. ऐं ह्रीं श्रीं सहजानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

अब मानवौघ गुरु के नाम तथा पूजा विधान कहते हैं—

१. ऐं ह्रीं श्रीं गगनानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
२. ऐं ह्रीं श्रीं विश्वानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
३. ऐं ह्रीं श्रीं विमलानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
४. ऐं ह्रीं श्रीं मदनानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
५. ऐं ह्रीं श्रीं भुवनानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
६. ऐं ह्रीं श्रीं लीलाम्बा श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
७. ऐं ह्रीं श्रीं स्वात्मनानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
८. ऐं ह्रीं श्रीं प्रियानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

हे परमेश्वरी ! मानवौघ गुरुगण को अपर कहते हैं । ये नियत अक्षरों के नाम वाले हैं । हे महेश्वरी ! हे प्रिये ! इन तीनों प्रकार के गुरुओं की संख्या निर्दिष्ट है । आचार्यों के हितार्थ मैने इनके नाम कहे हैं ।।५२-५७।

मानवौघान्तिके पश्चात्स्वगुरुत्रितयं यजेत् ।
परमेष्ठी गुरुः पश्चाद्गुरुः परमसंज्ञितः ।।५८।।
स्वगुरुश्च महेशानि पुजयेत्तु गुरुत्रयम् ।
अथ वा मानवौघान्त एकं स्वगुरुमर्चयेत् ।।५९।।

हे महेश्वरी ! मानवौघ गुरुपूजा के अन्त में अपने तीन गुरु की पूजा करे । प्रथम

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परमेष्ठिगुरु, तदनन्तर परमगुरु, तदनन्तर अपने गुरु। इस प्रकार से गुरुत्रय की पूजा करनी चाहिये। यथा "ऐं ह्रीं श्री परमेष्ठिगुरु (नामोल्लेख) अमुकानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः। इत्यादि। अथवा मानवौघ गुरु पूजनोपरान्त केवल अपने गुरु की ही पूजा कर ले।५८-५९॥

अयं प्रकारः कथितः प्रकारान्तरमुच्यते।
वन्द्यं सर्वप्रकाराणां मानवौघाष्टकादथ॥६०॥

गुरवो नवसंख्याका इह यावद्भवन्ति हि।
नवचक्रेश्वरी यस्मात्तावत्पुष्पं प्रकाशयेत्॥६१॥
मानवौघे तदा देवि दशसप्त भवन्ति हि।
पश्चात्संकोचयेत्पुष्पं नवमं श्रीगुरुं यजेत्॥६२॥

पूर्वोक्त रीति से गुरु पंक्ति पूजा कही गयी। अब अन्य प्रकार से भी कहते हैं। मानवौघ आठ गुरु की वन्दना पूजा करके उनकी पूजा करने के अनन्तर जब ९ संख्यक गुरु होते हैं तब ९ संख्यक गुरु की पूजा करनी चाहिये। अर्थात् दिव्यौघ, सिद्धौघ, मानवौघ के अनन्तर अपने गुरु,. परमगुरु परमेष्ठि गुरु इत्यादि ९ संख्यक गुरुगण की पूजा करे। ९ से अधिक की पूजा न करे। क्योंकि चक्रेश्वरी भी नवचक्रेश्वरी हैं। इसीलिये ९ संख्यक गुरु की पूजा करे। हे देवी जब मानवौघ गुरुगण की संख्या १७ हो जाये तब गुरु संकोच करे। संख्या न बढ़ाये॥६०-६२॥

अज्ञातगुरुशिष्याणां कथयामि वरानने।
गुरुभ्यो नम उच्चार्य पादुकाभ्यो नमो लिखेत्॥६३॥
गुर्वन्ते परमान्ते च गुरुभ्यो नम इत्यपि।
एतेषां पादुकास्तद्वदाचार्येभ्यो नमो वदेत्॥६४॥
आचार्यपादुकास्तद्वत्पूर्वसिद्धास्तु पादुकाः।
सामान्यगुरुशिष्याणां गुरुपङ्क्तिरियं भवेत्॥६५॥
गुरुपङ्क्तिं प्रपूज्याथ स्वयं श्रीत्रिपुरा भवेत्।
गुरुपङ्क्तिविहीनस्तु पुरुषः पङ्क्तिवर्जितः॥६६॥
सामान्यगुरुपङ्क्तित्वान्न भवेत्पङ्क्तिवर्जितः।
पुष्पसंकोचमार्गोऽयं मया सिद्धः कृतः प्रिये॥६७॥

हे वरानने! जिन साधकों को पूर्व-पूर्व गुरु के नाम न ज्ञात हों, उनकी गुरुपूजा विधि कहता हूँ। 'गुरुभ्यो नमः' कहकर अन्त में पादुकाभ्योनमः कहे। उनकी विधि यह होगी।

ऐं ह्रीं श्रीं गुरुभ्यो नमः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐं ह्रीं श्रीं गुरुपादुकेभ्यो नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरुभ्यो नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरु पादुकेभ्यो नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरुभ्यो नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं परापरगुरु पादुकेभ्यो नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठि गुरुभ्यो नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठि गुरु पादुकेभ्यो नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं आचार्येभ्यो नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं आचार्य पादुकेभ्यो नमः ।

गुरु पंक्ति पूजित करके साधक स्वयं श्री त्रिपुरा हो जाता है । गुरुपंक्ति पूजा रहित साधक साधक पंक्तिच्युत हो जाता है । यदि सामान्य गुरुपंक्ति की पूजा करता है, तब वह साधक पंक्तिच्युत नहीं होगा । हे प्रिये ! इस प्रकार मैने गुरु संकोच (सीमित) किया ॥६३-६७॥

कृपया परमेशानि साधकानां हिताय च ।
कामराजाख्यगुरवः श्रीविद्याविषये क्रमात् ।।६८।।

हे परमेश्वरी ! साधक के हितार्थ मैने श्रीविद्या विषय पर कामराज मन्त्र के गुरुगण का क्रमशः वर्णन किया ॥६८॥

लोपामुद्राख्यविद्याऽप्यान् गुरूञ्शृणु वरानने ।
परमाद्यशिवश्चाऽऽद्या कामेश्वर्यम्बिका तथा ।।६९।।
दिव्यौघश्च महौघश्च सर्वानन्दस्ततः परम् ।
प्रज्ञादेव्यम्बिका पश्चात्प्रकाशः सप्तमो भवेत् ।।७०।।
दिव्याः पराख्यगुरवो लोपामुद्राप्रभामयाः ।
दिव्यश्चित्रश्च कैवल्यदेव्यम्बा च महोदयाः ।।७१।।
सिद्धाः परापरा ज्ञेया मानवौघे शृणु प्रिये ।
विद्या शक्तिश्च विश्वश्च चतुर्थः कोमलो भवेत् ।।७२।।
पञ्चमस्तु परानन्दो मनोहर इति प्रिये ।
स्वात्मानन्दः सप्तमस्तु प्रतिभोऽष्टम उच्यते ।।७३।।
अपराख्या इमे देवि गुरुवः परिकीर्तिताः ।
पूर्ववद्योजयेत् पश्चादष्टानंन्तरमेव च ।।७४।।
त्रयं वा स्वगुरुं वाऽपि नवान्तं वाऽब्जलोचने ।
दक्षिणामूर्तिशिष्याणां गुरुक्रम उदाहृतः ।।७५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे वरानने ! अब लोपामुद्रा के गुरुगण क्रम को सुनो। प्रथम परमाद्य शिव, द्वितीय आद्या कामेश्वरी, अम्बिका, तृतीय दिव्यौघ, चतुर्थ महौघ, पंचम सर्वानन्द, षष्ट प्रज्ञादेवी अम्बिका, सप्तम प्रकाश–ये परनामक दिव्यौघ गुरु लोपामुद्रा विद्या के हैं।

मानवौघ है विद्या, शक्ति, विश्व, कोमल, परानन्द, मनोहर, स्वात्मानन्द, प्रतिभ। हे देवी ! ये अपर नामक मानवौघ गुरु हैं। कामराज के मत से इन आठ के अतिरिक्त परापर–परम तथा निजगुरु है। केवल निजगुरु की पूजा से भी कार्य होगा। हे पद्मनयने ! मैने दक्षिणामूर्ति के शिष्यगण के गुरु क्रम को कहा ॥६९-७५॥

विवृति-अब लोपामुद्रा क्रमेण गुरुगण की पूजा कहते हैं—

दिव्यौघ गुरुपूजा–

१. ऐं ह्रीं श्रीं परमाद्यशिवानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
२. ऐं ह्रीं श्रीं आद्याकामेश्वर्यम्बिका श्री पादुका पूजयामि नमः।
३. ऐं ह्रीं श्रीं दिव्यौधानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
४. ऐं ह्रीं श्रीं महौनन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
५. ऐं ह्रीं श्रीं सर्वानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
६. ऐं ह्रीं श्रीं प्रज्ञादेवाम्बिका श्री पादुकां पूजयामि नमः।
७. ऐं ह्रीं श्रीं प्रकाशानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।

सिद्धौघ गुरुपूजा–

१. ऐं ह्रीं श्रीं दिव्यानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
२. ऐं ह्रीं श्रीं चित्रानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
३. ऐं ह्रीं श्रीं कैवल्यानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
४. ऐं ह्रीं श्रीं देव्यम्बा श्री पादुकां पूजयामि नमः।

मानवौघ गुरुपूजा–

ऐं ह्रीं श्रीं विद्यादेव्यम्बा श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं शक्ति देव्यम्बा श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं विश्वानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं कोमलानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं परानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं मनोहरानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं स्वात्मानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं प्रतिमानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्वगुरुपूजा—

ऐं ह्रीं श्रीं गुरुश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरुश्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं परापरगुरु श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

संप्रदाया अनेके च ज्ञातव्याः स्वगुरुक्रमात् ।
संप्रदायविहीनस्य न दद्यात्पङ्क्तिमुत्तमाम् ।।७६।।

निजगुरुक्रम से अनेक सम्प्रदाय होते हैं। जो गुरु सम्प्रदाय रहित है उसे चक्र मध्य में स्थित न कराये ।।७६।।

साधारणास्तु गुरवः सर्वभेदेषु वै समाः ।
गुरुक्रमं प्रपूज्याथ यजेदाम्नायदेवताः ।।७७।।

साधारण गुरुगण (भले ही भेद हो) सभी समान है। गुरुपंक्ति पूजन करके आम्नाय देवताओं की पूजा करे ।।७७।।

त्रैलोक्यमोहने देवि सर्वाशापरिपूरके ।
सर्वसंक्षोभणे चक्रे पूर्वाम्नायं प्रपूजयेत् ।।७८।।

हे देवी त्रैलोक्य मोहन कारक, सर्वाशापरिपूरक, सर्वसंक्षोभक चक्र में पूर्वाम्नाय देवता की पूजा करे ।।७८।।

सर्वसौभाग्यदे चक्रे तथा सर्वार्थसाधके ।
सर्वरक्षाकरे चक्रे दक्षाम्नायं प्र पूजयेत् ।।७९।।

सर्व सौभाग्यप्रद, सर्व पदार्थ साधक, सर्व रक्षा कारक चक्र में दक्षिणाम्नाय देवों की पूजा करे ।

मध्यचक्रत्रये देवि पश्चिमाम्नायमर्चयेत् ।
नवचक्रेषु देवेशि कौबेराम्नायमर्चयेत् ।।८०।।

हे देवी ! मध्य के तीन चक्र में पश्चिम आम्नाय के देवता की पूजा करे। हे देवेशी ! ९ चक्रों में उत्तराम्नाय के देवताओं का पूजन करे ।।८०।।

बैन्दवे परमेशानि मध्यसिंहासनं यजेत् ।
अनेनैव प्रकारेण पूजयेत्पञ्च पञ्चिकाः ।।८१।।

हे देवी ! बिन्दु कोण (मध्य के बिन्दु युक्त त्रिकोण में) मध्यसिंहासन पूजा करे। इस प्रकार से ५ संघविशिष्ट (पूर्वसंघ-दक्षिणसंघ-पश्चिमसंघ-उत्तर संघ-मध्यसंघ) की पूजा करे ।।८१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विवृति–आम्नायों के देवगण का नाम ज्ञानार्णव में नहीं लिखा है। उसे तन्त्रसार से दिया जा रहा है।

श्रीविद्या च प्ररं ज्यौतिः परा निष्कलशाम्भवी।
अजया मातृका चेति पञ्च कोशाः प्रकीर्तिताः ।।८२।।
श्रीविद्या च तथा लक्ष्मीर्महालक्ष्मीस्तथैव च।
त्रिशक्ति सर्वसाम्राज्या पञ्च लक्ष्म्यः प्रकीर्तिताः ।।८३।।
श्रीविद्या त्वरिता चैव पारिजातेश्वरी तथा।
त्रिपुटा पञ्चबाणेशी पञ्च कल्पलताः स्मृताः ।।८४।।

ऐं ह्रीं श्रीं ह्सरीं स ह्रीं श्रीं कल ह्रीं पूर्वाम्नाय उन्मनी देवि श्रीपादुकां पूजयामि नमः– **पूर्वाम्नाये।**

ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लिन्ने मदद्रवे कूले हेसौः दक्षिणाम्नायभोगिनी देवी श्री पादुकां पूजयामि–**दक्षिणाम्नाये।**

ऐं ह्रीं श्रीं ह स ख फ्रें हे सौः भगवत्यम्ब ह स ख फ्रें कुब्जिके ह्स्रां च व्रां च व्रीं च क्रं किलि किलि च व्रां च व्रीं च व्रुं किलि किलि ह् स्रां ह स्रीं ह् स्रं अघोरे घोरे घोरमुखि ह स ख फ्रें कुब्जिके ह् सौः भगवत्यम्ब ह स ख फ्रें पश्चिमाम्नाय कुब्जिका देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः–इति पश्चिमाम्नाये। ऐं ह्रीं श्रीं ह स ख फ्रें महाचण्डयोगेश्वरि उत्तराम्नाय कालिका देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्री ह सैं ह स कल रीं हसौः उर्ध्वाम्नायसकल सिद्धिदादेवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः–इति वैन्दवे।

श्री विद्या परज्योति है। परा, निष्कल शांभवी, अजया तथा मातृका, इन पांच प्रकार से पंचकोशिकी कही जाती है।

श्री विद्या, लक्ष्मी, महालक्ष्मी, त्रिशक्ति तथा सर्व साम्राज्य, इन पञ्चलक्ष्मी नाम से कीर्त्तिता है। श्रीविद्या, त्वरिता, पारिजातेश्वरी, त्रिपूटा तथा पंचबाणेश्वरी इन पञ्चकल्पलता के रूप से विख्यात है ॥८२-८४॥

श्रीविद्या मूलपीठेशी सुधा श्रीरमृतेश्वरी।
अन्नपूर्णेति विख्याताः पञ्चैताः कामधेनवः ।।८५।।
श्रीविद्यां सिद्धलक्ष्मीश्च मातङ्गी भुवनेश्वरी।
वाराहीति च संमोक्ताः पञ्च रत्नाः प्रकीर्तिताः ।।८६।।

श्री विद्या, मूलपीठेशी, सुधा श्री, अमृतेश्वरी तथा अन्नपूर्णा इन पञ्च कामधेनु रूप में ख्यात है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्री विद्या, सिद्धलक्ष्मी, मातंगी, भुवनेश्वरी वाराही रूप पंचरत्न कहलाती है ॥८५-८६॥

मूलविद्या महेशानि श्रीविद्या परिकीर्तिता ।
वारुणान्तं वह्निसस्थं बिन्दुनादसमन्वितम् ।।८७।।
वामनेत्रसमायुक्तं लक्ष्मीबीजमुदाहृतम् ।
श्रीबीजं तु पराबीजं लक्ष्मीबीजमुदाहृतम् ।।८८।।
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य ह्रीमात्मकं समुच्चरेत् ।
श्रीपुटां च नु कमले कमलाग्रे प्रसीदतु ।।८९।।
लये मध्यगतां भूमिं रुद्रस्थाने नियोजयेत् ।
प्रसीद युगलं दद्याच्छ्रीबीजं भुवनेश्वरीम् ।।९०।।
श्रिया बीजं ततो द्यान्महालक्ष्मी च (श्च) हृन्मनुः ।
सप्तविंशतिवर्णात्मा महालक्ष्मीमनुर्मतः ।।९१।।

हे महेश्वरी ! मूलविद्या श्रीविद्या कहलाती है। वरुण 'व' हैं। उसका अन्त अर्थात् 'व' के बादवाला 'श', वह्नि (र) बिन्दु (ं) नाद (ँ) युक्त वामनेत्र अर्थात् (ई) युक्त यह है श+र+ई+ं +ँ =श्रीं यह लक्ष्मी बीज है। यह श्रेष्ठ बीज है।

पहले प्रणव (ॐ) कहकर 'ह्रीं' कहे। श्री पुटित 'कमले कमलाग्रे प्रसीदतु' कहकर मध्यगता भूमि रुद्र स्थान में नियुक्त करे। प्रसीदयुगल (प्रसीद-प्रसीद) कहकर तदनन्तर श्री बीज (श्रीं) तथा भुवनेश्वरी बीज (ह्रीं) कहे।

तदनन्तर श्री देवता का बीज (श्री) कहे। तदनन्तर 'महालक्षी' कहकर हृत् मन्त्र (नमः) कहे। यह २६ अक्षरों वाला महालक्ष्मी मन्त्र है। मन्त्रोद्धार है–ॐ ह्रीं श्री कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्री ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः ॥८७-९१॥

श्रीबीजं च पराबीजं कामराजं समालिखेत् ।
इयं त्रिशक्तिर्देवेशि त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ।।९२।।

हे देवेशी ! श्री बीज (श्रीं) पराबीज (ह्रीं) कामराज लिखें यह त्रिशक्ति बीज लोकत्रय में दुर्लभ हैं। मन्त्रोद्धार है श्रीं ह्रीं क ह स ह ॥९२॥

चन्द्रेण मादनं लक्ष्मीर्देवी दीर्घाक्षिमण्डिता ।
विष्णुक्रूरेश्वरीयुक्ता रित्ययं वैष्णवीयुता (?) ।।९३।।
श्रीबीजसंपुटं कुर्यात्सर्वशास्त्रप्रदायिनी ।
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य पराहंसं समुद्धरेत् ।।९४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ततः सोऽहं शिरो देवि वसुवर्णोऽयमीरितः ।
वेदादिकेवला देवी परा निष्कलशाम्भवी ।।९५।।

चन्द्र (अर्थात स) के साथ मादन (क) दीर्घाक्षी अर्थात् दीर्घ युक्त ल=ली, विष्णु (अ), क्रूरेश्वरी (क्रों) युक्त अर्थात् 'स क लीं अं क्रों' यह वैष्णवी मन्त्र है। इसे बीज से पुटित करे। मन्त्रोद्धार होगा—

'श्रीं स क लीं अं क्रों श्रीं'। यह समस्त शास्त्र ज्ञान प्रदाता है।

पहले प्रणव (ॐ) कहे तदनन्तर परा (ह्रीं) कहकर 'हंसः' कहे। तत्पश्चात् 'सोऽहं' कहकर शिरः (अस्मि) कहे। यह अष्टाक्षर मन्त्र है। मन्त्रोद्धार है 'ॐ ह्रीं हंसः सोऽहमस्मि'। वेद आदि देवी के ही प्रतिपादक है। लेकिन निष्कल शांभवी यह मन्त्र कलाशून्य शांभवी विद्या है ।।९३-९५।।

हंसोऽजपार्णान्तः त(वर्णवस्त)त्र मातृकेति प्रकीर्तिता(तः) ।
प्रणवं भुवनेशानी वियच्चन्द्राग्निवायवम् ।।९६।।
भुवनेशी ध्रुवं चैव सरस्वत्यै नमो लिखेत् ।
इयं तु पारिजातेशी पारिजातरतोपमा ।।९७।।
काण्डवानीश्वरीविद्या प्रसङ्गात्कथिता मया ।
त्रिबीजं च पराबीजं सकामा त्रिपुटोदिता ।।९८।।

उक्त शांभवी मे हंसः वर्ण का जप मातृका कहलाता है। हे भुवनेश्वरी ! प्रणव (ॐ) वियत् (ह) चन्द्र (स) अग्नि (र) वायु (य) भुवनेशी (ह्रीं) ध्रुव (हे सौः) कहकर सरस्वत्यै कहे। मन्त्र होगा ॐ ह् स् र् य् ह्रीं हे सौः सरस्वत्यै नमः'। यह विद्या पारिजातेश्वरी कहलाती है।

इसे काण्डवाणेश्वरी विद्या भी कहते हैं। मैनें प्रसंग क्रमेण इसे कहा। त्रिबीज 'ऐं क्लीं सौः' सर्वश्रेष्ठा है। यह त्रिबीजविद्या सकामा कामपूरणकारिणी है ।।९६-९८।।

पञ्चकामेश्वरीविद्या बालान्यासे समीरिता ।
वाग्भवं वामनेत्रं च ध्रुवान्तं बिन्दुसंयुतम् ।।९९।।
मूलपीठेश्वरीविद्या सुगुप्ता कथिता मया ।
पराबीजं तु श्रीबीजं बालायामाद्यमक्षरम् ।।१००।।
राज्यदे राजलक्ष्मीति चन्द्रः सर्गविभूषितः ।
बिलोमान्यादिबीजानि सुधा श्रीश्च प्रकीर्तिताः (ता) ।।१०१।।

त्रिपुराबाला के न्यास में पंचकामेश्वरी विद्या कही गयी है–यथा 'ह्रीं क्लीं ऐं ब्लूं स्त्रीं'। वाग्भव (ऐं), वामनेत्र (ईं) ध्रुवान्त (ह् सौः) अन्त में बिन्दु (ँ)। संयुक्त होकर यह मूलपीठ की उत्तम रूपेण गुप्त विद्या है। मन्त्र है–ऐं ईं हे सौं'' । मैने यह कहा ! पराबीज (ह्रीं)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रीबीज (श्रीं) बाला का प्रथमाक्षर (ऐं) तदनन्तर 'राज्यदे-राज्यलक्ष्मि' कहे। तदनन्तर विसर्गयुक्त चन्द्र (सः) कहे। इसका विलोम उच्चारण करने से सुधा श्री विद्या का उद्धार होता है।, यथा–'सः राज्यदे राज्यलक्ष्मि ऐं श्रीं ह्रीं'। यही सुधा श्री मन्त्र है॥ ९९-१०१॥

वाग्भवं भुवनेशानि श्रीबीजं तदनन्तरम्।
वियत्तदादिखफलेमित्यवर्णं समालिखेत्॥१०२॥
वियत्तदादिकं तं च फ्रानित्येव मनुर्मतः।
चवर्गतृतीयं तुर्यं मायारेफेन्दुसंयुत्तम्॥१०३॥
महाचण्डं समुद्धृत्य संकर्षणीति संलिखेत्।
कालमहान् इत्युक्त्वा वियदिन्दुसमन्वितः (?)॥१०४॥
मायाबीजं तु कथितः सिद्धलक्ष्म्या महामनुः।
अन्नपूर्णा च देवेशि उत्तराम्नायकीर्तिता॥१०५॥
मातङ्गिन्येति चांशं वाङ्मायाश्रीसंपुटं लिखेत्।
इयं मातङ्गिनी विद्या द्वादशार्णा प्रकीर्तिता॥१०६॥

हे भुवनेश्वरी ! वाग्भव (ऐं) तदनन्तर श्री बीज (श्रीं) तदनन्तर वियत् (ह) तदनन्तर ख फ लें एवं अं लिखे। बियत (ह) वियत आदि (स) लिखे। तथा फ्रान लिखे। मन्त्रोद्धार होगा–'ऐं श्रीं ह् स् र व फ ले अं ह स फ्रान्' यह भी एक सुधा श्री मन्त्र है।

चवर्ग का तृतीय (ज), तूर्य अर्थात् (झ), माया (ई) रेफ (र) चन्द्र बिन्दु (ँ) लगाकर 'महाचण्ड' कहकर 'संकर्षणी' लिखे। 'कालमहान्' कहकर चन्द्र युक्त वियत् अर्थात् (हं) तदनन्तर मायाबीज (ह्रीं) कहे। यह सिद्ध लक्ष्मी मन्त्र है—

'ज्रीं झ्रीं महाचण्डं सङ्कर्षणी कालमहान हं ह्रीं' यह सिद्ध लक्ष्मी का मन्त्र है।

उत्तराम्नायकथिता 'अन्नपूर्णा मातङ्गिज्योति' यह अंश तथा वाक् (ऐं) माया (ह्रीं) श्रीयुक्त कहे। अर्थात् 'अन्नपूर्णा श्रीमातङ्गिज्योति ऐं ह्रीं' यह १२ अक्षरों का मातंगी मन्त्र है॥१०२-१०६॥

वियदग्निसमायुक्ता वामनेत्रेन्दुविभूषितम् (ता)।
भुवनेशी महेशानि दुर्लभा भुवनत्रये॥१०७॥

हे महेश्वरी ! वियत (ह) अग्नि (र) युक्त तथा वामनेत्र (ई) से भूषित भुवनेशी (ह्रीं) मन्त्र त्रिभुवन दुर्लभ है। मन्त्रोद्धार है ह + र + ई + ँ = ह्रीं॥२०६॥

वाग्भवं पूर्वमुद्धृत्य संबुद्ध्या भगवत्यपि।
वार्तालि द्वे च वाराही युग्मवाराहमुख्यपि॥१०८॥
अन्धे अन्धिन्यै नत्यन्तं रुन्धिनी तत्परः परम्।
जम्भे जिम्भन्यै नत्यन्तं मोहे मोहिन्यै युतं नमः॥१०९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्तम्भे स्तम्भिन्यै हृद्युक्तममुकं स्तम्भनद्वये।
सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्वमुच्चरेत् ।।११०।।
जिह्वास्तम्भं कुरु द्वन्द्वं शीघ्रवश्यं कुरु द्वयम्।
वाग्क्कूट त्रयं वाचं मन्त्रपावकवल्लभा ।।१११।।

पहले वाग्भव (ऐं) का उच्चारण करके सम्बोधनार्थ 'भगवति' कहे। तदनन्तर दो बार वर्त्तालि तथा वाराहि 'वाराहमुखि' दो बार कहे। तदनंतर अन्धे अन्धिन्यै कहकर अन्त में नमः कहे। तदन्तर रुक्मिणी कहे। तदनन्तर जम्भे जम्भिन्यै नमः, तत्पश्चात् मोहे मोहिन्यै नमः कहे। तत्पश्चात् स्तम्भे स्तम्भिन्यै कहे। तब अमुकं (यहां जिसे वशीभूत करना है उस साध्य का नाम लगाये, तब स्तम्भय दो बार कहना होगा। तदनन्तर जिह्वास्तम्भं कुरु-कुरु कहकर 'शीघ्रवश्यं कुरु कुरु कहे। 'वाग्घुटच्' तीनबार कहे। यह विद्या अतिशय पवित्रकारक है। इसे महाविद्या कहते है। यह तन्त्र में गुप्त है। मन्त्रोद्धार है–ऐं भगवति वार्त्तालि वार्त्तालि वाराहि वाराहि वाराहमुखि वाराहमुखि अन्धे अन्धिन्यै नमः रुद्धिनी जम्भे जम्भिन्यै नमः मोहे मोहिन्यै नमः स्ताम्भे स्तम्भिन्यै नमः अमुकं स्तम्भय स्तम्भय सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्व जिह्वास्तम्भं कुरु कुरु शीघ्र वश्यं कुरु कुरु वाग्घुटच वागद्युटच वागद्युटच ॥१०८-१११॥

श्री देव्युवाच–

महाविद्येयमाख्याता सर्वतन्त्रेषु गोपिता।
मन्त्रास्तु कथिता देव सर्वतन्त्रेषु गोपिताः ।।११२।।
तानाराध्य कथं लोका जायन्ते भुवि दुर्लभाः।
एतत्सर्वं महादेव कथय त्वं सुविस्तरम् ।।११३।।

श्री पार्वती कहती हैं–हे देव। समस्त तन्त्रों में गुप्ततन्त्र आपने कहा। लोग इन मन्त्र की अराधना करके किस प्रकार से पृथिवी पर दुर्लभ जन्म लेते हैं, हे महादेव ! आप यह सब विस्तार से कहें ॥११२-११३॥

ईश्वर उवाच–

साधु पृष्टं त्वया भद्रे लोकानां हितकाम्यया।
अविज्ञातमनस्तत्त्वं भजता दुःसुता यथा (?) ।।११४।।

(ईश्वर कहते हैं)–हे भद्रे ! तुमने सर्वलोक हितार्थ उत्तम प्रश्न किया है। जैसे दुष्टा कन्या दुःख देती है, उसी प्रकार से तत्व जाने बिना भजन भी दुःखद हो जाता है ॥११४॥

कथ्यतेऽत्र तथा देवि सर्वतन्त्रेषु गोपितम्।
मन्त्राविशोधनं कुर्यान्मन्त्राणां च विशुद्धये ।।११५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतुरस्त्रभुवं भित्त्वा कृत्वा रेखात्रयं त्रयम् ।
वृत्तः षोडशके चैव ततो वर्णान् समालिखेत् ।।११६।।

हे देवी ! जो सभी तन्त्रों में गुप्त है, उसे कहता हूँ। मन्त्रों की विशुद्धि हेतु सम्यक् प्रकार से मन्त्रों का शोधन करे। समचतुष्कोण मृत्तिका खनन करके उसमे तीन रेखा बनाये। उसे १६ कोष्ठों में विभक्त करके उसमें सभी वर्णों को लिखे ॥११५-११६॥

इन्द्राग्नि रुद्रनवनेत्रयुगेन दिक्षु
ऋत्वष्टषोडशचतुर्दश भौतिकेषु ।
पाताल पञ्चदशवह्निहिमांशुकोष्ठे
वर्णाल्लिँखेल्लिपिभवान्क्रमशस्तु धीमान् ।।११७।।

इन्द्र (१२), अग्नि (३), रुद्र (११), नव (९), नेत्र (२), युग (४), दिक् (१०), क्रतु (५), अष्ट (८), षोडश (१६), चतुर्दश (१४), भौक्तिक (१३), पाताल (७), पञ्चदश (१५), वह्नि (६), हिमांशु (१) संख्यक कोष्ठों में बुद्धिमान् व्यक्ति इस प्रकार क्रम से लिपि से उत्पन्न वर्णों को लिखे ॥११७॥

मन्त्राद्यसाधकानां तु नामार्णः पतति ध्रुवम् ।
सिद्धिस्थानं च विज्ञेयं द्वितीयं साध्यनामकम् ।।११८।।
सुसिद्धं तु तृतीयं स्याच्चतुर्थमरिसंज्ञकम् ।
सिद्धः सिध्यतिकालेन साध्यः सिध्यति वा न वा ।।११९।।
सुसिद्धस्तत्क्षणादेव साधकं भक्षयेदरिः ।
सिद्धसिद्धो जपात्सिद्धिर्द्विगुणात्सिद्धसाध्यकः ।।१२०।।

यहाँ एक चक्र बनाया गया है। मन्त्र के आदि अक्षर तथा साधक के आदि अक्षर तक गणना करे। यदि प्रथम कोष्ठक में दोनों आदि अक्षर पड़े तब मन्त्र सिद्धि होगी। द्वितीय कोष्ठ साध्य नामक होता है। तृतीय कोष्ठ में सुसिद्ध होता है। चतुर्थ कोष्ठ अरिसंख्यक है। सिद्ध नामक मंत्र काल में सिद्ध होता है। साध्य मन्त्र हो सकता है सिद्ध नहीं भी हो। सुसिद्ध मन्त्र तत्क्षण शीध्र सिद्ध होगा। चतुर्थ साधक मन्त्र उपासक को शत्रु खा जाता है। सिद्ध-सिद्ध मन्त्र जप से सिद्धि मिलती है। सिद्धसाध्यक मन्त्र दूने जप से सिद्ध होगा ॥११९-१२०॥

सिद्धसुसिद्धः संग्राहात्सिद्धारिर्हन्ति वै द्विजान् ।
साध्यः सिध्यति संक्लेशात्साध्यसाध्योऽतिदुःखकृत् ।।१२१।।
साध्यः सुसिद्धो भजनात्साध्यारिः स्वाश्रयं हरेत् ।
सुसिद्धसिद्धोऽध्ययनात्फलं दद्युर्यथेप्सितम् ।।१२२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुसिद्धसाध्यो जपाद्यैः सिद्धिर्यस्मादतोऽन्यथा ।
सुसिद्धे तु सुसिद्धस्तु पूर्वजन्मकृतश्रमात् ।।१२३।।
संस्मात्तु सर्वं सिद्धानां साधको यो जपेन्मनुः ।
अभिचारे रिपोरवं यदि स्यान्भुविपन्नयोः (?) ।।१२४।।
संसिद्धेऽरिविशेषेण स्वकुलान्नाशयेद्ध्रुवम् ।
अरिसिद्धस्तु संहन्यादरिसाध्यं तु योषितः ।।१२५।।
अरिसिद्धस्वमन्त्रश्च कुलाच्छादनकृच्छलैः ।
अर्यरिस्वामहामन्त्रप्राप्तेन सुनिश्चितम् (?) ।।१२६।।

	सिद्ध प्रथम	साध्य द्वितीय	सुसिद्ध तृतीय	साधक (अरि) चतुर्थ
प्रथमसिद्ध	अः ष स	उ झ ञ	आ ग ध	ऊ ट ठ
द्वितीय साध्य	ऋ ण त	अं व श	ओ म य	ऌ घ द
तृतीय सुसिद्ध	ई छ ज	ऋ ड ढ	इ ङ च	अ क ख ह क्ष
चतुर्थ अरि	ऐ व भ	ए प फ	औ र ल	ॡ ध न

श्लोक १२० से लेकर १२६ तक का तात्पर्यार्थ दिया जा रहा है। उसका शब्दार्थ भ्रमपूर्ण होगा। मूलतः मन्त्र महोदधि के प्रमाण को ग्रहण करके विवेचना की जाती है।

यदि मन्त्र का नामाक्षर तथा मन्त्र का (प्रथमाक्षर) अक्षर एक ही मे पड़े तब वह सिद्धसिद्ध है। यदि मन्त्र का नामाक्षर साधक के नाम वाले से दूसरे में पड़े तब वह सिद्ध साध्य होगा। यदि साधक के नाम से तीसरे कोष्ठ में मन्त्राक्षर पड़े तब वह सिद्ध-सुसिद्ध तथा चौथे कोष्ठक में मन्त्राक्षर पड़े तब सिद्धारि योग होगा। नाम वाले ४ कोष्ठ के आगे ४ कोष्ठ पर्यन्त में यदि प्रथम कोष्ठ में पड़े तब साध्य सिद्ध, द्वितीय में साध्य साध्य तृतीय में साध्य सुसिद्ध तथा चतुर्थ में यदि मन्त्राक्षर हो तब साध्य शत्रुयोग होगा। इत्यादि। इसे आगम तत्व विलास ग्रंथ से देखना उचित होगा।

साध्य सुद्धिद्ध मन्त्र का भजन करने से वह सिद्ध हो जाता है। साध्यारिमन्त्र मन्त्र के आश्रय को हर लेता है। सुसिद्ध सिद्ध मन्त्र उपदेशमात्र से यथेप्सित फल देता है।

सुसिद्ध साध्यमन्त्र जपादि से सिद्ध होते हैं। सुसिद्ध-सुसिद्ध मन्त्र पूर्वजन्मकृत श्रम से प्राप्त होते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसलिये सुसिद्ध-सुसिद्ध मन्त्र से सभी पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं। जो साधक सिद्धमन्त्र समूह का मन्त्र जपता है, वह शत्रु के अभिचार कर्म से बचकर भी पृथिवी पर स्थित रह जाता है।

सुसिद्धारि मन्त्र साधक विशेष रूप से अपने वंश का ध्वंस करता है। अरिसिद्ध मन्त्र भी साधक के वंश का नाश करते हैं। अरिसाध्य मन्त्र साधक की स्त्री का नाश करते हैं। अरिसिद्ध छलना द्वारा वंश को आच्छादित कर देता है। अरि-अरि मन्त्र वंश को अभिभूत करता है ॥१२१-१२६॥

एतदुक्तं महेशानि त्यक्त्वाऽन्यमतमुत्तमम्।
स्वप्नलब्धे स्त्रिया दत्ते मालमन्त्रे त्रिबीजके ।।१२७।।
सिद्धादिशोधनं देवी न वै तेषां तु विद्यते।
श्रीविद्यापूजनस्थाने चक्रराजे महेश्वरि ।।१२८।।

हे महेशानी ! इस प्रकार से मन्त्र के सिद्ध साध्यादि को कहा। अन्य उत्तम मत में यह सब विचार का प्रयोजन नहीं है। स्वप्न में प्राप्त मन्त्र, किसी स्त्री द्वारा प्रदत्तमन्त्र, तीन बीज युक्त मन्त्र अथवा मालामन्त्र में यह शोधन आवश्यक नहीं है। हे देवी ! स्वप्न में प्राप्त यह सब मन्त्र जो हैं, उसमें सिद्ध साध्यादि विचार तथा शोधन आवश्यक नहीं है हे महेश्वरी ! श्री विद्या के पूजा स्थान में श्री चक्र हेतु जो मन्त्र मिलता है, उसमें भी यह शोधन नहीं किया जाता ॥१२७-१२८॥

महाकोशेश्वरावृन्दमण्डिता सनसंस्थिता ।।१२९।।
सर्वसौभाग्यजननीपादुकां पूजयामि च।
इत्युच्चार्य परं ज्योतिःकोशाद्यां पूजयेत्सुधीः ।।१३०।।

इस ग्रंथोक्त "जो पंच कोश ईश्वर द्वारा भूषित हैं, आसनसंस्थित सकल सौभाग्य जननी पादुका की हम पूजा करते हैं"। यह कहकर सुधी व्यक्ति परम ज्योति कोशादि की पूजा करें ॥१२९-१३०॥

अनेनैव प्रकारेण पूजयेत्पञ्चपञ्चिकाः।
शैवं तु दर्शनं देवि बैन्दवे पूजयेत्प्रिये ।।१३१।।
परितो दर्शनं शाक्तं चक्रस्य परमेश्वरी।
ब्राह्मं तु दर्शनं पूज्यं भूबिम्बे प्रथमे प्रिये ।।१३२।।

इस प्रकार पूर्वाम्नाय देवता, दक्षिणाम्नाय देवता, पश्चिमाम्नाय देवता, उत्तराम्नाय देवता तथा मध्य सिंहासन पूजा करनी चाहिये। हे प्रिये! श्री चक्र के बिन्दु चक्र में शिवपूजा करे।

श्री चक्र के सभी ओर शक्ति पूजा करनी चाहिये। शक्ति ही चक्र की परमेश्वरी हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे प्रिये ! भू वृत्त के पहले (भीतर वाले) वृत्त में ब्रह्मा सम्बन्धित पूजा होगी ॥१३१-१३२॥

शिवस्य वामतो देवि वैष्णवं दर्शनं यजेत् ।
सृष्टिचक्रे भवेत्सूर्यदर्शनं कमलेक्षणे ।।१३३।।

हे देवी ! शिव के वाम में विष्णु सम्बन्धित पूजा करे। हे पद्मनेत्रे ! सृष्टि चक्र में (चतुरस्त्र, षोडशपत्र तथा अष्टपत्र ही सृष्टि चक्र हैं) सूर्य की पूजा होगी ॥१३३॥

स्थितिचक्रे तु संपूज्यं बौद्धदर्शनमुत्तमम् ।
एवं संपूज्य सकलं श्रीविद्यां परितोषयेत् ।।१३४।।

स्थिति चक्र में (चतुर्दश अरायुक्त, दश अरायुक्त तथा पञ्चकोण) बौद्ध अर्थात् बुद्ध सम्बन्धित पूजा करे। इन सब पूजा से श्रीविद्या को प्रसन्न करे ॥१३४॥

तर्पणानि पुनर्दद्यात्त्रिवारं तत्त्वमुद्रया ।
अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तु तत्त्वमुद्रेयमीरिता ।।१३५।।

पुनः तत्वमुद्रा द्वारा मूल श्री विद्यादेवी का तर्पण करना चाहिये। अंगुष्ठ तथा अनामिका का संयोग करने से तत्वमुद्रा होती है।

पुष्पं समर्पयेद्देवि मुद्रया ज्ञानसंज्ञया ।
अङ्गुष्ठतर्जनीयोगाज्ज्ञानमुद्रा प्रतिष्ठिता ।।१३६।।
सर्वोपचारैराराध्य मुद्राः संदर्शयेत्क्रमात् ।
अथाङ्गावरणं कुर्याच्छ्रीविद्यामनुसंभवम् ।।१३७।।

हे देवी ! ज्ञानमुद्रा से देवी को पुष्प प्रदान करे। अंगुष्ठ तथा तर्जनी के योग द्वारा ज्ञानमुद्रा बनती है।

समस्त उपचारों से देवी का आराधना करके क्रम से मुद्रा प्रदर्शन करे। तदनन्तर श्री विद्या मन्त्रोत्पन्न अंग तथा आवरण देवताओं की पूजा करे ॥१३६-१३७॥

अग्नीशासुरवायव्यमध्यदिक्ष्वङ्गपूजनम् ।
मायालक्ष्मीमयं बीजयुग्मं पूर्वक्रमेण तु ।।१३८।।
कथितं योजयेद्देवि त्रयं वा परमेश्वरि ।
संपुटक्रमयोगेन चाथवा वीरवन्दिते ।।१३९।।
संयोज्य पूजयेत्सर्वाः क्रमादेव वरानने ।
त्रैलोक्यमोहने चक्रे प्रकटा योगिनीर्यजेत् ।।१४०।।

अग्नि, ईशान वायु, नैर्ऋत, मध्य तथा चतुर्दिक, इन ६ ओर षड़ङ्ग पूजा करे। हे वीरवन्दिते ! वरानने ! षड़ङ्गपूजा कहते हैं। ह्रीं श्रीं द्वारा पूर्व, ईशान, उत्तर आदि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्रम से समस्त अंग देवता तथा आवरण देवताओं की पूजा करे। यथा–अग्निकोण–ऐं ह्रीं श्रीं (अथवा ह्रीं श्रीं) हृदयाय नमः, हृदयाङ्गशक्ति श्री पादुकां पूजयामि। ईशान कोण में–ऐं ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा शिरोऽङ्गशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। नैर्ऋत कोणे–ऐं ह्रीं श्रीं शिखायै वषट्, शिवाङ्ग शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। वायु कोणे–ऐं ह्रीं श्रीं कवचाय हुं कवचाङ्ग शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। मध्ये–ऐं ह्रीं श्रीं नेत्रत्रयाय वषट्, नेत्र त्रयाङ्ग शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः। चतुर्दिक्–ऐं ह्रीं श्रीं अस्त्रायफट् अस्त्राङ्गशक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः॥

तदनन्तर क्रमशः त्रैलोक्य मोहन चक्र में (श्री विद्या चक्र में) प्रकटा योगिनीगण की पूजा करे। यह इस प्रकार है। 'ऐं ह्रीं श्रीं प्रकटायोगिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं गुप्तयोगिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं गुप्ततरयोगिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं सम्प्रदाययोगिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं कुलकौलिनी योगिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं निखर्वयोगिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं रहस्ययोगिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं अतिरहस्ययोगिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं परमातिरहस्ययोगिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः॥१३८-१४०॥

चतुरस्त्रे चतुर्द्वारे शोभिते सिद्धिदायकाः।
अणिमां पश्चिमद्वारे दक्षभागे प्रपूजयेत्॥१४१॥
लघिमामुत्तरद्वारे दक्षभागे प्रपूजयेत्।
पूर्वद्वारे तु महिमामुत्तरे पूजयेत्प्रिये॥१४२॥
ईशित्वसिद्धिंर्देवेशि दक्षिणद्वारि पूर्ववत्॥१४३॥
वशित्वसिद्धिं वायव्ये तेनैव क्रमयोगतः॥१४४॥

इसके पश्चात् चतुष्कोण में शोभित चतुर्द्वार में सिद्धिदायी गण की पूजा करे। पश्चिमद्वार के दक्षिणभाग में अणिमा, उत्तरद्वार के दक्षिणभाग में लघिमा की, पूर्वद्वार के उत्तर भाग में महिमा की, दक्षिणद्वार के पूर्वभाग में ईशित्व शक्ति की, वायुकोण के उत्तर भाग में वशित्वसिद्धि की, ईशान कोण के उत्तर भाग में प्रकाम्य सिद्धि की, अग्निकोण के पूर्वभाग में मुक्तिसिद्धि की, नैर्ऋत कोण के पूर्वभाग में इच्छा सिद्धि की, प्राप्ति सिद्धि की अधः कोण में तथा सर्वकामसिद्धि का पूजन उर्ध्वकोण में करे॥१४१-१४४॥

इच्छासिद्धिं पूर्वभागे नैर्ऋत्ये च प्रपूजयेत्।
प्राप्तिसिद्धिः सर्वकामा सिद्धिश्च परमेश्वरि॥१४५॥
अधोर्ध्वक्रमरूपेण ज्ञातव्ये सुरसुन्दरि।
ब्राह्मी माहेश्वरी चैन्द्री कौमारी वैष्णवी तथा॥१४६॥
वाराही च तथा षष्ठी चामुण्डा सप्त मातरः।
अष्टमी तु महालक्ष्मीः पश्चिमादिक्रमेण हि॥१४७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वामभागे तु संपूज्या वायव्यादि च पूर्ववत् ।
संक्षोभद्रावणाकर्षवश्योन्मादमहाङ्कुशाः ॥१४८॥
खेचरीबीजयोन्याख्यास्त्रिखण्डां च प्रपूजयेत् ।
एताः संपूज्य चक्रेशीं त्रिपुरां पूजयेत्पराम् ॥१४९॥
अणिमासिद्धिपुरतः सर्वकार्यार्थसाधिकाम् ।
सर्वसंक्षोभिणीं मुद्रां दर्शयेत्कमलानने ॥१५०॥

हे परमेश्वरी ! हे सुरसुन्दरी ! श्रीविद्याचक्र के बाह्य चतुष्कोण के पश्चिम द्वार पर दक्षिण भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं अणिमादिसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः । उत्तरद्वार के दक्षिण भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं लधिमासिद्धि पादुकां पूजयामि नमः । पूर्वद्वार के उत्तर भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं महिमासिद्धि श्री पादुकां पूजयामि नमः । दक्षिण दिक् के पूर्व भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं ईशित्व सिद्धि श्री पादुकां पूजयामि नमः । वायुकोण के उत्तर भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं वशित्वसिद्धि श्री पादुकां पूजयामि नमः । ईशान कोण के उत्तर भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं प्राकाम्यसिद्धि श्री पादुकां पूजयामि नमः । अग्निकोण एवं पूर्व भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं मुक्तिसिद्धि श्री पादुकां पूजयामि नमः । नैर्ऋत कोण के पूर्व भाग में–ऐं ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः । अधःकोण में अर्थात् नैर्ऋत कोण तथा पश्चिम दिशा के मध्य–ऐं ह्रीं श्रीं प्राप्तिसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः । उर्ध्वकोण में अर्थात् पूर्व दिशा तथा ईशानकोण के मध्य–ऐं ह्रीं श्रीं सर्वकामासिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः । तदनन्तर संक्षोभ, द्रावण, आकर्ष, वश्य, उन्माद, महाङ्कुश, खेचरी, बीज, योनि, तथा त्रिखण्डामुद्रा की पूजा करे । यह इसकी पूजाविधि है–भीतर के चतुष्कोण के पश्चिमादि क्रम से पूजा करे । यथा पश्चिम दिक् में–ऐं ह्रीं श्रीं द्रां संक्षोभमुद्रा श्रीपादुकां पूजयामि नमः । उत्तर दिक्–ऐं ह्रीं श्रीं द्रां द्रावणमुद्रा श्री पादुकां पूजयामि नमः । पूर्व दिक्–ऐं ह्रीं श्री क्लीं आकर्षमुद्रा श्री पादुका पूजयामि नमः ।

दक्षिण दिक्–ऐं ह्रीं श्रीं ब्लूं वश्यमुद्रा श्रीपादुकां पूजयामि नमः । वायुकोण-ऐं ह्रीं श्रीं सः उन्मादमुद्रा श्रीपादुकां पूज्यामि नमः । ईशान कोण–ऐं ह्रीं श्रीं क्रों महाङ्कुशमुद्रा श्री पादुकां पूजयामि नमः । अग्निकोण–ऐं ह्रीं श्रीं हस ख फ्रें खेचरीमुद्रा श्रीपादुकां पूजयामि नमः । नैर्ऋत कोण में–ऐं ह्रीं श्रीं हे सौः बीजमुद्रा श्रीपादुकां पूजयामि नमः । दक्षिण तथा वायुकोण के मध्य में–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं योनिमुद्रा श्रीपादुकां पूजयामि नमः । ईशान तथा पूर्व दिक् के मध्य में–ऐं ह्रीं श्रीं त्रिखण्डामुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः । इस प्रकार से पूजा करके चक्रेश्वरी परा त्रिपुरादेवी की पूजा करे । अणिमा सिद्धि आदि सर्वकार्य सिद्धि हेतु सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा प्रदर्शन करे ॥१४५-१५०॥

सर्वाशापूरकं चक्रं गुप्तयोगिन्यधिष्ठितम् ।
षोडशारं ततो देवि पूजयेत्कार्यसिद्धये ॥१५१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कामाकर्षिणिकां देवि बुध्याकर्षिणिकां तथा ।
अहंकाराकर्षिणीं च शब्दाकर्षणरूपिणीम् ।।१५२।।
स्पर्शाकर्षिणिरूपां च रूपाकर्षिणिरूपिणीम् ।
रसाकर्षकरीं चैव गन्धाकर्षणकारिणीम् ।।१५३।।
चित्ताकर्षिणिकां तद्वद्धैर्याकर्षिणिकां प्रिये ।
नामाकर्षिणिकां चैव बीणाकर्षिणिकां तथा ।।१५४।।
अमृताकर्षिणीं चैव बीजाकर्षिणिकां प्रिये ।
शरीराकर्षिणीं चैव आत्माकर्षणरूपिणीम् ।।१५५।।
पश्चिमादिविलोमेन षोडशारे स्वरान्विताः ।
एता नित्याः कलाः पूज्याः स्त्रवत्पीयूषमण्डलाः ।।१५६।।
चक्रेश्वरीं यजेद्देवीं त्रिपुरेशीं समृद्धिदाम् ।
कामाकर्षणरूपायाः पुरतः पूजयेत्प्रिये ।।१५७।।
सर्वविद्राविणीं मुद्रां दर्शयित्वा निवेदयेत् ।
सर्वसंक्षोभणे चक्रे यजेद्गुप्ततराभिधाः ।।१५८।।

हे देवी ! श्रीविद्यायन्त्र (चक्र) सर्वाशापरिपूरक है । यह गुप्त योगिनी से अधिष्ठित है । कार्य सिद्धि हेतु षोडशदल के पश्चिम दल से प्रारंभ करके वामावर्त्त (विलोम भाव से) कामाकर्षिणी आदि की पूजा करे । यथा—

षोडशदल पद्म के पश्चिमदल में 'ऐं ह्रीं श्रीं अं कामाकर्षिणीनित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

नेर्ऋत कोण के दिक् में–ऐं ह्रीं श्रीं आं बुध्याकर्षिणी नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

नैर्ऋत कोण में—ऐं ह्रीं श्री इं अहङ्कार कर्षिणी नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

नैर्ऋत कोण में दक्षिणदिक् में–ऐं ह्रीं श्रीं ईं शब्दाकर्षिणीनित्यकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

दक्षिणदिक् में–ऐं ह्रीं श्रीं उं स्पर्शा कर्षिणी नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

दक्षिण दिक् के पर अग्निकोण दिक् में–ऐं ह्रीं श्रीं ऊं रुपाकर्षिणी नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः । अग्निकोण में–ऐं ह्रीं श्रीं ऋं रसाकर्षिणी नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः । अग्निकोण के परे-ऐं ह्रीं श्रीं ॠं गन्धाकर्षिणीनित्य कला श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अग्निकोण के पर पूर्वदिक् की ओर–ऐं ह्रीं श्रीं ऌ चिन्ताकर्षिणीनित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः। पूर्वदिक्–ऐं ह्रीं श्रीं ॡं धैर्याकर्षिणी नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नः।

पूर्वदिक् के पर ईशानकोण दिक् में–ऐं ह्रीं श्रीं एं नामाकर्षिणी नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ईशान कोण में–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं बीजाकर्षिणी नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ईशान कोण के पर ऐं ह्रीं श्रीं ओं अमृताकर्षिणीनित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। उत्तरदिक् में–ऐं ह्रीं श्रीं औं स्मृत्याकर्षिणी नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः।

उत्तरदिक् के पर–ऐं ह्रीं श्रीं अं शरीराकर्षिणी नित्यकला श्री पादुकां पूजयामि नमः।

वायुकोण में–ऐं ह्रीं श्रीं अः आत्माकर्षिणी नित्यकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

इस प्रकार से १६ दलों में स्वर (अकरादि) युक्त रूप से कामा कर्षिणी, बुध्याकर्षिणी, शब्दाकर्षिणी, स्पर्शाकर्षिणी, रूपाकर्षिणी, रसाकर्षिणी, गन्धाकर्षिणी, चित्ता कर्षिणी, धैर्याकर्षिणी, नामाकर्षिणी, बीजा कर्षिणी, अमृताकर्षिणी, स्मृत्याकर्षिणी, शरीराकर्षिणी, आत्माकर्षिणी, इन सभी अमृतधारा बरसाने वाली नित्यकला की पूजा करे। तदनन्तर समृद्धि प्रदात्री चक्रेश्वरी त्रिपुरेशी देवी की पूजा करे। हे प्रिये ! कामाकर्षिणी के सम्मुख सर्व विद्राविणी मुद्रा प्रदर्शनोपरान्त मुद्रा पूजन करे–ऐं ह्रीं श्रीं सर्व विद्राविणी मुद्रा श्री पादुकां पूजयामि नमः।

सर्व संक्षोभण चक्र में गुप्ततर नाम्नी की पूजा करनी चाहिये ॥१५१-१५८॥

अनङ्गकुसुमां प्राच्यां कवर्गेण प्रपूजयेत्।
दक्षिणे च चवर्गेण तथा चानङ्गमेखलाम्॥१५९॥
अनङ्गमदनां पश्चाट्टवर्गेण प्रपूजयेत्।
तवर्गेणोत्तरे पश्चादनङ्गमदनातुराम्॥१६०॥
अनङ्गरेखामाग्नेये पवर्गेण प्रपूजयेत्।
राक्षसेऽनङ्गवेगां तु यवर्गेण प्रपूजयेत्॥१६१॥
वायव्ये तु शवर्गेण तथाऽनङ्गाङ्कुशां यजेत्।
ईशान्ये लक्षवर्गेण पूज्याऽनङ्गादिमालिनी॥१६२॥

इन गुप्त योगिनीगण में से प्रत्येक का पूजा प्रकार कहते हैं। अष्टदल पद्म के पूर्वदल में कवर्ग द्वारा अनङ्गकुसुमा की पूजा करे। यथा–ऐं ह्रीं श्रीं कं अनङ्गकुसुमादेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः। दक्षिणदल में अनंगमेखला की पूजा करे। यथा–ऐं ह्रीं श्रीं चं अनङ्गमेखला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः। इन सब की पूजाविधि यह है।

चतुर्दशार से पश्चिम से दक्षिणपर्यन्त–पूजा करे।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्व संक्षोभिणी शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वविद्राविणी शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाकर्षिणी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाह्लादनकारिणी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्व सम्मोहिनी शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वस्तम्भनकारिणी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वजृम्भिणिका श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्ववशङ्करी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वार्थरञ्जिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वान्मोदनिका श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसम्पत्ति पूर्णा श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वमन्त्रमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वद्वन्द्वक्षयकरी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदा श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

इस प्रकार पूजा करके सर्वसंक्षोभिणी के सामने इस मन्त्र से पूजा करे–ऐं ह्रीं श्रीं चक्रेश्वरी सिद्धिदात्री त्रिपुरवासिनी शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

वश्यमुद्रा प्रदर्शन करके देवी को निवेदन करके वैन्दवचक्र से लगाकर दशकोण चक्र में सर्वार्थसाधकचक्र में कुलयोगिनीगण की पूजा करनी चाहिये । दशारचक्र में पश्चिम से विलोम क्रम से, अर्थात् पश्चिम-वायु-उत्तर इत्यादि रूप से दक्षिण क्रम से क्रमशः सर्वसिद्धिप्रदा, सर्वसम्पत्प्रदा, सर्वप्रियकारी, सर्वमङ्गलकारिणी, सर्वकामप्रपूर्णा, सर्वदुःख प्रमोचनी, सर्वमृत्युप्रशमनी, सर्वविघ्नविनाशिनी, सर्वाङ्ग सुन्दरी, सर्वसौभाग्यप्रदायिनी इन १० कुलयोगिनी की पूजा करे । यथा—

पश्चिमदल में टवर्ग द्वारा अनङ्गमदना की पूजा करे । यथा–ऐं ह्रीं श्रीं टं अनङ्गमदनादेवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

उत्तरदल में–तवर्ग द्वारा अनंगमदनातुरा की पूजा करे । यथा ऐं ह्रीं श्रीं तं अनङ्ग मदनातुरादेवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

अग्निकोण के दल में अनङ्गरेखा की पूजा पवर्ग से होगी। यथा–ऐं ह्रीं श्रीं पं अनङ्ग रेखा देवी श्री पादुका–पूजयामि नमः ।

नैर्ऋतकोण में यवर्ग से अनंगवेगा की पूजा करे । यथा–ऐं ह्रीं श्रीं यं अनङ्गवेगादेवीं श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

वायुकोण में शवर्ग से अनङ्गाकुंशा की पूजा करे । यथा–ऐं ह्रीं श्रीं शं अनङ्गाङ्कुशादेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ईशान कोण के दल में ल-क्ष वर्ग से अनङ्गादिमालिनी की पूजा करे। ऐं ह्रीं श्रीं लं क्षं अनङ्गा दिमालिनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः ॥१५९-१६२॥

चक्रेश्वरीं यजेद्देवीं ततस्त्रिपुरसुन्दरीम्।
अनङ्गकुसुमाग्रे च सर्वसाम्राज्यदायिनीम् ।।१६३।।
सर्वाकर्षणमुद्रां च दर्शयेत्सुरवन्दिते।
चक्रपूजां निवेद्याथ चतुर्थं चक्रमर्चयेत् ।।१६४।।
सर्वसंक्षोभिणी शक्तिः सर्वविद्राविणी तथा।
सर्वाकर्षिणिका शक्तिः सर्वाह्लादनकारिणी ।।१६५।।
सर्वसंमोहिनी शक्तिः सर्वस्तम्भनकारिणी।
सर्वजृम्भिणिका शक्तिः सर्वावशकरी तथा ।।१६६।।
सर्वार्थरञ्जिनी शक्तिर्नवमी परमेश्वरी।
सर्वोन्मादनिका शक्तिः शक्तिः सर्वार्थसाधिका ।।१६७।।
सर्वसंपत्तिपूर्णा च सर्वमन्त्रमयी तथा।
चतुर्दशारशक्तिस्तु सर्वद्वन्द्वक्षयंकरी ।।१६८।।
सर्वसौभाग्यदे चक्रे पश्चिमादिविलोमतः।
वाममार्गेण देवेशि संपूज्याः सर्वसिद्धिदाः ।।१६९।।
सर्वसंक्षोभिणी शक्तिः पुरतः पूजयेत्ततः।
चक्रेश्वरी सिद्धिदात्रीं परां त्रिपुरवासिनीम् ।।१७०।।

तदनन्तर चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी की पूजा होगी। चक्राग्र में 'ह्रीं क्लीं सौः त्रिपुरसुन्दरी चक्र नायिका श्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजा करे। हे देववन्दिते! अनंगकुसुमा के आगे सर्व साम्राज्य दायिनी सर्वाकर्षण मुद्रा दिखाये। तदनन्तर चक्र पूजा करे–यथा–ऐं ह्रीं श्री सर्वसंक्षोभणाष्ट दलचक्र श्रीपादुकां पूजयामि नमः। इस पूजा के उपरान्त चतुर्थ चक्र की (बिन्दु चक्र से चतुर्थ चक्र) पूजा करे। चतुर्दशार चक्र के पश्चिम से दक्षिण पर्यन्त के क्रम से यह पूजा होगी। सर्वसंक्षोभिणी, सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षिणी, सर्वाल्हादकारिणी, सर्वसम्मोहनी, सर्वस्तम्भिनी, सर्वजृम्भणी, सर्ववशंकरी, सर्वार्थरंजिनी, सर्वोन्मादिनी, सर्वार्थ साधिका, सर्वसम्पत्तिपूर्णा, सर्वमन्त्रमयी, सर्वद्वन्द्वक्षयकरी की पूजा करे। तदनन्तर सर्व सौभाग्यप्रदचक्र में पश्चिम से वामावर्त्त क्रम से सर्वसिद्धिप्रदा प्रभृति की पूजा करनी होगी। तदनन्तर सर्वक्षोभिणी शक्ति के सामने चक्रेश्वरी सिद्धिप्रदा त्रिपुरवासिनी की पूजा करे ॥१६३-१७०॥

पश्चिम से दक्षिण वामावर्त्त क्रम से पूजा होगी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धि प्रदा देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसम्पत्प्रदादेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वप्रियकरी देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्व मंगलकारिणी देवि श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वकामप्रपूर्णा देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वदुःखप्रमोचनी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वमृत्युप्रशमनी देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वविघ्ननिवारिणी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाङ्गसुन्दरीदेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसौभाग्यदायिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

वश्यमुद्रां प्रदर्श्याथ निवेद्य तदनन्तरम् ।
सर्वार्थसाधके चक्रे दंशारे कुलयोगिनीः ।।१७१।।
पूजयेत्सर्वकार्यार्थसिद्धिदाः पञ्चमे क्रमात् ।
सर्वसिद्धिप्रदा देवी सर्वसंपत्प्रदा तथा ।।१७२।।
सर्वप्रियकरी देवी सर्वमङ्गलकारिणी ।
सर्वकामप्रपूर्णा च सर्वदुःखप्रमोचनी ।।१७३।।
सर्वमृत्युप्रशमनी सर्वविघ्ननिवारिणी ।
सर्वाङ्गसुन्दरी देवी सर्वसौभाग्यदायिनी ।।१७४।।
पश्चिमादिविलोमेन दशारे पूजयेदिमाः ।
सर्वसिद्धिप्रदा देवि पूजयेत्त्रितपुराक्षियम् ।।१७५।।
सर्वसिद्धिप्रदां देवि पुरतश्चक्रनायिकाम् ।
सर्वोन्मादनमुद्रां च दर्शयित्वा निवेद्य च ।।१७६।।
सर्वरक्षाकरे चक्रे निगर्भा योगिनीर्यजेत् ।
सर्वज्ञा सर्वशक्तिश्च सर्वैश्वर्यप्रदा ततः ।।१७७।।
सर्वज्ञानमयी देवी सर्वव्याधिविनाशिनी ।
सर्वाधारस्वरूपा च सर्वपापहरा तथा ।।१७८।।

इनकी पूजा करके सर्व सिद्धिप्रदा के सम्मुख चक्रनायिका सर्वसिद्धिप्रदा त्रिपुरा की पूजा करे । यथा–ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदाचक्रनायिकात्रिपुरा श्री पादुकां पूजयामि नम

तदनन्तर त्रिपुरादेवी को सर्वोन्मादन मुद्रा प्रदर्शित करके निवेदन करे । दशारचक्र भीतर के दिक् में पश्चिम से दक्षिण पर्यन्त विलोम भाव से सर्वरक्षाकर चक्र में निगर्भयोगि गण की पूजा करे । जैसे क्रमशः पश्चिम से—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाज्ञादेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वशक्तिदेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वैश्वर्यप्रदादेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञानमयी देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वव्याधिविनाशिनी देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाधारस्वरूपा देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वपापहरा देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।।१७१-१७८।।

सर्वानन्दमयी देवी सर्वरक्षास्वरूपिणी ।
सर्वेप्सितार्थफलदा देव्यः सर्वसमृद्धिदाः ।।१७९।।
पश्चिमादिविलोमेन पूजयेत्पङ्क्तियोनिके ।
सर्वज्ञापुरतो देवि चक्रेशीं मालिनीं यजेत् ।।१८०।।
महाङ्कुशा महामुद्रां दर्शयित्वा निवेद्य च ।
मध्यचक्रे महेशानि योगिनीः पूजयेत्प्रिये ।।१८१।।
सर्वरोगहरे चक्रे वसुकोणे सुरेश्वरि ।
रहस्ययोगिनीर्देवि वशिन्याद्यास्तु सिद्धिदाः ।।१८२।।
पश्चिमादिविलोमेन पूर्वोक्ताः पूजयेत्क्रमात् ।
वशिनीपुरतः पूज्या सिद्धाम्बा चक्रनायिका ।।१८३।।
खेचरीं दर्शयेन्मुद्रां निवेद्यानन्तरं ततः ।
सर्वसिद्धिप्रदे चक्रे त्रिकोणे सर्वकामदे ।।१८४।।
परापररहस्याख्ययोगिनीः परिपूजयेत् ।
पञ्च बाणान्समुच्चार्य कामकामेश्वरीमयान् ।।१८५।।
जम्भनाख्यान्महेशानि पूजयेद्बाणदेवताम् ।
धमात्मकं कामचापं द्वितीयं तु थमात्मकम् ।।१८६।।
कामेश्वर्या मोहनाख्यां पूजयेच्चापदेवताम् ।
द्वितीयं भुवनेशानीपाशयुग्मं वंशकरम् ।।१८७।।
कामेशस्य च कामेश्यास्त्रैलोक्याकर्षणं प्रिये ।
अङ्कुशाख्यं करोमात्मबीजं स्तम्भनसंज्ञकम् ।।१८८।।
कामेशस्य च कामेश्या अङ्कुशं पूजयेत्प्रिये ।
षडङ्गावरणाद्बाह्ये समीपे क्रमतो यजेत् ।।१८९।।
पश्चिमादिक्रमेणैव चतुर्दिक्षु प्रपूजयेत् ।
कामेश्वरीं रुद्रशक्तिमाद्यकूटेन चाग्रतः ।।१९०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वितीयेन च कूटेन कामाख्येन च वैष्णवीम् ।
दक्षकोणे समभ्यर्च्य तृतीयेन च पूजयेत् ।।१९१।।
भगमालां ब्रह्मशक्तिमुत्तरे विश्वमातृकाम् ।
चक्रेश्वरीमम्बिकाख्यां कामेशीपुरतो यजेत् ।।१९२।।
बीजमुद्रामुपास्याथ चक्रपूजां निवेदयेत् ।
सर्वानन्दमये चक्रराजे बैन्दवसंज्ञके ।।१९३।।
ब्रह्मरूपे चित्स्वरूपे संविद्वेद्ये शृणु प्रिये ।
परापररहस्याख्यां योगिनीं त्रिपुरां यजेत् ।।१९४।।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वानन्दमयी देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वरक्षास्वरूपिणी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वेप्सितार्थफलदादेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसमृद्धा देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः ।
पश्चिम दिक् से वामावर्त्त से इनकी पूजा करे ।

हे पंक्ति करण रुपिणी हे देवी ! सर्वज्ञा के समक्ष चक्रेशीमालिनी की पूजा करे यथा—ह्रीं क्लीं ब्लूं चक्रेशी त्रिपुर मालिनी देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः । तत्पश्चात महाङ्कुशा नामक महामुद्रा प्रदर्शन करके वह निवेदन करे । निवेदन मन्त्र है–ऐं महाङ्कुशमुद्रां त्रिपुरमालिन्यै निवेदयामि'' । हे देवी ! हे महेशानी ! सुरेश्वरी । सर्वरोगहर नामक अष्टकोण समन्वित मध्यचक्र में वशिनी प्रभृति सिद्धिप्रदा रहस्य योगिनी गण की पूजा होगी ।

यथा–पश्चिम से क्रमशः पूजा करे । यथा—

(१) ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं एं ओं औं अं अः वरलृं वशिनिवाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

(२) ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं क ल ह्रीं कामेश्वरी वाग्देवता श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

(३) ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं नवलीं मोदिनी वाग्देवता श्री पादुका पूजयामि नमः ।

(४) ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं ब्ल्यूं विमलावागदेवता श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

(५) ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं जमरीं अरुणा वाग्देवता श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

(६) ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं हसल वरयूं जयिनि वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

(७) ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं झमरयूं सर्वेश्वरी वाग्देवता श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(८) ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं लं क्षं क्षमरीं कौलिनी वाग्देवता श्री पादुकां पूजयामि नमः ।

तदनन्तर वाशिनी के समक्ष चक्रनायिका सिद्धाम्बा की पूजा करे । यथा– ऐं ह्रीं श्रीं चक्रनायिका सिद्धाम्बा श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

तदनन्तर खेंचरी मुद्रा दिखलाकर सिद्धाम्बा को निवेदन करके सर्व सिद्धिदा काम्यदायक त्रिकोण चक्र में परापर रहस्य नामक योगिनीगण की पूजा करे । हे महेश्वरी ! पञ्चबाण उच्चारण करके कामकामेश्वरीमय जम्भन नामक बाण की पूजा करके प्रथमतः धम् नामक कामबाण तथा द्वितीय थम् नामक काम बाण की पूजा करे । यथा त्रिकोण चक्र के मध्य में–ऐं ह्रीं श्रीं परापर रहस्याख्ययोगिनी श्री पादुकां पूजयामि नमः । तदनन्तर त्रिकोण के अधःकोण में 'ऐं ह्रीं श्रीं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः कामेश्वर कामेश्वरी जम्भणबाणेभ्यो नमः । ऐं ह्रीं श्रीं धं थं सर्वसंक्षोभणाय कामेश्वर कामेश्वरी चापाय नमः । इस प्रकार से पूजा करे ॥१७९-१९४॥

कामेश्वरी के मोहन नामक चापदेवता की पूजा करे । हे प्रिये! कामेश्वरी एवं कामेश्वर के त्रैलोक्याकर्षण वशंकर नामक पाशद्वय की पूजा द्वितीय होगी- अर्थात् आं एवं भुवनेशानी युक्त (ह्रीं युक्त) होकर पूजा होगी । यथा- ऐं ह्रीं श्रीं ह्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः वशीकरणाय कामेश्वर-कामेश्वरी-पाशयुग्माय नमः। हे प्रिये! कामेश्वर कामेश्वरी के स्तम्भन नामक अंकुश को 'क्रों' बीज युक्त करके पूजा करें । यथा- ऐं ह्रीं श्रीं ह्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः क्रों सर्वस्तम्भनाय कामेश्वर कामेश्वर्यङ्कुशाय नमः।

छ अंग तथा आवरण के बाहर पश्चिमदिक् से क्रमशः चारो ओर पूजा करें । तदनन्तर त्रिकोण के अधःकोण में आद्यकूट अर्थात् वाग्भव कूट द्वारा कामेश्वरी रुद्रशक्ति की पूजा करे । यथा- ऐं ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं रुद्रशक्ति कामेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः । इस मन्त्र से पूजा करें ।

द्वितीय कूट अर्थात् कामराज कूट से दक्षिणी कोण में अर्थात् दक्षिण दिक् पर ऊपर कोण में वैष्णवी पूजन करें । यथा—ऐं ह्रीं श्रीं स ह क ह ल ह्रीं वैष्णवी शक्ति वज्रेश्वरी देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः।

तब तृतीय बीज अर्थात् शक्तिकूट से उत्तर कोण में विश्वमातृका भगमाला ब्रह्मशक्ति की पूजा करे । यथा- ऐं ह्रीं श्रीं स कल ह्रीं ब्रह्मात्मशक्तिभगमालिनी देवी श्री पादुका पूजयामि नमः । इससे पूजा करे । तदनन्तर कामेश्वरी के सामने चक्रेश्वरी अम्बिका की पूजा होगा। ऐं ह्रीं श्रीं चक्रेश्वर्याम्बिकादेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः । तदनन्तर बीजमुद्रा की पूजा करके चक्रपूजा करें । हे प्रिये ! सर्वानन्दमय विन्दुयुक्त महाचक्र ब्रह्मस्वरूप, चित्तस्वरूप, संविद्वेद्य श्रेष्ठचक्र में परापर रहस्य नाम त्रिपुरायोगिनी की पूजा करें । इनकी पूजा का क्रम

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह है- 'ऐ ह्रीं श्रीं बीजमुद्रा श्री पादुकां पूजयामि नमः । तदनन्तर- ऐं ह्रीं श्रीं चक्र श्री पादुकां पूजयामि नमः । ऐं ह्री. श्रीं परापररहस्यरूपिणी त्रिपुरायोगिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः ॥१७९-१९४॥

कूटत्रयं समुच्चार्य सर्वविद्यास्वरूपकम् ।
समस्तदेवतारूपं सर्ववस्तुमयं यजेत् ।।१९५।।
चक्रेशीमपि तामेव महात्रिपुरसुन्दरीम् ।
श्रीविद्यां षोडशार्णां च भुक्तिमुक्तिफलप्रदाम् ।।१९६।।
समस्तचक्रचक्रेशीं सर्वागमनमस्कृताम् ।
सर्वाम्नायेश्वरीं विद्यालंकृतां ब्रह्मरूपिणीम् ।।१९७।।
उपचारैः समभ्यर्च्य गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ।
तर्पणानि पुनर्दद्यात्त्रिवारं मूलविद्यया ।।१९८।।
योनिमुद्रां प्रदर्श्याथ मुद्राः संदर्शयेत्क्रमात् ।
वनस्पतिरसोत्पन्नैः पवित्रै रम्यगन्धिभिः ।।१९९।।
दशाङ्गाद्यैर्धूपवर्यैर्धूपयेत्परमेश्वरीम् ।
(कस्तूरीकुङ्कुमं देवि गुग्गुलं शालसंभवम् ।।२००।।

कूटत्रय (वाग्मय–कामराज शक्ति कूट) स्वरूप सर्व विद्यास्वरूप का उच्चारण करके सर्वदेवता स्वरूप सर्ववस्तुमय की पूजा करे । इस कूटत्रय द्वारा चक्र की ईश्वरी–षोडशाक्षरीं श्रीविद्या रूपिणी भोग–मुक्ति फलप्रदा महात्रिपुरसुन्दरी की पूजा करे । यथा–ऐं ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं सह कह ल ह्रीं सकल ह्रीं चक्रेश्वरी महात्रिपुरसुन्दरी श्री विद्यादेवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

समस्त चक्र की चक्रेश्वरी, सभी तन्त्रों में नमस्कृत, सकल शास्त्रों की ईश्वरी विद्यालङ्कृता ब्रह्मस्वरूपा श्रीविद्या महात्रिपुरसुन्दरी की गन्ध पुष्प, अक्षत, प्रभृति उपचारों से अर्चना करके पुनः मूलमन्त्र से तीन बार तर्पण करना होगा । यथा–ऐं क्लीं सौः चक्रेश्वरी महात्रिपुरसुन्दरी देवता तर्पयामि स्वाहा' ऐसी प्रक्रिया से ३ तर्पण प्रदान करे । वनस्पति के रस से उत्पन्न सुन्दरगन्ध द्वारा धूप द्वारा परमेश्वरी को धूपगन्ध प्रदान करे । धूप के द्रव्य यह हैं–कस्तूरी, कुंकुम, शाल वृक्ष का गुग्गुलु, चन्दन, अगुरु, कपूर, शुद्धघृत, मधु । इन सब को मिलाकर गुरु अथवा आचार्य सिद्धि हेतु नित्य देवी को धूपित करे । हे देवी ! धूपमन्त्र से धूपित करने से त्रैलोक्य दुर्लभ फल मिलता है । वेदिका चक्र के दोनों दिक् में घृत की दीपमाला जलाये ॥१९५-२००॥

चन्दनागरुकर्पूरसिताज्यमधुसंयुतम् ।
धूपयेद्देशिको नित्यं सर्वसौभाग्यसिद्धये ।।२०१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

धूपमन्त्रेण देवेशि त्रैलोक्यस्यापि दुर्लभम् ।
अभितो वेदिकाचक्रं दीपमाला घृतप्लुताः ।।२०२।।
कर्पूररचिताश्चापि तैलपूर्णास्तु वा यजेत् ।
धूपदीपौ निवेद्याथ तर्पयेत्पूर्ववत्प्रिये ।।२०३।।

कर्पूर रचित प्रदीप अथवा तैल पूर्ण प्रदीप से पूजा करे । हे प्रिये । धूप-दीप निवेदित कर के पूर्ववत् तर्पण करे । मन्त्र–ऐं क्लीं सौः चक्रेश्वरी महात्रिपुरसन्दरी देवी तर्पयामि स्वाहा ॥२०१-२०३॥

आरार्तिकविधिं कुर्यात्पूर्ववद्देववन्दिते ।
अन्यदारार्तिकं वक्ष्ये सर्वकाममपूरकम् ।।२०४।।
स्वर्णादिनिर्मिते पात्रे मध्ये चक्रं लिखेद्बुधः ।
तण्डुलोल्लासितं कृत्वा नवधा कारयेत्ततः ।।२०५।।
नव गोलांश्चन्द्ररूपान्विरच्य तदनन्तरम् ।
शर्करागर्भभरितान्मण्डकान्युग्मरूपकान् ।।२०६।।
विरच्य घटिकाः कार्या योजयित्वा तु सप्तकम् ।
सप्तसप्तप्रकारेण घटिका नव योजयेत् ।।२०७।।
अष्टकोणेषु संस्थाप्य गोलकांश्चोपरि क्षिपेत् ।
चणमुद्रा विकीर्याथ दीपकान्घृतपाचितान् ।।२०८।।
मुष्टिकाकृतिमुष्टिश्च स्थापयेत्तत्र तत्र तु ।
दीपान्प्रज्वाल्य पश्चात्तु पञ्चरत्नैः प्रपूजयेत् ।।२०९।।
पञ्चसिंहासनगता विद्यास्तत्र प्रपूजयेत् ।
आमस्तकं समुद्धृत्य नववारं पुनः पुनः ।।२१०।।
नवावरणवद्देवि परिभ्राम्य पुनः पुनः ।
उत्तीर्य स्थापयेत्पश्चाद्दीपमालामयं महः ।।२११।।
नेत्रयोः सुस्थिरं ध्यायेदारार्तिकविधिः प्रिये ।
नैवेद्यं षड्रसोपेतं सितापूपादिसंयुतम् ।।२१२।।
शर्करापूरभरितमण्डकैः पायसान्वितम् ।
मुक्ताकर्पूरधवलं शुद्धौदनसुपूरितम् ।।२१३।।
घृतकर्पूरशोभाढ्यं सम्पूर्णघृतमण्डितम् ।
नानाव्यञ्जनशोभाढ्यं वटकैः कुङ्कुमप्रभैः ।।२१४।।
माषान्नभरितं नानारसपानविराजितम् ।
घृतक्षीरेण भरितं चतुर्मुद्राविराजितम् ।।२१५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संकल्प्य परमेशान्यै नित्यहोमविधिं चरेत् ।
मूलेन प्राणसहिता आहुतीः पञ्च होमयेत् ।।२१६।।
षडाहुतीः षडङ्गानां नित्यहोमः प्रकीर्तितः ।
उपविश्याऽऽसने रम्ये वामभागे ततः परम् ।।२१७।।
वहत्करोर्ध्वपुटतः साधको भूमिजानुकः ।
मण्डलं चतुरस्त्रं तु तन्मध्ये विलिखेत्प्रिये ।।२१८।।

हे देववन्दिते ! पूर्ववत आरती करे। एक और प्रकार की सर्वकाम पूरणकारी आरत्रिक विधि कहता हूँ।

विद्वान व्यक्ति स्वर्ण आदि से निर्मित पात्र के मध्य में श्रीविद्या चक्र अंकित करे। तदनन्तर उस पात्र के ऊपर तण्डुल रख कर उसे ९ भाग में विभक्त करके शोभित करे। तदनन्तर ९ गोलाकार कर्पूर बनाकर उसमें शर्करा मिलाकर दो-दो पिष्टक (गोले) बनाकर उसकी बटिका बनाये। चक्र के आठों कोण पर तथा ऊपर, इन ९ स्थानों पर सात-सात वटिका रखे। तदनन्तर इन ९ स्थानों पर भूजा चना निःक्षेप करके मुठ्ठी के आकार के घृतपूर्ण दीपक उन-उन ९ स्थानों पर स्थापित करे। इन दीपों को जलाकर पंचरत्न द्वारा पूजा करनी चाहिये। पञ्चरत्न तथा प्रज्वलित दीप के द्वारा उस चक्रमध्य में पञ्चासिंहासनस्थित विद्यागण की पूजा करनी चाहिये। यथा—

पूर्व सिंहासनस्था त्रिपुर भैरवी–ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुराभैरवी श्री पादुकां पूजयामि नमः।
दक्षिण सिंहासन पर–ऐं ह्रीं श्रीं रुद्र भैरवी श्री पादुकां पूजयामि नमः।
पश्चिमें–ऐं ह्रीं श्रीं षट्कूटा परमेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
उत्तरे–ऐं ह्रीं श्रीं सम्पत्प्रदाभैरवी श्री पादुकां पूजयामि नमः।
मध्यसिंहासने–ऐं ह्रीं श्रीं महात्रिपुरभैरवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

तदनन्तर मस्तक पर्यन्त इस आरती पात्र को उठाकर बार-बार ९ बार उसे भ्रामित करके उसे भूमि पर स्थापित करे।

हे प्रिये ! दीपमाला के तेज का सुस्थिर भाव से चक्षुद्वय में ध्यान करे। यही विशेष आरत्रिक है। तदनन्तर षड्रस युक्त, शर्करा से पूर्ण, शर्करापूरपरिपूर्ण पिष्टक तथा पायसयुक्त, मुक्ता तथा कपूर के समान श्वेतवर्ण शुद्ध अन्न समन्वित, नाना प्रकार के भोजन से शोभित, कुंकुम वर्ण के समान उर्द के बड़ा से युक्त, नाना प्रकार के रसीले पेय से युक्त, घृत-दुग्ध से परिपूर्ण घृतान्न आदि से समन्वित नैवेद्य परमेश्वरी श्री विद्या त्रिपुरेश्वरी को निवेदित करने नित्य होम करे।

हे प्रिये ! मूलमन्त्र से प्राणसहित पंच आहूति प्रदान करे। अर्थात् अग्नि स्थापन करके मूलमन्त्र का उच्चारण करके पांच आहुति प्रदान करे। यथा–ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ समानायस्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा' तथा ॐ व्यानाय स्वाहा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इन ५ से ५ आहुति प्रदान करे। षड़ङ्ग की २ आहुति प्रदान करे। यथा ऐं ड्रीं श्री ॐ हृदयाय स्वाहा, शिर से स्वाहा इत्यादि।

छ अंगों की ६ आहुति प्रदान करे। यथा–ऐं ह्रीं श्रीं ओं हृदयाय स्वाहा।

षडङ्गा हुति ऐं ह्रीं श्रीं ॐ हृदयाय स्वाहा।
ऐं ह्रीं श्रीं ॐ शिरसे स्वाहा इत्यादि
ऐं ह्रीं श्रीं ॐ शिखायै स्वाहा।
ऐं ह्रीं श्रीं ॐ कवचाय स्वाहा।
ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नेत्रत्रयाय स्वाहा। इत्यादि।

इस प्रकार से षड़ग पालन करे। तदनन्तर चतुष्कोण मण्डल में जो त्रिकोण है यही नित्य होम है। रम्य आसन पर बैठकर बायें हाथ को उर्ध्व में प्रसारित करके भूमि पर जानु स्थापित करना तथा चतुरस्र अंकित करना यही नित्य होम हैं। रम्य आसन पर बैठकर वामभाग में अर्थात् बायें हाथ को उर्ध्व में प्रसारित करके, भूमि पर जानु रखकर साधक चतुष्कोण में मण्डल अंकित करे ॥२०४-२१८॥

त्रिकोणमध्ये व्योमाख्यं मण्डलं पूजयेत्ततः।
व्यापकान्ते मण्डलाय हृदन्तो वाग्भवं परम् ॥२१९॥
मुखे कृत्वा पूजनीयं मण्डलं मनुना प्रिये।
एतन्मण्डलमभ्यर्च्य मण्डलानां चतुष्टयम् ॥२२०॥
ईशानवह्निनैर्ऋत्यवायुकोणेषु पूर्ववत्।
मण्डलानि निधायाथ पूर्ववत्पूजयेत्प्रिये ॥२२१॥
पूर्ववद्बलिदानं च दद्यात्सर्वसमृद्धये।
बटुकाय महेशानि योगिनीभ्यश्च वल्लभे ॥२२२॥
क्षेत्रपालगणेशाभ्यां पूर्ववद्बलिमुत्सृजेत्।
वामभागे कृतस्याथ मण्डलस्योपरि क्षिपेत् ॥२२३॥
आधारं पूजयेत्तत्र पात्रं चान्नोदकान्वितम्।
सकारणं मन्त्रयित्वा सर्वभूतबलिं हरेत् ॥२२४॥
षोडशार्णेन मनुना त्रिवारं वीरवन्दिते।
तारं च भुवनेशानि सर्वविघ्नपदं ततः ॥२२५॥
कृद्भ्यश्च सर्वभूतेभ्यो हुंकारं वह्निवल्लभाम्।
समुच्चरन्बलिं दद्यान्मुद्रया तत्त्वसंज्ञया ॥२२६॥
बलिपञ्चकमाख्यातं सर्वरक्षाकरं सताम्।
एकत्र वा पञ्च बलीन्दद्याद्व्यापकमण्डले ॥२२७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वामभागे स्थितो देवि सर्वविघ्नहरो भवेत् ।
चक्रमभ्यर्च्य सकलं विधिवत्परमेश्वरि ।
श्रीगुरोः कृपया देवि सर्वज्ञः सर्वतत्त्ववित् ।।२२८।।

तदनन्तर उस चतुष्कोण मण्डल में त्रिकोण तथा व्योमाख्य गोला कृति (वृत्त) मण्डल बनाकर उसमें पूजा करे । 'ऐं ह्रीं श्रीं व्यापक मण्डलाय नमः' से उसकी पूजा होगी । हे प्रिये ! तदनन्तर ईशान, अग्नि, नैऋत, वायु कोण में अर्थात् त्रिकोण, वृत्त तथा चतुष्कोण का अंकन करके पूर्ववत् अर्थात् ईशान कोण के मण्डल में 'वां वटुकाय नमः' से, अग्निकोण में 'यां योगिनीभ्यो नमः' से, नैर्ऋत कोण मण्डल में 'गां गणपतये नमः' से तथा वायुकोण मण्डल में 'क्षां क्षेत्रपालाय नमः' से पूजा करे । तब समस्त समृद्धि हेतु पञ्चम पटलोक्त विधान से बलि प्रदान करे ।

यथा बटुकबलि में कारण (मद्य) समन्वित अन्नयुक्त बलिपात्र लेकर तत्वमुद्रा में 'एह्येहि देवीपुत्र बटुकनाथ कपिल जटाभार भासुर त्रिनेत्र ज्वालामुख सर्वविघ्नान् नाशय-नाशय सर्वोपचार सहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' से बलि प्रदान करे । योगिनी बलि हेतु पंचम पटलोक्त विधान से बलि प्रदान करे । मन्त्र है 'उर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा पाताले वा तले वा पवन सलिलोर्यत्र कुत्र स्थिता वा क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपा दिकेन प्रीता देव्यः सदा नः शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः । यां योगिनीभ्यः स्वाहा सर्वयोगिनीभ्यो हुं फट् स्वाहा ।

क्षेत्रपाल बलिमन्त्र–क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रस्थान क्षेत्रपाल धूपदीपादिसहितं बलिंगृह्ण गृह्ण स्वाहा । गणपति बलिमन्त्र–गां गीं गूं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय सर्वोपचार सहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा । तत्पश्चात् वामभाग में पूर्ववत् मण्डल प्रस्तुत करके उसके उपर आधार (तिपाई) रखकर उस पर कारण (मद्य) के साथ अन्नादियुक्त पात्र रखे । षोडशाक्षरी विद्या से उसे तीनबार मंत्रित करे । (षोडशाक्षरी–श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह स क ल ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः) । तत्पश्चात् 'ऊं ह्रीं श्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हुं स्वाहा' पढ़कर तत्वमुद्रा प्रदर्शन करके सर्वभूतों को बलि प्रदान करना चाहिये ।

हे देवी ! इस प्रकार पंचबलि कही गयी । यह सज्जनों के लिये रक्षाकर है । अथवा एक ही व्यापक मण्डल में एक साथ पंचबलि दे सकते हैं । हे परमेश्वरी ! वामभाग में स्थित होकर अपने दक्षिण (दाहिने) पंच बलि देने से सब विघ्न दूर होते हैं । हे देवी ! समस्त चक्र की विधिवत् अर्चना करने से साधक श्रीगुरु की कृपा से सर्वज्ञ तथा समस्त तत्वों का ज्ञाता हो जाता है ।।२१९-२२८।।

षोडश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सप्तदशः पटलः

(श्रीविद्या प्रयोग विधि, विविध मालागुण, चक्रमध्य जपफल, प्रतिमाङ्कन, वशीकरण, स्तम्भन, उच्चाटन, मारणादि, विद्वेषण कारक, श्रीविद्यापूजा फल)

ईश्वर उवाच–

देवदेव महादेव अश्रुतार्थं महेश्वर ।
षोडशाक्षरविद्यायाः श्रीचक्रविधिमुत्तमम् ।।१।।
जपादिकं च यत्सर्वमेकैकाक्षरसाधनम् ।
कथयस्व महेशान यद्यहं तव वल्लभा ।।२।।

श्रीदेवी कहती हैं–हे देवदेव ! महादेव ! महेश्वर ! महेश ! षोडशाक्षर विद्या की उत्तम श्री चक्र विधि तथा एक-एक अक्षर के साधन जप प्रभृति को नहीं सुना । यदि मैं आप की प्रिया हूँ, तब यह सब (अश्रुत) तत्व कहिये ॥१॥

ईश्वर उवाच–

शृणु सर्वांगसुभगे श्रीविद्याविधिमुत्तमम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण कर्ता हर्ता स्वयं विभुः ।।३।।
अनेन विधिना यत्र श्रीचक्रं क्रमसंयुतम् ।
पूज्यते तत्र सकलं वशी कुर्यान्न संशयः ।।४।।
नगरं वशमायाति देशमण्डलमद्रिजे ।
योषितः सकला वश्या ज्वलत्कामाग्निपीडिताः ।।५।।
विद्याविमूढहृदयाः साधकन्यस्तमानसाः ।
तद्दर्शनेन देवेशि जायन्ते सर्वयोषितः ।।६।।

ईश्वर कहते है–हे सर्वाङ्ग सौभाग्यवती ! उत्तम श्रीविद्या सुनो । इसके ज्ञानमात्र से स्वयं विभु सृष्टिकर्त्ता तथा संहार कर्त्ता हो जाते हैं । श्रीचक्र की जो विधि कही गयी है उसके अनुसार क्रमयुक्त रूपेण जहां श्रीचक्र की पूजा की जाती है, वह पूजक निःसंदिग्ध रूप से सब को वशीभूत कर लेता है । हे पर्वतनन्दिनी ! हे देवेश्वरी ! श्री चक्र पूजन से नगर वशीभूत होता है । देश, प्रान्त आदि विभाग (अर्थात् ये सभी) वश में हो जाते हैं । उद्दीप्त कामाग्नि द्वारा पीड़ित होकर स्त्रीगण वश में हो जाते हैं । इसके साधक को देखते ही सभी स्त्रीगण इसके प्रभाव से मुग्ध होकर श्रीचक्र साधक को अपना चित्त अर्पित कर देती हैं ॥२-६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अक्षमालां समाश्रित्य मातृकावर्णरूपिणीम् ।
अथ मुक्ताफलमयी वाङ्मोक्षफलदायिनी ।।७।।

जपमाला मातृका वर्ण रूपा है। अर्थात् मातृका वर्ण ५० है। इसलिये ५० दाना युक्त माला मातृकावर्णरूपा है। जो साधक ऐसी मातृका माला का आश्रय लेता है, स्त्रीगण मन्त्र मुग्ध होकर उस साधक में मन लगा देती हैं। मुक्ता के दानों की माला वाक् पटुत्व प्रदान करती है। तथा मुक्तिफल देती है ।।७।।

सर्वसिद्धप्रदा नित्यं सर्वराजवशंकरी ।
यथा मुक्ताफलमयी तथा स्फटिकनिर्मिता ।।८।।

मुक्तामाला जिस प्रकार से सर्वसिद्धिप्रदा है तथा सभी राजागण को वश में करने वाली है, उसी प्रकार स्फटिक माला भी सर्वसिद्धिदा तथा सर्वजनवश्यकारिणी है ।।८।।

रुद्राक्षमालिका मोक्षे सर्वसंपत्समृद्धिदा ।
प्रवालमाला वश्ये तु सर्वकार्यार्थसाधिका ।।९।।
माणिक्यमाला फलदा साम्राज्यफलदायिनी ।
पुत्रजीवकमाला तु विद्यालक्ष्मीप्रदा सताम् ।।१०।।
पद्माक्षमालया लक्ष्मीर्जायते महती परा ।
रक्तचन्दनमाला तु सर्वभोगप्रदायिनी ।।११।।

रुद्राक्षमाला मोक्षदा तथा सर्वसम्पत्प्रदात्री है। वश्यकार्य में प्रवाल माला समर्था है। वह सर्वकार्य साधिका है।

माणिक्य माला फलदा तथा साम्राज्यफल प्रदा है। जीवित्पुत्रिका (जीउतिया) की माला सज्जनों को विद्या तथा लक्ष्मी प्रदान करती है।

पद्मबीज की माला से अतिशय उत्तम लक्ष्मी युक्त सम्पदा प्राप्त होती है। रक्त चन्दन लकड़ी की माला सर्वभोग प्रदा है ।।९-११।।

अक्षमालां प्रपूज्याथ चन्दनेन विलेपिताम् ।
समाश्रित्य जपेद्विद्यां लक्षमात्रं यदा बुधः ।।१२।।
योषितो भ्रमयन्त्येव मनस्तस्य सुनिश्चलम् ।
तदा द्वितीयलक्षं तु प्रजपेत्साधकोत्तमः ।।१३।।
पातालतलनागेन्द्रकन्यकाः क्षोभयन्ति तम् ।
तासां कटाक्षजालैस्तु न मोहं याति साधकः ।।१४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जब सुधी साधक श्वेत चन्दन से लिप्त जपमाला की पूजा करके उस माला पर ३ लाख जप करते हैं तब स्त्रीगण का मन वह साधक भ्रामित कर देता है। लेकिन साधक का मन निश्चल ही रहता है। २ लाख जप करने वाला साधक पातालतलस्थ नागकन्यागण को भी क्षुब्ध कर देता है तथापि उनके कटाक्षों से साधक का मन मोहग्रस्त नहीं होता ॥१२-१४॥

तदा लक्षत्रयं कुर्यात्साधकः स्थिरमानसः।
तृतीयलक्षे संप्राप्ते द्रावयन्ति सुराङ्गनाः ॥१५॥
अभिमानेन सौन्दर्यात्सौभाग्यमदकारिणः।
साधकं द्रावयन्त्येव ततश्चासौ मनस्स्थिरः ॥१६॥
तदा लक्षत्रयं साधु सर्वपापनिकृन्तनम्।
एवं लक्षत्रयजपेद् व्रतस्थः स्वस्थमानसः ॥१७॥
संक्षोभयति भूर्लोकस्वर्लोकततलवासिनः।
पुरुषा योषितो वश्याश्चराचरमपि प्रिये ॥१८॥

जब साधक स्थिर मन होकर तीन लाख जप संकल्प कर लेता है, तब देवाङ्गना गण उसे विचलित करने का प्रयत्न करता हैं। वे अपने सौन्दर्य तथा श्रेष्ठत्व के अभिमान के कारण साधक को विचलित करने का अत्यन्त प्रयत्न कर के भी साधक के चित्त को अस्थिर नहीं कर पातीं ! इसलिये साधक जपरूप व्रत में लगा रहकर तीनलाख जप पूर्ण करे। वह यह जप संख्या पूर्ण करके पृथिवी, स्वर्ग तथा पाताल वासीगण को भी संक्षुब्ध कर सकता है। हे प्रिय ! उस साधक के वश में समस्त स्त्री-पुरुष तो क्या सचराचर वशीभूत हो जाता है ॥१५-१८॥

गोरोचनादिभिर्द्रव्यैश्चक्रराजं समालिखेत्।
अतीव सुन्दरं रम्यं तन्मध्ये प्रतिमां वराम् ॥१९॥
ज्वलन्तीं नामसहितां महाबीजविदर्भिताम्।
चिन्तयेत्तु ततो देवि योजनानां सहस्रशः ॥२०॥
अदृष्टपूर्वा देवेशि श्रुतमात्राऽपि दुर्लभा।
राजकन्याऽथ वा चार्वी भयलज्जाविवर्जिता ॥२१॥
आयाति साधकं सम्यग्मन्त्रमूढा सती प्रिये।
चक्रमध्यगतो भूत्वा साधकश्चिन्तयेद्यदा ॥२२॥

गोरोचन प्रभृति से अति सुन्दर चक्रराज (श्रीचक्र) अंकित करके उसमें श्रेष्ठ,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दीप्यमान, महाबीजयुक्त श्रीविद्या के नाम सहित प्रतिमाङ्कन करे। हे देवी ! हे देवेशी ! हे प्रिये ! जब साधक चक्रमध्य स्थित (बोध स्थापित करके) चिन्तन करेगा, तब हजारों योजन दूर स्थित (जिसे कभी देखा नहीं हो) अदृष्ट पूर्व, अश्रुतपूर्व राजकन्या अथवा सुन्दरी कन्या भय तथा लज्जा त्याग कर सम्यक् रूपेण मन्त्रमुग्ध होकर साधक के पास दौड़ी आती है ॥१९-२२॥

उद्यत्सूर्यसहस्त्राभमात्मानमरुणं तथा।
साध्यमप्यरुणीभूतं कृत्वा मन्त्रं जपेद्बुधः ।।२३।।
अनेन क्रमयोगेण स्वयं कन्दर्परूपवान्।
सर्वसौन्दर्यसुभगः कामिनीवल्लभो भवेत् ।।२४।।
सर्वलोकेषु सुभगः सर्वलोकवशंकरः।
सर्वरक्तोपचारैस्तु मुद्रासनद्धविग्रहः ।।२५।।
चक्रं प्रपूरयेद्यस्तु यस्य नाम विदर्भितम्।
स भवेद्दासवद्देवि धनाढ्ये वाऽपि भूपतिः ।।२६।।
चक्रमध्यगतं कुर्यान्नाम यस्यास्तु योषितः।
अदृष्टाया महेशानि योनिमुद्राधरो बुधः ।।२७।।
हठादानयते शीघ्रं यक्षिणीं राजकन्यकाम्।
नागकन्यांसाप्सरसं खेचरीं वा सुराङ्गनाम् ।।२८।।
विद्याधरीं दिव्यरूपामृषिकन्यां रिपुस्त्रियम्।
मदनोद्भवसंतापां स्फुरज्जघनमण्डलाम् ।।२९।।
कामबाणप्रभिन्नान्तःकरणां लोलचक्षुषाम्।
महाकामकलाध्यानयोगात्तु सुरवन्दिते ।।३०।।

यदि स्वयं की भावना देदीप्यमान सहस्र सूर्य के समान अरुणवर्ण करे तथा जिसे पाने की इच्छा है उसे स्त्री आदि का भी अरुण वर्ण वस्त्रादि से युक्त चिन्तन करके जप करता है, तब इस साधन क्रम के कारण वह कामदेव के समान रूपवान्, सकल सौन्दर्य से मनोहर तथा कामिनीगण का प्रिय हो जाता है। वह साधक सभी लोकों में सौभाग्यवान् तथा सर्वलोक वशकारी हो जाता है।

जो रक्त वर्ण रंग तथा वस्त्रों से तथा समस्त रक्तवर्ण उपचारों से तथा अपने शरीर को वश में रखकर श्री चक्रांकन करते हैं (रक्तद्रव्य से अंकन), वे त्रिलोक में सौभाग्यवान् तथा सभी लोकों को वश में करने वाले हो जाते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे देवी ! चक्रार्चन में जिसका भी नाम चक्र मध्य में अंकित किया जाता है, वह नामांकित व्यक्ति रमणीगण को वशीभूत कर लेता है। हे महेश्वरी ! हे वीरवन्दिते ! महाकामकला का ध्यान करके विद्वान् साधक योनिमुद्रा द्वारा जिस बिना देखी भी स्त्री का नाम चक्रमध्य में अंकित करेगा, भले ही वह यक्षिणी, राजकन्या, नागकन्या, अप्सरा, आकाश चारिणी, देवकन्या, विद्याधरी, दिव्य रूपा ऋषिकन्या अथवा शत्रु की स्त्री आदि क्यों न हो, वह काम से सन्तप्त काम द्वारा विदीर्ण अन्तःकरण होकर चंचल नेत्रों से युक्त (मन्त्र बल से) शीघ्र आ जाती है ॥२३-३०॥

क्षोभयेत्स्वर्गभूर्लोकपातालतलयोषितः ।
रोचनाभागमेकं तु भागमेकं तु कुङ्कुमम् ।।३१।।
अथ भागद्वयं देवि चन्दनं मर्दयेत्समम् ।
एकत्र तिलकं कुर्यात् त्रैलोक्यवशकारिणम् ।।३२।।
अष्टोत्तरशतावृत्त्या मन्त्रयित्वा वशं नयेत् ।
राजानं नगरं ग्रामं तेन यद्यत्प्रदृश्यते ।।३३।।
मन्त्रिणा परमेशानि तत्सर्वं तस्य वश्यगम् ।
ताम्बूलं धूपमुदकं पत्रं पुष्पं फलं दधि ।।३४।।
दुग्धं घृतं चूर्णमन्नं वस्त्रं कर्पूरमेव च ।
कस्तूरी घुसृणं चैलां लवङ्गं जातिपत्रकम् ।।३५।।
फलं वा वस्तु यद्यत्तु सकलं परमेश्वरि ।
शतमष्टोत्तरं जप्त्वा यस्मै कस्मै प्रयच्छति ।।३६।।
स वश्यो जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ।
स्त्रियस्तु सकला वश्या दासीभूता भवन्ति हि ।।३७।।
जगत्कर्षणमेतत्तु कथितं नान्यथा भवेत् ।
रहस्यस्थानके मन्त्री लिखेद्रोचनया भुवि ।।३८।।

महाकाम कला के ध्यानयोग प्रभाव से साधक स्वर्ग-पृथिवी-पातल में भी स्त्रीगण को चंचल कर सकता है। हे देवी ! एक भाग गोरोचन, एकभाग कुंकुम, दो भाग चन्दन एक साथ मर्दित करके तिलक करे। इससे त्रिलोकी वश में हो जाता है।

हे परमेश्वरी ! १०८ बार षोडशाक्षरी विद्या से तिलक (यहाँ जो कहा गया) द्रव्य को अभिमन्त्रित करके उसे लगाये। उस साधक को राजा-नगर-ग्राम इत्यादि में जो जो देखेगा, वह सब उसके वश में हो जायेंगे। हे परमेश्वरी ! साधक १०८ जप करके ताम्बूल, धूप,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जल, पत्र, पुष्प, फल, दधि, दुग्ध, घृत, अन्न, वस्त्र, कर्पूर, कस्तूरी, इलायची, लवंग, जावित्री, फल तथा अन्य कोई वस्तु अभिमन्त्रित करके-जिसे भी प्रदान करेगा हे देवी ! वह वशीभूत हो जायेगा। इस विषय में सन्देह न करे। स्त्रीगण उसके समक्ष दासीरूप हो जाती हैं। यह जगदाकर्षण है। यह अन्यथा नहीं है। मन्त्र साधक रहस्य पूजा स्थान में (जहां रहस्यावृत पंचमकार पूजा हों) मिट्टी में गोरोचन से अंकित करे। (क्या अंकित करना है यह आगे कहा जा रहा है) ॥३१-३८॥

चारुशृङ्गारवेषाढ्यां सर्वाभरणभूषिताम्।
प्रतिमां सुन्दरां गीतां विलिख्य सुमनोहराम्॥३९॥
तद्भालकण्ठहृन्नाभिजन्ममण्डलयोजिताम्।
जन्मनाममहाविद्यामङ्कुशान्तर्विदर्भिताम्॥४०॥
सर्वसन्धिषु देहस्य मदनाक्षरमालिखेत्।
लीनं दाडिमपुष्पाभं चिन्तयेद्देहसन्धिषु॥४१॥
तदाशाभिमुखो भूत्वा स्वयं देवीस्वरूपकः।
मुद्रां तु क्षोभिणीं बद्ध्वा मन्त्रमष्टशतं जपेत्॥४२॥

मनोहर श्रृंगार वेषयुक्त, सर्वाभरण अलंकृत ख्यात सुमनोहर सुन्दर प्रतिमा अंकित करके प्रतिमा के कपाल, कण्ठ, नाभि तथा जन्म मण्डल (इससे योनि का तात्पर्य प्रतीत होता है) पर (नारी अथवा साध्य का) जन्म नामाक्षर इस महाविद्या के अक्षरों के अन्तर्गत अंकित करके अंकुश (क्रों) बीज से विदर्भित करे। प्रतिमा की सभी देह सन्धियों में मदनाक्षर (कं) को अंकित करके यह भावना करे कि प्रतिमा की समस्त देह संधि में अनार के पुष्प के समान दीप्ति लीन होती जा रही है। साधक देवी रूप होकर अर्थात् मन्त्र का स्वशरीर में न्यास करके देवीवत् होकर इस प्रतिमा के समक्ष क्षोभिणी मुद्रा प्रदर्शित करके १०८ जप करे ॥३९-४२॥

नियोज्य मदनागारे चन्द्रसूर्यकलात्मके।
ततो विकलसर्वाङ्गी कामबाणैः प्रपीडिताम्॥४३॥
अनन्यमानसां प्रेमभ्रममाणानां मदालसाम्।
एवमाकर्षयेन्नारीं योजनानां शतादपि॥४४॥

तदनन्तर चन्द्र तथा सूर्य के कलास्वरूप मदनागर पर नियुक्त करके अर्थात् उस मूर्ति के योनित्रिकोण पर चिन्तन करते हुये कुंभकावस्था में मन्त्र चिन्तन करे। (यहाँ चन्द्र सूर्य का तात्पर्य है प्राण का कुंभक) इससे उस स्त्री का मन अन्य के प्रति भ्रामित नहीं होता

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वह मदमत्त होकर अवश जैसी होकर वशीभूत हो जाती है। उसके सभी अंग विकल होकर कामबाण से पीडित होते हैं। साधक १०० योजन दूर रहने पर भी स्त्री का आकर्षण कर लेता है।

विवृति–यहां अर्थ स्पष्ट नहीं है। इस विषय में सौन्दर्य लहरी का मत प्रयोज्य हैं। तदनुसार बिन्दु में मुख का चिन्तन करे। कुचयुग (स्तन युगल) में दो बिन्दु का चिन्तन करे। यह तीनों सूर्य चन्द्र तथा अग्नि बिन्दु हैं। तथा हरार्ध कला का चिन्तन योनि में करने का विधान है। यही मन्मथ कला है। ऐसा साधक देवांगना तक को तत्काल क्षुब्ध कर सकता हैं ॥४३-४४॥

मातृकां विलिखेच्चक्रबाह्यतः सकलां प्रिये।
भूर्जपत्रे स्वर्णपत्रे रौप्यपत्रेऽथ ताम्रजे ॥४५॥
अवध्यः सर्वजन्तूनां व्याघ्रादीनां विशेषतः।
तथैव मातृकायुक्तस्वसंज्ञाचक्रमण्डितः।
कर्पूरकुङ्कुमाद्यैस्तु अजरामरतां लभेत् ॥४६॥
अनेन विधिना देवि रोचनागरुकुङ्कुमैः ॥४७॥
विलिखंश्चक्रयोगेण साध्यनाम वरानने।
विदर्भितं स्वनाम्ना तु यस्मिन्कस्मिन्नपि स्थितम् ॥४८॥
स्थावरं जङ्गमं चापि सकलं जनमण्डलम्।
वशी कुर्यान्महेशानि पादाक्रान्तं न संशयः ॥४९॥

हे प्रिये! चक्र के बाहर भूर्जपत्र अथवा स्वर्ण किंवा चांदी के पत्र अथवा ताम्रपत्र पर समस्त मातृकावर्ण लिखे। इससे साधक समस्त जन्तुओं तथा व्याघ्र तक से अवध्य हो जाता है।

पूर्ववत् मातृका वर्णों से युक्त स्वनाम से अंकित चक्र को कर्पूर कुंकुम से अंकित करके भूषित करे अर्थात् कर्पूरादि से पूजित अंकित चक्रपर मातृकावर्ण से अपने नाम को पुटित करके पूर्वोक्त विद्याचक्र पर यह सब कर्पूरादि से लिखकर धारण करे। ऐसा साधक अजरता-अमरता प्राप्त करता है। हे देवी! श्रीविद्याचक्र में साध्य की मूर्त्ति गोरोचन-अगुरु-कुंकुम से बनाकर चक्रमध्य में साध्य का नाम लिखे तथा वहां स्वनाम भी अंकित करके १०८ संख्या में मन्त्र जप करने से साधक स्थावर जंगम वनमंण्डल स्थित चाहे जहां स्थित साध्य को वश में कर लेता है। हे वरानने! महेशानी! यह संदेह रहित है ॥४५-४९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महात्रिपुरसुन्दर्याः कामकूटेन भास्वता ।
एकमेकमवष्टभ्य साध्यनामाक्षराणि च ।।५०।।
बहिरप्यखिलैर्वर्णैर्मातृकायाः प्रवेष्टयेत् ।
हेममध्यगतं कुर्याच्छिखायां वामके भुजे ।।५१।।
धारयेद्यत्र कुत्रापि त्रैलोक्यवशकारकम् ।
राजेन्द्रमपि देवेशि दासभूतं करोति हि ।।५२।।
राजानो वाजिनः सर्पा गजा दुष्टा मदोत्कटाः ।
व्याघ्राः केसरिणो मत्ता वश्यास्तस्य भवन्ति हि ।।५१।।

हे देवेशी ! महात्रिपुर सुन्दरी के दीप्यमान कामराजकूट द्वारा 'ह स क ह ल ह्रीं' द्वारा साध्य के नामाक्षर के प्रत्येक अक्षर से पुटित करे । साध्यनाम के चारों ओर मातृका वर्ण लिखकर साध्य नाम को वेष्ठित करे । तदनन्तर इसे सोना के ताबीज में भर कर शरीर पर बाहुआदि में धारण करे । इससे त्रैलोक्य वशीभूत हो जाता है । इससे श्रेष्ठ राजा को भी वश में कर लेते हैं । इससे राजा, अश्व, सर्व, दुष्ट मदमत्त हाथी, व्याघ्र, मत्तसिंह भी साधक के वशीभूत हो जाते हैं ।।५०-५३।।

पूर्वक्रमेण नगरनाम संदर्भ्य शैलजे ।
मध्ये चतुष्पथे वाऽपि चतुर्दिक्षु निधापयेत् ।।५४।।

चक्रांकन करके उसमें किसी नगर का नाम लिखकर मध्य में अपना नाम लिखे । लेकिन नगर के नाम के प्रत्येक अक्षर को कामराजकूट मन्त्र से पुटित करके लिखे तथा चतुर्दिक् मातृकावर्ण लिखकर नगर में अथवा चौराहे पर अथवा नगर के चतुर्दिक् कही गाड़ दे ।।५४।।

महाक्षोभो योषितां तु जनानां महतामपि ।
तथैव सर्वदुष्टानां पुरस्थानां च जायते ।।५५।।
एतन्मध्यगतां पृथ्वीं सशैलवनगह्वराम् ।
ज्वलन्तीं सर्वराजेन्द्रमण्डितां सागराम्बराम् ।।५६।।
मासषट्कं चिन्तयेद्यः साक्षात्कामोपमो भवेत् ।
कटाक्षक्षेपमात्रेण नार्यस्तस्य वशाः प्रिये ।।५७।।
राजानो ब्राह्मणा वैश्याः शूद्राश्च पशवो जगत् ।
दृष्ट्वा त्वाकर्षयेद्देवि त्रैलोक्यं सचराचरम् ।।५८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सपत्नान्नाशयेद्दृष्ट्वा नात्र कार्या विचारणा।
भूतप्रेतपिशाचांश्च ज्वरांश्चातुर्थिकादिकान्।।५९।।
शूलगूल्मादिरोगांश्च दृष्ट्वा नाशयते क्षणात्।
एतत्सिन्दूरसुभगं रात्रौ संपूजितं प्रिये।।६०।।

हे पर्वतनन्दिनी ! उस नगर स्थित स्त्री लोग, महाजन तथा दुष्टों में महाक्षोभ उत्पन्न होता है। हे प्रिये ! जो व्यक्ति पर्वत, वन तथा गृह युक्त तथा मध्यस्थित (अर्थात् उर्ध्व लोक एवं अध: लोक के बीच अर्थात् पृथिवीलोक) श्रेष्ठगण द्वारा भूषित सागर वेष्ठित पृथिवी का चिन्तन इस प्रकार करता है कि वह जल रही है, वह साक्षात् काम के समान हो जाता है। हे देवी ! उस व्यक्ति के देखने मात्र से चर-अचर सभी लोक उसके आकर्षण में हो जाते हैं। वह तो शत्रुओं को देखने मात्र से नष्ट कर देता है। इसमें कोई संदेह नहीं है। भूत, प्रेत, पिशाच, चातुर्थिक आदि सभी ज्वर, शूल, गुल्म आदि रोग उस व्यक्ति के दर्शन मात्र से नष्ट हो जाते हैं। हे प्रिये ! हे सुन्दरी ! रात्रि में मनोहारी सिन्दूर से पूजा करने पर वह सिन्दूर सौ योजन दूरवाली स्त्री को भी आकर्षित कर लेता है। पूर्वादि चतुर्दिक् तथा अग्निकोण प्रभृति कोण स्थित स्त्री को भी आकर्षित कर लेता है। यहां तक कि वह स्वर्ग लोकस्थ स्त्री को भी आकर्षित कर लेता है ।।५५-६०।।

योजनानां शताद्वाऽपि सम्यगाकर्षयेस्त्रियम्।
यदा दिक्षु विदिक्ष्वेवं दिविष्ठानपि सुन्दरि।।६१।।
वशमानयते शीघ्रं सपुत्रपशुबान्धवान्।
भूर्जपत्रे समालिख्य रोचनागरुकुङ्कुमैः।।२६।।
तन्मध्ये नगर देशं मण्डलं खण्डमेव च।
नाम्ना विदर्भितं स्वस्य पूजयित्वा यथाविधि।।६३।।
भूमिमध्यगतं कृत्वा त्रैलोक्यं वशमानयेत्।
अथ वा धारयेत्कण्ठे शिखायां बाहुमूलके।।६४।।
यत्र कुत्र स्थितं भद्रे क्षोभयेन्नगरं महत्।
अर्कक्षीरेण संयुक्तं धत्तूरकरसं तथा।।६५।।
रोचनाकुङ्कुमे चैव लाक्षालक्तकसंयुतम्।
कस्तूरीचन्द्रसंयुक्तमेकीकृत्य ततः परम्।।६६।।
चक्रमेतत्समालिख्य यस्य नाम्ना महेश्वरि।
तस्य व्याघ्रगजव्याधिरिपुसर्पभयादिकम्।।६७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चोरग्रहजलारिष्टशाकिनीडाकिनीभयम् ।
भयं न विद्यते देवि परमन्त्राभिचारजम् ।।६८।।
नित्यं संधारयेद्देवि कालमृत्युं विनाशयेत् ।।६९।।
अथवा मध्यगां देवीं त्रिकोणोभयमध्यगाम् ।
अथ स्वनामसंयुक्तां रोचनाकुङ्कुमाङ्किताम् ।।७०।।

(भूर्ज पत्र पर श्री यन्त्र बनाकर) भूर्ज पत्र पर गोरोचन, अगुरु, तथा कुंकुम से नगर, देश, जिला तथा विभाग (मुहल्ला) लिखे। (इनका नाम लिखे) इसके बीच अपना नाम अंकित करे। तदनन्तर उसको मिट्टी में गाड़ देना चाहिये। यह त्रिलोकी को वशीभूत कर लेता है। अथवा इसे ताबीज में भरकर कण्ठ, शिखा अथवा बाहुमूल में धारण करे। हे भद्रे ! ऐसा करने से वह कहीं भी विशाल नगर को (जिसका नाम लिखा था) क्षुब्ध कर सकता है। मदार के दुग्ध स्राव तथा धतूरा फूल का रस निकाल कर मिलाये। उसमें गोरोचन, कुंकुम, लाख तथा आलता, कस्तूरी एवं कपूर मिलाकर जिनका नाम श्री चक्र में लिखा जायेगा, उसे व्याघ्र, हांथी, रोग, शत्रु, सर्प जनित भय, चोर, ग्रह पीड़ा, अशुभ शकुन, शाकिनी, डाकिनी तथा अन्य कर्तृक मन्त्र तथा अभिचार का भय नहीं होगा। हे देवी ! इस चक्र को नित्य धारण करने वाला काल मृत्यु से ग्रसित नहीं होता। अथवा दोनों त्रिकोण के मध्य में किसी देवी अथवा स्त्री को गोरोचन तथा कुंकुम से अंकित करके तथा उस चित्र में अपना नाम लिखकर स्थापित कर अथवा मिट्टी में गाड़ दे, वह स्त्री एक सप्ताह में (दासीवत्) साधक की दासी हो जायेगी ।।६१-७०।।

निधापयेच्च सप्ताहाद्दासवत्किंकरो भवेत् ।
पीतद्रव्यैः समालिख्य पीतपुष्पैः समर्चयेत् ।।७१।।
पूर्वाशाभिमुखो भूत्वा स्तम्भयेत्सर्ववादिनः ।
सहस्रवदनो देवि मूढो भवति तत्क्षणात् ।।७२।।
नाम्ना यस्य स वाग्गमी हि पाषाण इव जायते ।
चक्रं विलिख्य देवेशि महानीलीरसेन तु ।।७३।।
नाम संयोज्य विधिवद्दक्षिणाभिमुखो बुधः ।
वह्नौ दग्ध्वा महेशानि मारणं वैरिणां प्रिये ।।७४।।
महिषाश्वपुरीषाभ्यां सम्यगाधृष्य शैलजे ।
गोमूत्रेण च संलिख्य नामसंदर्भ्य पूर्ववत् ।।७५।।
क्षिप्त्वाऽऽरनालमध्यस्थं विद्वेषणकरं भवेत् ।
कृत्वा रोचनया नाम काकपक्षस्य मध्यगम् ।।७६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लम्बमानं तदाकाशे शत्रूच्चाटनकारकम् ।
महानीलीरोचनाभ्यां दुग्धलाक्षारसेन हि ।।७७।।
विलिख्य धारयेन्मन्त्री सर्ववर्णान्वशं नयेत् ।
अनेनैव विधानेन स्थापयेद्वारिमध्यगम् ।।७८।।
तेनोदकेन संस्नातः पीतं तत्सर्ववश्यकृत् ।
सौभाग्यं जायते तेन पानीयेन न संशयः ।।७९।।
एतन्मध्यगतां पृथ्वीं नगरीं वा सुलोचने ।
सप्ताहात्क्षोभयेत्सम्यग्ज्वलमानां विचिन्तयेत् ।।८०।।

यदि चक्र में पीत द्रव्य द्वारा त्रिपुरा भगवती को अंकित करके साधक पूर्व मुख होकर उनकी पूजा पीत पुष्पों से करे तब यह सभी का मुख स्तम्भन करेगा। अर्थात् विपक्षी का मुख स्तम्भन करेगा। वह साधक के विरुद्ध नहीं बोल सकेगा। हे देवी ! इस प्रयोग से सहस्रमुख अनन्त ऐसा वाग्मी भी क्षणमात्र में हतबुद्धि हो जाता है। जिसका नाम चक्रांकित होगा, वह वाग्मी भी साधक के विरुद्ध नहीं कह सकेगा। हे देवेशी ! हे प्रिये ! महानीली के रस से चक्र बनाकर उसी विधान से पूजा करे। शत्रु का नाम लेते हुये (उसी में लिखे) बुद्धिमान व्यक्ति दक्षिण की ओर मुह करके इस यन्त्र को अग्नि में जलाये। हे महेशानी ! इससे शत्रु मारण होगा। हे पर्वतनन्दिनी ! महिष तथा अश्व की लीद को सम्यक् भाव से एक दूसरे में मिलाकर उसमें गोमूत्र मिलाये। अब इससे शत्रु का नाम लिखकर शत्रु की नाली में छोड़ दे। इसमें (शत्रु तथा उसके सहयोगी का नाम साथ लिखे) उन दोनों में विरोध होगा।

यदि कौआ के पंख पर शत्रु का नाम लिखकर (गोरोचन से) आकाश में लटका दिया जाये तब शत्रु का उच्चाटन होगा। मन्त्रजापक साधक महानीली तथा गोरोचन में दूध तथा लाक्षारस मिलाये। उससे भूर्जपत्र पर श्रीचक्र बनाकर ताबीज में रखकर धारण करे। इससे साधक सभी प्रकार के सर्पों को वशीभूत कर लेता है। यदि इसी प्रकार से चक्र को महानीलीरस-रोचना-दुग्ध-तथा लाक्षारस मिलाकर उस स्याही से बनाकर जल में रखकर उसी से स्नान करे तथा पान करे, तब वह सब को वशीभूत कर सकता है। इस जल से साधक को सौभाग्य मिलेगा। हे सुनयने ! यदि साधक किसी भी नगरी या स्थान का चिन्तन करता है कि वह प्रज्वलित हो रही है, तब वह उस स्थान अथवा नगर को एक सप्ताह में क्षुब्ध कर देगा ।।७१-८०।।

अथ वक्ष्ये महेशानि महापातकनाशनम् ।
शिवां संपूजयेद्देवि सुगन्धैः कुसुमैः प्रिये ।।८१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महापातकयुक्तात्मा तत्क्षणात्पापहा भवेत् ।
शमीदूर्वाङ्कुराश्वत्थपलाशैरथ वाऽर्कजैः ।।८२।।
मासेन हन्ति कलुषं सप्तजन्मकृतं नरः ।
पूर्वाशाभिमुखो भूत्वा पीतद्रव्यैः समर्चयेत् ।।८३।।
पीतस्थाने समालिख्य स्तम्भयेत्सर्ववादिनः ।
उत्तराशामुखो भूत्वा सिन्दूररजसा लिखेत् ।।८४।।
पूजयेद्विधिवद्विद्वान् सर्वलोक वशं नयेत् ।
पश्चिमाभिमुखो भूत्वा चन्दनेन समालिखेत् ।।८५।।
संपूज्य विधिवद्विद्वान् सर्वयोषिन्मनो हरेत् ।
वल्लभो जायते देवि दासीमिव वशं नयेत् ।।८६।।

हे महेश्वरी ! अब महापातकनाशक उपाय सुनो । हे प्रिये ! हे देवी ! जो व्यक्ति सुगन्ध पुष्पों से शिवा की पूजा करता है, वह महापातकी होकर भी पूजा मात्र से पापरहित होगा । शमीपत्र, दूर्वा का अंकुर, पीपल, पलाश, मदार द्वारा जो १ मास शिवा की पूजा करेगा, उसके सात जन्मों के पाप का नाश हो जायेगा । जो पूर्व की ओर मुख करके पीत द्रव्य से पीत स्थान में शिवा की मूर्त्ति का अंकन करके पूजा करता है, वह सभी विपक्षी गण के मुख को स्तम्भित कर देता है । वे साधक का कोई विरोध नहीं कर सकते । यदि विद्वान व्यक्ति सिन्दूर चूर्ण से शिवा की मूर्त्ति अंकित करके (उत्तरमुख हो) उनकी पूजा करेगा, तब वह सभी लोकों को वश में कर लेगा । विद्वान व्यक्ति पश्चिम मुख करके चन्दन से मूर्त्ति अंकित करके पूजा करे । तब वह सभी स्त्रीलोक के मन का हरण कर लेगा । वह स्त्रीगण को प्रिय होगा । तथा स्त्रीगण को दासी के समान वशीभूत कर लेगा ।।८१-८६।।

यमाशाभिमुखो भूत्वा चक्रे कृष्णं यदाऽर्चयेत् ।
यस्य नामाङ्कितं तस्य मन्त्रहानिः प्रजायते ।।८७।।

यदि दक्षिण की ओर मुख करके साधक जिसके नामांकित कृष्णवर्ण के श्रीयन्त्र में पूजन करेगा, उस व्यक्ति को मन्त्र सिद्धि नहीं होगी ।।८७।।

अग्निराक्षसवायव्यशम्भुकोणेषु पूजितम् ।
पूर्ववत्परमेशानि क्रमेण परिपूजितम् ।।८८।।
स्तम्भविद्वेषणव्याधिशत्रूच्चाटकरं भवेत् ।
रोचनालिखितं चक्रं क्षीरमध्ये क्षिपेद्बुधः ।।८९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्ववश्यकरं देवि भवत्येव न संशयः ।
गोमूत्रमध्यगं सम्यक्शत्रूच्चाटकरं भवेत् ।।९०।।
तैलस्थं चक्रराजं तद्विद्वेषणकरं भवेत् ।
ज्वलज्ज्वलनमध्यस्थं शत्रुनाशकरं भवेत् ।।९१।।
यदेकान्ते चतुमार्गे सिन्दूररजसा लिखेत् ।
सर्वबाह्यत आरभ्य यावन्मध्यं महेश्वरि ।।९२।।
आकारादिक्षकारान्तां मातृकां तत्र विन्यसेत् ।
पूजयेद्रात्रिसमये कुलाचारक्रमेण तु ।।९३।।
साधकः खेचरो देवि जायते नात्र संशयः ।
गिरावेकतरौ तद्वदर्चयेत्कुलमार्गतः ।।९४।।
अजरामरतां लब्ध्वा सुखी भवति मान्त्रिकः ।
श्मशाने पूजयेच्चक्रं महाभूतदिने बुधः ।।९५।।
पूर्वक्रमेण विधिवत्साधकः स्थिरमानसः ।
खड्गसिद्धिं च मनःसिद्धिं च गुटिकामपि ।।९६।।
पादुकां वेतालसिद्धिं च मनःसिद्धिं च धातुदाम् ।
महाविवरसिद्धिं च यक्षिणीचेटकोद्भवाम् ।।९७।।

हे परमेश्वरी ! पूर्ववत् चक्रांकन करके उसमें साध्यनाम के मध्य में अपना नाम अंकित करे । बाहर मातृका वर्णों से चक्र को घेर कर अग्नि-नैर्ऋत, वायु तथा ईशान क्रमेण चक्र पूजा करे । इससे शत्रु को स्तम्भन, विद्वेष, रोग होते हैं शत्रु का उच्चाटन ही हो जाता है । हे देवी ! विद्वान् साधक यदि गोरोचन से चक्र बनाकर दुग्ध में उस चक्र को छोड़ देता है तब वह सब को वशीभूत कर लेगा । यह निःसंदिग्ध है । उक्त गोरोचन लिखित चक्र को गोमूत्र में छोड़े । इससे शत्रु का उच्चाटन होगा । गोरोचन से अंकित चक्रराज को तैल में छोड़े । इससे शत्रु को विद्वेषण होगा । यदि प्रज्वलित अग्नि में छोड़ा जाये तब शत्रु का नाश होना ही है । यदि निर्जन चौराहे पर सिन्दूर चूर्ण से चक्रांकन करके चौराहे के बाहर पर्यन्त से प्रारम्भ करके मध्य स्थान तक अ से क्ष तक मातृका लिखकर साधक रात में कुलाचार से पूजा करता है, तब हे देवी ! वह आकाश मार्ग में निःसंदिग्ध रूप से विचरण करेगा । इसी प्रकार पर्वत के एक वृक्ष पर यदि कुलाचार से यह पूजा की जायेगी, तब साधक अजर-अमर तथा सुखी होगा । यदि बुद्धिमान व्यक्ति शनि तथा मंगलवार को श्मशान में चक्रराज की स्थिर चित्त से पूजा करता है, तब उसे खड्गसिद्धि मिलेगी, उसे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गुटिका सिद्धि, पादुका सिद्धि, जनसिद्धि, मनःसिद्धि, धातुसिद्धि, महाविद्या सिद्धि तथा यक्षिणी सिद्धि, चेटक सिद्धि प्राप्त होगी ॥८८-९७॥

सर्वं तल्लभते मन्त्री नात्र कार्या विचारणा ।
अथ वक्ष्ये महेशानि श्रीविद्यापूजनं महत् ।।९८।।
ब्रह्महत्यादिदोषाणां पुरश्चरणमुत्तमम् ।
रक्तपद्मैर्महेशानि पूजयेच्चक्रमुत्तमम् ।।९९।।
समस्तरश्मिसहितं नित्याम्नायपुरस्कृतम् ।
कुलाचारक्रमाद्देवि कर्पूरक्षोदमण्डितम् ।।१००।।
मासमात्रेण देवेशि महापातककोटयः ।
जन्मान्तरकृता सर्वा नाशयेन्नात्र संशयः ।।१०१।।
लक्ष्मीस्तस्य गृहे रम्या सुस्थिरा सुरवन्दिते ।
जपापुष्पैर्महेशानि पूर्ववत्पूजयेच्छिवाम् ।।१०२।।
मासमात्रं क्रमेणैव पूर्ववत्परमेश्वरि ।
ब्रह्महत्यादिपापांश्च पूर्वजन्मकृतान्प्रिये ।।१०३।।
नाशयेन्नात्र संदेहो धनवाञ्जायते बुधः ।
केतकैस्तरुणैः पत्रैः पूर्ववत्पूजयेत्प्रिये ।।१०४।।
उपपातकसंघांश्च मासमात्रेण नाशयेत् ।
सौभाग्यमतुलं तस्य जायते नात्र संशयः ।।१०५।।
शतपत्रैर्मनोरम्यैः पूजयेन्मासमात्रकम् ।
पूर्ववत्परमेशानि पूर्वपापं विनाशयेत् ।।१०६।।
चम्पकैः सुमनोरम्यैः पूर्ववत्पूजयेच्छिवाम् ।
मासमात्रेण हन्त्येव पातकाञ्शतजन्मजान् ।।१०७।।

मन्त्र साधक यह सब लाभ करता है, इसमें संदेह नहीं है। हे महेश्वरी ! अब महान् विद्यापूजन कहते हैं। इस विद्या का पुरश्चरण ब्रह्महत्यादि दोष नाशक है। हे महेशानी ! हे देवेशी ! रक्तपद्म से उत्तम श्रीविद्या चक्र पूजन करे। समस्तरश्मि के साथ (श्रीविद्या के अंगसम्भूत) उनके अंग तथा आवरण देवताओं के साथ नित्याम्नाय के द्वारा (यह पूर्व में कहा गया है। देखे षोडशपटल) कुलाचार पद्धति से कर्पूर चूर्ण से भूषित चक्र की पूजा करे। हे देवी ! इसके द्वारा एक मास में जन्मान्तर कृत कोटि-कोटि महापातक नष्ट हो जाते है। यह निःसंदिग्ध है। हे सुरवन्दिते ! हे महेशानी ! जपापुष्प से श्रीविद्या देवी की पूर्ववत्

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(श्री नित्याम्नाय से) कुलाचार पद्धति से पूजा करे। इससे पूजक के गृह में रम्यालक्ष्मी सुस्थिर होकर निवास करता है। हे परमेश्वरी ! पूर्ववत् एकमास क्रम-क्रम से पूजा करनें पर पूर्व जन्मकृत ब्रह्मत्यदि पाप नष्ट होते हैं। इसमें सन्देह नहीं है। बुद्धिमान व्यक्ति धनवान् हो जाता है। हे प्रिये ! नूतन केतकी के पत्तों से कुलाचार से श्रीविद्या की पूजा करे। यह पूर्वकृत पापों को नष्ट कर देता है। यदि मनोहर चम्पक पुष्पों से शिवा की पूजा की जाये तब एक माह पूजा के द्वारा उसके शतजन्मार्जित पाप नष्ट हो जाते हैं ॥८९-१०७॥

सौभाग्यवान्भवेन्मन्त्री त्रिपुरायाः प्रसादतः ।
श्वेतपद्मैर्महेशानि महद्भिः पूजयेत्पराम् ॥१०८॥
पूर्ववन्नाशयेत्पापं विंशज्जन्मभवं प्रिये ।
माससमात्रेण सकलं मोक्षस्तस्य करे स्थितः ॥१०९॥
बन्धूककुसुमैर्देवि माससमात्रं प्रपूजयेत् ।
त्रैलोक्यं वशगं तस्य पूर्वपापं दहेद्बुधः ॥११०॥
बिल्वपत्रैश्च जलजैः सहैव परिपूजयेत् ।
पूर्ववत्परमेशानि माससमात्रं प्रसन्नधीः ॥१११॥
समृद्धिमान् भवेद्देवि सर्वपापहरः सदा ।
मल्लिकामालतीजातीकुन्दैश्च शतपत्रकैः ॥११२॥
श्वेतोत्पलैर्मिश्रितैस्तु पूजयेन्माससमात्रकम् ।
कुलाचारक्रमेणैव पातकं शतजन्मजम् ॥११३॥
ब्रह्महत्यादिजनितं नाशयेन्नात्र संशयः ।
मुक्तिस्तस्य करे देवि वाचा जीवसमो भवेत् ॥११४॥
अगस्त्यबाणबन्धूकजपारक्तोत्पलैः प्रिये ।
पूर्वक्रमेण संपूज्य माससमात्रं प्रसन्नधीः ॥११५॥

चम्पक पुष्प से पूजा करने वाला त्रिपुरा की कृपा से सौभाग्यवान होता है। हे महेशानी ! हे प्रिये ! परादेवी श्री विद्या की श्वेत कमल से कुलाचार से पूजा करे। समारोह के साथ पूजा करे। इससे मात्र १ मास की पूजा द्वारा बीस जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। मुक्ति उसके हांथों में हो जाती है। हे देवी ! बन्धूक पुष्प द्वारा एक मास श्री विद्या पूजन करे। इससे समस्त त्रैलोक्य उसके वश में हो जाता है। पूजाकारी का समस्त पूर्व पापदग्ध हो जाता है। हे देवी ! हे परमेशानी ! प्रसन्न चित्त होकर पद्म के साथ जो बिल्वपत्र से पूर्ववत् कुलाचार द्वारा जो श्रीविद्या की पूजा करते हैं वे समृद्धशाली हो जाते हैं। वे सर्वदा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पापनाशकारी हो जाते हैं। हे देवी ! जो मल्लिका, मालती, जूही, कुन्द, पद्म, श्वेतकमल मिश्रित करके एक मास पर्यन्त कुलाचार से श्री विद्या की पूजा करते हैं उनका १०० जन्मों का ब्रह्महत्यादि पाप भी नष्ट हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं है कि ऐसे पूजक की मुक्ति तो उसके करामलकवत् है। वह वाणी में बृहस्पति जैसा हो जाता है। हे प्रिये ! वक्, बाण, बन्धूक, जवा तथा रक्तपद्म से पूर्वोक्त रीति से जो एकमास प्रसन्न होकर श्रीविद्या की पूजा करते हैं, उन मन्त्रसाधक का सभी पाप नष्ट होता है तथा वे साक्षात् कामदेववत् हो जाते हैं ॥१०८-११५॥

पातकं नाशयेन्मन्त्री साक्षात्कामसमो भवेत्।
चम्पकैः पाटलैर्देवि बकुलैर्नागकेसरैः ॥११६॥
कह्लारैः सिन्दुरै रम्यैः पूर्ववत्पूजयेत्क्रमात्।
सौभाग्यमतुलं तस्य मासमात्रेण जायते ॥११७॥
पापं विनाशयेद्देवि यदि जन्मसहस्त्रजम्।

हे देवी ! चम्पक पुष्प, पाटल, बकुल नागकेसर, कल्हार पुष्प तथा सिन्दूर पुष्प (सिन्दूर नामक एक वृक्ष होता है) द्वारा पूर्ववत् कुलाचार द्वारा जो इनकी पूजा करते हैं, एक मास पूजन से उनका अतुल सौभाग्य हो जाता है। वे एक हजार जन्मो के पाप को पूजा से नष्ट कर देते है।

सप्तदश पटल समाप्त।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अष्टादशः पटलः

(रत्नपूजा विधान, पूजा भेद फल)

ईश्वर उवाच–

रत्नपूजाविधानं तु कथयामि तवानघे ।
पुष्पाणि रचयेद्देवि माणिक्यरचितानि हि ।।१।।

ईश्वर कहते हैं–हे निष्पापे ! अब तुमसे रत्नपूजा विधान कहता हूँ। हे देवी ! माणिक्य से पुष्परचना की जाये ॥१॥

तैस्तु पूजा प्रकर्तव्या चक्रराजस्य पूर्ववत् ।
नानापुष्पैः सुगन्धैश्च कर्पूरक्षोदचन्दनैः ।।२।।
एकविंशतिरात्रेण विंशतिं धरणीभुजाम् ।
दासीभूतां करोत्येव महारोगांश्च नाशयेत् ।।३।। ।

उन माणिक्य पुष्पों से पूर्ववत कुलाचार विधान द्वारा श्रीचक्रराज की पूजा करनी चाहिये। नाना सुगन्धि पुष्पों तथा कर्पूर मिश्रित चन्दन से २१ रात्रि श्रीविद्या चक्र की पूजा करने से साधक २० राजाओं को दास बनाकर महारोगों को नष्ट कर देता है ॥२-३॥

सूर्यवत्कान्तिमान्मन्त्री जायते नात्र संशयः ।
मुक्तारत्नैश्च रचयेत्स्वर्णपुष्पाणि सुन्दरि ।।४।।
तैस्तु पूजा प्रकर्तव्या नानापुष्पैश्च पूर्ववत् ।
एकविंशातिरात्रेण राजपत्न्यो वशाः प्रिये ।।५।।
कलाकान्तियुतो देवि जायते सुभगः क्षितौ ।
प्रवालघटितैः स्वर्णपुष्पैस्तु बहुभिर्यजेत् ।।६।।
पूर्ववत्परमेशानि कुलाचारक्रमेण तु ।
पुष्पैश्च विविधैर्देवि त्रिःसप्ताहात्सुरेश्वरि ।।७।।

इस प्रकार वह साधक सूर्य के समान कान्तिमान हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। हे सुन्दरी ! हे प्रिये ! मुक्तारत्न जड़े स्वर्णपुष्पों की रचना करे। इन पुष्पों से तथा अन्य नाना पुष्पो से श्री विद्याचक्र की पूर्ववत् पूजा की जाये। २१ दिन यह पूजा करने से राजपत्नीगण वशीभूत हो जाती हैं। साधक पृथिवी पर कलायुक्त, कान्तियुक्त, तथा सौभाग्य शाली हो जाता है। हे देवी ! हे परमेश्वरी ! प्रवाल के बने अनेक स्वर्ण मण्डित पुष्पों से पूर्ववत् कुलाचार क्रमेण चक्रराज की पूजा करे तथा अन्य पुष्पों से २१ दिन पूजा करे ॥४-७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्रूरास्तस्य वशाः सर्वे वैरिवर्गान्विनाशयेत् ।
तथा मरकतक्षिप्तस्वर्णपुष्पैस्तु पूजयेत् ।।८।।
एकविंशतिरात्रेण नानापुष्पैः क्रमं यजेत् ।
विबुधास्तस्य वरदा वैरी नश्यति नान्यथा ।।९।।

हे सुरेश्वरी ! इस प्रकार तीन सप्ताह पूजा करने से क्रूरप्राणी भी पूजक के वशीभूत हो जाते हैं । वह पूजक उन क्रूर शत्रुओं को वशीभूत कर लेता है और वह पूजक शत्रुगण को विनष्ट कर देता है । इस प्रकार से मरकत जड़े स्वर्ण पुष्प से तथा नाना पुष्पों से यदि २१ रात्रि क्रमशः चक्रराज की पूजा की जाये तब देवतागण उस पूजक को वर देते हैं तथा उस पूजक के शत्रु नष्ट हो जाते हैं । यह अन्यथा नहीं है ॥८-९॥

पुष्परागमहारत्नघटितैः स्वर्णनिर्मितैः ।
कुसुमैः पूजयेच्चक्रं त्रिःसप्ताहात्सुरेश्वरि ।।१०।।

हे सुरेश्वरी ! पुष्पराग नामक महारत्न जटित स्वर्ण निर्मित पुष्पों से २१ दिन श्री विद्याचक्र (श्री चक्र) की पूजा करे ॥१०॥

सुरास्तस्य वशा देवि बृहस्पतिसमो भवेत् ।
सुवर्णरचितैः पुष्पैर्वज्रकेयूरराजितैः ।।११।।
एकविंशतिरात्रेण मोहयेज्जगतीमिमाम् ।
दैवदैत्या वशास्तस्य जायन्ते नात्र संशयः ।।१२।।

इस पूजा से देवगण पूजक के वश में हो जाते हैं । वह पूजक बृहस्पति तुल्य हो जाता है । हे देवी ! हीरे के केयूर (अलंकारादि युक्त) सुवर्ण रचित पुष्प से २१ दिन श्री चक्रराज की पूजा करे । इससे देवता तथा दैत्य पूजक के वशीभूत होते हैं । इसमें संशय नहीं है ॥११-१२॥

इन्द्रनीलमयैः स्वर्णपुष्पैश्चक्रं समर्चयेत् ।
एकविंशतिरात्रेण तथा नीलैश्च नीरजैः ।।१३।।
वैरिणो नाशमायान्ति शेषा वश्या भवन्ति हि ।
गोमेदेघटितैः पुष्पैः सुवर्णस्य यजेद्बुधः ।।१४।।
किंशुकैश्च कुसुमैश्च पूर्ववत्परमेश्वरि ।
सप्ताहाद्वैरिणो वश्या घातस्तेषु प्रजायते ।।१५।।

इन्द्रनील रत्न को स्वर्ण पुष्प में युक्त करके उससे श्री विद्याचक्र की पूजा करे । तथा नीलपद्म द्वारा भी २१ रात्रि पूजा करनी चाहिये । इससे पूजक के सभी शत्रु विनाश को प्राप्त हो जाते हैं । जो नष्ट नहीं होते वे पूजक के वश में हो जाते हैं । गोमेद रत्नों से जड़े सुवर्ण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुष्प तथा पलाश पुष्प से यदि ज्ञानी व्यक्ति कुलाचार रीति से चक्रराज की पूजा सात दिन करता है, तब उसके शत्रुगण उसके वश में हो जाते हैं। उन शत्रुगण का आघात से विनाश होता है ॥१३-१५॥

त्रिः सप्ताहान्महापापसंचयं नाशयेत्प्रिये ।
क्रव्यादजीवा वश्या हि भवन्त्येव न संशयः ।।१६।।

यदि तीन सप्ताह वह पूजक पलाश पुष्प तथा गोभेद जटित सुवर्ण पुष्प से पूजा करता है तब चक्रराज की कृपा से उसके महापातक नष्ट हो जाते है तथा राक्षसगण भी उसके वश में हो जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं है ॥१६॥

वैदूर्यघटितैः स्वर्णपुष्पैरभ्यर्चयेत्क्रमम् ।
चम्पकादिभिरभ्यर्च्य त्रैलोक्यं स्तम्भयेत्क्षणात् ।।१७।।
एकविंशतिभिर्वारैः सर्वपापहरो भवेत् ।
पुष्पैः पर्युषितैर्देवि नार्चयेत्स्वर्णजैरपि ।।१८।।

वैदूर्य जड़ित स्वर्ण पुष्प से पूजा करे। तदनन्तर चम्पक आदि से भी पूजा करे। इससे पूजक क्षणमात्र में त्रैलोक्य के प्राणीगण को स्तम्भित कर सकता है। इस प्रकार से २१ रात पूजा करने से सभी पाप भी नष्ट हो जाते हैं। हे देवी ! हे परमेश्वरी ! बासी पुष्पों से यहां तक कि सुवर्ण निर्मित बासी पुष्पों से भी देवी की पूजा नहीं करनी चाहिये ॥१७-१८॥

निर्माल्य भूतैः कुसुमैरुच्छिष्टैः परमेश्वरि ।
नवरत्नमयैः स्वर्णपुष्पैर्यदि शिवां यजेत् ।।१९।।
तदा देवा मनुष्याश्च पन्नगा राक्षसादयः ।
सर्वे वश्य भवन्त्येव त्रिःसप्ताहान्न संशयः ।।२०।।

निर्माल्य पुष्प से (जिस पुष्प से एकबार पूजा की गई हो-वह निर्माल्य है), जूठे पुष्पों द्वारा पूजा न करे। जो सुवर्ण पुष्प प्रचुरता से नवरत्न जड़े हैं, वैसे सुवर्ण पुष्पों से यदि त्रिपुरा देवी (शिवादेवी) की पूजा की जाती हैं, तब तीन सप्ताह में देवता-मनुष्य-सर्प-राक्षस प्रभृति सभी वशीभूत हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है ॥१९-२०॥

जन्मकोटिभव पापं नाशयेन्नात्र संशयः ।
स्वर्णरत्नमयैः पुष्पैर्नवरत्नैः प्रपूजयेत् ।।२१।।
तदाऽश्वमेधदशकं कृतं भवति शैलजे ।
स्वर्णरत्नादिपूर्णत्वं यदा नास्ति तदा शृणु ।।२२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस नवरत्नमय स्वर्णपुष्पो से शिवापूजा के फल से करोड़ों जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है। स्वर्ण तथा रत्नमय नूतन पुष्पों द्वारा ही पूजा करे। हे पर्वतनन्दिनी ! इससे १० अश्वमेघ यज्ञ का फल प्राप्त होता है। जब इस प्रकार से नवरत्नादि जड़े स्वर्ण पुष्प न मिल सके, तब जिस प्रकार से पूजा करनी है, उसे सुने ॥२१-२२॥

तैरेव पुष्पैः पूजा तु कर्तव्या साधकोत्तमैः ।
यद्यत्पुष्पं यत्र यत्र दत्तं तत्तत्सुरेश्वरि ।।२३।।
तत्र तत्र प्रदातव्यं न दातव्यं यथेच्छया ।
अलंकारस्वरूपेण पूजयेच्चक्रनायकम् ।।२४।।
केवलं स्वर्णपुष्पैस्तु त्रैलोक्यं स्तम्भयेच्छिवे ।
मासमात्रेण पापानि सप्तजन्मभवान्यपि ।।२५।।
नाशयेन्मोहयेत्सर्वां समुद्रवलयां धराम् ।।२६।।

साधकोत्तम व्यक्ति वहां-वहां उन पुष्प से पूजन करें जहां जिस पुष्प को देने का विधान है। पद्मादि नैसर्गिक पुष्पों से पूजा करें। विहित पुष्प से ही पूजा करें। मनमाने पुष्प न चढ़ाये। उन विहित पुष्पों द्वारा अलंकार रूप से चक्राधिपति का पूजन करना चाहिए। हे शिवे ! केवल स्वर्णपुष्प से ही जगत् का स्तम्भन किया जा सकता है। एक मास स्वर्णपुष्प से त्रिपुरा देवी तथा अन्य देवी की पूजा करने से सात जन्मों के पाप नष्ट होते हैं तथा पूजक समुद्र वेष्टित पृथिवी को मोहित कर सकता है ॥२३-२६॥

अष्टादश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एकोनविंशः पटलः

(त्रिपुरा बीजत्रय साधन विधि, वागीश्वरी पूजनविधि-पञ्चकाम-जगन्मोहन प्रयोग, त्रिपुराध्यान)

श्रीदेव्युवाच–

त्रिपुरा परमा शक्तिस्त्रैलोक्यवशकारिणी ।
एतस्याः परमानन्दसाधनं कथय प्रभो ।।१।।

देवी कहती हैं—त्रिपुरादेवी परमाशक्ति त्रैलोक्य वश कारिणी हैं। हे प्रभो ! हे देवेश ! यदि मैं आपकी प्रिय हूँ, तब मुझे त्रिपुरा देवी के तीन बीज का परमानन्द पूर्ण साधन कहिये।

ईश्वर उवाच–

बीजत्रयस्य देवेश यद्यहं तव वल्लभा ।
एषा विद्या वरारोहे पारम्पर्यक्रमागता ।।२।।
भवबन्धं घातयन्ती संस्मृता पापहारिणी ।
जपान्मृत्युञ्जयेशानि ध्याता सर्वार्थसाधिका ।।३।।
दुःखदौर्भाग्यदारिद्र्यभयघ्नी पूजिता भवेत् ।
विघ्नौघशमनी चैव हवनान्नात्र संशयः ।।४।।

ईश्वर कहते हैं–हे वरतनु ! यह त्रिपुरा का बीजत्रय साधन गुरुपरम्परा से आता है। इस विद्या को स्मरण करने से संसार बन्धन नष्ट होता है। यह विद्या स्मरण करने से पापनाशिनी भी हो जाती है। हे ईशानी ! इस विद्या को जप करने से जप करने वाला मृत्युञ्जय हो जाता है। इसका ध्यान करने से यही विद्या सर्वपुरुषार्थ साधिनी हो जाती है। यह विद्या पूजिता होने पर दुःख, दुर्भाग्य, दरिद्रता तथा भयनाशिनी हो जाती है। इन त्रिपुरा देवी के मन्त्र से होम करने पर आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक विघ्न की निवृत्ति हो जाती है ।।२-४।।

पृथग्बीजत्रयस्याहं साधनं कथयामि ते ।
शुभ्राम्बरपरीधानो गन्धकर्पूरमण्डनः ।।५।।
मुक्ताफलस्फुरद्रूपभूषणः शुभ्रमाल्यधृत् ।
शुभ्रमन्दिरसंविष्टो ब्रह्मचर्यसमन्वितः ।।६।।
पूजयेच्छुभ्रकुसुमैर्नैवेद्यमपि सूज्ज्वलम् ।
पायसं घृतसंपन्नं तथाऽमृतफलौदनम् ।।७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मैं तुमसे अलग-अलग प्रकार से बीजत्रय का साधन कहूँगा। शुभ्रवस्त्र पहनकर गन्ध-पुष्प-कपूर से शरीर को भूषित करके मुक्ताफल के समान प्रकाशमान अलंकार शरीर पर धारण करके शुभ्रमाला धारण करे। शुभ्र मन्दिर में प्रवेश करके ब्रह्मचर्य साधन युक्त होकर शुभ्र पुष्प से वागीश्वरी का पूजन करे। नैवेद्य अतिशय उज्वल तथा शुभ्र हो, घृतयुक्त पायस, अमृतफल (द्राक्षा आदि) तथा शुभ्र अन्न का हो ॥५-७॥

घृतमोदकसंपन्नं नानाशुभ्रान्नपूरितम्।
नैवेद्यं दर्शयेद्देव्यै वागीश्वर्यै सुरेश्वरि ।।८।।
उपचारैः सुशुभ्रैश्च साधयेन्मोक्षवाङ्मयम्।
वाग्भवाख्यां जपेद्विद्यां वागीशीं संस्मरन्बुधः ।।९।।
कर्पूरधवलां शुभ्रपुष्पाभरणभूषिताम्।
अत्यन्तशुभ्रवसनां वज्रमौक्तिकभूषणाम् ।।१०।।
मुक्ताफलामलमणिजपमालालसत्कराम्।
पुस्तकं वरदानं च दधतीमभयप्रदाम् ।।११।।

घृत-मोदक युक्त नाना प्रकार के शुभ्र अन्नों से युक्त नैवेद्य वागीश्वरी देवी को निवेदित करे। हे सुरेश्वरी ! शुभ्र उपचार से मुक्ति प्रदात्री वागदेवता का साधन करना चाहिये। बुद्धिमान व्यक्ति वागीश्वरी का स्मरण करते-करते वाग्भव नामक विद्या का जप करे (ऐं अथवा 'क ए ई ल ह्रीं) यहा यह ज्ञातव्य है कि श्रीविद्या त्रिपुरा मन्त्र में तीन कूट होते हैं। वाग्भव, कामराज तथा शक्ति कूट। ये क्रमशः ऐं, क्लीं, सौः इन बीज के विस्तार रूप है। इसीलिये 'ऐं' द्वारा वागीश्वरी साधन की बात पहले कही गयी।

इसके पश्चात् कामराज कूट अर्थात् क्लीं बीज साधना कहीं जायेगी।

यह वागीश्वरी कर्पूरवत् शुभ्र हैं। शुभ्रपुष्प तथा शुभ्र आभरण से भूषित हैं। उनके हाथ में मुक्ताफल के समान निर्मल मणि के समान जपमाला शोभित होती हैं। वे अन्य हाथों में पुस्तक तथा वरमुद्रा धारिणी हैं। चौथे हाथं में अभय मुद्रा द्वारा अभय प्रदात्री हैं ॥८-११॥

एवं ध्यायेन्महेशानि सर्वविद्याधिपो भवेत्।
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं स्त्रवत्पीयूषवर्षिणीम् ।।१२।।
तस्माज्ज्योतिर्मयीं ध्यायेज्जिह्वां दीपस्वरूपिणीम्।
पाषाणेन समो वाऽपि मूर्खो जीवसमो भवेत् ।।१३।।

इस प्रकार से इनका ध्यान करने वाला सर्वविद्या समूह का अधिपति हो जाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्त क्षरित अमृत धारा का वर्षण कर रही हैं। ये ज्योतिर्मयी, दीपवत् प्रकाशरूपा हैं। यदि कोई इनका ध्यान जिह्वाग्र पर करता हैं, तब पत्थर जैसा मूर्ख भी बृहस्पति हो जायेगा ॥१२-१३॥

अथ कामकलाशक्तिसाधकः परमेश्वरि ।
रक्तालंकारसुभगो रक्तगन्धानुलेपनः ॥१४॥
रक्तवस्त्रावृतः सम्यङ्मध्ये कामकलात्मना ।
रक्तपुष्पैश्च विविधैः कुङ्कुमादिभिरर्चयेत् ॥१५॥
मूलादिब्रह्मपर्यन्तं स्फुरद्दीपस्वरूपिणीम् ।
बन्धूककुसुमाकारकान्तिभूषणभूषिताम् ॥१६॥
इक्षुकोदण्डपुष्पेषुवरदाभयसत्कराम् ।
तदीयकायसिन्दूरभरितं भुवनत्रयम् ॥१७॥

हे परमेश्वरी ! अब कामकला शक्ति के साधक (अब क्लीं बीज अथवा कामराजकूट) की साधना कह रहे हैं। रक्तालंकार से सजकर, रक्तवस्त्र, रक्तचन्दन का अनुलेपन करके शरीर के मध्यभाग में रक्तवस्त्र पहन कर सम्यक् रूप से कामकला शक्ति के समान होकर विविध रक्त पुष्प, कुंकुम, प्रभृति द्वारा मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त प्रकाशमान दीपस्वरूपा, बन्धूक पुष्प के समान कान्तियुक्ता, बन्धूक पुष्पवत् अलंकार से सजी, इक्षुधनुः, पुष्पबाण, वर एवं अभय धारिणी कामकला देवी की पूजा करे ॥ उन कामकला देवी के शरीर के सिन्दूर से तीनों लोक पूर्ण हो गया है ॥१४-१७॥

चिन्तयेत्परमेशानि त्रैलोक्यं मोहयेत्क्षणात् ।
राजानो वंशमायान्ति पन्नगा राक्षसाः सुराः ॥१८॥
कन्दर्प इव देवेशि योषितां मानहारकः ।
मनश्चिन्तितयोषित्तु दासीव वशगा भवेत् ॥१९॥

इससे क्षणकाल में त्रैलोक्य मोहन हो जाता है। इनकी चिन्तना के प्रभाव से राजा, सर्प, राक्षस, देवता सभी वशीभूत हो जाते हैं। हे देवेशी ! कामकला का चिन्तन करने वाला कामदेव के समान स्त्रीगण के मन का हरण करता है। साधक मन ही मन जिस स्त्री भी चिन्ता करेगा। वह दासी के समान साधक के वश में हो जायेगी ॥१८-१९॥

चलच्चलेन्दुसंकाशां तरुणारुणविग्रहाम् ।
चिन्तयेद्योषितां योनौ क्षोभयेत्सुरसुन्दरीः ॥२०॥
किं पुनर्मानुषीर्देवि त्रैलोक्यमपि मोहयेत् ।
एषैव चिन्तिता देवी सिन्दूराभा हृदि क्षणात् ॥२१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आकर्षयेत्तदा शीघ्रं रम्भां वाऽपि तिलोत्तमाम् ।
रक्तवर्णां स्त्रियं ध्यात्वा तदीयसहसत्तमः (?) ।।२२।।
तस्या मूर्ध्नि स्मरेद्बीजान्स्त्रवत्पीयूषवर्षिणीम् ।
ध्यायन्संमोहयेद्देवि मदनोत्तप्तमानसाम् ।।२३।।

उनका चलमान चंचल चन्द्र के समान, नवीन अरुणवर्ण तुल्य शरीर है, ऐसी कामकला की चिन्तना करें । इससे स्त्री गण के योनि में क्षोभ उत्पन्न होगा । यह भावना देवलोक की भी सुन्दरीगण को क्षोभित करती है । हे देवी ! मानव देहधारी स्त्रीगण की तो बात ही क्या, इससे तो त्रैलोक्य मोहित हो जाता है । इन कामकला देवी की ही यदि सिन्दूर के समान प्रभायुक्त रूप में हृदय में क्षणमात्र चिन्तना करता है, तब साधक के हृदय में स्मरण की गई देवी शीध्रता से रंभा अथवा तिलोत्तमा का आकर्षण भी कर लेती हैं रक्तवर्णा स्त्री के सहवास का अभिलाषी साधक रक्तवर्णा उस स्त्री का ध्यान करके उसके मस्तक में बीजमन्त्र का स्मरण करे तथा वे देवी अमृत धारा बरसा रही हैं, यह ध्यान करे इससे साधक कामदेव द्वारा उसके मन को उत्तप्त किये जाने के कारण उसे सम्मोहित कर लेता है ॥२०-२३॥

क्षणमात्रेण देवेशि त्रैलोक्यं वशमानयेत् ।
एतत्कामकलाध्यानात्पञ्च कामा वरानने ।।२४।।
मोहयन्ति जगत्सर्वं प्रयोगं शृणु पार्वति ।
पूर्वोक्तकामा देवेशि ज्ञातव्याः पञ्चसंज्ञकाः ।।२५।।
विदर्भ्याद्येन कामेन मन्मथान्तर्गतं कुरु ।
कन्दर्पसंपुटं कृत्वा कोणगर्भगतं ततः ।।२६।।
मकरध्वजसंज्ञं तु सर्वमेतद्वरानने ।
मीनकेतुगतं कुर्यान्मोहयेज्जगतीमिमाम् ।।२७।।
त्रैलोक्यमोहनं नाम योगोऽयं परिकीर्तितः ।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि शक्तिबीजस्य साधनम् ।।२८।।

हे देवेशी ! देवी का ध्यान अमृत वर्षा कारिणी के रूप में करके बीजमन्त्र स्मरण द्वारा साधक क्षणमात्र में त्रैलोक्य को वश में कर सकता है ।

हे वरानने ! इस कामकला के ध्यान फल से पञ्चकाम समस्त जगत् को मोहित करते हैं । हे पार्वती ! इसे श्रवण करो । (द्वितीय पटल के ४८ तथा ४९ श्लोक में पंचकाम देखें) । हे देवी ! पहले पंच संज्ञक काम कहे गये हैं उनको जानो । ये हैं काम मन्मथ, कन्दर्प, मकरध्वज तथा मीनकेतु । प्रथम काम अर्थात् काम को मन्मथ को भीत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अंकित करके मन्मथ को कन्दर्प से पुटित करे। (अर्थात् कन्दर्प मन्मथ कंदर्प)। अब चक्र के कोणगर्भ में मकरध्वज को अंकित करे। हे वरानने ! अब चारों काम को मीनकेतु के गर्भगत करे। इस प्रकार से जगत् मोहित किया जा सकता है। यह त्रैलोक्य मोहन योग है, जिसे यहाँ कहा गया। हे देवी ! अब शक्ति बीज साधन सुनो ॥२४-२८॥

सृष्टिसंहारपर्यन्तं शरीरे चिन्तयेत्पराम्।
स्त्रवत्पीयूषधाराभिर्वर्षन्तीं विषहारिणीम्॥२९॥
हेमप्रभाभासमानां विद्युन्निकरसुप्रभाम्।
स्फुरच्चन्द्रकलापूर्णकलशं वरदाभयौ॥३०॥
ज्ञानमुद्रां च दधतीं साक्षादमृतरूपिणीम्।
ध्यायन्विषं हरेन्मन्त्री नानाकारव्यवस्थितम्॥३१॥
एतस्याः स्मरणाद्देवि नीलकण्ठत्वमागतः।
अहं मृत्युञ्जयो भूत्वा विचरामि जले स्थले॥३२॥

शक्ति बीज 'सौः' अर्थात् शक्तिकूट का 'सकल ह्रीं' इसका साधन कहता हूँ। श्रवण करो। इस शक्ति में सृष्टिसंहार पर्यन्त सब विद्यमान है। वे परा अर्थात् श्रेष्ठा हैं। वे क्षरणशील अमृतधारा का वर्षण करती हैं। वे विषहारी हैं। सुवर्ण दीप्ति से प्रकाशमान, विद्युत् समूह के समान प्रभा विशिष्टा हैं। उनके चार हाथों में यथाक्रम से प्रकाशमान चन्द्रकला पूर्ण कलस, वर, अभय तथा ज्ञानमुद्रा धारण करती हैं। वे साक्षात् अमृत स्वरूपा हैं। इस प्रकार से शक्ति का ध्यान करके मन्त्र साधक नाना प्रकार के विष का (शरीर में या अन्यत्र) नाश करता है। हे देवी ! इनका स्मरण करके मैंनें नीलकण्ठत्व प्राप्त किया तथा मृत्युंजय होकर जल-स्थल सर्वत्र विचरण करता रहता हूँ ॥२९-३२॥

वैनतेयसमो मन्त्री विषभारसहस्त्रनुत्।
भूतप्रेतपिशाचांश्च नाशयेद्रोगसंचयम्॥३३॥
चातुर्थिकज्वरान्सर्वानपस्मारांश्च नाशयेत्।
अथ त्रिकूटा सम्पूर्णा महात्रिपुरसुन्दरी॥३४॥
चिन्तिता साधकस्याऽऽशु त्रैलोक्यवशकारिणी।
क्रमेण नाभिहृद्वक्त्रमण्डलस्थाऽरुणप्रभा॥३५॥
पद्मरागमणिस्वच्छा चिन्तनात्सुरवन्दिते।
तस्याष्टगुणमैश्वर्यं सौभाग्यं च प्रजायते॥३६॥
तन्नाम संस्मरन्मन्त्री योगिनीनां भवेत्प्रियः।
मातृचक्रं तस्य काये तेन सार्धं सुखी भवेत्॥३७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुत्रवान् देवदेवेशि मन्त्री ध्यानान्न संशयः ।
यदा चक्रस्थिता पूर्णा खेचरी सिद्धिदायिनी ।।३८।।
चतुःषष्टिर्यतः कोट्यो योगिनीनां महौजसाम् ।
चक्रमेतत्समाराध्य संस्थिता वीरवन्दिते ।।३९।।
आदौ संबन्धिनि पदे बीजाष्टकं बहिः ।
कलां ध्यात्वाऽङ्गनासङ्गे कामराज इवापरः ।।४०।।

पूर्वोक्त प्रकार से शक्ति का ध्यान करके मन्त्रसाधक गरुड़ की तरह सहस्त्रों विषधरों को दूर कर सकता है और भूत-प्रेत, पिशाच को नष्ट करता हैं। रोगों को, चतुर्थिक ज्वरो, अपस्मारादि को नष्ट करता है।

विवृति–त्रिपुरा का मन्त्र तीन अंश में विभक्त है। वाग्भव, कामराज तथा शक्ति कूट। तीनों को मिलाकर त्रिपुरभैरवी का मन्त्र होता है। इस मिलित विद्या को त्रिकूटा कहते हैं। वाग् देवी, कामकला तथा शक्ति, त्रिपुरा के ही मूर्त्तिभेद है। इसलिये त्रिपुरा ही सम्पूर्णा हैं। इनका चिन्तन करने से सम्पूर्ण त्रैलोक्य वशीभूत होता है। इन देवी की नाभि-हृदय-मुख अरुण प्रभा युक्त है। उनकी कान्ति पद्मराग के समान स्वच्छ है हे देववन्दिते ! त्रिपुरा देवी का इस प्रकार चिन्तन करने से साधक को अष्टगुण ऐश्वर्य तथा सौभाग्य होता है। यह साधक योगिणीगण का प्रिय होता है। उसके शरीर में मातृचक्र उद्भूत भी हो जायेगा। हे देवदेवेश्वरी ! ऐसा साधक त्रिपुरा का ध्यान करके पुत्रवान होता है। जब चक्र स्थिता पूर्णा त्रिपुरादेवी ध्यात होती है, तब वे खेचरी सिद्धि देती हैं। हे वीरवन्दिते ! महातेजस्विनी ६४ करोड़ योगिनी इस चक्र की अराधना करके स्थित रहती हैं। पहले चक्र के सम्बन्धी पद का, मध्य में आठ बीज का, चक्र के बाहर त्रिपुरा कला का ध्यान करने से रमणीगण के बीच दूसरे कामराज के समान हो जाता है ॥३०-४०॥

पाशाङ्कुशधनुर्बाणैर्मादनैर्मोहयेत्प्रिये ।
त्रैलोक्यसुन्दरीं देवीं किं पुनर्मर्त्ययोषितः ।।४१।।
तथैव शक्तिसंबन्धशस्त्रैस्तन्मयविग्रहः ।
सिद्धगन्धर्वदेवांश्च वशी कुर्यान्न संशयः ।।४२।।
एतामाराध्य देवेशि कामः सौभाग्यसुन्दरः ।
हरिश्च परमेशानि त्रिपुरासाधनात्प्रिये ।।४३।।
त्रैलोक्यमोहनो भूत्वा स्थितिकर्ताऽभवत्सदा ।
एतत्समाराधनेन ब्रह्मा सृष्टिकरोऽभवत् ।
चन्द्रसूर्यौ वरारोहे सृष्टिसंहारकारकौ ।।४४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे प्रिये ! मादकता उत्पन्न करने वाले पाश, अंकुश तथा धनुष-बाण के साथ त्रिपुरा की कला का ध्यान करके साधक त्रैलोक्य की सुन्दरीगण को मोहित कर लेता है, मानुषी महिलाओं की तो बात ही क्या ? इसी प्रकार शक्ति देवी के शस्त्रों के साथ उनके ध्यान में तन्मय साधक सिद्ध-गन्धर्व तथा देवगण को भी वशीभूत कर लेता है। इसमें सन्देह नहीं। हे देवेशी ! इन त्रिपुरसुन्दरी की अराधना करके ही कामदेव इस सौभाग्य से सुन्दर हो सके। हे परमेशानी ! हे प्रिये ! हरि त्रिपुरादेवी की साधना करके त्रैलोक्यमोहक रूप धारण करके जगत् की स्थिति के कर्त्ता हो सके हैं। इनकी ही साधना करके ब्रह्मा सृष्टिकर्त्ता हो सके।

हे वारारोहे ! चन्द्र सूर्य भी इनकी ही साधना करके (त्रिपुरार्चना करके) सृष्टि तथा संहार के कर्त्ता हैं ।।४१-४४।।

एकोनविंश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विंशः पटलः

(त्रिपुरा जपहोम विधान, विविध होमकुण्डफल, रचना प्रकार, वर्त्तुल कुण्डादि वर्णन, कुण्डस्थान, होम प्रयोग, नानाद्रव्य कृत होम फल, शान्त्यादि कर्मान्तर्गत् दिगादि निर्णय)

श्रीदेव्युवाच–

जपहोमविधिं ब्रूहि येन विघ्नं विनाशयेत् ।
साधकानां हिताय त्वं वद शंकर सुव्रत ।।१।।

श्री देवी कहती हैं–हे शंकर ! हे सुव्रत ! साधकों के हितार्थ आप जप-होम विधि कहिये, जिस विधि द्वारा विघ्ननाश होता है ।।१।।

ईश्वर उवाच–

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि जपहोमविधिं प्रिये ।
चक्रं समर्चयेद्देवि सकलं नियतव्रतः ।।२।।
बाह्यं मध्यगतं वाऽपि मध्यं वा चक्रमर्चयेत् ।
उपचारैः समाराध्य सहस्त्रं प्रजपेच्छुचिः ।।३।।

ईश्वर कहते हैं–हे देवी ! हे प्रिये ! जप तथा होमविधि कहता हूँ । श्रवण करो । हे देवी ! नियतव्रत होकर श्रीविद्याचक्र की अर्चना करे । चक्र के बाह्य अंश में, मध्यस्थित अंश में अथवा मध्य चक्र में अर्चना करना चाहिये । तत्पश्चात् उपचार द्वारा चक्र की अर्चना करके पवित्र स्थिति में १००० जप करे ।।२-३।।

तदग्रे संस्थितो मन्त्री तदनन्तफलं भवेत् ।
ध्यात्वाऽथ वा चक्रराजमत्र पूजासमन्वितम् ।।४।।
जपारम्भं सुधीः कुर्यान्महापातकहा भवेत् ।
निगदेनोपांशुना वा मानसेनाथ वा जपेत् ।।५।।
निगदः परमेशानि स्पष्टवाचा निगद्यते ।
अव्यक्तस्तु स्फुरद्वक्त्र उपांशुः परिकीर्तितः ।।६।।
मानसस्तु वरारोहे चिन्तनाक्षररूपवान् ।
निगदेन तु यज्जप्तं लक्षमात्रं वरानने ।।७।।
उपांशुस्मरणेनैव तुल्यं भवति शैलजे ।
उपांशु लक्षमात्रं तु यज्जप्तं कमलेक्षणे ।।८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मानसोच्चारणात्तुल्यमेकेन परमेश्वरि ।
मुद्रासंनद्धदेहः सन्पूर्वोक्तध्यानयोगतः ।।९।।

मन्त्री साधक चक्र के आगे स्थित होकर जप करे, इससे अनन्त फल मिलता है। चक्रराज की पूजा करके तथा ध्यान करके सुधी व्यक्ति को जपारंभ करना चाहिये। इससे साधक अपने महापातकों का नाश कर देता है। उच्चस्वर से, इतना धीरे जिससे स्वयं ही सुन सके ऐसा जप (उपांशु जप) अथवा मानस जप करे। हे परमेशानी ! स्पष्ट वाक्य उच्चारण करके जो जप होता है उसे निगद कहते है। मुख चले लेकिन अन्य कोई न सुने, वह उपांशु है। हे वरारोहे ! मन्त्र के अक्षर का चिन्तनमात्र ही मानस जप है। हे सुन्दरी ! उच्चस्वर से किया एक लाख जप एक उपांशु जप के ही बराबर होता है।

हे परमेश्वरी ! शरीर के अंगप्रत्यंग से मुद्रा करके पूर्वोक्त ध्यान करे ॥४-९॥

लक्षमात्रं जपेद्यस्तु महापापैः प्रमुच्यते ।
लक्षद्वयेन पापानि सप्तजन्मभवान्यपि ।।१०।।
महापातकमुख्यानि नाशयेन्नात्र संशयः ।
ततो लक्षत्रयं जप्त्वा यस्तु मन्त्रं कुलेश्वरि ।।११।।
महापातककोटीस्तु नाशयेन्नात्र संशयः ।
चतुर्लक्षं जपेद्देवि स हि वागीश्वरो भवेत् ।।१२।।
कुबेर एव देवेशि पञ्चलक्षान्न संशयः ।
षड्लक्षजपमात्रेण महाविद्याधरो भवेत् ।।१३।।
सप्तलक्षजपान्मन्त्री खेचरीमेलको भवेत् ।
अष्टलक्षजपान्मन्त्री देवपूज्यो भवेन्नरः ।।१४।।
अणिमाद्यष्टसिद्धीनां नायको भवति प्रिये ।
वशगास्तस्य राजानो योषितस्तु विशेषतः ।।१५।।
नवलक्षप्रमाणं तु जपेत् त्रिपुरसुन्दरीम् ।
रुद्रमूर्तिः स्वयं कर्ता हर्ता साक्षान्न संशयः ।।१६।।

पूर्वोक्त रूप से (तृतीय पटल के २५ श्लोक से २६ पर्यन्त से) त्रिपुरा देवी का ध्यान करके जो एक लक्ष जप करता है, वह महापातक से मुक्त हो जाता है। दो लाख जप करने वाला अपने सात जन्म पर्यन्त प्रधान महापातकों को नष्ट कर देता है। इसमें सन्देह नहीं है। हे कुलेश्वरी ! जो व्यक्ति इस मन्त्र का तीनलाख जप करता है, वह जप फल द्वारा कोटि-कोटि महापातक को नष्ट कर देता है। चार लाख जप करने वाला वागीश्वरी हो जाता है। हे देवेशी ! पांच लाख जप करने वाला कुबेर होता है। इसमें सन्देह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं है । ६ लाख जप वाला विद्याधर हो जाता है । सातलाख जप करने वाला खेचरी सिद्धि प्राप्त करता है । इसमें संदेह नहीं है । आठलाख जपने वाला देवताओं का भी पूज्य हो जाता है । वह अणिमा प्रभृति अष्टसिद्धि का अधिपति भी हो जायेगा । सभी राजा उसके वशीभूत हो जाते हैं तथा स्त्रीगण तो विशेष रूप से उसके वश में आ जाती हैं । इस मन्त्र का ९ लाख जप करके साधक रुद्र मूर्त्ति स्वरूप होकर स्वयं साक्षात् कर्त्ता तथा संहार कर्त्ता बन जाता है । इसमें सन्देह नहीं ॥१०-१६॥

सर्ववन्द्यः सदा सर्वस्वस्थः सौभाग्यभाग्भवेत् ।
यत्र वा कुवचिद्भागे लिङ्गं यत्पश्चिमामुखम् ।।१७।।
स्वयंभूबाणलिङ्गं वा वृषशून्यं जलस्थितम् ।
पश्चिमायतनं चापि इतरद्वाऽपि सुव्रते ।।१८।।
शक्तिक्षेत्रेषु गङ्गायां नद्यां पर्वतमस्तके ।
पवित्रे सुस्थले देवि जपेद्विद्यां प्रसन्नधीः ।।१९।।
तत्र स्थित्वा जपेल्लक्षं साक्षाद्देवीस्वरूपकः ।
ततो भवति विद्येयं त्रैलोक्यवशकारिणी ।।२०।।

पूर्वोक्त ९ लाख जप के और भी फल कहते हैं । साधक सबका वन्दनीय, सर्वप्रकार स्वस्थ तथा सौभाग्यवान् हो जाता है । हे देवी ! सुव्रते ! यदि कही भी पश्चिममुखी शिवलिंग मिले, स्वयम्भु लिंग अथवा बाणलिंग मिले, अथवा जलस्थित वृषभरहित शिवलिंग हो अथवा पश्चिम में मन्दिर हो अथवा अन्य प्रकार का शिव किंवा शक्ति का मन्दिर हो, वहां अथवा शक्ति क्षेत्र में (५१ पीठों के स्थानों पर), गंगातीर पर, नदी तीर पर, पर्वत शिखर पर, अथवा उत्तम पावन स्थल पर रहकर प्रसन्न चित्त से एक लाख जप करना चाहिये । इससे साधक साक्षात् देवी रूप हो जाता है । यह एक लाख मन्त्र जप सम्पन्न करके साधक त्रैलोक्य को वश में कर लेता है ॥१७-२०॥

एवं जपेद्यथाशक्ति होमकर्म समारभेत् ।
किंशुकैर्हवनं कुर्याद्दशांशेन वरानने ।।२१।।
कुसुम्भकुसुमैर्देवि मधुत्रयविमिश्रितैः ।
विधिनोक्तप्रकारेण विघ्नौघं नाशयेत्क्षणात् ।।२२।।
सर्वकामप्रदा राज्यभुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
कुण्डं विरच्य विधिवत्सर्वलक्षणलक्षितम् ।।२३।।

इस प्रकार यथा शक्ति जप करके होमकार्य आरंभ करे । हे वरानने ! हे देवी ! जप का दशांश पलाश पुष्प से होम करे ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रिमधुर (मधु-चीनी-दुग्ध) मिलाकर कुसुम पुष्प द्वारा विधान पूर्वक होम करे। इससे क्षणमात्र में समस्त विघ्न नाश हो जाते हैं। इस होम द्वारा समस्त काम्यफल प्राप्त होता है। इसमे राज्यफलभोगफल, यहां तक कि मुक्ति भी पाई जाती है। सर्व प्रकार लक्षण से लक्षित (अर्थात् शास्त्रोक्त विधि से बना कुण्ड) होम कुण्ड की रचना करके विधानपूर्वक होम करे। इससे पूर्वोक्त फल मिलेगा अन्यथा नहीं मिलेगा ॥२१-२३॥

योनिकुण्डं वाक्प्रदं स्यादाकृष्टिकरणं भगम्।
लक्ष्मीप्रदं वर्तुलं स्याच्चन्द्रार्धे हि त्रयं भवेत्॥२४॥
नवत्रिकोणकुण्डं तु खेचरीसिद्धिदायकम्।
चतुरस्त्रं शान्तिलक्ष्मीपुष्टिवृद्ध्यम्बुकारणम्॥२५॥
षडस्त्रं सर्वसंपत्तिधनसौभाग्यवर्धनम्।
पद्माङ्कं सर्वसंपत्तिकारणं सुरवन्दिते॥२६॥
अष्टपत्रं वरारोहे समीहितफलप्रदम्।
एतानि सर्वकार्याणि चतुरस्त्रे भवन्ति हि॥२७॥
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि चतुरस्त्रस्य लक्षणम्।
चतुरस्त्रं समं हस्तमात्रं विरचयेत्सुधीः॥२८॥
मेखलासहितं देवि शृणु लक्षणमुत्तमम्।
पञ्चदशाङ्गुलं खातं रमणीयं यथा भवेत्॥२९॥

योनि कुण्ड वाक्शक्ति प्रदान करता है, चतुरस्र कुण्ड (६ कोण वाला कुण्ड) समस्त सम्पदा प्रदान करता है। धन सौभाग्य वृद्धि करता है। हे देववन्दिते! पद्माङ्क कुण्ड समस्त सम्पत्ति का कारण है हे वरारोहे! अष्टकोण कुण्ड वांछित फल देता है। अब समस्त कार्य में चतुरस्र कुण्ड का लक्षण कहता हूँ। श्रवण करो। सुधी साधक चारों ओर समान चार हाथ के चतुरस्रकुण्ड का निर्माण मेखला सहित करे। हे देवी! इसका उत्तम लक्षण श्रवण करो। यह १५ अंगुल गहरा तथा रमणीय हो ॥२४-२९॥

कण्ठदेशेऽङ्गुलं त्यक्त्वा नवाङ्गुलसमुन्नता।
षडङ्गुलप्रविस्तारा मेखला प्रथमा भवेत्॥३०॥
द्वितीया मेखला देवि चतुरङ्गुलविस्तरा।
सप्ताङ्गुलोच्चा कर्तव्या तृतीया मेखला ततः॥३१॥
पञ्चाङ्गुलोच्चा देवेशि विस्तारे द्व्यङ्गुला भवेत्।
वेदाग्निपक्षविस्तारा कर्तव्या मेखला प्रिये॥३२॥
कर्तव्यमथ वा खातं द्वादशाङ्गुलसंमितम्।
द्वादशाष्टतदर्धैस्तु मेखला देवि कारयेत्॥३३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चारो ओर चार हाथ विस्तार वाला १५ अंगुल गहरा कुण्ड बनाकर उसमें मेखला करे। कण्ठ में अर्थात् इस गहराई से ऊपर की ओर १ अंगुल छोड़ कर उच्चता में ९ अंगुल तथा विस्तार में ६ अंगुल की प्रथम मेखला बनाये। हे देवी ! द्वितीय मेखला उच्चता में सात अंगुल तथा विस्तार में ४ अंगुल होगी। हे देवेशी ! तृतीय मेखला उच्चता में ५ अंगुल तथा विस्तार में दो अंगुल होगी अथवा मतान्तर से प्रथम मेखला चार अंगुल, द्वितीय मेखला तीन अंगुल, तृतीय मेखला दो अंगुल विस्तार की होगी। अथवा खात अथवा गर्त्त १२ अंगुल का होगा। हे देवी ! उसकी मेखला क्रम से १२, ८ तथा ६ अंगुल करनी होगी ॥३०-३३॥

चतुरङ्गुलमायामो तथा चैवोच्चता भवेत्।
कुण्डस्य पश्चिमे भागे योनिं कुर्यात्सुलक्षणाम् ॥३४॥
द्वादशाङ्गुलदीर्घी तु तथाऽष्टाङ्गुलविस्तराम्।
अश्वत्थपर्णरूपां तु त्रिकोणां वा विचक्षणः ॥३५॥
अथ चैकतमे पक्षे शृणु वक्ष्ये हि लक्षणम्।
अष्टादशाङ्गुलं खातं कुण्डं कुर्याद्विचक्षणः ॥३६॥
चतुरङ्गुलविस्तारा षडङ्गुलसमुन्नता।
मेखला पूर्ववत्कार्या योनिश्चापि तथा भवेत् ॥३७॥
चतुर्विंशाङ्गुलं कुण्डं त्रिकोणं परितः पृथक्।
खातं तु पूर्ववत्कुर्यात्कण्ठे हित्वाऽङ्गुलं तथा ॥३८॥
पूर्ववन्मेखलाः कार्या एकाऽपि च तथा भवेत्।
योनिस्तद्वन्महेशानि त्रिकोणं परिकीर्तितम् ॥३९॥
चतुरस्त्रेण कुण्डेन समं कुण्डं यथा भवेत्।
तथा परिमितं कुर्यात्त्रिकोणादिकमद्रिजे ॥४०॥
योनिकुण्डं योनिरूपं भगाङ्कं भगरूपकम्।
कुर्यात्त्रिकोणवद्देवि चतुरस्त्रस्य संख्यया ॥४१॥

योनिकुण्ड की मेखला ४ अंगुल विस्तार तथा ४ अंगुल उच्च होगी। अब योनिकुण्ड कहते हैं। योनिकुण्ड हेतु पश्चिम की ओर सुलक्षण योनि बनाये। इस योनि की दीर्घता १२ अंगुल तथा विस्तार आठ अंगुल होगा। योनि का आकार पीपल के पत्ते जैसा अथवा त्रिकोण रहेगा विद्वान् व्यक्ति इस योनि का निर्माण करे।

अन्य प्रकार से योनि कुण्ड कहते हैं। विद्वान व्यक्ति अठारह अंगुल का गढ़ा करे। उसकी मेखला ४ अंगुल, विस्तार ६ अंगुल होगा। गर्त्त का एक अंगुल छोड़ कर मेखला चार अंगुल विस्तार तथा ६ अंगुल दीर्घता की होगी। यहां मेखला एक ही होगी। तीन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं होगी। योनि भी अश्वत्थ पत्ते जैसी अथवा त्रिकोण होगी। कुण्ड चारो ओर से २४-२४ अंगुल ही होगा। चारों ओर पृथक्-पृथक् त्रिकोण होगा। इसकी गहराई १८ अंगुल करे। कण्ठ को एक अंगुल छोड़कर चार अंगुल विस्तार तथा ६ अंगुल दीर्घ (उच्च) मेखला होगी। मेखला एक ही होगी। हे महेशानी ! पूर्ववत् योनि भी त्रिकोण होगी।

हे पर्वतनन्दिनी ! चतुरस्त्र कुण्ड जैसा कहा गया है, वैसा ही योनि कुण्ड होगा, लेकिन इसमें त्रिकोण अधिक होगा योनि कुण्ड योनि जैसा तथा भगकुण्ड भग जैसा होगा (गुह्य तथा लिंग के मध्य भाग को भग कहते हैं)। जैसे चतुरस्त्र के चतुर्दिक चार कोण होते हैं, उसी प्रकार से योनिकुण्ड, भगकुण्ड में भी ४ त्रिकोण देना होगा ॥३४-४१॥

चतुर्हस्तमितं सूत्रं वर्तुलाकृति योजयेत्।
वर्तुलं रचयेत्तेन खननं पूर्ववद्भवेत् ॥४२॥
मेखला पूर्ववद्योनिस्तथैव परिकीर्तिता।
अर्धचन्द्रं तु कुण्डं हि परिवेषक्रमेण च ॥४३॥
चतुर्हस्तमितं कुर्यादर्धचन्द्रं यथा भवेत्।
मेखला योनिसहिता पूर्ववत्परमेश्वरि ॥४४॥
नवत्रिकोणकुण्डं तु कथयामि वरानने।
मध्यचक्रेण सदृशं कुण्डं कुर्याद्विचक्षणः ॥४५॥
मध्यत्रिकोणं देवेशि त्रिकोणमिव पूर्ववत्।
मेखलारहितं तेन नवकोणं यथा भवेत् ॥४६॥
सन्धिभेदक्रमेणैव ततः कोणाष्टकं भवेत्।
खनेत्तत्तत्प्रकारेण गणितेन यथाक्रमम् ॥४७॥
मेखलाः पूर्ववत्कार्यास्त्यक्त्वा कण्ठेऽङ्गुलं क्रमात्।
योनिस्तथैव रचयेत्सर्वसौभाग्यवर्धनी ॥४८॥

चार हाथ सूत लेकर मिट्टी में गोलाकार सूत्रपात करके वृत्त बनायें। वहां १५ अंगुल गहरा गढ़ा बनायें। इसको १८ अंगुल गहरा भी कर सकते हैं। कुण्ड के कण्ठ से एक अंगुल छोड़कर ४ अंगुल विस्तृत तथा ६ अंगुल ऊँची मेखला होगी। योनि भी पूर्ववत् पीपल के पत्ते के समान अथवा त्रिकोण रहेगी।

हे परमेश्वरी ! अर्द्धचन्द्राकृति कुण्ड हेतु परिधिक्रम से ४ हाथ चारो ओर खनन करके अर्द्धचन्द्राकृति बनाये। योनिसहित मेखला भी पूर्ववत् होगी। योनि भी पीपल के पत्ते के समान अथवा त्रिकोण होगी। हे वरानने ! अब नवत्रिकोण कुण्ड कहते हैं। विचक्षण व्यक्ति बीच में चक्र के समान कुण्ड बनाये। हे देवेशी ! मध्य त्रिकोण पूर्ववत् त्रिकोणाकृति होगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मेखला रहित रूप में वहा ९ कोण बने, ऐसे त्रिकोण बनाये। सन्धिभेद क्रम से आठकोण होगा। सन्धिभेद क्रम से ८ कोण निष्पन्न हो जायेंगे। उनको गणित के अनुसार माप करके कुण्ड खोदना चाहिये। मेखला तथा सौभाग्यवर्द्धिनी योनि, ये सब पूर्ववत् बनाये ॥४२-४८॥

अष्टपत्रं महेशानि कमलाकृति संभवेत्।
चतुरस्त्रस्य मानेन यथा चाष्टदलं भवेत्॥४९॥
एकत्र खननं चास्य कुर्यान्नेत्रसुखप्रदम्।
मेखला पूर्ववत्कार्या पद्माकृतिसुखावहा॥५०॥

हे महेशानी ! अष्टपत्रकुण्ड पद्माकृति होगा। चतुरस्रकुण्ड जिस प्रकार अष्टदल बन जाये, इस प्रकार से खोदना चाहिये। कुण्ड देखने में अच्छे लगें। इसकी योनि पद्माकृति सुख जनक हो। हे देवेशी ! सर्व समृद्धि प्राप्त करने के लिये ऐसी पद्माकृति योनि बनाये ॥४९-५०॥

योनिस्तथैव देवेशि कुर्यात्सर्वसमृद्धये।
एवं विरच्य कुण्डं हि होमं कुर्याद्विचक्षणः॥५१॥
दीपस्थानं समाश्रित्य कुण्डस्य रचना भवेत्।
वर्तुलं रचयेद्देवि कूर्माकृति सुलोचने॥५२॥
तन्मध्ये नव कोष्ठानि कृत्वा वर्णान्समालिखेत्।
मध्यकोष्ठे क्षेत्रनाम ततोऽन्यत्र समालिखेत्॥५३॥
स्वरयुग्मं क्रमेणैव दिक्षु चाष्टसु योजयेत्।
अवर्गः कथितो देवि कवर्गादिकसप्तमम्॥५४॥
पूर्वादक्रमतो देवि कुबेरान्तं ततो लिखेत्।
लक्षवर्णौ शम्भुकोणे विलिखेत्कूर्मसंज्ञके॥५५॥
यस्मिन्कोष्ठे क्षेत्रनाम तन्मुखं विद्धि पार्वति।
मुखस्य पार्श्वयोः पाणियुग्मं जानीहि पार्वति॥५६॥
ततः पार्श्वद्वयं कुक्षिस्थानं हि सुरवन्दिते।
ततः पादद्वयं विद्धि चान्ते पुच्छं प्रकीर्तितम्॥५७॥
मुखे कार्याणि सिध्यन्ति मनोरथशतानि हि।
करस्थाने महाक्लेशः सर्वकार्यविनाशकृत॥५८॥

ऐसी समृद्धि प्रदायक योनि रचना करके बुद्धिमान व्यक्ति उसमें होम करे। दीपस्थान का आश्रय लेकर कुण्डरचना की जाये। (जहां पूजादि कार्य करने से सभी कार्य सफल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हो, प्रकाशमान हो, वही दीपस्थान है)। हे सुनयने ! पहले कूर्माकार गोलाकृति बनाकर उसमें ९ कोष्ठ बनाकर मातृकावर्ण लिखकर मध्य कोष्ठ में उस क्षेत्र का नाम, लिखे। आठ कोणों में २-२ स्वरवर्ण लिखना होगा। हे देवी ! इनको अ वर्ग कहते हैं। हे देवी ! तदनन्तर पूर्वादिक्रम से उत्तर दिक् पर्यन्त क वर्गादि सातवर्ण लिखे। ईशान कोण में 'ल' 'क्ष' वर्ण लिखे। यही कूर्म चक्र है। इस चक्र में पूर्वोक्त रूप से सभी वर्ण भी लिखे। जिस घर में क्षेत्र का नामाक्षर (प्रथमाक्षर) पढ़ेगा, वही कूर्म मुख है। मुख के दोनो पार्श्व में कूर्म का हाथ होगा। हे पार्वती ! उसके कुछ नीचे दोनों ओर कुक्षि (उदर स्थान) होगा। हे देववन्दिते ! सबसे नीचे कोष्ठ में क्रमशः दो पैर तथा पुच्छ जानो। जहाँ कूर्म का मुख पड़े उसी स्थान पर बैठ कर कार्य करने से सभी अभिलाषा सिद्ध होती है। हाथों के स्थान पर कार्य करने से महाक्लेश होगा। मुखस्थान पर कार्य करने से मन की इच्छा पूर्ण होती है ॥५१-५८॥

उदरे दुःखमधिकं पादयोर्हानिरुच्यते।
पुच्छे तु धनहानिश्च जायते नान्यथा भवेत् ॥५९॥
दीपस्थानं मया प्रोक्तं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम्।
दीपस्थानं पुरे पश्येद्ग्रामे वा विषयेऽपि वा ॥६०॥
यत्र कुत्रापि वा पश्येत्कार्यसिद्धिर्भवेत्प्रिये।
क्षेत्राधिपस्य नाम्ना हि दीपस्थानं विचारयेत् ॥६१॥

कूर्म के उदर स्थान पर होमादि करने से दुःख होगा। पादद्वय पर कार्य से हानि होगी। पुच्छ स्थान पर कार्य से धनहानि होगी। इस प्रकार से स्वर्ग-पाताल-मृत्युलोक में भी दुर्लभ दीपस्थान का वर्णन किया। किसी देश, शहर, ग्राम, आदि में पहले दीपस्थान का निर्णय करना चाहिये। हे प्रिये ! दीपस्थान निर्णय करने पर कार्य सिद्धि होगी। क्षेत्र (स्थान) के अधिपति के नाम से भी दीपस्थान विचार हो सकता है। अर्थात् क्षेत्राधिपति के नाम का प्रथम अक्षर तथा क्षेत्र के नाम का प्रथम अक्षर यदि एक ही कोष्ठ में पड़े, तब उत्तम है ॥५९-६१॥

दीपस्थाने जपं कुर्याद्धोमं च फलदं सदा।
कुण्डं सुलक्षणं कुर्यादीशाने मण्डपस्य च ॥६२॥
अङ्गुष्ठपर्वमात्रोच्चं वालुकामण्डलं कुरु।
गोमयेन न संलिप्तभूम्यां सुस्थलरूपकम् ॥६३॥
तत्र चोल्लेखनं कुर्यात्त्रिरेखाः पश्चिमाः क्रमात्।
पूर्वाग्रे विलिखेत्पश्चात्तिस्त्रो रेखाः प्रदक्षिणाः ॥६४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उत्तरान्तास्ततो देवि लेखनीं तत्र संक्षिपेत्।
प्रोक्षणं च ततः कृत्वा सिन्दूरेण ततः परम्।।६५।।
कुङ्कुमेनाथ वा देवि कर्पूररजसाऽथ वा।
चूर्णेन वा हरिद्राया धान्यपिष्टेन वा प्रिये।।६६।।
त्रिकोणं चैव षट्कोणं वसुपत्रं समालिखेत्।
चतुरस्त्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत्।।६७।।

दीपस्थान में जप-होम सदा फलद होता है। पूजामण्डप के ईशान कोण में सुलक्षण कुण्ड की रचना होगी। कुण्ड का गढ़ा बनाकर मेखला आदि बनाकर कुण्ड के गढ़े में एक अंगुल की परत बालुका की देनी चाहिये। तदनन्तर कुण्ड को गाय के गोबर से लिप्त करके सुस्थल ऐसा बनाये। तदनन्तर जो बालू की परत बिछायी थी, उस पर पश्चिम से पूर्वतक जाती हुई तीन रेखा खींचे। हे देवी ! इसके अनन्तर अब कुछ बनानें का प्रयोजन नहीं है।

हे देवी ! हे प्रिये ! तदनन्तर कुण्ड का प्रोक्षण करके सिन्दूर-कुंकुम-कर्पूर चूर्ण अथवा हल्दी चूर्ण किंवा चावल के चूर्ण से त्रिकोण षट्कोण तथा अष्टपत्र पद्म बनाये। उसके बाह्य में चारद्वार वाला चतुष्कोण अंकित करे ॥६२-६७॥

मध्ये पुष्पं विनिक्षिप्य त्रिपुरेश्या वरानने।
ततः स्त्रुवादिपात्राणां पवित्रीकरणं यजेत्।।६८।।
इध्मदूर्वाश्च दर्भाश्च द्विधा कृत्वा वरानने।
आज्यस्थालीं चरुस्थालीं स्थापयेद्युग्मभेदतः।।६९।।
स्त्रुवं स्त्रुचं ततः पश्चात्प्रणीतां प्रोक्षणीं क्रमात्।
द्वन्द्वशः परमेशानि स्थापयाधोमुखानि च।।७०।।
अर्घ्यपात्रस्थमुदकं गृहीत्वा प्रोक्षणीं यजेत्।
त्रिधा चोत्पवनं कृत्वा प्रोक्षयेत्तेन वारिणा।।७१।।

स्थण्डिल (वेदी) के मध्य में त्रिपुरादेवी के लिये पुष्प प्रदान हेतु यह मन्त्र कहे "ॐ त्रिपुरादेव्यै नमः'। हे वरानने ! इसके पश्चात् स्रुव, स्रुक्, प्रणीता, प्रोक्षणी, आज्यस्थाली, चरुस्थाली आदि का पवित्रीकरण करना चाहिये। काष्ठ (समिध), दूर्वा, कुश को दो-दो भाग में करके घृतपात्र, चरुपात्र पास-पास रखे। तदनन्तर घृत पात्र एवं चरुपात्र के पश्चात् स्रुव और उसके शिर के पास घृतधारा देने के लिये स्रुच, प्रणीता, प्रोक्षणी, दो-दो करके रखना चाहिये। हे वरानने ! परमेशानी ! अर्घ्यपात्र से जल ग्रहण करके उसे प्रोक्षणी पात्र में रखे। तदनन्तर उत्पवन (कुश निर्मित पवित्री) के उर्ध्वभाग को दाहिने हाथ की अनामिका

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तथा अंगूठे से पकड़कर अधोभाग को बायें हाथ की अनामिका तथा अंगूठे से पकड़ कर बाये हाथ को दाहिने पर रखकर नीचे करे तथा पवित्री का प्रोक्षणी के जल से स्पर्श कराये। यह तीन बार करना होगा। तीन बार यह करके इस जल से प्रोक्षणी पात्र का प्रोक्षण करना होगा। इसी प्रकार से स्रुव, स्रुक्, आज्यपात्र, चरुपात्र, प्रणीता का पवित्रीकरण करना होगा ॥६८-७१॥

तानि सर्वाणि पात्राणि पवित्रीकरणं भवेत्।
उन्मुखानि ततः कृत्वा बालया चाभिमन्त्रयेत्॥७२॥
परिस्तीर्य च दूर्वाभिः कुण्डस्य परितः प्रिये।
पूर्वाग्रमुत्तराग्रं च परिस्तरणमुच्यते॥७३॥
स्त्रुवं गृहीत्वा वामेन करेण सुमुखं ततः।
दुर्भाङ्कुरेण तद्वक्त्रं पश्चिमात्पूर्वदेशतः॥७४॥
त्रिवारं परिमृज्याथाधस्तत्करणमानयेत्।
उपरिष्टात्ततो देवि यावद्वक्त्रं तु मन्त्रयेत्॥७५॥

पात्रों को पवित्र करके चित् करे। ऊपर की ओर मुख करके रखे। अब त्रिपुराबालामन्त्र "ऐं क्लीं सौः नम" से पात्रों को अभिमन्त्रित करके रखे। हे प्रिये! तत्पश्चात् कुश के चारो ओर दूर्वा विछाये। पहले दूर्वा बिछाकर दूर्वा का पूर्वाग्र तथा उत्तराग्र पुन दूर्वा से ढ़ाकना होगा। हे देवी! तब बायें हाथ में स्रुव लेकर कुश द्वारा उसके मुख से लेकर अन्त तक तीन बार मार्जना करके उसे कुश पर रखे। अब स्रुव के ऊपर मार्जना इस मन्त्र से करे। "ऐं क्लीं सौः त्रिपुराबालायै नमः" ॥७२-७५॥

बालयाऽथ वरारोहे पवित्राणि भवन्ति हि।
मूलविद्यां समुच्चार्य कुण्डाय नम आलिखेत्॥७६॥
अनेन मनुना देवि कुण्डं सम्पूजयेत्सुधीः।
कामेश्वरीं कुण्डमध्ये सकामामृतुसंयुताम्॥७७॥
समावाह्य च संपूज्य तद्गर्भे वह्निमानयेत्।
मूलविद्यानेत्रमन्त्रार्णद्वयेन विलोकयेत्॥७८॥
अस्त्रमन्त्रेण संरक्ष्य संपुटस्थं ततः परम्।
भ्रामयेत्कुण्डपरितस्त्रिधा दक्षिणतः क्रमात्॥७९॥

हे वरारोहे! बाला मन्त्र से स्त्रुक्-स्त्रुवादि पवित्र हो जाते हैं। 'ऐं क्लीं सौः' कहकर स्त्रुक्-स्त्रुवादि का कुशमार्जन करने से वे पवित्र होते हैं। हे देवी! मूलविद्या 'ऐं क्लीं सौः' का उच्चारण करके 'कुण्डाय नमः' द्वारा कुण्ड की पूजा की जाये। सुधी व्यक्ति "ऐं क्लीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सौः कुण्डाय नमः' से कुण्ड पूजा करके कुण्डमध्य में ऋतुसंयुता कामेश्वरी का आवाहन करके पूजा करके उसके गर्भ में वह्नि की पूजा करे अर्थात् वह्नि रूप बीज प्रदान करे। कामेश्वरी का आवाहन मन्त्र है "कामेश्वरि मावाह्यामि कामेश्वरि इहागच्छ इहागच्छ। इनका ध्यान मन्त्र है "कामेश्वरीमृतुस्नाता सकामां वरदायिनीम्। कामेश्वरेण संयुक्त क्रीड़ाभावसमन्विताम्। यह ध्यान करके 'क्लीं कामेश्वर्यै नमः' से पूजा करनी चाहिये। पूजोपरान्त वह्नि प्रदान करके यह भावना करनी चाहिये कि कामेश्वरी के गर्भ में शिव बीज प्रविष्ट हो गया।

तदनन्तर मूलविद्या से नेत्र मन्त्र हेतु दो अक्षर 'ऐं क्लीं' का उच्चारण करके कुण्ड अथवा वेदी का दर्शन करे। तत्पश्चात् 'फट्' मन्त्र कहते बायीं हथेली पर दाहिने हाथ की तर्जनी तथा मध्यमा का आघात तीन बार प्रदान करके पात्रस्थ अग्नि को कुण्ड के ऊपर दक्षिण की ओर से प्रदक्षिणाक्रमेण ३ बार घुमाये ॥७६-७९॥

संपुटादग्निखण्डं तु हुंफडन्तेन संत्यजेत्।
क्रव्यादंशं कोणभागे राक्षसे वीरवन्दिते ॥८०॥
कवचेन च संपूज्य जानुभ्यामवनिं गतः।
कुण्डमध्ये प्रतिष्ठाप्य कामबीजं च वह्नि च ॥८१॥
मूर्तये नम आलिख्य मनुना पूजयेच्छिवाम्।
नाभिमण्डलदेशस्थवहन्नाडीपुटक्रमात् ॥८२॥
ज्ञानाग्निं बाह्यवह्निं च एकीकृत्य प्रपूजयेत्।
मूलविद्यां समुच्चार्य आं सोऽहमिति चोच्चरेत् ॥८३॥
वह्निचैतन्यमुच्चार्य ङेन्तं हृन्मनुसंयुतम्।
अनेन मनुना गर्भे कामेश्वर्या विचिन्तयेत् ॥८४॥

हे वीरवन्दिते ! तदनन्तर पात्रस्थ अग्नि से एक टुकड़ा अग्नि उठाकर 'हुं फट्' कह कर नैर्ऋत कोण में इस क्रव्यादंश को फेके। तदनन्तर 'हुँ' मन्त्र से वह्नि की पूजा करके, अपने दोनो घुटने पृथिवी पर रखकर इस अग्नि को कुण्ड में स्थापित कर देना चाहिये। तदनन्तर कामबीज 'कं' कहकर बह्निमूर्त्तये नमः, अर्थात्–कं वह्निमूर्त्तये नमः से वह्नि की इस प्रकार पूजा करके "ऐं क्लीं सौः' से त्रिपुरादेवी का पूजन करना चाहिये। "नाभिमण्डल से प्रश्वास छोड़ने के साथ मानो अन्दर से ज्ञानाग्नि बाहर निकली और वह इस कुण्डस्थ अग्नि के साथ मिलकर एक हो गयी यह भावना करते-करते पूजा करनी चाहिये। पूजा मन्त्र वही मूलमन्त्र है। अर्थात् पूजामन्त्र अब होगा—

ऐं क्लीं सौः आं सोऽहम्+वह्नि चैतन्याय नमः

तदनन्तर—ऐं क्लीं सौः आं सोऽहम् वह्नि चैतन्याय नमः। यह मन्त्रोद्धार होगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसी मन्त्र से कामेश्वरी के गर्भ में शिवबीज रूप वह्नि का चिन्तन करके ज्ञानाग्नि से संयुक्त हो गयी बाह्याग्नि का पूजन करना चाहिये ।।७९-८४।।

वह्नेर्देहे षडङ्गानि योजयेत्सुरवन्दिते ।
सहस्रार्चिः स्वस्तिपूर्ण उत्तिष्ठ पुरुषस्तथा ।।८५।।
धूमव्यापी सप्तजिह्वो धनुर्धर उदाहृतः ।
चतुर्थ्यन्तान्षडङ्गेषु योजयेत्कमलेक्षणे ।।८६।।
तारं वैश्वानरप्रान्ते जातवेद इहाऽऽवह ।
लोहिताक्ष ततः सर्वकर्माणीति च साधय ।।८७।।
वह्निजायान्वितो मन्त्रो वह्निं सम्यक्समर्चयेत् ।
ध्यायेद्वह्निं हेमवर्णं शक्तिस्वस्तिकधारिणम् ।।८८।।
वरदायकशोभाढ्यं सुवर्णवरभूषणम् ।
एवमग्निं समभ्यर्च्य तन्मुखे कमलेक्षणे ।।८९।।
षट्कोणं चिन्तयेत्तत्र सप्त जिह्वाः समर्चयेत् ।
वह्निवायु वामकर्णं भूषितं नादबिन्दुना ।।९०।।
अनेन योजयेद्देवि क्रमेण रसनाः प्रिये ।
यकारादिसकारान्ता जिह्वाः सप्त भवन्ति हि ।।९१।।

हे देववन्दिते ! अग्नि देह में ६ अंगों की योजना करनी चाहिये । यथा–एक-एक फूल अग्नि में छोड़ते कहे "ॐ सहस्रार्चिषे हृदयाय नमः । ॐ स्वस्ति पूर्णाय शिरसे स्वाहा, ॐ उत्तिष्ठपुरुषाय शिखायै वषट् । ॐ धूमव्यापिने कवचाय हुँ । ॐ सप्तजिह्वाय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ धनुर्धराय करतल पृष्ठाभ्यामस्त्राय फट् । यह षडङ्गन्यास होगा । तत्पश्चात् "ॐ वैश्वानर जातवेद इहावह लोहिताक्ष सर्वकर्माणि साधय स्वाहा एष गन्धः अग्नये नमः" इस प्रकार से पञ्चोपचार से पूजा करे । पूजा के पूर्व अग्नि का ध्यान करना चाहिये । ध्यानार्थ–सुवर्णवर्ण शक्ति तथा स्वस्तिकधारी, वरद मुद्रा तथा अभय मुद्रा से शोभान्वित श्रेष्ठ सुवर्ण अलंकारों से युक्त अग्नि का ध्यान करे । हे कमलनयन ! इस प्रकार से अग्नि की पूजा करके अग्नि के मुख में षट्कोण की चिन्तना करे । इस अग्निमुख में अग्नि की सप्तजिह्वा का ध्यान करना चाहिये । वह्नि (र), वायु (य), वामकर्ण (उ) नाद (ँ) बिन्दु (०) द्वारा भूषित अर्थात् 'र यूँ' बीज से क्रमशः अग्नि को रसना आदि से युक्त करे । अग्नि की सप्तजिह्वा है 'य, र, ल, व, श, ष, स ।।९५-९१।।

पद्मरागतप्तहेमवर्णा हि सुरवन्दिते ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हिरण्याख्याः शम्भुकोणे पूजयेत्सुरवन्दिते ।।९२।।
वैदूर्याभा सुवर्णा तु कनकाख्या ततः परम् ।
पूर्वकोणे समभ्यर्च्य पूजयेद्रुद्रलोहिताम् ।।९३।।
उद्यदादित्यसंकाशां रक्ताख्यां वह्निकोणके ।
नीलां नीलप्रभां देवि कृष्णाख्यां राक्षसे यजेत् ।।९४।।
श्वेतां मुक्ताप्रभां देवि शुभ्राख्यां पश्चिमे यजेत् ।
धूमिनीं पद्मरागाभां वायौ रक्ततरां यजेत् ।।९५।।
करालीं चन्द्रकोट्याभां बहुरूपां तु मध्यगाम् ।
दक्षिणोत्तरभागस्थां पूजयेत्सर्वसिद्धिदाम् ।।९६।।
क्रमेण जिह्वाबीजान्ते नामानि परिपूजयेत् ।
अग्निर्हुतवाहनेऽथ हुताशनेऽथ वर्त्मने ।।९७।।
देवमुखः सप्तजिह्वो वैश्वानरो जातवेदाः ।
क्रमेण पूजयेतत्र अष्टौ नामान्यनुक्रमात् ।।९८।।
एवमग्निं तु संपूज्य कामेशीगर्भसंभवम् ।
दर्भकङ्कणमादाय करबन्धं सुलोचने ।।९९।।

हे देववन्दिते ! अग्नि की जिह्वाओं का वर्ण पद्मराग के समान तप्त सुवर्ण वत् है। शंभुकोण अर्थात् ईशान कोण में हिरण्या नामक जिह्वा भी पूजा करे। पूजा की रीति यह है—एष गन्धः सरयूं हिरण्यार्चिषे नमः। इसके पश्चात् दीप्तियुक्त (प्रवालदीप्ति) उत्तमवर्ण वाली कनका नामक जिह्वा की पूजा पूर्व दिक् में करे। मन्त्र है–एष गन्धः षरयूं कनकार्चिषे नमः।

इसके पश्चात् अग्निकोण में रुद्रलोहित (रुद्र के समान लोहितवर्ण) उदीयमान सूर्य के समान रक्ता नामक जिह्वा की पूजा करें। यथा–एष गन्धः शरयूं रक्तार्चिषे नमः।

राक्षस कोण (नैर्ऋत कोण में नीलवर्ण, नील दोप्ति वाली कृष्णा नामक जिह्वा की अर्चना करे। यथा–एष गन्धः वरयूं कृष्णार्चिषे नमः इत्यादि रूप से पूजा करे।

हे देवी ! पश्चिम दिक् में श्वेतवर्ण, मुक्ता के समान दीप्तिवाली, शुभ्रानामक जिह्वा का पूजन करें। यथा-एषगन्धः ल र यूं शुभ्रार्चिंषे नमः। वायुकोण में पद्मरागवत् आभा युक्ता अतिशय रक्तवर्णा धूम्रिणी नामक जिह्वा की पूजा करें। यथा-एष गन्धः ररयूं धूमिन्यर्चिषे नमः।

मध्यभाग में बहुरूपा कोटिचन्द्र प्रभायुक्ता कराली नामक जिह्वा की पूजा करनी चाहिये। यथा-अरुष गन्धः य र यूं करालार्चिषे नमः। दक्षिण तथा उत्तर में सर्वसिद्धिदा की पूजा करनी चाहिये। ॐ एष गन्धः सर्वसिद्धदायै नमः। इसी प्रकार से जिह्वा के बीज

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के अन्त में नाम उल्लेख करके पूजा करनी चाहिये। अग्नि, हुतवाहन, हुताशन, वर्त्मा, देवमुख, सप्तजिह्व, वैश्वानर, जातवेदा इन नाम से पूजा करना चाहिये। हे सुनयने ! इस प्रकार से कामेश्वरी गर्भ से उत्पन्न अग्नि की पूजा करके कुश से बना कंकण (हस्तबन्धन) करके मूलमन्त्र तथा चतुर्थ बाण से होम करना चाहिये ॥९२-९९॥

मूलमन्त्रेण बाणेन चतुर्थेन च होमयेत् ।
गर्भाधानं विधायेत्थं सीमन्तोन्नयनादिकम् ॥१००॥

अर्थात् 'ऐं ब्लूं अग्नेगर्भाधानं सम्पादयामि स्वाहा' इस मन्त्र से अग्नि में ३ अथवा ५ बार आहुति देकर अग्नि का गर्भाधान सम्पन्न करे। इस प्रकार से गर्भाधान करके सीमतोन्नयन प्रभृति सम्पादित करनी चाहिये। जैसे—

ऐं ब्लूं अग्ने: सीमन्तोन्नयनं सम्पादयामि स्वाहा' कामेश्वरी गर्भ से उत्पन्न अग्नि का चूड़ाकरण आदि क्रिया मूलमन्त्र से (भावना द्वारा) करनी चाहिये। अर्थात् ''ऐं अग्नेश्चूड़ाकरणं सम्पादयामि स्वाहा' इस प्रकार से गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकरण, उपनयन, महाव्रत, उपनिषत् स्नान, गोदान, विवाह की भावना करते हुये, जिस कर्म को करना हो उसका नाम लेकर जैसे चूड़ाकरण के पश्चात् अन्य संस्कार का क्रमश: नाम लेते हुये पूर्ववत् आहुति देकर समस्त संस्कार करना चाहिये ॥१००॥

कामेशीगर्भजातस्य वह्नेश्चौलादिसत्क्रियाः ।
मूलमन्त्रेण संचिन्त्य बाह्यचक्रं समचंयेत् ॥१०१॥
षट्कोणेषु षडङ्गानि वसुकोणेषु मातरः ।
लोकपालांश्च भूबिम्बे वह्निं प्रौढं विचिन्तयेत् ॥१०२॥

तदनन्तर साधक वाह्यचक्र अर्थात् त्रिकोण के बाहर जो चक्र हैं, उसमें पूजा ''ॐ बाह्य चक्राय नम: से करे। षट्कोण के ६ कोणों में षड़ङ्ग पूजा हृदय–शिर–शिखा-कवच–नेत्र–अस्त्र से करे। यथा–ॐ एष गन्धः अग्नेर्हृदयायनमः, शिरसे स्वाहा' आदि रूप से पूजा सम्पन्न करके मातृगण की पूजा की जानी चाहिये। यथा–ह्रीं एष गन्धः ब्राह्मयै नमः इत्यादि। तदनन्तर भूपुर में इन्द्रादि दसलोकपालों की पूजा करके प्रकट अग्नि का अथवा मातृगण का, भूपुर में लोकपाल तथा वह्नि चिन्तन करे ॥१०१-१०२॥

ब्रह्माणं दक्षिणेऽभ्यर्च्य घृतस्थालीं प्रपूजयेत् ।
वह्निं सम्पूज्य विधिवत्तन्मुखे शैलसंभवे ॥१०३॥
चक्रराजं समावाह्य सर्वरश्मिसमन्वितम् ।
सर्वसिंहासनैः सेव्यमुपचारैः समर्चयेत् ॥१०४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

धूपं विस्तारयेत्सम्यक्कुण्डमण्डपपूरितम् ।
दीपं च दर्शयेन्मन्त्री ततो दीपान्बहु प्रिये ।।१०५।।
मालाकारेण संवेष्ट्य मेखलात्रयमाद्रिजे ।
विस्तार्य चरुकं पश्चात्सर्वदिक्षु सुखाप्तये ।।१०६।।
नित्यहोमं ततः प्रोक्तं कामनाहोममाचरेत् ।
मालतीजातिकामल्लीकुसुमैर्मधुमिश्रितैः ।।१०७।।

दक्षिणदिक् में "ॐ एते गन्धपुष्पे ब्रह्मणे नमः' से ब्रह्मपूजन करके घृतपात्र का पूजन करे। हे पर्वतनन्दिनी ! अग्नि की सविधि पूजा करके उनके मुख में सर्वरश्मियुक्त सर्वसिंहासन (पंचसिंहासन) सेव्य श्रीविद्या चक्र का आवाहन करके उपचारों के साथ पंचोपचार, दशोपचार अथवा षोड़शोपचार से पूजा करे। होमकुण्ड तथा पूजामण्डल पूर्ण (भर जाये) हो, ऐसे सम्यक् भाव से धूप देना चाहिये।

हे प्रिये ! हे पर्वतकन्ये ! तदनन्तर मन्त्र साधक दीप प्रदान करे। मेखलात्रय को वेष्ठित करके मालाकार से अनेक दीपक सजाना होगा। तदनन्तर सुख की प्राप्ति के लिये दिक्देवतागण को चरु प्रदान करें।

मन्त्र होगा–ॐ प्राच्यै दिशे नमः, ॐ उदीच्यै दिशे नमः' इत्यादि। पहले नित्य होम करके तब अपनी कामना पूर्त्ति हेतु काम्य होम करना चाहिये। मधुमिश्रित, घृतलिप्त मालती, जूही तथा मल्लिका पुष्पों से होम करे ।।१०३-१०७।।

घृतपूर्णैर्हुनेद्देवि वागीशत्वं प्रजायते ।
मूकस्यापि च मूढस्य शिलारूपस्य नान्यथा ।।१०८।।
जपापुष्पैराज्ययुक्तैः करवीरैस्तथाविधैः ।
हवनान्मोहयेन्मन्त्री लोकत्रयनिवासिनः ।।१०९।।
कर्पूरकुङ्कुमे देवि मिश्रं मृगमदेन हि ।
हवनान्मदनो देवि मन्त्रिणा विजितो भवेत् ।।११०।।
सौभाग्येन विलासेन सामर्थ्येनापि सुव्रते ।
चम्पकैः पाटलैर्हुत्वा श्रियं प्रोल्लसिताम्बराम् ।।१११।।
मन्त्री प्राप्नोति महतीं स्तम्भयेज्जगतीभिमाम् ।
श्रीखण्डं गुग्गुलं चन्द्रमगरुं होमयेत्ततः ।।११२।।

इससे साधक को वागीश्वरत्व प्राप्त होता है। मूर्ख, बुद्धिहीन, पत्थर जैसे (स्तब्ध) व्यक्ति भी वागीश्वर हो जाते हैं। इसमें अन्यथा नहीं है। घृत से आप्लुत जवा फूलों से तथा घृत से आप्लुत कनेर के पुष्पों द्वारा होम करने से होमकारी व्यक्ति त्रिलोक के प्राणीगण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

को मोहित कर लेता है। हे देवी ! कस्तूरी मिश्रित कर्पूर तथा कुंकुम से होम करने वाले साधक के सामने सौभाग्य-विलासिता एवं सामर्थ्य में कामदेव भी पराजित हो जाते हैं। चम्पक पुष्प अथवा पाटल पुष्प होम से साधक शोभमान श्री की प्राप्ति करता है तथा इस जगत में साधक के समक्ष सभी का मुख बन्धन हो जाता है। लोग कुछ भी बोल नहीं सकते। श्री चन्दन, गुग्गुलु, कर्पूर एवं अगुरु से होम करे ॥१०८-११२॥

राजनागेन्द्रदेवानां पुरन्ध्रीर्वशमानयेत् ।
सर्वलोका वशास्तस्य भवन्त्येव न संशयः ॥११३॥
लाक्षाहोमाद्भवेद्राज्यं दारिद्र्यभयपीडितः ।
दुर्गोपसर्गशमनं पलत्रिमधुहोमतः ॥११४॥
दूरस्थितानां देवेशि गुरुणा प्रोक्तमार्गतः ।
होमं कुर्याद्वश्यकामैरन्यथा निष्फलं भवेत् ॥११५॥
रुधिराक्तेन च्छागस्य मांसेन निशि होमतः ।
मधुरत्रययुक्तेन गुरुणोक्तविधानतः ॥११६॥
परराष्ट्रं महादुर्गं समस्तं स्ववशं नयेत् ।
महापलेन देवेशि रिपोः सैन्यं विनाशयेत् ॥११७॥

इस होमं द्वारा साधक राजमहिषि, नागों की स्त्री, देवगण की स्त्री (अप्सरा) को भी वशीभूत कर लेता है और समस्त लोक होमकर्त्ता के वश में हो जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं है। लाक्षा द्वारा होम करने पर दारिद्र्य भय से पीड़ित भी राजा हो जाता है। तीन पल मधु से होम करने पर दुर्ग में सेना निरोध (सैन्य दुर्बलता आदि) विघ्न शान्त हो जाते हैं। हे देवेशी ! गुरु द्वारा कही विधि के अनुसार दूर स्थित व्यक्ति को वश में करने की कामना करके (संकल्प करके) तब होम करे। अन्यथा कामना (संकल्प) के बिना होम निष्फल हो जाता है। हे देवेशी ! मधु+शर्करा-दुग्ध मिश्रित बकरी के रक्तलिप्त मांस से रात में गुरु उपदिष्ट विधि से होम करने पर अन्य राजा, महान् दुर्ग आदि वशीभूत हो जाते हैं ॥११३-११७॥

खेचरो जायते रात्रौ कृत्वा होमं चतुष्पथे ।
क्षीरं मधु दधि त्वाज्यं पृथग्घुत्वा वरानने ॥११८॥
आयुर्धनमथाऽऽरोग्यं समृद्धिर्जायते नृणाम् ।
क्रमेण शैलजे क्षीरमधुभ्यां मृत्युनाशनम् ॥११९॥
दधिमाक्षिकहोमेन सौभाग्यं धनमाप्नुयात् ।
सितया केवलं होमो वैरिस्तम्भनकारकः ॥१२०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महामांस (नरमांस) से होम द्वारा शत्रुसेना का नाश होगा।

हे देवेशी ! चौराहे पर रात्रि होम द्वारा (रात्रि में) खेचरी सिद्धि उत्पन्न होती है। अर्थात् साधक आकाशमार्ग में गमन करता है। हे वरानने ! दूध, मधु, दधि, घृत से पृथक्-पृथक् होम करने से मनुष्य आयु–धन-आरोग्य तथा समृद्धि अर्जित करता है। हे पर्वतनन्दिनी ! दुग्ध तथा मधु से क्रमशः होम करने से मृत्यु का नाश होगा। दधि-मधु से पृथक्-पृथक् होम से सौभाग्य तथा धन प्राप्ति होगी। केवल मिश्री अथवा चीनी के बताशा से होम द्वारा शत्रु स्तम्भन होता है ॥११८-१२०॥

होमो दधिमधुक्षीरलाजभिर्वीरवन्दिते।
रोगहन्ता कालहन्ता मृत्युहन्ता न संशयः ॥१२१॥
कमलैररुणैर्होम सम्यक्संपत्तिदायकः।
रक्तोत्पलैर्जगद्वश्यं राजानो वशगाः क्षणात् ॥१२२॥
नीलोत्पलैर्महादुष्टा वशमायान्ति नान्यथा।
श्वेतोत्पलैः श्रियं वाचं लभते हवनात्प्रिये ॥१२३॥
श्वेतैश्च ब्रह्मकमलैर्लक्ष्मीं सौभाग्यमाप्नुयात्।
कह्लारहवनान्मन्त्री सौभाग्यं च धनं लभेत् ॥१२४॥

हे वीरवन्दिते ! दधि, मधु, दुग्ध तथा लावा द्वारा होम रोगविनाश कारी, कालनाशक, मृत्युनाशक होता है। इसमें सन्देह नहीं है। तनिक लाल पद्म से होम द्वारा सम्पत्ति प्राप्त होती है। गहरे लाल पद्म से होम द्वारा संसार तथा राजागण क्षणमात्र में वशीभूत हो जाते हैं। हे प्रिये ! नीलपद्म से होम करने पर अतिशय दुष्ट व्यक्ति भी वश में हो जाते हैं। यह बात अन्यथा नहीं होती। हे प्रिये ! श्वेत कमल से होम द्वारा होमकारी व्यक्ति के प्रति सभी प्रियवाक्य कहेंगे। श्वेत ब्रह्मकमल (यह पूर्व तिब्बत में ही मिलता है) जनित होम से लक्ष्मी एवं सौभाग्य की प्राप्ति होती है। कल्हार (एक प्रकार का श्वेत पद्म) पुष्प से होम करने पर मन्त्र साधक सौभाग्य तथा धन प्राप्त करता है ॥१२१-१२४॥

पूर्णं दाडिमहोमेन वशी कुर्यान्महासुरान्।
मातुलुङ्गफलोद्भूतहोमेन क्षत्रिया वशाः ॥१२५॥
नारङ्गफलहोमेन वैश्या वश्या भवन्ति हि।
कूष्माण्डफलहोमेन शूद्रा वश्यास्तथाऽपरे ॥१२६॥
द्राक्षाफलैः सिद्धयोऽष्टौ लक्षहोमान्न संशयः।
कदलीफलहोमेन लक्षमात्रेण भूभृतः ॥१२७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वश्यास्तु दशसंख्याका भवन्त्येव न संशयः ।
खर्जूरीफलहोमेन लक्षमात्रेण भूभुजः ।।१२८।।

अनार के फल से सम्पूर्ण होम करने वाला राजाओं को भी वश में कर सकता है। मातुलुंग (बिजौरानीबू) फल से होम करने से क्षत्रिय वशीभूत होते हैं। नारंग (यह कमला नीबू की तरह अत्यन्त खट्टा फल है) फल से होम द्वारा वैश्य वशीभूत होते है। कूष्माण्ड फल से होम करने पर शूद्रगण वशीभूत हो जाते हैं। अंगूर अथवा किशमिश से होम करने से (एक लाख होम से) अणिमा आदि अष्ट सिद्धि प्राप्त होती है। इसमें सन्देह नहीं है। कला से होमे एक लाख करने पर दसो राजावशीभूत होते हैं। खर्जूर फल से एक लाख होम द्वारा बीस राजा वश में होते हैं ॥१२५-१२८॥

वश्या विंशतिसंख्याका इत्याज्ञा पारमेश्वरी ।
नारिकेलफलैर्होमात्समृद्धिर्जायते प्रिये ।।१२९।।
लक्षमात्रेण मन्त्रज्ञो राजाऽपर इव प्रिये ।
पक्वाम्रफलहोमेन लक्षमात्रेण सुन्दरि ।।१३०।।
चतुःसमुद्रपर्यन्तां मेदिनी वशमानयेत् ।
पनसस्य फलैर्होमाल्लक्षेण शतभूभुजः ।।१३१।।
वशा भवन्ति देवेशि नात्र कार्या विचारणा ।
तिलाज्यहोमाद्देवेशि कार्यसिद्धिर्भवोत्प्रिये ।।१३२।।
राजिकालवणाभ्यां तु दुष्टलोकान्वशं नयेत् ।
गुग्गुलस्य च होमेन सर्वदुःखानि नाशयेत् ।।१३३।।
कुङ्कुमेन हुनेद्देवि त्रैलोक्यं वशमानयेत् ।
वैरिणो वशगाः शीघ्रं चन्दनस्यापि होमतः ।।१३४।।
रक्तचन्दनहोमेन वश्या हि पुरुषाः स्त्रियः ।
कर्पूरस्य च होमेन वाग्वश्यं जायते नृणाम् ।।१३५।।
कस्तूरीहोमतो देवि राजानो राजमन्त्रिणः ।
वश्या भवन्ति सकलाः परिवारयुताः प्रिये ।।१३६।।

हे प्रिये ! नारिकेल फल से एक लाख होम करने पर मन्त्री व्यक्ति ऊपर (एक) राजा जैसा हो जाता है। हे सुन्दरी ! पक्के आम से १ लाख होम करने वाला चार समुद्र तक पृथिवी को वश में कर लेता है। हे देवेशी ! कटहल से एक लाख होम करने पर १०० राजा वश में होते हैं। इस विषय में विचार का कोई प्रयोजन नहीं है। हे प्रिये ! हे देवेशी ! घृत सिक्त तिल से होने पर होमकारी का इच्छित कार्य सफल होता है। पीली सरसों अथवा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

काली सरसों तथा नमक द्वारा (नमक मिश्रित) हवन से सभी दुष्ट वशीभूत हो जाते है। गुग्गुलु होम से सर्वदुःख नष्ट होते हैं। हे देवी ! कुंकुंम होम से जगत् वशीभूत होता है। श्वेत चन्दन काष्ठ होम द्वारा सभी शत्रु वश में हो जाते हैं। रक्त चन्दन की लकड़ी द्वारा होम से पुरुष तथा स्त्री वशीकरण होता है। कर्पूर होम से लोग साधक की बात मानने लगते हैं। हे देवी ! हे प्रिये ! कस्तूरी से किये होम द्वारा–राजा, राजमन्त्री तथा उनके परिवार जन सभी होम कर्त्ता के वशीभूत हो जाते हैं ॥१२९-१३६॥

तिलतण्डुलहोमेन शान्तिर्भवति मन्दिरे ।
शर्करागुडहोमेन सर्वकामार्थसाधकः ।।१३७।।
घृतपायसहोमेन सिता युक्तेन मान्त्रिकः ।
त्रैलोक्यं वशमायाति धान्यसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ।।१३८।।
सोपस्करैश्च वटकैरुपसर्गान् विनाशयेत् ।।१३९।।
बन्धूककुसुमैर्होमः सर्वशत्रून् विनाशयेत् ।
जपापुष्पैर्जगद्वश्यं वनपुष्पैश्च मोहनम् ।।१४०।।

तिल तथा चावल कृत होम से गृहशान्ति, चीनी तथा गुड़ के होम से काम्य प्राप्ति, शर्करामिश्रित घृत तथा पायस मिला कर होम से धान्य सिद्धि तथा वशीकरण होता है। जो अन्न से होम करते हैं उनको अन्न सिद्धि होती है। व्यंजन युक्त उर्द के बड़ा से होम करने पर सभी रोग नष्ट होते हैं। बन्धूक पुष्प से होम से सर्वशत्रु विनाश होता है। जवा पुष्प के होम से जगत् वश्यता मिलती है। वनपुष्प होम द्वारा जगत् मोहन होता है ॥१३७-१४०॥

बकुलस्य हुनेत्पुष्पैः सौभाग्यं जायते महत् ।
दशाङ्गधूपहोमेन सौभाग्यमतुलं भवेत् ।।१४१।।
जम्बूफलैः स्त्रियो वश्याः कूष्माण्डैर्दैत्यकन्यकाः ।
श्रीफलैरतुलां लक्ष्मीं पत्रैर्वा सुरवन्दिते ।।१४२।।
इक्षुखण्डैः सुखावाप्तिस्तद्रसाद्राजकन्यकाः ।
वश्या भवन्ति देवेशि नारिकेलजलेन वा ।।१४३।।
केवलं घृतहोमेन वरदाः सर्वशक्तयः ।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मानं हवनसिद्धिदम् ।।१४४।।
पुष्पं समग्रं जुहुयात्कमलं वाऽपि पुष्कलम् ।
कुसुम्भवनपुष्पाणि यथेष्टानि हुनेत्प्रिये ।।१४५।।
शतसंख्यास्तिला देवि राजिकाः शतसंख्यया ।
लाजा मुष्टिप्रमाणास्तु घृतं गद्याणमात्रकम् ।।१४६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चुलुकार्धं पयः क्षीरमन्नं ग्रासमितं भवेत् ।
स्थूलं फलं महेशानि कूष्माण्डं मातुलुङ्गकम् ।।१४७।।
मनःप्रियैश्च खण्डैश्च फलं भवति निश्चयात् ।
रम्भाफलं चतुःखण्डैर्लघु चेत्खण्ड्यते न हि ।।१४८।।
नारिकेलस्य खण्डं हि रम्भायाः फलवत्प्रिये ।
पर्वस्थाने चेक्षुखण्डं मनःसंतोषकारि वा ।।१४९।।
द्राक्षाफलं समग्रं स्यान्नारङ्गं खार्जुरं तथा ।
गुग्गुलं क्रमुकार्धं तु कुङ्कुमं च तथा भवेत् ।।१५०।।

बकुल पुष्प होम से महान् सौभाग्य उत्पन्न होता है। दशाङ्गधूप होम से अतुलित सौभाग्य मिलता है। काला जामुन से होम द्वारा स्त्री वशीकरण, कूष्माण्ड होम से दैत्यकन्या वशीकरण, बिल्वफल अथवा बिल्व पत्र होम से अतुल लक्ष्मी प्राप्ति, गन्ने के होम से सुख प्राप्ति, नारिकेला जल होम से राज्य कन्या वशीकरण होता है। हे देवेशी! सभी शक्ति गण वर दायिनी हो जाती हैं। हे देवी! किस परिमाण में किस-किस द्रव्य से होम करने से सिद्धि मिलती है, यह कहता हूँ श्रवण करो। एक-एक बार में एक-एक पुष्प से न करके समग्र सभी फूलों से होम करे। पद्मपुष्प से समग्र भाव से होम करे। हे प्रिये! कुन्द पुष्प अथवा वनपुष्प से यथेष्ठ होम करे। हे देवी! एक-एक बार के होम में तिल अथवा सफेद सरसों से १०० होम करे। (अर्थात् एक बार में कम से कम १०० तिल अथवा सफेद सरसों आये)। लावा एक मुट्ठी एक होम में छोड़े। घृत एक बार की आहुति में ४८ रत्ती लेना चाहिये। नारियल अथवा गन्ने का रस एक बार में आधा चुल्लू लेना चाहिये। दूध भी इतना लेकर एक आहुति (आधा चुल्लू) देनी चाहिये। हे महेशानी! फल जैसे मातुलुंग, कोहड़ा, इत्यादि का टुकड़ा जितना परिमाण का (एक-एक आहुति में) देना चाहे वह साधक दे सकता है। यदि केला बड़ा हो तब चार-टुकड़े में दे। यदि केला छोटा हो तब खंडित न करे। पूरा एक आहुति में प्रदान करे। नारियल भी ४ टुकड़ा करे। एक-एक भाग की एक आहुति होगी। गन्ने का टुकड़ा एक-एक पर्व की एक आहुति प्रदान करे। अथवा अपने सन्तोष से जितना हो सके, उतना आकार रख कर आहुति प्रदान करना चाहिये। अंगूर, किसमिस आदि, नारंग (खट्टी नारंगी) खजूर एक एक आहुति देनी चाहिये। कुंकुम की आहुति भी एक सुपाड़ी का आधा भाग इतनी, प्रत्येक आहुति होनी चाहिये ॥१४१-१५०॥

गुञ्जासमं च कर्पूरं कस्तूरी घुसृणं तथा ।
चन्दनं चागरुं देवि क्रमुकेन समं भवेत् ।।१५१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मनःप्रियाणि सर्वाणि फलानि हवने प्रिये।
लाक्षा गुग्गुलसंख्या स्याद्यद्यद्वस्तु मनोहरम् ।।१५२।।
मनःप्रियाहुतीः कृत्वा होमं कुर्यात्सुलोचने।
एतदाहुतिमानं ते कथितं सर्वविघ्नहृत् ।।१५३।।
यथेच्छया वरारोहे श्रीविद्यां परितोषयेत्।
यथाशक्ति जपं कृत्वा तद्दशांशेन होमयेत् ।।१५४।।

एक आहुति में कपूर को एक घुमची इतना देना चाहिये। कस्तूरी भी एक गुंजा (घुमची) इतना होम करे। हे देवी ! चन्दन काठ तथा अगुरु प्रत्येक आहुति में एक सुपारी बराबर प्रदान करे। हे प्रिये ! होम में होमकर्त्ता को जो फल प्रिय हो, उसका होम कर सकता है। जितना परिमाण अगुरु का बतलाया गया है, उतनी ही परिमाण की प्रत्येक आहुति लाक्षा की भी होगी। हे सुलोचने ! जो-जो वस्तु मनोहर हो उसकी भी आहुति से होम करे। हे वरानने ! इस प्रकार से आहुति का परिमाण कहा। होमकर्त्ता व्यक्ति अपनी इच्छा से (मनोयोग से) त्रिपुरादेवी को प्रसन्न करे। हे प्रिये ! हे वरानने ! यथा शक्ति जप करके उसके दशांश का होम करना चाहिये। परिमाण के अनुसार आहुति सभी विघ्नों का नाश करती है ॥१५१-१५४॥

किंशुकैः पापसंघातनाशकैरथ वा प्रिये।
नानाद्रव्यैः पृथग्भूतैर्मिश्रितैर्वा वरानने ।।१५५।।
यथाशक्त्या तु मिलितैर्होमं कुर्याद्विचक्षणः।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि विशेषविधिमुत्तमम् ।।१५६।।
आदौ कुण्डं समुत्पाद्य सर्वलक्षणसंयुतम्।
चतुरस्त्रं तु शोभाढ्यं शतहोमेऽर्धहस्तकम् ।।१५७।।
सहस्त्रे हस्तमात्रं च चतुरस्त्रं द्विहस्तकम्।
द्विहस्तमयुते प्रोक्तं लक्षे हस्तचतुष्टयम् ।।१५८।।
कोटिहोमेऽष्टहहस्तं च कृत्वा कुण्डस्य लक्षणम्।
शान्तिके चतुरस्त्रं तु वश्ये चैवार्धचन्द्रकम् ।।१५९।।
षट्कोणं स्तम्भने चैव मारणे तद्वदेव हि।
आकर्षणे त्रिकोणं च वृत्तमुच्चाटने तथा ।।१६०।।

पाप समूह नाशक पलाश पुष्पों से अथवा पृथक्-पृथक् नाना द्रव्यों से अथवा मिश्रित नाना द्रव्यों से विद्वान व्यक्ति होम करे। हे देवी ! होम सम्बन्धित उत्तम विषय विधि सुनो। पहले सर्वलक्षण युक्त कुण्ड बनाकर चतुरस्त्र तथा शोभायुक्त कुण्डरचना करे। १०० होम

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के लिये आधा हाथ चौकोर कुण्ड बनाना होगा। (पूर्व-पश्चिम-उत्तर-दक्षिण- चारो ओर आधा हाथ) हो। एक हजार होम के लिये एक हाथ चौकोर, ४ हजार होमार्थ दो हाथ चौकोर, दस हजार तक भी दो हाथ चौकोर कुण्ड बनाये। एक लाख होमार्थ आठ हाथ-चौकोर कुण्ड बनेगा शान्ति कर्मार्थ होम कुण्ड चौकोर (चतुरस्र) हो।

हे देवी ! वशीकरण हेतु अर्द्धचन्द्र कुण्ड होगा। स्तम्भन कर्मार्थ षट्कोण कुण्ड बनाये ! मारण कर्मार्थ भी षट्कोण कुण्ड, आकर्षणार्थ त्रिकोण कुण्ड, तथा उच्चाटनार्थ गोल कुण्ड बनाये ॥१५५-१६०॥

नानासिद्धिहितार्थाय पद्मकोणं च सिद्धिदम्।
उत्तरे शान्तिकं चैव स्तम्भने वारुणीं दिशम् ॥१६१॥
मारणं दक्षिणे चैव पश्चिमे वश्यकर्मणि।
दाहकर्म च आग्नेये विद्वेषो नैर्ऋते तथा ॥१६२॥
उच्चाटने तु वायव्य ईशान्ये (ऐशाने) सर्वसिद्धिदम्।
कृत्तिका कर्षणे प्रोक्ता भरणी मारणे तथा ॥१६३॥
स्वाती वश्ये तथोच्चाटे ज्येष्ठा स्तभनमेव च।
विद्वेषणे शततारं चाभिजित्वं तु शान्तिके ॥१६४॥
सोमे सर्वाकर्षणं च मारणं मङ्गले तथा।
बुधेन स्तम्भ कार्यं गुरुवारे तु पौष्टिकम् ॥१६५॥
शुक्रे च सर्वकामास्तु भानोरथ (नावथ) शुभानि च।
पूर्वाह्ले वश्यकर्माणि मध्यान्हे प्रीतिनाशनम् ॥१६६॥
उच्चाटनं चापराह्ले संध्यायां मारणे तथा।
शान्तिके अर्धरात्रं च पौष्टिकं प्रातरेव हि ॥१६७॥
स्तम्भने गजचर्माणि मारणे माहिषं तथा।
मृगचर्म तथोच्चाटे छागलं वश्यकर्मणि ॥१६८॥
विद्वेषे जम्बुकं प्रोक्तं गोचर्मं शान्तिके तथा।
नानासिद्धिहितार्थाय व्याघ्रचर्ममुदाहृतम् ॥१६९॥
श्वेतं व्याघ्रे भवेच्छान्त्यै पीतं स्तम्भनकारकम्।
वश्याकर्षणयो रक्तं क्षोभणार्थं प्रियावहम् ॥१७०॥
कृष्णं च मारणे प्रोक्तं धूम्रमुच्चाटनादिके।
राजवृक्षस्य समिधो होतव्याः स्तम्भकर्मणि ॥१७१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नाना प्रकार की सिद्धि के लिये प्रस्फुटित कमलाकृति कुण्ड लाभप्रद है। उत्तर दिशा शान्ति कर्मार्थ, पश्चिम दिशा स्तम्भन कर्मार्थ, दक्षिण दिशा मारण कर्मार्थ तथा पश्चिम दिशा ही वशीकरण के लिये भी प्रशस्त है। शरीरदाह उत्पन्न करने के लिये अग्निकोण प्रशस्त है। विद्वेषण कर्मार्थ नैर्ऋण कोण, उच्चाटनार्थ वायुकोण तथा शान्तिपुष्टि आदि कार्यार्थ ईशानकोण प्रशस्त है। आकर्षणार्थ कृत्तिका, मारणार्थ भरणी, वशीकरणार्थ स्वाती, उच्चाटनार्थ भी स्वाती, स्तम्भन कर्मार्थ ज्येष्ठा, विद्वेषणार्थ शतभिषा, शान्तिकर्मार्थ अभिजित् प्रशस्त है।

सभी आकर्षण कृत्य सोमवार को, मारण मंगलवार को, शत्रुघननाश कर्म बुधवार को, पुष्टिकर्म बृहस्पतिवार को, सर्वकाम पूर्त्ति हेतु शुक्रवार को, तथा शुभकर्मार्थ रविवार को प्रशस्त कहा गया है।

वशीकरण पूर्वाह्ण में, विद्वेषण मध्याह्न में, उच्चाटन अपराह्न में, मारण सन्ध्या काल में प्रशस्त है। शान्तिकर्म अर्द्धरात्रि में, पुष्टिकर्म प्रातः प्रशस्त है। स्तभन कृत्य हस्ति चर्मासन पर, मारण कर्म महिषासन (चर्मासन) पर, उच्चाटन मृग चर्म पर, वशीकरण छागल चर्म पर, विद्वेषण श्रृगाल चर्म पर, शान्ति कर्म गोचर्म पर प्रशस्त है। नाना सिद्धि तथा मंगलार्थ व्याघ्रचर्म को ही शास्त्रों में प्रशस्त कहा है। शान्ति कर्मार्थ श्वेतवर्ण का ध्यान, स्तम्भनार्थ हल्दी वर्ण का ध्यान, वशीकरण तथा आकर्षण कर्मार्थ लाल रंग का ध्यान करे। तथा क्षोभण तथा विद्वेषण कर्म हेतु साधक को जो वर्ण प्रिय हो, उसी वर्ण का ध्यान करना चाहिये ॥१६१-१७१॥

महिषीघृतसंयुक्तं सदा वै सिद्धिदायकम्।
मारणेऽत्यचिराहोमं समिधै (द्भि) र्दाडिमोद्भवैः ॥१७२॥
अजाघृतेन देवेशि वशयेत्सचराचरम्।
विद्वेषस्यैव होतव्य (व्या) उन्मत्तसमिधस्तथा ॥१७३॥
अतसीतैलसंयुक्ता विद्वेषणमतः परम्।
सर्वविघ्नसमूहं तु नाशयेन्नात्र संशयः ॥१७४॥
पूर्णाहुतिं ततो देवि पूजियत्वा तु कन्यकाः।
पूजितं तेन त्रैलोक्यं कन्यका येन पूजिताः ॥१७५॥
बालया पूजयेद्देवी श्रीविद्यां पूजयेत्ततः।
पञ्चसिंहासनैर्देवि श्रीविद्यां तत्र पूजयेत् ॥१७६॥
सुवासिनीस्ततः पूज्याः श्रीविद्यां तत्र पूजयेत्।
विप्रान्संतोषयेत्पश्चाच्छ्रीविद्यां तत्र पूजयेत् ॥१७७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

योगिन्यश्च तथा पूज्याः श्रीविद्यां परितोषयेत् ।
दर्शनानि समग्राणि पूजयेद्विविधानि च ।।१७८।।
श्रीविद्यां तोषयेत्तत्र पूर्णाहुतिमथाऽऽचरेत् ।।१७९।।

मारणार्थ कृष्ण वर्ण का, उच्चाटनार्थ धूम्र वर्ण का ध्यान करे।

स्तम्भनार्थ राजवृक्ष की समिध् से होम करना होगा। भैस के घृत से द्रव्य लिप्त करके होम सदा सिद्धिप्रद होता है। दाड़िम की समिध से मारणकार्य शीघ्र होगा। हे देवेशी ! बकरी के घृत से होम द्वारा शीघ्र ही वशीकरण होगा। धतूरा अथवा मुचकुन्द की लकड़ी से विद्वेषण हेतु होम करे। अलसी की बीज अथवा तैल से समिध् को लिप्त करके होम द्वारा समस्त विघ्ननाश होगा। इसमें संदेह नहीं है। हे देवी ! कुमारी पूजा करके पूर्णाहुति देनी होगी। कुमारी पूजा करके साधक त्रैलोक्य पूज कर लेता है। हे देवी ! त्रिपुराबाला 'ऐं क्लीं सौः' मन्त्र से श्रीविद्या की पूजा करे। तदनन्तर (पंचसिंहासन) (षष्ट से नवम पटल तक इसका विवरण है द्वारा वहाँ उस होम में) श्रीविद्या पूजन सम्पन्न करे। तदनन्तर सुवासिनी नामक गण की पूजा करे। इनके पूजाकाल में भी श्रीविद्या पूजन होना चाहिये।

तदनन्तर ब्राह्मणों को प्रसन्न करके उनको सन्तुष्ट करके ही श्रीविद्या पूजन करना होगा तदनन्तर योगिनीगण की पूजा करे तथा श्रीविद्या को सन्तुष्ट करे। नाना प्रकार से पूजा करनी चाहिये। दर्शन में भी श्रीविद्या का परितोष करना होगा। तदनन्तर पूर्णाहुति देनी चाहिये ॥१७२-१७९॥

विंश पटल समाप्त।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एकविंशः पटलः

(ज्ञानहोम–आत्म चतुष्टय चतुरस्त्र कुण्ड वर्णन, अन्तरात्मा, ज्ञानात्मा, परमात्मा अन्तर्होम मंत्र)

ईश्वर उवाच–

होमान्तरं प्रवक्ष्यामि येन ब्रह्म सनातनम्।
ज्ञानेन चतुरस्त्राख्यं कुण्डं संचिन्त्य पूर्ववत्।।१।।
आत्मभिश्चतुरस्त्रं तद्विज्ञेयं वीरवन्दिते।
आत्मानो वेदसंख्या हि ज्ञातव्या देशिकोत्तमैः।।२।।
येषां विज्ञानमात्रेण पुनर्जन्म न विद्यते।
साधारणेन पक्षेण वर्तते सर्वजन्तुषु।।३।।

ईश्वर कहते हैं–अब अन्य प्रकार के होम के सम्बन्ध में कहता हूँ, जिसके द्वारा सनातन नित्य ब्रह्म की प्राप्ति होती है। पहले जैसे चतुरस्त्र कुण्ड की बात कही है, वैसे चतुरस्र कुण्ड है। यहाँ ज्ञान के द्वारा चतुरस्र कुण्ड का वर्णन चिन्तन करे।

हे वीरवन्दिते! आत्मसमूह द्वारा (चार प्रकार की आत्मा के द्वारा) इस कुण्ड को चतुरस्र जानो। आत्मा चतुः संख्यक है (यहाँ देशिक शब्द का प्रयोग है "देशिकोत्तमः' इसका अर्थ गुरु भी होता है। शिष्य भी होता है। यहां शिष्य अर्थ ग्राह्य है।) इस आत्मचतुष्टय का ज्ञान होने पर पुनर्जन्म नहीं होता। साधारणतः सभी जन्तु वर्ग का पुनर्जन्म होता है ॥१-३॥

स आत्मा परमेशानि प्राणरूपी वरानने।
प्राणस्तु पवनो देवि हृदयस्थानमन्दिरः।।४।।
शरीरं व्याप्य सकलं चरस्याप्यचरस्य च।
हंसस्वरूपी विज्ञेयः श्वासोच्छ्वासविलासवान्।।५।।
जीव इत्येव नामास्य भ्रान्त्या भासात्र वस्तुतः।
श्वासोच्छ्वासो देहभावाद्भ्रान्तिरेव न संशयः।।६।।
कुलालचक्रभेदेन घटाकाशं यथा घटे।
दृश्यते परमेशानि आकाशं व्याप्य तिष्ठति।।७।।

हे परमेश्वरी! हे वरानने! हे देवी! जो प्राणरूपी अर्थात् प्राणवायु है। वह आत्मा है। प्राण है वायु स्वरूप। हृदय उसका गृह है। वही प्राण रहता है। (यद्यपि समस्त शरीर में वायु स्थित है, तथापि हृदय देशस्थ वायु को प्राण कहते हैं)। यह चर तथा अचर प्राणी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के पूरे शरीर को व्याप्त करके अवस्थान करता है। यह प्राण श्वास तथा उच्छ्वास का कार्य करता हैं। यह प्राण हंसः स्वरूप है। इसे जीव कहते हैं। वास्तव में जीव प्राण नहीं है। वह है परमात्म स्वरूप। देह बोधरूप भ्रान्ति के कारण ही जीव श्वास-प्रश्वास कृत्य करता है। प्राणादि के साथ आत्मा के अध्यास के कारण तथा प्राणादि में आत्मा के आरोप के कारण ही आत्मा स्वयं को देह समझने लगता है। इस देहाध्यास के कारण वह प्राण देह (सूक्ष्मदेह) के कार्य श्वास-प्रश्वास को अपना ही कार्य मान लेता है। यह उसकी भ्रान्ति है।

कोहार अपने चक्र को घुमाते हुये घट का निर्माण करता है। उसके चक्र चालन की भिन्नता के कारण विभिन्न प्रकार के घट निर्मित होते हैं। सभी घटों में तो घटाकाश निहित रहता है। हे परमेशानी! आकाश सभी घट में तथा वस्तु में व्याप्त है। आकाश कभी भी घट से परिच्छिन्न रूप नहीं होता ॥४-७॥

घटे भवति भिन्नत्वं नाऽऽकाशे भिन्नता भवेत्।
तथा देहगतो जीवो देहनाशे वरानने ॥८॥
व्याप्य तिष्ठति सर्वत्र तस्मादात्मा परं महत्।
आत्मज्ञानं मया प्रोक्तं द्वितीयस्य शृणु प्रिये ॥९॥
अन्तरात्मेति किं नाम तच्छृणुष्व पदं महत्।
अन्तःशब्देन देवेशि रहस्यं सूक्ष्मरूपकम् ॥१०॥
परमाणुस्वरूपेण सर्वं व्याप्य विजृम्भते।
अन्तरङ्गतया तेन चरं वाऽप्यथ वाऽचरम् ॥११॥
व्याप्यते सकलं तस्मादन्तरात्मेति गीयते।
स एव हंस आत्मा हि योगिगम्यो यदा भवेत् ॥१२॥
तारचञ्चुर्वरारोहे निगमागमपक्षवान्।
शिवशक्तिपदद्वन्द्वो बिन्दुत्रयविलोचनः ॥१३॥

घट भिन्न-भिन्न हैं, लेकिन उसमें स्थित आकाश में भिन्नता नहीं होती। हे वरानने! भले ही भिन्न-भिन्न देह में जीव भी भिन्न-भिन्न होता है, देह के नष्ट हो जानें पर देह स्थित जीव व्यापक होकर स्थित रहता है। तभी आत्मा परम महत् निरतिषय बृहद् है। हे देवी! मैने आत्मज्ञान कहा। अब द्वितीय आत्मा का वर्णन सुनो।

इन द्वितीय आत्मा का नाम क्या है? अन्तरात्मा उसका नाम है। यह महत् प्राप्तव्य पद है। उसे सुनो। हे देवेशी! अन्तः शब्द द्वारा अन्तः स्थित रहस्य से तात्पर्य है। यह सूक्ष्म रहस्य है। यह अन्तरात्मा परमाणुरूपेण समस्त वस्तु को व्याप्त करके स्थित है। तभी इसे अन्तरात्मा कहते हैं। चर-अचर रूप समस्त वस्तु के अंतरङ्ग रूप से यह आत्मा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(अन्तरात्मा) चराचर में व्याप्त है। जब यह अन्तरात्मा योगीगण को ज्ञेय होती है, उसे हंस आत्मा कहते हैं। (यद्यपि पहले प्राणरूप आत्मा को हंस कहा है, तथापि यह अन्तरात्मा प्रकृत स्वरूप हंस आत्मा है। प्राण उसका वाह्यरूप है तथापि वह भी हंसपदवाच्य है।) हे वरारोहे ! इस हंस आत्मा का चक्षु है ॐकार। इस हंस के दो पंख हैं वेद तथा तन्त्र। शिव-शक्ति इसके पदद्वय हैं। तीन बिन्दु इसके तीन नेत्र हैं। (∴) यह बिन्दुत्रय ही कामकला है ॥८-१३॥

अयं परमहंसस्तु सृष्टिं व्याप्यावतिष्ठति।
तदा भूतानि जायन्ते क्रमेण कमलेक्षणे ॥१४॥
आकाशं पवनोऽग्निश्च जलं पृथ्वी वरानने।
पञ्चकस्यास्य देवेशि प्रथमं चित्तमुच्यते ॥१५॥
अविद्याख्यसरोमध्ये मोहपङ्कप्रपूरिते।
प्रपञ्चकमले भूतपञ्चकपरिजृम्भिते ॥१६॥

ये तीन बिन्दु कामकला हंस आत्मा के नेत्र हैं। परमहंस वस्तु यहां परमात्मा की किंचित् विकासोन्मुख अवस्था कही गयी है। अर्थात् प्राण के तो ऊपर तथापि परमात्मा के नीचे जो समस्त जगत् कारण स्वरूप है, वही यहां हंस आत्मा है। इसे परमात्मा की किंचित् विकासोन्मुख अवस्था कहकर इस परमहंस स्थिति को कहा गया है। यह समस्त सृष्टि में अवस्थित है। हे कमलानने ! सृष्टि के आदि में सूक्ष्म भूत समूह क्रमशः उत्पन्न होते हैं। आकाश, वायु, तेज, जल तथा पृथिवी भी उत्पन्न हो गये। हे वरानने ! हे देवेशी ! पंचभूत की प्रथमावस्था को चित्त कहते हैं। अविद्या नामक सरोवर के मोहपंक में उगे संसार रूपी कमल में अविद्या–मोह–सूक्ष्मभूत–इन्द्रिय–जगत् में अन्तरात्मा ही विचारता रहता है ॥१४-१६॥

विहारोऽस्यैव हंसस्य सृष्ट्या मायामयो भवेत्।
अयमेव महादेवि निष्प्रपञ्चो यदा भवेत् ॥१७॥
संहाररूपी हंसस्तु तदाऽऽत्मानं प्रदर्शयेत्।
पक्षित्वमस्य नास्त्येव सोऽहमात्मा प्रतिष्ठितः ॥१८॥
परमात्मेति जानीहि त्रयमेतदुदाहृतम्।
पक्षपुच्छशिरो देवि आकारप्रतिभासकः ॥१९॥

इस हंस आत्मा का विहार मोहरूपी कीचड़ से भरे स्थान से उत्पन्न जगत कमल के पंचभूत पद्मबीज युक्त अविद्या सरोवर में होता है। सृष्टि के कारण यह मायामय है। हे महादेवी ! जब यह हंस आत्मा जगत प्रपंच शून्य हो जाते हैं, तब संहार रूपी हंस अपना आत्म प्रदर्शन (स्वरूपोद्घाटन) करते हैं। तब इनका पक्षित्व नहीं रह जाता। तब ये "मैं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही वह आत्मा हूँ' इस रूप में प्रतिष्ठित हो जाते हैं। वे ही हैं परमात्मा इस प्रकार से आत्मात्रय (जीवात्मा-अन्तरात्मा-परमात्मा) का वर्णन किया।

यहां प्राण प्रधान देह रूप उपाधि संग्रस्त चैतन्य को आत्मा अथवा जीवात्मा कहा है। परमात्मा की जो किंचित् विकासोन्मुखी अवस्था है, उसे ॐकार कहते हैं। वही है अन्तरात्मा। शिव-शक्ति-कामकला की समष्टि ही है ॐकार का स्वरूप, यह तथ्य योगीगण ध्यान में ही उपलब्ध करते हैं। साधारण लोग इसे नहीं जानते। यह शिव-शक्ति-कामकला अथवा नाद-बिन्दु-त्रिवलय (कामकला) की परिकल्पना पक्षीरूपेण की गयी है। जैसे पक्षिगण आकाश में विचारणशील रहते है, यह अन्तरात्मा अथवा हंस ही अविद्या-मोह, पंचसूक्ष्मभूत तथा-स्थूल जगत् इस पुर्यष्टक में विचरण करता है।

यह अन्तरात्मा (हंस रूप आत्मा) भी शुद्ध आत्मा नहीं है, किन्तु मायारूप उपाधि से उपहित है। जब ये निष्पप्रञ्च–उपाधि रहित हो जाते हैं, तब परमात्मा कहलाते हैं। जब अन्तरात्मा यह अनुभव कर लेता है कि मैं देह इन्द्रिय मन भूत इत्यादि नहीं हूँ, तब वह परमात्मावस्था में प्रतिष्ठित हो जाता है। अत: प्राण=जीवात्मा शिवशक्ति–कामकलादि–अन्तरामा। उपाधिरहित चैतन्य=परमात्मा। हे देवी ! पंख, पूंछ तथा मस्तक–ये तीनों पक्षी की आकृति के द्योतक हैं ॥१७-१९॥

ज्ञानात्मा कथ्यते भद्रे यः साक्षात्साक्षिरूपकः।
येनेदं ज्ञायते सर्वं समत्वेन वरानने ।।२०।।
चन्द्रबिम्बं यथा देवि जलक्षीरेषु दृश्यते।
न लिप्तस्त (सं त) स्य देवशि नीरक्षीरविभेदतः ।।२१।।
कर्दमे चन्दने बिम्बं न भवेल्लिप्तमद्रिजे।
सर्वसाक्षी तथा भद्रे ज्ञानात्मा परिकीर्तितः ।।२२।।

हे भद्रे ! अब ज्ञानात्मा का वर्णन सुनो। जो साक्षी चैतन्य है, वही है ज्ञानात्मा। हे वरानने ! जो सर्वत्र समान रूप से सब कुछ जानते हैं, वे ही हैं ज्ञानात्मा (साक्षीरूप)। हे देवी ! जल तथा दुग्ध दोनों में चन्द्रमा को देखो। जल तथा दुग्ध में भेद है लेकिन चन्द्रमा उस भेद से लिप्त नहीं होता। बिम्बभूत चन्द्र प्रतिबिम्बरूप में जल तथा दुग्ध दोनों में लक्षित होता रहता है। हे देवेशी ! हे पर्वतनन्दिनी ! कर्दम तथा चन्दन दोनों में चन्द्रादि बिम्ब लिप्त नहीं होता। हे भद्रे ! इस प्रकार सबका साक्षी ज्ञानात्मा कहीं भी लिप्त नहीं होता। इस प्रकार से ज्ञानात्मा की बात कही गयी ॥२०-२२॥

आत्मान्तरात्मपरमज्ञानात्मानः प्रकीर्तिताः।
एतद्रूपं हि चित्कुण्ड चतुरस्त्रं वरानने ।।२३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आनन्दमेखलारम्यं बिन्दुत्रिवलयाङ्कितम् ।
अर्धमात्रा योनिरूपं ब्रह्मानन्दमयं सदा ।।२४।।

हे वरानने ! आत्मा-अन्तरात्मा-परमात्मा-ज्ञानात्मा, इन चार आत्मा का प्रसंग कहते हैं। इस चार आत्मारूप चित्कुण्ड को चतुरस्र कहते हैं। जैसे होमकुण्ड के बाहरी चार कोण रहते हैं तथा उसमें अग्नि जलती है, उसी तरह योगीगण के अन्तर्याग रूप होम में ये चार आत्मा हैं चार पार्श्व। जहां अग्नि जल रही है, वही है चैतन्य (चित्)। तभी इसे चित्कुण्ड कहा। जैसे बाहरी होमकुण्ड में मेखला-योनि रहती है, उसी प्रकार अन्तर्याग के चित्कुण्ड में सुन्दर मेखला है आनन्द। जैसे बाहर के कुण्ड में कहीं-कहीं तीन मेखला होती है, वैसे ही अन्तर्याग में है तीन बिन्दु (∴) अथवा त्रिवलय बिन्दु। कामकला, कुण्डलिनी, शिव=तीन मेखला रूप। बिन्दु के नीचे अर्द्धमात्रा (..) रहती है। यही अर्द्धमात्रा है चित्कुण्ड की योनि। यह सर्वदा ब्रह्मानन्दमयी है ।।२३-२४।।

पराहन्तामये सर्वज्ञानदीपविजृम्भिते ।
संविदग्नौ हुनेद्देवि प्रपञ्चहविरुत्कटम् ।।२५।।
शब्दाख्यं मातृकारूपमक्षवर्णविराजितम् ।
अक्षराणि हुतान्यत्र निःशब्दं ब्रह्म जायते ।।२६।।

यह चित्कुण्ड सर्वदा आनन्दमय ब्रह्मरूप है। ब्रह्म चित्स्वरूप, आनन्द स्वरूप तथा सत्य स्वरूप है। यहां चित् अथवा चैतन्य को कुण्डरूपेण रूपित करके उसे ब्रह्मानन्दमय कहा है। हे देवी ! परम अहन्तामय जीव की जो अहन्ता अथवा अहंकार है, वह है मायिक जड़ वास्तविक अहन्ता है परमात्मा। अतः चैतन्य कुण्डली के चिद्रूप परमात्मा परम अहन्तामय हैं तथा समस्त ज्ञानरूपी दीपक से बिलसित हो रहे है। अर्थात् ज्ञानरूप हैं। (संवित तथा चैतन्य एकार्थक है)। हे देवी ! उस अग्नि में प्रपञ्च तथा जगत् रूप महत् हविः की आहुति प्रदान करे। ज्ञानी समस्त जगत् को ब्रह्म मे लय करके स्वयं की भावना ब्रह्मात्मरूपेण करते है। यहां होम को भी उसी भाव से रूपित किया गया है। चैतन्य रूप अग्नि (ब्रह्म) में समस्त जगत् की आहुति का अर्थ है जगत् का लय। होमकुण्ड में अ से 'क्ष' पर्यन्त मातृकावर्ण लिखे रहते हैं। यहां इस चित्कुण्ड में चित् अथवा ब्रह्म से समस्त मातृका वर्ण स्फुरित होते हैं। इसलिये प्रथम ब्रह्म को शब्दात्मक माना जाता है लेकिन चित् अथवा ब्रह्म को शब्दात्मक माना जाता है। चित् अथवा ब्रह्म शब्दरहित है। इसीलिये यहां कहा गया है कि समस्त अक्षरों की आहुति चैतन्य रूप अग्नि में प्रदान करे अर्थात् मातृका वर्णों को ब्रह्म में लय करे। तब शब्द रहित ब्रह्म का उदय होगा। उदय अर्थात् उत्पन्न अर्थात् उनका ज्ञान होना। ब्रह्म को शब्द शून्यरूपेण योगी अथवा ज्ञानी जान सकते हैं ।।२५-२६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुण्यपापे हविर्देवि कृत्याकृत्ये हविः प्रिये ।
संकल्पश्च विकल्पश्च धर्माधर्मौ हविस्तथा ।।२७।।
जुहुयात्परमेशानि मन्त्राभ्यां विमलानने ।
मूलविद्यां ब्रह्मरूपां ध्यात्वा तु तदनन्तरम् ।।२८।।
तदन्ते चोच्चरेत्पश्चाद्ब्रह्मप्रात्यै तु देशिकः ।
धर्माधर्महविर्दीप्त आत्माग्नौ मनसा स्त्रुचा ।।२९।।
सुषुम्नावर्त्मना नित्यमक्षवृत्तिं जुहोम्यहम् ।
स्वाहान्तेन हुनेद्देवि सकलं निष्कलं जगत् ।।३०।।

हे देवी ! हे प्रिये ! हे परमेशानी ! हे विमलानने ! संकल्प, विकल्प, धर्म तथा अधर्मरूप हविः, पापपुण्य कर्त्तव्य अकर्त्तव्य भी हवि है । इसी नीचे लिखे मन्त्र से चिदग्नि में आहुति देनी चाहिये । (अन्य तन्त्रों में ४ मन्त्रों से आहुति का विधान है । यहां २ मन्त्र ही है । मूलविद्या त्रिपुरादेवी का ध्यान ब्रह्मरूपेण करके साधक ब्रह्मप्राप्ति हेतु उसका उच्चारण करे । मन्त्रार्थ है कि–धर्म तथा अधर्मरूप हवि द्वारा प्राप्त आत्मरूप अग्नि में मैं मनरूप स्रुक् के द्वारा सुषुम्नामार्ग में इन्द्रिय वृत्तियों की आहुति देता हूँ' ।

हे देवी ! इस मन्त्र के अन्त में स्वाहा कहकर कलायुक्त तथा निष्कल जगत की आहुति प्रदान करे । इनके लय की भावना करे ॥२७-३०॥

अन्तर्होममनुर्देवि सर्वमायानिकृन्तनः ।
प्रकाशाकाशहस्ताभ्यामवलम्ब्योन्मनीस्त्रुचा ।।३१।।
धर्माधर्मौ कलास्नेहपूर्णवह्नौ जुहोम्यहम् ।
अग्निजायान्वितो मन्त्रो विद्यान्ते कथतस्तव ।।३२।।

हे देवी ! यह अन्तर्होममन्त्र समस्त माया का उच्छेदक है । चैतन्य–आकाश अर्थात् सत्ता, यह चैतन्य एवं सत्ता रूप हस्तद्वय का अवलम्बन लेकर उन्मनी रूपी स्रुक् (आज्ञा चक्र से उर्ध्व में उन्नीत साधक के मन का लय होता है, ऐसा उन्मनी भाव) से शक्तिरूप स्नेह (तैल) से ज्वलित चैतन्याग्नि में धर्म-अधर्म की आहुति देता हूँ ॥३१-३२॥

निष्प्रपञ्चो यदा देवि जायते मन्त्रवित्तमः ।
तदा सच्चिन्मयः साक्षात्केवलं ब्रह्म साधकः ।।३३।।
दश सोऽहं जुहंसोऽपि पीत्वा मृत्युं सुखी भवेत् ।।३४।।

हे देवी ! जब श्रेष्ठ मन्त्रज्ञ साधक प्रपञ्चातीत होता है, तब वह केवल सच्चिन्मय ब्रह्म ही है । निवृत्ति मार्गीय साधक समस्त जगत् को ब्रह्म में लयीभूत करके ऐसे ज्ञान में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रतिष्ठित होता है जहां वह स्वयं की उपलब्धि शुद्ध ब्रह्म रूपेण करता है। ऐसे ज्ञान में प्रविष्ट होकर उसका अविद्या मोह सभी निवृत्त हो जाता है। साधक निष्प्रपञ्च होता है। अन्त में प्रकृत ब्रह्मरूप आत्मा में उसकी प्रतिष्ठा हो जाती है। तभी तन्त्र में मन्त्र की साधना का प्रथमत: वर्णन है। अन्त में निर्वाण का वर्णन किया जायेगा मैं दास हूँ, मै ही हूं हंस: (प्रकृति आत्मा), तथापि मृत्यु में पड़ा हूँ। ऐसा चिन्तन करके साधक सुखी हो जाता है ॥३३-३४॥

एकविंश पटल समाप्त।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वाविंशः पटलः

(श्रीविद्या पूजनविधि दूतीयाग विचार, प्रयोग)

ईश्वर उवाच–

होमादिकं तु सकलं कुमारीपूजनं विना ।
परिपूर्णफलं नैव पूजनात्सफलं भवेत् ।।१।।
कुमारीपूजनाद्देवि पूजाकोटिफलं भवेत् ।
पुष्पं कुमार्यै यद्दत्तं तन्मेरुसदृशं भवेत् ।।२।।

ईश्वर कहते हैं–कुमारी पूजन के बिना होम (जप-पूजा-अभिषेक-तर्पण) परिपूर्ण फल नहीं देते । इनके पश्चात् कुमारी पूजन द्वारा ये सभी सफल होते हैं । हे देवी ! कुमारी पूजन से करोड़ो पूजा फल सिद्ध हो जाते हैं । यदि कुमारी को एक भी पुष्प प्रदान कर दिया जाये । तब वह कोटि गुणित, सुमेरु पर्वत के समान होता है अर्थात् प्रचुर फल दायक होता है ॥१-२॥

कुमारी भोजिता येन त्रैलोक्यं तेनं भोजितम् ।
कुमार्यै यज्जलं दत्तं तज्जलं सागरोपमम् ।।३।।
अन्नं तु मीननयने कुलाचलसमं भवेत् ।
एकाब्दात्षोडशाब्दान्ताः कन्यकाः पूजयेच्छुभाः ।।४।।
विवाहरहिताः स्युश्चेदुत्तरोत्तरसिद्धिदाः ।
विवाहितास्तु देवेशि बाला एव कुमारिकाः ।।५।।

जो कुमारी को भोजन कराते है, वे मानो त्रैलोक्य को ही भोजन करा देते हैं । जो कुमारी को जल प्रदान करते हैं, वह उनके लिये सागर सदृश फलदायक होता है । हे मीन नेत्रे ! जो कुमारी को अन्न प्रदान करता है, उसे कुलपर्वत इतना महान् फल मिलता है । (आठ कुल पर्वत हैं–महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमाने, ऋक्ष, विन्ध्य, परियात्र तथा हिमालय) एकवर्ष से १६ वर्ष तक की शुभ कुमारी की पूजा करे । यदि ये सब अविवाहित हों तब वे उत्तरोत्तर सिद्धिप्रदा होती है । अर्थात् १६ वर्ष की कुमारी से १५ वर्ष की, १५ से १४ वर्ष की, १४ से १३, इस प्रकार क्रमशः सिद्धिप्रदा होती जाती हैं । जो विवाहिता होती है, उसे बाला कहते हैं ॥३-५॥

सुवासिन्यो मदप्रौढ़ाः संशये त्यज सुव्रते ।
कुमारीपूजने देवि कुमारीमनुना भवेत् ।।६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रभेदेन तेनैव श्रीविद्यां च प्रपूजयेत् ।
नैमित्तिकं प्रवक्ष्यामि येन ब्रह्ममयो बुधः ।।७।।
निर्विकल्पस्य देवेशि नान्यस्य सुरवन्दिते ।
सर्वशङ्काविनिर्मुक्तः सर्वज्ञः साधकोत्तमः ।।८।।
दूतीयागविधिं कुर्यात्खेचरो जायते प्रिये ।
अर्घ्यपात्रे वह्निसूर्यसोमामृतमये शिवे ।।९।।

यह बाला भी दो प्रकार की कही गयी है । सुवासिनी तथा मदप्रौढ़ा । हे सुव्रते ! इस विषय में संन्देह छोड़ दो । हे देवी ! कुमारी पूजा कुमारी के मन्त्र से ही होगी । भिन्न-भिन्न कुमारी के मन्त्र भिन्न होते हैं । इसलिये भिन्न-भिन्न मन्त्र से कुमारी की पूजा करे तथा श्रीविद्या की पूजा करे । हे सुरवन्दिते ! निर्विकल्प के लिये नैमित्तिक साधना कहता हूँ । इससे विद्वान व्यक्ति ब्रह्ममय हो जाते हैं । निर्विकल्प साधक के लिये जो उपाय है । वह अन्य के लिये अर्थात् सविकल्प साधक के लिये नहीं हैं । सर्वशंका विमुक्त सर्वशास्त्रज्ञ श्रेष्ठ साधक को दूतीयाग का अनुष्ठान करना चाहिये । इससे साधक को आकाशमार्ग में जाने (खेचरत्व) की सिद्धि मिल जाती है । हे शिवे ! वह्नि-सूर्य-सोमामृतमय अर्घ्यपात्र को सर्वदा सोमामृत समझे ।

विवृत्ति–तन्त्रसार आदि में दूतीयाग अन्य प्रकार से कहा गया है । वहां विजया (भांग) तथा शोधनादि का वर्णन है । लेकिन ज्ञानार्णव में इसकी प्रक्रिया अत्यन्त कठिन है । इसके अनुसार यह निर्विकल्प साधक की ही साधना है । अथवा खेचरत्व अर्थात् ब्रह्म मे विचरण । साधक दूतीयाग से ब्रह्म में विचरण कर सकता है ॥६-९॥

सोमामृतं तु जानीहि नानाद्रव्यमयं सदा ।
सविकल्पस्य देवेशि वर्णानुक्रमभेदतः ।।१०।।

एक अर्घ्यपात्र रखकर उसमें घृत-दुग्ध-मधु तथा मैरेय (विशेष मद्य) देना होगा, इन चार को ही सोमामृत कहते हैं । हे देवेशी ! यह सोमामृत सविकल्प साधक के लिये वर्ण के क्रमभेद के अनुसार होगा । एक अर्घ्यपात्र रखकर उसमें दूध-धृत-मधु तथा मैरेय रखे । इसे सोमामृत मान कर चिन्तन करे । उक्त अर्घ्यपात्र को वह्निमय, सूर्यमय तथा सोमामृतमय जाने । तदनन्तर इस अर्घ्यपात्रस्थ द्रव्य से क्रमशः ब्राह्मणवर्ण की स्त्री, क्षत्रियस्त्री, वैश्य स्त्री पर इसका छीटा देकर उनका शोधन करना चाहिये । तत्पश्चात् सविकल्प साधक इसमें से तनिक मात्रा पान करके पूजा करे ॥१०॥

कथ्यन्ते द्रव्यभेदास्तु क्रमेण वरवर्णिनि ।
क्षीराज्यमधुमैरेयद्रव्यभेदा भवन्ति हि ।।११।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्वज्ञत्वे वरारोहे यज्ञे दोषो न विद्यते।
अश्वमेधादियज्ञेषु वाजिहत्या कथं भवेत्।।१२।।
द्रव्यभेदा वरारोहे बहवः सन्ति भेदतः।
जलं क्षीरं घृतं भद्रे मधु मैरेयमैक्षवम्।।१३।।

हे वरवर्णिनी ! अब क्रमानुसार द्रव्यभेद कहते हैं। (अर्घ्यपात्रस्थ द्रव्य का भेद कहते है)। घृत-दुग्ध-मधु तथा मैरेय, सभी अलग-अलग हैं। प्रश्न उठता है कि मैरेय मद्य तो निषिद्ध है। उसे अर्घ्यपात्र में क्यों दिया गया ? इसका समाधान यह है कि जो सर्वज्ञ हैं, उनके लिये यज्ञ में निषिद्ध द्रव्य ग्रहण में दोष नहीं है। अश्वमेघादि यज्ञ में अश्वहत्या की जाती है, जबकि शास्त्र में प्राणीहिंसा प्राप है। लेकिन यज्ञार्थ अश्ववध पाप नहीं है। सामान्य शास्त्र के अनुसार प्राणीहिंसा भले ही निषिद्ध हो, लेकिन जिस प्रकार से विशेष विधान के कारण अश्वादि हिंसा पाप नहीं है, उसी प्रकार सामान्य शास्त्रानुसार सुरापानादि भले ही पाप तथा निषिद्ध हो, विशेष विधान के अनुसार वह दोषावह नहीं है। यही तात्पर्य है ॥११-१३॥

पौष्यं तरुमयं धान्यसंभवं बहुनिर्मितम्।
सहकारभवं देवि विविधं बहुभेदतः।।१४।।
मादकं धर्मसंछेदाद्वर्ज्यमासीत्सुलोचने।
ज्ञानेन संस्कृतं तत्तु महापातकनाशनम्।।१५।।
ब्रह्महत्त्यासुरापानस्वर्णस्तेयादिपातकान्।
नाशयेत्पूजनाद्देवि निर्विकल्पः स मन्त्रवित्।।१६।।

वृक्षोत्पन्न पौष्य मद्य अथवा पुष्प से बने मद्य अथवा धान्योत्पन्न मद्य अथवा अनेक वस्तुओं से बने मद्य, आम से बना विशेष मद्य, इस प्रकार नाना भेद वाले मद्यों को मादक होने के कारण धर्मनाशकारी मान कर वर्जित माना गया है। हे सुनयने ! ये सब ज्ञान द्वारा संस्कृत होकर महापाप विनाशक हो जाते हैं। हे देवी ! निर्विकल्प मन्त्रज्ञ व्यक्ति (अर्थात् जिसने मानसिक विकल्पों को पार कर लिया है) पूजा द्वारा ब्राह्मण हत्या, सुरापान, सुवर्ण चोरी आदि पापों का विनाश कर देते हैं ॥१४-१६॥

विचारयेत्सदा सर्वं सर्वविद्वीरवन्दिते।
जलं जलचरं विद्धि घटं पूर्णं समानयेत्।।१७।।
स्थापितं देवि सप्ताहाज्जलं जीवसमन्वितम्।
क्षीरं वै यस्य जीवस्य तस्य मांसं न संशयः।।१८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे वीरवन्दिते ! सर्वज्ञ व्यक्ति सर्वदा सब वस्तु का विचार करते है। वे जलचर को जल माने। हे देवी ! जीवयुक्त पूर्णघट स्थापित करें। उस जीव समन्वित घट को एक सप्ताह रखें। वह भी जल समान हो जायेगा। जिस जीव का दुग्ध ग्रहण किया जाता है, वह भी तो उस पशु का मांस ही है। यदि कोई सोचता है कि मांस भक्षण पाप है, दूध पीना श्रेयस्कर है, तब यह तो कहना ही होगा कि दुग्ध भी प्राणी का मांस है। गोदुग्ध भी गाय का मांस है। निर्दोष कुछ भी नहीं है। विचार से भी द्रव्य को ब्रह्म मानें। तब दोष नहीं होगा। यही अभिप्राय है ॥१७-१८॥

कृशा पुत्रवती नारी वन्ध्या पुष्टा यतः प्रिये।
माकन्दफलजं रम्यं द्रावं सेव्यं द्विजातिभिः ॥१९॥
अमादकत्वाद्देवेशि चैक्षुत्वं सेव्यते बुधैः।
अनामिषं नास्ति किंचित्सर्वं क्षीरादिकं प्रिये ॥२०॥
वेदशास्त्रपुराणेषु गूढो ज्ञानसमुच्चयः।
शमीवृक्षे यथा वह्निस्तथा तिष्ठति सुन्दरि ॥२१॥
सर्वभूतेषु विज्ञानं ज्ञातव्यं देशिकोत्तमैः।
काष्ठनिर्मथनाद्देवि प्रकटो वह्निरुच्यते ॥२२॥

हे प्रिय ! पुत्रवती नारी दुबली हो जाती है। वन्ध्या मोटी होती हैं। तात्पर्य यह है कि पुत्रवती का मांस दुग्ध होकर निकल जाता है। तभी उसका शरीर दुर्बल रहता है, जब कि वन्ध्या स्त्री का दुग्ध न होने से उसका शरीर पुष्ट होता है। अतः दूध भी आमिष ही है। आम्रफल पक्वावस्था में नरम सुन्दर हो जाने से द्विजातिगण सेव्य होता है। कच्चेपन में वह असेव्य है। तात्पर्य यह है कि जो वस्तु अज्ञानावस्था में असेव्य है, वही वस्तु ज्ञानावस्था में सेव्य हो जाती है।

हे देवी ! ईख का बना मद्य मादक न होने के कारण विद्वत् जन उसे सेव्य कहते हैं। हे प्रिये ! कुछ भी निरामिष नहीं है। दुग्धादि सब आमिष है। वेद तथा पुराणादि में ज्ञान की बात प्रच्छन्न है। गूढ़ है। हे सुन्दरी ! जैसे शमी के पेड़ में अग्नि प्रच्छन्न (छिपी) रहती है, उसी प्रकार से वेदादि शास्त्र में ज्ञान की बातें भी प्रच्छन्न है। उत्तम शिष्य को चाहिये कि सभी प्राणी के अन्तः में छिपे ज्ञान को जाने। ऐसा ही शिष्य उत्तम अधिकारी है। हे देवी ! एक काष्ठ से दूसरे काष्ठ को रगड़ने से अग्नि उत्पन्न होती है ॥१९-२२॥

तत्काष्ठं दह्यते तेन तथा ब्रह्ममयं जगत्।
पापपुण्यविनिर्मुक्तं ज्ञानमेतद्वरानने ॥२३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किंचिदुल्लासपर्यन्तं ग्राह्यमेतत्सुरेश्वरि ।
यज्ञाङ्गं तु यतो लौल्यात्पातकी ब्रह्महा भवेत् ।।२४।।
मादकं वस्तु सकलं वर्जयेत्कनकादिकम् ।
कलञ्जं पातकी तस्माद्ब्रह्म ब्रह्मविदां वरः ।।२५।।
धर्माधर्मपरिज्ञानात्सकलेऽपि पवित्रता ।
विण्मूत्रं स्त्रीरजो वाऽपि नखास्थि सकलं प्रिये ।।२६।।

उस वह्नि को प्रकट कहते हैं (जब कि वह काठ में गूढ़ है)। इस काठ से प्रकट अग्नि से वही काष्ठ दग्ध हो जाता है। ऐसे सर्व जगत् ब्रह्ममय है। ब्रह्म से ही जगत् व्याप्त है। वह समस्त जगत् में व्याप्त होकर भी पाप-पुण्य से रहित है। हे वरानने ! यही ज्ञान है। अर्थात् जगत् ब्रह्ममय होकर भी जगत् के पाप-पुण्य से रहित है। हे सुरेश्वरी ! यज्ञ के अंगरूप में जो सुरा अथवा मांस यज्ञ से बचे पदार्थ के रूप में ग्रहण करते हैं, उसका किंचित आनन्द ही लेना चाहिये। उससे अधिक मात्रा में लिप्त न हो। इन्द्रिय चपलता अथवा लोभ से यज्ञ का बचा ग्रहण करने वाला ब्रह्मघाती माना जाता है। पापी व्यक्ति सुवर्ण प्रभृति मादक द्रव्य का त्याग करे–तथा विषबुझे तीर से मारे पशु मांस का वर्जन करे। लेकिन जो ब्रह्मविद् हैं उनके लिये तो सब पवित्र है। हे प्रिये ! उनके लिये विष्ठा-मूत्र, स्त्री रजः, नख, अस्थि सब ब्रह्मस्वरूप ही है ।।२३-२६।।

विचारयेन्मन्त्रवित्तु पवित्राण्येव सुव्रते ।
अन्नं ब्रह्म विजानीयात्तेन यस्य समुद्भवः ।।२७।।
नानाजीवाश्रयं तत्तु पुरीषं केन निन्द्यते ।
नानाविधा हि देवेशि देवताः सलिलस्थिताः ।।२८।।
तेनोदकेन यज्जातं मूत्रं कस्मात्तु दूषयेत् ।
गोमूत्रप्राशनं देवि गोमयस्यापि भक्षणम् ।।२९।।
प्रायश्चित्ते तु कथितं ब्रह्महत्यादिके प्रिये ।
मले मूत्रे कथं दोषो भ्रान्तिरेव न संशयः ।।३०।।

मन्त्रज्ञ विचार करे कि पवित्र क्या है ? अन्न को ब्रह्म माने। उस अन्न से विष्ठा की उत्पत्ति होती है, वह नाना जीव का आश्रय है। इसकी, विष्ठा की कौन निन्दा करे ! हे देवेशी ! नाना प्रकार के देवता जल में रहते है, उस जल से जिस मूत्र भी उत्पत्ति होती है, उसे क्यों दोष, क्यो उसे बुरा माने ? हे देवी ! गोमूत्र पान तथा गोबर भक्षण का विधान है। हे प्रिये ! ब्राह्मणहत्यादि पापी के प्रायश्चित्तार्थ गोमूत्र पान तथा गोबर भक्षण का विधान

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। अतः मल-मूत्र में दोष कैसा ? इसे दोष मानना तो मन की भ्रान्ति ही है। इसमें सन्देह नहीं ॥२७-३०॥

स्त्रीरजः परमेशानि देहस्तेनैव जायते।
कथं तु दूषणं येन प्राप्यते परमं पदम्॥३१॥
पुरुषस्य तु यद्वीर्यं बिन्दुरित्यभिधीयते।
बिन्दुस्तु परमेशानि कायोऽयं शिवरूपकः॥३२॥
शिवतत्त्वेन चास्थ्यादिदूषणं नास्ति बैन्दवे।
रेतः पवित्रं देहस्य कारणं केन निन्द्यते॥३३॥
ज्ञानमार्गोऽयं सकलो निर्विकल्पस्य सुन्दरि।
सविकल्पो महेशानि पापभाग्जायते नरः॥३४॥

हे परमेशानी ! स्त्री के रजः से ही देह उत्पन्न होती है। वह दोषयुक्त क्यों ? जिस रजः से उत्पन्न देह से मोक्ष मिलता है, वह तो पवित्र ही है। पुरुष वीर्य बिन्दु है। बिन्दु ही है शिवरूप देह। देह से ही मंगलात्मक मुक्ति मिलती है। देह शिव रूप है। शिवतत्व से अस्थि आदि की उत्पत्ति होती है। अतः बिन्दु सम्बन्धित शरीर में दोष कैसा ?

देह का कारण रेतः पवित्र है, उसकी निन्दा क्यों ? हे सुन्दरी ! इस सब पर विचार करे, यही निर्विकल्प का ज्ञानमार्ग है। हे महेशानी ! सविकल्प मनुष्य पाप भागी होता है ॥३१-३४॥

मातृगर्भाद्विनिर्गत्य शिशुरेव न संशयः।
इन्द्रियाण्यखिलान्यस्य देहस्थान्यपि वल्लभे॥३५॥
निर्विकारतया तत्र नान्यथा भवति प्रिये।
भगलिङ्गसमायोगो जन्मकाले भवेत्सदा॥३६॥
काम्यते सा यदा देवि जायते गुरुतल्पगः।
अत एव यदा तस्य वासना कुत्सिता भवत्॥३७॥
तत्तद्भूषणसंयुक्तमन्यत्सर्वं शुभं भवेत्।
पवित्रं सकलं भद्रे वासना कलुषा स्मृता॥३८॥

हे प्रिये ! मातृगर्भ से निर्गत होकर पहले शिशु ही रहता है। तब उसी समस्त इन्द्रियाँ निर्विकार भाव से रहती हैं जन्म काल में सर्वदा लिंग एवं योनि का संयोग होता है। लेकिन शिशु दूषित नहीं होता। लेकिन (जब बड़ा होकर) भगलिंग संयोग की कामना करता है, तब उसे गुरुपत्नी गामी तक होना पड़ जाता है। वासना से कुत्सित होता है तब तब उसे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दोष लगता है। जब कुत्सित वासना नहीं होती तब शिशुवत् भगलिंग संयोग होने का भी दोष नहीं है। तब वह भी शुभ होता है। हे भद्रे! वासना ही कलुष है। जब वासना नहीं है, तब सब कुछ भूषण है ॥३५-३८॥

अत एवार्घ्यपात्रस्य प्रतिष्ठानन्तरं ततः।
मञ्चकं गजदन्तस्य हेमरूप्यादिनिर्मितम् ॥३९॥
विशुद्धक्षौमरचितां तूलिकां तत्र योजयेत्।
पुष्पान्विकीर्य तन्मध्ये कर्पूरस्य रजस्तथा ॥४०॥
मण्डूकादींस्ततो देवि उपर्युपरि शैलजे।
मण्डूकं पूजयेदादौ रुद्रं कालाग्निसंयुतम् ॥४१॥

अब पुनः अर्घ्यपात्र प्रसंग कहते हैं। प्रतिष्ठा के पश्चात् हाथी दांत के मंच को सोना तथा चांदी से उस अर्घ्यपात्र को युक्त करके उसके ऊपर (मंचपर) एक विशुद्ध पट्ट वस्त्र की गद्दी रखे। अर्घ्यपात्र में पुष्प तथा कर्पूर छोड़े। (उसमें दुग्ध, धृत, मधु-मैरेय तो पहले से ही है) हे देवी! तदनन्तर ऊपर में मण्डूक ऋषि आदि की पूजा करनी चाहिये। ॐ एते गन्धपुष्पे मण्डूकायनमः से मण्डूक की पूजा करके कालाग्नि का पूजन 'ॐ एते गन्धपुष्पे कालाग्नये नमः' से करके रुद्रपूजन 'ॐ एते गन्धपुष्पे रुद्राय नमः' से करना चाहिये ॥३९-४१॥

आधारशक्तिं कूर्मं च तथाऽनन्तं वराहकम्।
पृथिवीं च तथा कन्दं नालं पद्मं तथा दलान् ॥४२॥
केसराणि च सम्पूज्य कर्णिकां पूजयेत्ततः।
मञ्चकं च समभ्यर्च्य तत्र पादचतुष्टये ॥४३॥
धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च क्रमाद्यजेत्।
अपूर्वान्पूजयेदेतांस्तत्पादानां समीपके ॥४४॥

तत्पश्चात् क्रमशः आधार शक्ति, कूर्म, अनन्त, वराह, पृथिवी, कन्द (पद्म के कन्द), नाल, पद्मदल, केसर पर पूजा करके कर्णिका पर पूजा करे। तत्पश्चात् उस मंच की पूजा करके उसके चारो पाये में क्रमशः धर्म ज्ञान-वैराग्य तथा ऐश्वर्य की पूजा करे। गुरु के सान्निध्य में अथवा आचार्य के सान्निध्य में यह सब पूजा करनी चाहिये ॥४२-४४॥

आत्मन्तरात्मपरम–ज्ञानात्मनः क्रमाद्यजेत्।
मञ्चकाग्रेषु सम्पूज्य गुणत्रयमथार्चयेत् ॥४५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दूतीं सुलक्षणां रम्यां सर्वलक्षणलक्षिताम् ।
नानालंकारसुभगां सर्वज्ञां शारदामिव ।।४६।।
पूजयेत्परमेशानि पञ्चकामैः शरैस्तथा ।
बटुकादिंश्चतुर्दिक्षु पूजयेत्सिद्धिहेतवे ।।४७।।
मातृकां विन्यसेत्तस्या देहे कामशरान्विताम् ।
त्रिकोणं चिन्तयेन्मूर्ध्नि तत्र सम्पूजयेत्क्रमात् ।।४८।।
त्रिकोणमध्ये बालाख्यां कामेशीं परिपूजयेत् ।
गणेशं च कुलाध्यक्षं तथा लक्ष्मीं सरस्वतीम् ।।४९।।
त्रिकोणेषु च सम्पूज्य वसन्तं मदनं प्रिये ।
स्तनयोः पूजयेत्पश्चान्मुखे तस्याः कलाधरम् ।।५०।।
दक्षपादादिमूर्धान्तं वामे मूर्धादि सुन्दरि ।
पादान्तं पूजयेत्सर्वाः कला वै कामसोमयोः ।।५१।।
श्रद्धा प्रीती रतिश्चैव धृतिः कान्तिर्मनोरमा ।
मनोहरा मनोरामा मदनोन्मादिनी प्रिये ।।५२।।
मोहिनी दीपनी चैव शोषणी च वशंकरी ।
रञ्जनी सुभगा देवि षोडशी प्रियदर्शना ।।५३।।
षोडशस्वरसंयुक्ता एताः कामकला यजेत् ।
पूषा वशा च सुमना रतिः प्रीतिस्तथा धृतिः ।।५४।।

मञ्च के अग्रभाग में क्रमशः आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा, तथा ज्ञानात्मा की पूजा करके सत्व–रजः–तमः की पूजा करनी चाहिये ! हेपरमेश्वरी ! सुलक्षणा, नाना अलंकार सौभाग्य से युक्ता, मनोरमा सरस्वती के समान दूती की पञ्चकाम तथा पञ्चशर से पूजा करे । यथा—

ॐ एते गन्धपुष्पे ह्रीं कामेश्वर्यै नमः ।
ॐ एते गन्धपुष्पे क्लीं मन्मथेश्वर्यै नमः ।
ॐ एते गन्धपुष्पे ऐं कन्दर्पेश्वर्यै नमः ।
ॐ एते गन्धपुष्पे ब्लूं मकरध्वजे श्वर्यै नमः ।
ॐ एते गन्धपुष्पे स्त्रीं मीनकेत्वीश्वर्यै नमः ।
ॐ एते गन्धपुष्पे द्रां क्षोभणेश्वर्यै नमः ।
ॐ एते गन्धपुष्पे द्रीं द्रावणेश्वर्यै नमः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ॐ एते गन्धपुष्पे क्लीं आकर्षणेश्वर्यै नमः ।
ॐ एते गन्धपुष्पे ब्लू वशीकरणेश्वर्यै नमः ।
ॐ एते गन्धपुष्पे स्त्रीं उन्मादेश्वर्यै नमः ।

तदनन्तर सिद्धि के लिये चतुर्थिक बटुक, क्षेत्रपाल, भैरव, गणेश का पूजन करे। तदनन्तर दूती की देह में कामशरयुक्त मातृका न्यास करे— ललाटे–द्रां अं नमः । मुखवृत्ते–द्रीं आं नमः । वामचक्षु–क्लीं इं नमः । दक्षिण चक्षु-ब्लूं ईं नमः । वामकर्ण–स्त्रीं– ॐ नमः । दक्षिणकर्णे–द्रां ॐ नमः । वामनासा–द्रीं ऋं नमः ।

इस प्रकार से पंचबाण पूजा शेष हो जाने पर आदि बीज से प्रारंभ करके क्रमशः मातृका न्यास करना चाहिये । तदनन्तर उनके मस्तक में त्रिकोण का चिन्तन करके उस त्रिकोण में पूजा करे । त्रिकोण मध्य में बालाख्या कामेशी की पूजा करे । यथा–'ऐं ह्रीं श्रीं बालायै कामेश्वर्यै नमः' तत्पश्चात् त्रिकोण के तीनों कोणों में क्रमशः कुलाध्यक्ष, गणेश, लक्ष्मी तथा सरस्वती की पूजा करनी चाहिये । यथा–ऐं ह्रीं श्रीं गं गणपतये नमः, ऐं ह्रीं श्रीं लक्ष्म्यै नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सरस्वत्यै नमः । इन दूती के वाम तथा दक्षिण स्तनद्वय में क्रमशः वसन्त तथा मदन की पूजा करनी चाहिये। यथा–ऐं ह्रीं श्रीं वसन्ताय नमः, इत्यादि । तदनन्तर उनके मुख में कलाधर की पूजा करे । हे सुन्दरी ! तत्पश्चात दक्षिण पैर से मस्तक पर्यन्त (पैर के अंगुल्याग्र, अंगुलिमूल, एड़ी, जानु, पादसन्धि, हस्त के अंगुल्याग्र, अंगुलिमूल, कलाई, केहुनी बाहुमूल ओष्ठ, गाल, नासा, कर्ण, चक्षु तथा मस्तक, इन १६ अंग में) अकारादि स्वरयुक्त रूप से कामकला की पूजा करे । यथा– दक्षिण पाद के अङ्गुल्याग्र में–'ऐं ह्रीं श्रीं अः श्रद्धायै नमः । अङ्गुलिमूल–ऐं ह्रीं श्रीं अं प्रीत्यै नमः इत्यादि । वाम में मस्तक से वामपाद के अंगुल्याग्र पर्यन्त क्रमशः काम के कला समूह की तथा चन्द्र की कलाओं की पूजा करे । हे प्रिये ! हे देवी ! १६ स्वर से श्रद्धा, प्रीति, रति, घृति, कान्ति, मनोरमा, मनोहरा, मनोरामा, मदनोन्मादिनी, मोहिनी, दीपनी, शोषणी, वशंकरी, रजनी, सुभगा, षोड़शी इन १६ कामकला की पूजा करनी चाहिये । तदनन्तर पूषा, वशा, सुमना रति प्रीति घृति तथा ॥४५-५४॥

ऋद्धिः सौम्या मरीचिश्च शैलजे चांशुमालिनी ।
अङ्गिराः शशिनी चैव छाया सम्पूर्णमण्डला ।।५५।।
तथा तुष्ट्यमृते चैव कलाः सोमस्य षोडश ।
स्वरैरेव प्रपूज्या हि सर्वकार्यार्थसिद्धिदाः ।।५६।।
बालाक्रमं मस्तकेऽस्याः संपूज्य तदनन्तरम् ।
तस्या मदनगेहं तु पूजयेद्भगमालया ।।५७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रिकोणं तद्भगं ज्ञात्वा सर्वसिद्धिप्रदाभिधम्।
सर्वानन्दमयं मध्ये चक्रयुग्मं प्रपूजयेत्।।५८।।
पूर्ववत्क्रमयोगेन (ण) श्रीविद्यां तत्र पूजयेत्।
धूपादिकं समर्प्याथ स्वलिङ्गे तदनन्तरम्।।५९।।
तारं च भुवनेशानि महात्रिपुरसुन्दरि।
नमः शिवाय विद्येयं दशार्णा परिकीर्तिता।।६०।।
अनया विद्यया देवि स्वलिङ्गे पूजयेच्छिवम्।
यजेत्तत्पुरुषाघोरसद्योवामेशसंज्ञया ।।६१।।
निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शान्तिस्तथैव च।
शान्त्यतीता च सम्पूज्या षडङ्गावरणं यजेत्।।६२।।

ऋद्धि, सौम्या, मरीचि, आशुमालिना, अंगीरा, शशिनी, छाया, सम्पूर्णमण्डला, तुष्टि, अमृता–ये १६ चन्द्रकला हैं। हे शैलजे ! ये सभी कार्य में फलसिद्धि देती हैं। इनकी पूजा स्वर से करनी चाहिये। पूजा क्रम है–(मस्तक से वामपर्यन्त) मस्तक–ऐं ह्रीं श्रीं अं पूष्णे नमः। वाम चक्षु–ऐं ह्रीं श्रीं आं वशायै नमः। वामकर्ण–ऐं ह्रीं श्रीं इं सुमनसे नमः। वामनासा–ऐं ह्रीं श्रीं ईं रत्यै नमः। वामगण्डे–ऐं ह्रीं श्रीं उं प्रीत्यै नमः। वामादिकर–ओष्ठ–ऐं ह्रीं श्रीं ऊं घृत्यै नमः। वामस्कन्ध–ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ऋद्ध्यै नमः। वाम हस्त का कूर्पर (केहुनी)–ऐं ह्रीं श्रीं ॠं सोमायै नमः। वाम कब्जि–ऐं ह्रीं श्रीं ऌं मरीचये नमः। वाम हस्तांगुली मूल–ऐं ह्रीं श्रीं ॡं अंशुमालिन्यै नमः। वाम अंगुली के आगे–ऐं ह्रीं श्रीं एं अंगिर- से नमः। वामपादमूल–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं शशिन्यै नमः। वामजानु–ऐं ह्रीं श्रीं ओं छायायै नमः। वामपाद की एड़ी–ऐं ह्रीं श्रीं औं सम्पूर्ण मण्डलायै नमः। वामपाद का अंगुलिमूल–ऐं ह्रीं श्रीं अं तुष्ट्यै नमः। वामपाद का अंगुल्याग्र–ऐं ह्रीं श्रीं अः अमृतायै नमः। अब दूती के मस्तक पर त्रिपुरा बाला की पूजा करे। यथा–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः त्रिपुराबालायै नमः। तदनन्तर दूत की योनि में भगमाला यन्त्र से पूजा करे। यथा–ऐं ह्रीं श्रीं ऐं भगभूगे भगिनि भगोदरि भगाङ्गे भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भग निपातिनि सर्वभगवशङ्करि भगरूपे नित्यक्लिन्ने क्लेदय सर्व सत्वान् भगेश्वरि अमोघे भगविच्चे क्षुत् क्षोभय सर्व सत्वान् भगेश्वरि ऐं ब्लूं जं में ब्लूं भों, ब्लूं हे ब्लूं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि में वशमानय स्त्रीं हर ब्लें ह्रीं–भगमालायै नमः।

उनकी योनि को सर्वसिद्धि प्रद, त्रिकोण को सर्वानन्दमय जानकर त्रिकोण मध्य में चक्रद्वय की पूजा करे। त्रिपुराबाला चक्र तथा श्रीविद्या चक्र की पूजा कुलाचार पद्धति के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनुसार वहां योनि में क्रमशः करे। तदनन्तर धूप-दीप आदि श्रीविद्या को समर्पित करके लिंगपूजा करे। हे भुवनेशानि ! हे महात्रिपुर सुन्दरी ! 'ॐ नमः शिवाय' यह विद्या दश अक्षरी प्रसिद्ध है। यथा–श् ई व् आ य् अ न् अ म् अ' हे देवी ! इस मन्त्र से अपने लिंग में शिवपूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् पञ्चमूर्त्ति की शिवपूजा करे। यथा–तत्पुरुष–अघोर–सद्योजात–वामदेव–ईशान।

तदनन्तर निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्या, शान्ति, शान्त्यतीता इन पांच की पूजा करे। यथा–ऐं ह्रीं श्रीं निवृत्यै नमः, इत्यापि। तदनन्तर षड़ङ्ग तथा आवरण पूजा करे। यथा–एते गन्धपुष्पे ॐ हृदयाय नमः हृदयाङ्गदेवतायै नमः। एत गन्धपुष्पे नं शिरसे स्वाहा शिवाङ्ग देवतायै नमः। एते गन्धपुष्पे मं शिवायै वषट् शिवाङ्ग देवतायै नमः। एते गन्धपुष्पे शिं कवचाय हुं कवचाङ्ग देवतायै नमः। एते गन्धपुष्पे वां नेत्रत्रयाय वौषट् नेत्रत्रयाङ्गदेवतायै नमः। एते गन्धपुष्पे यं अस्त्राय फट् अस्त्राङ्ग देवतायै नमः। आवरण पूजा–ऐं ह्रीं श्री एते गन्धपुष्पे शिवस्य आवरण देवताभ्यो नमः ॥५५-६२॥

समग्रविद्यामुच्चार्य नन्दिकेशं प्रपूजयेत्।
मध्ये वृषणयोर्देवि गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥६३॥
निवेद्य धूपदीपादि विजितेन्द्रियमानसः।
सर्वक्षोभिणीं मुद्रां बद्ध्वा योनिं प्रचालयेत् ॥६४॥

हे देवी ! वृषणद्वय (अण्डकोश) में समग्र मन्त्र उच्चारण करके गन्ध–पुष्प–अक्षत प्रभृति द्वारा नन्दिकेश्वर की पूजा करे। 'ऐं ह्रीं श्रीं नन्दिकेश्वराय नमः, एष गन्धः नन्दिकेश्वराय नमः। इस रीति से गन्धादि से पूजा करे। तदनन्तर नन्दिकेश को धूप-दीप प्रभृति निवेदन करके इन्द्रिय तथा मन जय करके सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा करके योनि चालित करें। दोनो हाथ की मध्यमा को संकुचित करके मध्य में रखे। दोनो हाथ की कनिष्ठाद्वय को उन-उन हाथ के अंगूठे से आबद्ध करे। तर्जनीद्वय को दण्डाकृति करे। अनामिका द्वय को मध्यमाद्वय के ऊपर रखे। यही है सर्वसंक्षोभिणी पूजा ॥६३-६४॥

क्षोभिण्यां वाऽथ वा देवि गजतुण्डाख्ययाऽथ वा।
उच्चरन्भगमालां तु द्राविणीबीजमुच्चरेत् ॥६५॥
अक्षुब्धः सन् वरारोहे यावद्रेतः प्रवर्तते।
रजोमयं रजः साक्षात्संविदेव न संशयः ॥६६॥
प्रकृतिः परमेशानि वीर्य पुरुष उच्यते।
सर्वं साक्षात्सामरस्यं शिवशक्तिमयं ततः ॥६७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तयोर्योगो महेशानि योग एव न संशयः ।
सीत्कारो मन्त्ररूपस्तु वचनं स्तवनं भवेत् ।।६८।।

हे देवी ! क्षोभिणी मुद्रा से अथवा गजतुण्डाख्य मुद्रा द्वारा भगमाला मन्त्र का उच्चारण करे जो इससे पहले दिया गया है । यह मन्त्र उच्चारण करके 'द्रीं' उच्चारण करे । हे वरारोहे ! जब तक रेतः प्रवृत्त नहीं हो, तब तक अचंचल रहे । स्त्रीरजः रजोमय अर्थात् रजोगुणात्मक है । वह साक्षात् संवित् (चैतन्य) है । इसमें सन्देह नहीं है । वह रजः प्रकृति स्वरूप हैं तथा वीर्य पुरुष स्वरूप है । अतः शिव–शक्ति की समासता समभावता स्वरूप है । समस्त जगत् शिवशक्तिमय है । हे परमेशानी ! हे महेशानी ! विद्वान् रजः तथा रेतः को शक्ति एवं शिवस्वरूप कहकर उनके संयोग को ही (समाधि) योग कहते हैं । यह है योनि संयोग (मैथुन) । मैथुनकाल का सीत्कार ही मन्त्र है । उस समय की पुरुष प्रकृति की वार्त्ता ही स्तवरूप है ।।६५-६८।।

नखदन्तक्षतान्यत्र पुष्पाणि विविधानि च ।
कूजनं गायनं स्तुत्या ताडनं हवनं भवेत् ।।६९।।
आलिङ्गनं तु कस्तूरीघुसृणादिकमद्रिजे ।
मर्दनं तर्पणं विद्धि वीर्यपातो विसर्जनम् ।।७०।।
कुलद्रव्येण संशोध्य शिवशक्तिमयं प्रिये ।
बीजामृतं परब्रह्मरूपं निक्षिप्य सुन्दरि ।।७१।।
अर्घ्यपात्रामृते त्यक्त्वा निर्विकल्पः सदाऽनघः ।
श्रीविद्याक्रममभ्यर्च्य परब्रह्ममयो भवेत् ।।७२।।
एतत्ते कथितं ज्ञानं सामरस्यं वरानने ।
सविकल्पस्तु देवेशि पापभाग्जायते नरः ।।७३।।
विचिकित्साकारो मन्त्री जायते गुरुतल्पगः ।
अत एव वरारोहे निर्विकल्पः सदा भवेत् ।।७४।।

यह दूती प्रयोग निर्विकल्प ज्ञानावस्थायुक्त साधक के ही लिये है । अन्य के लिये नहीं है । यह पूर्णतः कामजयी साधक के ही लिये अनुष्ठेय है । कामकलुषित चित्त व्यक्ति हेतु इसकी धारणा पूर्णतः असंभव है । अतएव आधुनिक पाश्चात्य रुचि सम्पन्न मानव यदि यह देखकर इसपर नाक–भौं सिकोड़ते हैं, तब यह उनका महाभ्रम ही होगा शिव द्वारा कहे इस तन्त्र साधन की धारणा भी गुरुकृपा के बिना नहीं की जा सकती । अतः यह कामसंभोग नहीं है । यह काम से अतीत स्थिति है । इस परमविशुद्ध साधन में दोष दृष्टि करना हानि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रद है। पहले कहा है कि यह साधन महादेव का मदन दहन स्वरूप है। अनाधिकारी हेतु यह नहीं है।

इस शिवशक्ति योग में नायिका द्वारा किये तथा नायक द्वारा किये नख-दन्तक्षत ही पूजा के पुष्प है। कूजन तथा गायन ही स्तुति है। रति ताड़न ही होम है। हे पर्वतनन्दिनी ! इसमें आलिंगन ही कस्तूरी है। रतिकालीन मर्दन ही तर्पण है। वीर्यपात ही त्याग है। हे प्रिये ! शिव-शक्ति मय परब्रह्मरूप बीजामृत को कुलद्रव्य (मद्य) द्वारा–शुद्ध करके अमृतमय अर्ध्यपात्र में निक्षेप करके तथा निर्विकल्प होकर अवस्थान करे। हे सुन्दरी। तदनन्तर अंग एवं आवरण सहित श्रीविद्या की पूजा करके पर ब्रह्ममय हो जाये। हे वरानने ! तुमसे यह सामरस्य ज्ञान कहा। हे देवेशी ! सविकल्प साधक इसे करके पापभागी होगा, मन्त्रज्ञ व्यक्ति इस निर्विकल्प ज्ञान सम्पन्न सामरस्य ज्ञान के प्रति संदेह रखकर गुरु पत्नी संभोग जैसे पाप का भागी होगा। हे वरारोहे ! सर्वदा निर्विकल्प रहो ॥६९-७४॥

द्वाविंश पटल समाप्त।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रयोविंशः पटलः

(ज्ञानदूतीयाग, पूजा प्रकार नाद का विश्वयोनित्व)

श्रीदेव्युवाच–

दूत्यन्तरं प्रवक्ष्यामि येन ब्रह्म सनातनम् ।
प्रणवाख्यं यागगेहं प्रविश्य सुरवन्दिते ।।१।।
इच्छाज्ञानक्रियाद्रव्यरचितं सुधया युतम् ।
अम्बया परमेशानि तत्त्वज्ञानमये शिवे ।।२।।
पर्यङ्के पुरुषार्थैस्तु पादैश्च परिमण्डिते ।
आत्मान्तरात्मपरमज्ञानात्माङ्गविभूषिते ।।३।।
तत्पदार्थस्त्वंपदार्थोऽसिपदार्थश्च सुन्दरि ।
पदार्थत्रयमेतत्तु ज्ञानसूत्रप्रकाशकम् ।।४।।
एतत्सूत्रमयैः पट्टैर्गुम्फितेऽम्बरमण्डिते ।
सुमनोवाससुभगे परां तत्र प्रपूजयेत् ।।५।।
जातिभेदस्तु दूतीनां चतुर्धा वीरवन्दिते ।
हस्तिनी शङ्खिनी चैव चित्रिणी पद्मिनी प्रिये ।।६।।

ईश्वर कहते हैं–हे परमेशानी ! हे सुरवन्दिते ! अन्य एक प्रकार से (प्रकारान्तर से) दूती प्रसंग कहता हूँ, जिससे जगन्मातृरूप सुधा द्वारा इच्छा–ज्ञान क्रिया तथा द्रव्य द्वारा रचित, नित्य ब्रह्मस्वरूप (शब्द ब्रह्म रूप) प्रणवात्मक यागगृह में प्रवेश करके धर्म–अर्थ–काम–मोक्षरूप पुरुषार्थ–चतुष्टयात्मक पाये से भूषित मंगलात्मक, शिवात्मक, तत्वज्ञानमय, आत्मा, अन्तरात्मा परमात्मा तथा ज्ञानस्वरूप अंग के द्वारा अलंकृत् पर्यंक पर तत्पदार्थ–त्वं पदार्थ तथा असि पदार्थ (तत्+त्वं+असि=तत्वमसि) का दर्शन हो सकेगा । हे सुन्दरी ! ये तीन पदार्थ ज्ञानसूत्र के प्रकाशक हैं । इन ज्ञानसूत्रमय पट्टवस्त्र से ग्रथित वस्तभूषित उत्तम मनरूप सुगन्ध से मनोहर इस गृह में देवी त्रिपुर सुन्दरी की पूजा करनी चाहिये । हे वीरवन्दिते ! हे प्रिये ! इन दूतीगण में चार भेद हैं–हस्तिनी, शंखिनी, चित्रिणी तथा पद्मिनी ।।१-६।।

विवृति–

इस पटल में जो दूतीयाग प्रयोग कहा जा रहा है, यह आत्मज्ञान का रूप है । यहां प्रणव (ॐकार) ही यागगृह है । जैसे यागगृह में याग किया जाता है, उसी प्रकार ज्ञानलाभार्थ ॐकार की स्थिति भी यागगृहवत् है । यह भी ब्रह्म तथा सनातन एवं नित्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। गीता ने भी ॐकार को ब्रह्म कहा है। यह जगत्कारण सगुण ब्रह्म है। ॐकार में ही इच्छा–ज्ञान–क्रिया तथा घटादि द्रव्य हैं। ॐकार के ऊपर जो नाद (ँ) है, वही शक्ति रूप है। तभी कहते हैं कि यह जगन्माता से युक्त है। इस नाद (ँ) के ऊपर जो बिन्दु है (ँ) वह है शिव, इसे ही खट्वा कहते हैं। शिव हैं तत्वज्ञानमय ! खट्वा (पर्यंक) के चार पाये होते हैं। इस स्थान पर तत्व ज्ञानमय खट्वा के चार पाये हैं–आत्मा–अन्तरात्मा–परमात्मा–ज्ञानात्मा। खट्वा पर यहां तत् पदार्थ–त्वं पदार्थ तथा असि पदार्थ स्थित हैं (तत्वं असि)। 'तत्वमसि' इस महावाक्य के तत् पद के वाच्यार्थ हैं ईश्वर। त्वं पद का वाच्यार्थ हैं जीव, असि पद का वाच्यार्थ है होना। इसी कारण यह वाक्य ज्ञानसूत्र प्रकाशक है। इस ज्ञानदूती याग में तन्त्रानुसार साधनार्थ यह कहा गया है कि खट्वा के (पर्यंक) ऊपर स्थित पराशक्ति की पूजा करे। यहां चार प्रकार की दूती का वर्णन है। ये हैं परा–पश्यन्ति–मध्यमा-वैखरी रूपी चार प्रकार के शब्द। तन्त्र में परब्रह्म से शब्द की सृष्टि तथा शब्द से अर्थ की सृष्टि कही गयी है। यहां शब्दरूपा (वाक् रूपा) दूती ज्ञानलाभ की कारण हैं ॥१-६॥

चतुर्विधा हि दूत्यस्तु सुन्दर्यश्चारुलोचनाः।
वैखरी हस्तिनी ज्ञेया स्थूला यस्माद्वरानने ।।७।।
ययेदं धार्यते सर्वं ब्रह्माण्डपरिमण्डलम्।
वर्गाष्टकेन देवेशि सूते दिग्गजसंचयम्।
तेनेयं करिणी प्रोक्ता मध्यमा शङ्खिनी भवेत् ।।८।।
शङ्खिनी तु यथा भद्रे विशुद्धा पापवर्जिता।
सर्वदेवप्रिया सा हि शान्तिसौभाग्यशोभिता ।।९।।
तथा वनस्पतिगता मध्यमा वाग्वरानने।
चित्रिणी वल्लरी देवि महादोषविनाशिनी ।।१०।।
यस्याः फलं वरारोहे शिवशक्तिमयं सदा।
शिवशक्तिमयं देवि प्राणिमात्रजगत्त्रयम् ।।११।।
तेषु सर्वेषु पश्यन्ती जीवेषु परमाश्रया।
परब्रह्मणि सा लीना परा वाक्परमेश्वरि ।।१२।।

हे वरानने ! चार प्रकार की दूती ही सुन्दरी तथा मनोहर नेत्रा हैं। उनमें वैखरी शब्द को हस्तिनी नामक दूती जानो। हम जिस शब्द का उच्चारण करते हैं अथवा अन्य से श्रवण करते हैं, वह वैश्वरी स्थूल शब्द है। अतएव हस्तिनी भी स्थूला है। इसलिये वैखरी शब्द ही हस्तिनी नामक दूतीं है। (जिसको द्वारा समस्त ब्रह्माण्डमण्डल धृत है)। हे देवेशी ! वैखरी शब्दरूपा हस्तिनी दूती अष्ट वर्ग द्वारा दिग्गजों को जन्म होती है। तभी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मातृकावर्णसमूह में अष्टवर्ग हैं। यथा–अवर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग, श वर्ग। शब्द से ही अर्थ सृष्टि होती है। तभी हस्तिनी दूतों अष्ट वर्ग से दिग्गज अर्थात् समस्त शब्द की सृष्टि करती हैं।

हे वरानने ! मध्यमा वाक् है शंखिनी दूती। हृदय में जो शब्द स्थित है, उसे अन्य नहीं सुन सकते। व्यक्ति उसे स्वयं ही सुनता है। ऐसा सूक्ष्म शब्द है मध्यमा। हे भद्रे ! यह सूक्ष्म शब्दमयी शंखिनी विशुद्ध-पापरहिता समस्त देवताओं की प्रिया, शान्ति–सौभाग्य शोभिता है। हे वरानने ! यह मध्यमा वाक् अश्वत्थ, वट आदि वनस्पति में भी स्थित है। (वृक्षादि का शब्द सूक्ष्म होता है। उसे कोई सामान्य व्यक्ति सुन नहीं सकता। वह मध्यमा वाक् है)। हे देवी ! चित्रिणी नामक दूती वल्लरी तथा मञ्जीर भी कहलाती है। यह महादोष विनाशकारिणी है। हे वरारोहे ! इस दूती का फल सर्वदा शिवशक्तिमय है। यही पश्यन्ति वाक् है। यह समस्त प्राणि समूह तथा ब्रह्माण्ड की आन्तर हैं। ये शिव शक्ति की अंश हैं। नाभिमूलस्थ योगीगणगम्य अतीन्द्रिय आन्तर शब्द को पश्यन्ति कहा गया है। चित्रिणी उसी पश्यन्ति का स्वरूप है। यह पश्यन्ति रूप-चित्रिणी दूती समस्त प्राणीगण की आश्रयरूपा शिवशक्ति रूप है। यह परब्रह्म में लीन होती है। परावाक् ही परब्रह्मरूप है ॥७-१२॥

तां दूतीं तत्र संपूज्य समाधिकुसुमैः शुचिः।
तदङ्गेषु कलाः पूज्याः क्रमेण सुरवन्दिते ॥१३॥

हे देववन्दिते ! इन चित्रिणी दूती की पूजा शुद्ध समाधि पुष्प से करके उनके अंगसमूह में क्रमशः कला समूह की पूजा करनी चाहिये। यह आन्तर शब्द रूपी पश्यन्ति रूपा चित्रिणी दूती का साक्षात्कार समाधि में ही होता है। इनकी पूजा समाधि योग रूपी पुष्प से ही रूपित की गयी है। तदनन्तर इस समाधियोग से उनके अंगसमूह के साक्षात्कार को करने के लिये उनके अंगसमूह की मानस पूजा करे ॥१३॥

पद्ममिनी तु परा ज्ञेया हंसस्वच्छविकासिनी।
हंसोदयेन पद्मं हि त्यक्त्वा संकोचमद्रिजे ॥१४॥
विकासयति सौभाग्यं तथा वस्तुविलासतः।
परा प्रकाशमायाति पद्मिनीत्वमतो भवेत् ॥१५॥
तस्या देहे वरारोहे कलाः पूज्यास्तु षोडश।
चित्कला सत्कला ज्ञानकला संवित्कला तथा ॥१६॥

जो परावाक् मूलाधार चक्र में अवस्थित है, वही है पद्मिनी दूती। यह हंस के समान स्वच्छ, विकासशील है। हंस (सूर्य) का उदय होने पर पद्म विकसित हो जाते हैं। इसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रकार परा ज्ञानरूप हंस का उदय होने पर साधक के समक्ष इसका प्रकाशन हो जाता है। तभी पद्मिनी दूती ही परावाक् है। हे वरारोहे ! देह में इनकी १६ कलाओं की पूजा करनी चाहिये। हे परमेश्वर ! उक्त षोडश कला में आत्मा की चार कलाये हैं–चित्कला, सत्कला, ज्ञानकला, संवित् कला। आत्मा चित् स्वरूप, सत् स्वरूप, तथा आनन्द रूप है। सत् को सत्कला, चित् को चित्कला, अन्तःकरण वृत्ति के अभिव्यक्त चैतन्यांश को ज्ञानकला कहा है। तथा चिद्भिन्न आनन्दांश जब अभिव्यक्त होता है, तब उसे लक्ष्य करके संवित्कला कहते हैं। इसलिये ये चारो आत्मा की कला हैं।

अब अन्तरात्मा की चार कला कहते हैं। विरागता (वैराग्य), मोक्षकला, परमाणुकला (परमाणु उनके अचिदंश की कला है) तथा विद्याकला। परमात्मकला हैं–विद्या (ज्ञान), सन्तोषता (सन्तोष), तृप्ति तथा परब्रह्म प्रकाश भी कला रूप है ॥१४-१६॥

आत्मनस्तु कला ज्ञेयाश्चतस्त्रः परमेश्वरि।
विरागता मोक्षकला परमाणुकला तथा ॥१७॥
विद्याकलाचतुष्कं तु विज्ञेयं चान्तरात्मनि।
विद्या संतोषता तृप्तिः परब्रह्मप्रकाशता ॥१८॥
परमात्मकला ज्ञेयाः संलीनाः परवस्तुनि।
लुप्तिः शान्तिकला बोधकला व्याप्तिकला परा ॥१९॥
ज्ञानात्मनः कला ज्ञेयाश्चतस्त्रः परमेश्वरि।
कलाः षोडश देवेशि श्रीविद्यार्णेषु संस्थिताः ॥२०॥
षोडशार्णा ब्रह्मरूपा कला षोडशरूपिणी।
आत्मा जाग्रत्स्वरूपेण त्रैलोक्यं रचयत्यसौ ॥२१॥
अन्तरात्मा सत्त्वरूपस्तमोरूपश्च मिश्रितः।
अत एव रजोरूपस्तमोरूपः परः शिवः ॥२२॥

अर्थात् ये सब परमात्मा की कलाये हैं। हे परमेश्वरी ! लुप्ति (लय), शान्तिकला (विषयादि से उपरति), बोधकला (साक्षात्कार), परा (व्याप्तिकला सब में व्याप्त होना), ये हैं ज्ञानात्मा की कला। हे देवेशी ! उक्त १६ कलाये ही श्रीविद्यामन्त्र के वर्णों में स्थित हैं। 'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह् स् क् ह् ल् ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः' मन्त्र त्रिपुरा का षोडशाक्षरी मन्त्र है। यही श्रीविद्या है। यही १६ कलारूप तथा ब्रह्मरूप है। आत्मा जाग्रत स्वरूप त्रैलोक्य रचना करता है। (प्राण प्रधान वस्तु ही आत्मा है। यह आत्मा प्राण के द्वारा स्थूल जगत् का सृजन करता है)। अन्तरात्मा तत्व स्वरूप (चैतन्य रूप) तथा तमोरूप का मिश्रित व्यक्तीकरण है। अतः आत्मा की तमः रजः मिश्रित स्थिति अन्तरात्मा है। शिवशक्तिमय समस्त जगत् अन्तरात्मा है ॥१७-२२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परमात्मा हि विज्ञेयो ज्ञानात्मा तुर्यया युतः ।
एताः कला वरारोहे तस्या देहे प्रकाशयेत् ।।२३।।
तत्पदार्थं तु जानीहि मुखमस्या वरानने ।
त्वंपदार्थोऽसिवाक्यार्थः कुचयुग्मं क्रमेण हि ।।२४।।

चैतन्यमय परशिव ही परमात्मा हैं। ज्ञानात्मा को चतुर्थ आत्मा जानो। हे वरारोहे ! इन चार आत्मा की पूर्वोक्त १६ कलाओं को समाधि द्वारा श्रीविद्या में अनुभव करो। हे वरानने ! तत् पदार्थ को श्री विद्यारूप पद्मिनी दूती (परावाक्) का मुख जानो। त्वं पदार्थ तथा असिवाक्यार्थ (त्वं-असि) की श्रीविद्या के स्तनद्वय रूपेण भावना करो ॥२३-२४॥

भोगस्तु परमेशानि नादो ब्रह्ममयो भवेत् ।
नादोदितं वरारोहे विश्वं योनिर्न संशयः ।।२५।।
तत्रैव शक्तिं संपूज्य स्वात्मलिङ्गं शिवं यजेत् ।
परस्परप्रभावेण ब्रह्मानन्दरसो भवेत् ।।२६।।
तं रसं मनसा देवि वहन्नाड्यगतं प्रिये ।
अर्घ्यामृतेन संयोज्य ततः श्रीचक्रमर्चयेत् ।।२७।।

हे परमेश्वरी ! विषयभोग का चिन्तन भी नाद स्वरूप तथा ब्रह्ममय रूप से करो। नाद है शक्ति स्वरूप। शक्ति जड़ नहीं है। अत: नाद ब्रह्ममय ब्रह्मानन्द है। नाद (शक्ति) में प्रचुर आनन्द है। अत: भोग भी आनन्द प्रचुर ब्रह्म है। वह भोग भी ब्रह्म ही है। इसलिये भोग का चिन्तन आनन्द प्रचुर ब्रह्मरूप करने से भोगचिन्ता दूर होती है और आनन्दात्मक ब्रह्मज्ञान का आविर्भाव हो जाता है। हे वरारोहे ! समस्त जगत् नाद से उत्पन्न है, इसलिये शक्ति (नाद) ही विश्वयोनि है। समस्त विश्व ही योनिरूप है। इस योनि में (दूति योनि में) शक्ति पूजा करके अपने लिंगरूप शिव की पूजा करे। शिव-शक्ति के प्रभाव से ब्रह्मानंद रसोत्पत्ति होती हैं। (साधक स्त्री-पुरुष मिलन का चिन्तन शिवशक्ति सामरस्य रूप में करे तभी भौतिक स्त्री-पुरुष संगम में भी ब्रह्मानन्द उद्रिक्त हो जाता है।) हे देवी ! हे प्रिये ! इस शिव-शक्ति (स्त्री-पुरुष) संयोग सामरस्य से जो आनन्दानुभव हो, साधक उस रस को अपने चिन्तन द्वारा "शरीर से निर्गत प्रश्वास से ब्रह्मानन्द निर्गत हो रहा हैं यह अनुभव करे। तथा इस भावना से श्रीविद्या चक्र का पूजन करे ॥२५-२७॥

ब्रह्मानन्दमयं ज्ञानं कथयामि वरानने ।
न ब्राह्मणो ब्राह्मणस्तु क्षत्रियः क्षत्रियस्तथा ।।२८।।
वैश्यो न वैश्यः शूद्रो न शूद्रस्तु परमेश्वरि ।
चाण्डालो नैव चाण्डालः पौल्कसो न च पौल्कसः ।।२९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्वं समं विजानीयात्परमात्मविनिश्चयात् ।
आकाशात्पतितं तोयं निम्नमार्गेण गच्छति ।।३०।।

हे वरानने ! ब्रह्मानन्दाभिव्यञ्जक ज्ञान कहता हूँ । ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं, क्षत्रिय क्षत्रिय नहीं, वैश्य वैश्य नहीं, शूद्र शूद्र नहीं, चाण्डाल चाण्डाल नहीं, पौल्कस (अत्यन्त निम्न जाति) पौल्कस नहीं रह जाता । (अर्थात् यह भेद नहीं रह जाता) । सर्वत्र परमात्मा की स्थिति जानकर सभी समत्वमय भासित होते हैं । आकाश से पतित समस्त जल एक ही स्थान में जाता है ॥२८-३०॥

ग्राममध्यगतं सर्वं विष्ठामूत्रादिपूरितम् ।
मृतगोश्वानमार्जारखरादिरुधिरान्वितम् ।।३१।।
समस्तमपि देवेशि गङ्गायां मिलितं यथा ।
गङ्गामृते तु देवेशि कालुष्यं नैव तिष्ठति ।।३२।।
तथा सच्चिन्मये ज्ञाने समता सर्वजन्तुषु ।
सर्वद्रव्येषु गिरिजे समता नात्र संशयः ।।३३।।
यथा सूर्यप्रकाशोऽयं समत्वेन प्रवर्तते ।
उत्तमस्यापि चान्यस्य तमः संहरते क्षणात् ।।३४।।
शोषयन्दुग्धमूत्राणि चन्दनं चैव कर्दमम् ।
अत एव महेशानि मन्त्री सर्वसमो यदा ।।३५।।
सिद्धिस्तदैव विज्ञेया श्रीगुरोः कृपया प्रिये ।।३६।।

हे देवेशी ! ग्राम में स्थित मल-मूत्र से परिपूर्ण, समस्त वस्तु मृत गौ, मृत कुत्ते-बिल्ली-गर्दभ प्रभृति के रक्त से मिले पदार्थ गंगा में जाकर मिल जाते हैं । इन सबके जल में पतित हो जाने पर भी गंगा में कलुष नहीं होता, उसी प्रकार सच्चिदात्मक ज्ञान से समस्त जन्तु में समता ही लक्षित होती है । हे पर्वतकन्ये ! सबमें तुल्यता अर्थात् ब्रह्मरूपता है । इसमें संशय नहीं है । जैसे उत्तम, हीन सब पर सूर्य प्रकाश समान पड़ता है वहां उत्तम–मध्यम–हीन भेद नहीं है । सूर्य उदित होते ही क्षणमात्र में अन्धकार दूर हो जाता है । सूर्य एक ही भाव से दुग्ध, मूत्र, चन्दन कीचड़ सब का शोषण करता है । हे महेशानी ! सूर्य सबके लिये म्य है । इसी प्रकार जब मन्त्र साधक की दृष्टि सम हो जाती है, तब उसे श्रीगुरु कृपा से सिद्धि प्राप्त होगी । यह समझो ॥३१-३६॥

त्रयोविंश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतुर्विंशः पटलः

(दीक्षा विधि, श्री विद्याध्यान, संसार वृक्षनाश, अजपा गायत्री)

ईश्वर उवाच–

दीक्षाविधिं प्रवक्ष्यामि येन शिष्यः सुखी भवेत् ।
दीयते सकलं देवि गुरवे प्राणसंयुतम् ।।१।।
धन–रत्न–सुवर्णादि–पट्टवस्त्र–समुच्चयम् ।
क्षयं प्राप्नोति तद्भावान्नानापापसमुच्चयः ।।२।।
तस्माद्दीक्षेति नामास्याः सर्वशास्त्रेषु सुव्रते ।
पापिने कृपणायापि शठाय कपटाय च ।।३।।
अदीनायाऽऽचारशून्याय मन्त्रद्वेषपराय च ।
निन्दकाय च मूर्खाय तीर्थद्वेषपराय च ।।४।।
भक्तिहीनाय देवेशि न देया मलिनाय च ।
दानशीलाय भक्ताय साधवे तीर्थचेतसे ।।५।।
सन्मार्गवर्तिने चाग्निदेवद्विजरताय च ।
सर्वशास्त्रार्थवेदार्थज्ञानिने सुव्रताय च ।।६।।
दीक्षा देया वरारोहे अन्यथाऽऽपत्तिभाग्भवेत् ।
अथ वक्ष्ये वरारोहे दीक्षाकरणमुत्तमम् ।।७।।

ईश्वर कहते है–दीक्षाविधान कहता हूँ जिससे शिष्य सुखी होते हैं। हे देवी ! गुरु को प्राण के साथ, धन, रत्न, सुवर्णादि, पट्टवस्त्र, प्रभृति सब प्रदान करे। गुरु को सर्ववस्तु दान के कारण नाना प्रकार के पापों का क्षय होता है। हे सुव्रते ! सभी शास्त्र में इसे दीक्षा कहते हैं। हे देवेशी ! पापी, कृपण, धूर्त्त, कपटी, दैन्ययुक्त, आचार रहित, मन्त्रों से द्वेष रखने वाले, निन्दक, मूर्ख, तीर्थों के प्रतिद्वेषी, भक्तिहीन, मलिन को दीक्षा न दे। हे वरारोहे ! दानशील, भक्त, साधु, तीर्थ के प्रति उत्सुक, सन्मार्गगामी, अग्नि देवता द्विज की सेवा का परायण, वेदशास्त्रज्ञान से सम्पन्न, कर्मनिष्ठ, ऐसे व्यक्ति को दीक्षा देनी चाहिये। अन्यथा दीक्षा प्रदाता विपत्ति में पड़ जाता है। हे वरारोहे ! हे प्रिये ! अब उत्तम दीक्षा प्रक्रिया कहता हूँ ।।१-७।।

मण्डपं वेदिकां कृत्वा पुष्पवैतानमण्डितम् ।
दीपमालावलीरम्यं नानाधूपसुधूपितम् ।।८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिन्दूररङ्गमालाभिर्मण्डितं चित्रचित्रितम् ।
वेदिकायां वरारोहे कुङ्कुमेनाथ वा प्रिये ।।९।।
सिन्दूररजसा वाऽपि विलिखेच्चक्रमुत्तमम् ।
मध्यचक्रं वरारोहे नवकोणविराजितम् ।।१०।।

पुष्प, चन्द्रातप आदि से भूषित मण्डप में वेदी बनाये । मण्डप में दीपमाला सजाकर मण्डप को मनोरम करे । नाना धूपगन्ध से धूपित करे । सिन्दुर अबीर प्रभृति से भूषित कर के नाना प्रकार के उत्तम चित्रों से उसे सजाये । हे वरारोहे ! वेदी पर कुंकुम अथवा सिन्दूर द्वारा उत्तम श्री चक्र अंकित करके चक्र के मध्यभाग में अथवा मध्यचक्र में ९ कोण बनाये ।।८-१०।।

चतुरस्त्रं च संलिख्य सुवर्णकलशान्नव ।
रौप्यताम्रादिरचितान्मृत्तिकारचितांश्च वा ।।११।।
जलपूर्णान्विशेषाढ्यान् स्वर्णरत्नप्रपूरितान् ।
फलैः पुष्पैश्च सुभगान् सुगन्धेन च चर्चितान् ।।१२।।
वशिन्याद्यष्टकं तत्र वसुकुम्भेषु पूजयेत् ।
मध्यकुम्भे वरारोहे श्रीविद्यां परितोषयेत् ।।१३।।
क्रमं समस्तमभ्यर्च्य कुमार्याद्यर्चनं यजेत् ।
सुवासिनीर्ब्रह्मवृन्दं योगिनो विविधानपि ।।१४।।

चतुरस्त्र बनाकर रौप्य, सुवर्ण, ताम्र, पित्तल अथवा मिट्टी के ९ कलसों को स्थापित करे । समस्त कलस जल पूर्ण हों । कलसों में स्वर्ण, रत्न आदि छोड़कर उनको विशेष रूप से विशेषान्वित करे । कलसों पर फल तथा पुष्प सज्जित करके कलसों को सुन्दर बनाये । सुगन्ध द्वारा कलसों को सुगन्धित (चर्चित) करे । उनमें से आठ में क्रमशः वशिनी, कामेश्वरी, मोदिनी, विमला, अरुणा, जयिनी, सर्वेशी तथा कौलिनी भी पूजा करनी चाहिये । पूजा मन्त्र यह हैं–ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः र व लूं वाशिनी वाग्देवतायै नमः । इसी तरह से अन्य की भी पूजा होगी । (इस ग्रन्थ में पहले इनके न्यास तथा पूजा का वर्णन लिखा गया है) ।

हे वरारोहे ! मध्यम कलस में श्रीविद्या की पूजा करनी चाहिये । श्रीविद्या की पूजा का क्रम ग्रन्थ में कहा गया है । तदनुसार पूजा करे । तदनन्तर कुमारी पूजन आवश्यक है । विवाहिता कुमारी दो प्रकार की (पटल २२ देखें) कही गयी हैं । यथा–सुवासिनी तथा मद प्रौढ़ा । इनसे सुवासिनी की पूजा करे । ब्राह्मण को पूजन (भोजनादि-दक्षिणा) करके विविध योगीगण की पूजा करे ।।११-१४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तदङ्गहवनं कुर्यात्सर्वेषां तृप्तिहेतवे ।
गुरुः शिष्यमुपानीय भक्तिनम्रमकल्मषम् ।।१५।।
प्राणानायम्य विधिवच्छुद्धपीठे निवेश्य च ।
सुरास्त्वामेत्यादिमन्त्रैश्चिरण्टीभिर्युतः स्वयम् ।।१६।।
अभिषिञ्चेच्च तन्मूर्ध्नि तदेतत्कलशोदकैः ।
परिधाप्य सुवासोभिश्चन्दनादवलेप्य च ।।१७।।
वामतः परमेशानि स्वासने पूजिते शुचिम् ।
सर्वशृङ्गारवेषाढ्यं शिष्यं तत्र निवेशयेत् ।।१८।।

कुमारीगण, योगीगण तथा ब्राह्मणगण को तृप्त करके कुमारी पूजा के अंगारूप होम को भी करे । तदनन्तर गुरु गृहवासिनी सुवासिनी कुमारी स्त्री लोगों से घिर कर विधानानुरूप प्राणायाम करके भक्तिपूर्वक विनीत, निष्पाप शिष्य को बुलाकर उसे शुद्ध पटरे पर बैठाकर उसके मस्तक पर इन ९ कलसों का जल क्रमशः छोड़े । अभिषेक मन्त्र हैं—

'ॐ सुवास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वरीः ।
वासुदेवो जगन्नाथः सङ्कर्षणस्तथा प्रभुः ।।१।।
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते ।
आखण्डलोऽग्निर्भगवान् यमो वै नैर्ऋत स्तथा ।।२।।
वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः ।
ब्रह्मणा सहिताः शेषा दिक्पाला पान्तु ते सदा ।।३।।
कीर्त्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्षमा मतिः ।
बुद्धिर्लज्जा वपुः कान्तिः शान्तिस्तुष्टिश्च मातरः ।।४।।
एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु धर्मपत्न्यः समागताः ।
आदित्यश्चन्द्रमा भौमौ बुध जीवसितार्कजाः ।।५।।
ग्रहस्त्वामभिषिञ्चन्तु राहुः केतुश्चतर्पिताः ।
देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ।।६।।
ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च ।
देवपत्न्यो ध्रुवा नागा दैत्याश्चाप्सरसां गणाः ।।७।।
अस्त्राणि सर्वशास्त्राणि राजानो वाह्नानि च ।
औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये ।।८।।
सरितः सागरा शैलास्तीर्थानि जलदानदाः ।
एतेत्वामभिषिञ्चन्तु धर्मकामार्थ सिद्धये ।।९।।'

ये ९ श्लोक हैं । एक-एक श्लोक से एक-एक घट जल से अभिषेक करना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चाहिये। हे परमेशानी! तदनन्तर गुरुदेव अभिषेक से शुद्ध हो गये शिष्य को वस्त्र धारण कराकर शरीर पर चन्दनादि लिप्त करके अपने वामभाग के आसन पर सजाकर बैठाये ॥१५-१८॥

षडध्वरूपं श्रीचक्रं तस्य मूर्ध्नि विचिन्तयेत्।
अभावे तु बृहच्छङ्खं जलेनाऽऽपूर्य सुन्दरि ॥१९॥
कलास्तत्र समाराध्य देवीं सम्पूज्य सेवयेत्।
स्वदृष्ट्याऽऽलोकयेत्तं तु दृष्ट्या दृष्टिं तु मेलयेत् ॥२०॥
आज्ञासंक्रमणं कुर्याद्यावन्निश्चलता भवेत्।
नैश्चलं शाम्भवो वेद्यः शून्याशून्यविवर्जितः ॥२१॥

शिष्य का मस्तक ६ अध्वा युक्त है, यथा पदाध्वा, भुवनाध्वा, वर्णाध्वा, तत्वाध्वा, कलाध्वा, मन्त्राध्वा, ये ६ अध्वा श्रीयन्त्र में भी हैं। यह इस ग्रन्थ में पहले कहा जा चुका है। उसका चिन्तन करे। हे सुन्दरी। यह श्री चक्र शिष्य के मस्तक पर रखना चाहिये। (अर्थात् शिष्य के शिर पर श्री चक्रका चिन्तन ही श्री चक्र शिरपर रखने का तात्पर्य है) यदि यह धारणा न की जा सके तब एक वृहद् शंख जल भरकर २३ वे पटल के अनुसार १६ कला की अराधना उसमें करके उस शंख जल से शिष्य के शिर पर अभिषेचन करे। अब गुरुदेव अपनी (कृपादृष्टि से) दृष्टि से शिष्य का अवलोकन करें। अर्थात् अपनी दृष्टि से शिष्य की दृष्टि मिलायें। इस प्रकार गुरुदेव तब तक अपनी शक्ति का संक्रमण शिष्य में करते रहें, जब तक कि वह निश्चल (समाधिस्थ) न हो जाये। यही है गुरु प्रदत्त शांभवी दीक्षा ॥१९-२१॥

शून्यं शिवमयं वस्तु पुरुषः परमेश्वरि।
अशून्यं शक्तिराद्या हि प्रकृतिः परमेश्वरि ॥२२॥
शक्त्याधिक्ये रजःस्थौल्यं संयोगाच्छिवयोर्यदा।
स्वप्नावस्था तदा ज्ञेया योगः शक्त्यधिकस्ततः ॥२३॥

यह निश्चलता शून्याशून्य रहित गुणातीत स्थिति है। हे परमेश्वरी। शिव शून्य वस्तु है, पुरुष स्वरूप है। आद्या शक्ति है अशून्य, वे प्रकृति हैं। जब इन दोनों का संयोग होता है, तब शक्ति की अधिकता के कारण रजोगुण प्रकट होता है। यही स्वप्नावस्था है ॥२२-२३॥

शक्तिर्जाग्रदिति ख्याता शिवो निश्चलता प्रिये।
सुषुप्तिरिति मन्त्रज्ञैः कथिता निश्चला यतः ॥२४॥
गुणत्रयं तु कथितं जाग्रत्सत्त्वगुणा प्रिये।
तमोगुणा सुषुप्तिस्तु शिवे निश्चलरूपिणी ॥२५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शिवाधिक्याद्गुणातीतं वस्तु जानीहि सुन्दरि ।
शिवशक्तिसमायोगाच्छिवाधिक्यं यदा भवेत् ।।२६।।

योग में शक्ति की अधिकता होती है । तभी योग समाधि की स्थिति आती है । तब शक्ति को जाग्रत कहते हैं । हे प्रिये ! शिव निश्चल है । इसे (निश्चल) को मन्त्रीगण सुषुप्ति का नाम प्रदान करते हैं । हे प्रिये ! गुणत्रय कहा गया । इसमें से जाग्रदावस्था सत्वगुणात्मक है । हे शिवे ! तमोगुणात्मक सुषुप्ति निश्चला होती हैं । हे सुन्दरी ! शिवाधिक्य के कारण जो स्थिति होती है, वह गुणातीता है । शिव-शक्ति संयोग में शिव की (सत्वगुण) अधिकता होने पर चैतन्य की अभिव्यक्ति अधिक होने के कारण यह जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति से उर्ध्व चतुर्थी अवस्था है । इसमें सभी बन्धनों का उच्छेद हो जाता है ॥२४-२६॥

तदा तुर्या विजानीयात्सर्वबन्धनिकृन्तनीम् ।
कलाः षोडश देवेशि आत्मज्ञाने व्यवस्थिताः ।।२७।।
श्रीविद्याबीजसंलीनाः शिष्यदेहे प्रकाशयेत् ।
चतुर्विधा षोडशार्णा महात्रिपुरसुन्दरी ।।२८।।
तद्ध्यानात्तु मनःस्थैर्यमुन्मनीति निगद्यते ।
ब्रह्मज्ञाने मनः पक्षी तृष्णाचञ्चुविलक्षितः ।।२९।।

हे देवेशी ! आत्मज्ञान के सहायभूत हैं चित्, सत्, ज्ञान, संवित्, वैराग्य, मोक्ष, परमायु, विद्याकला, विद्या, सन्तोष, तृप्ति, परब्रह्म प्रकाश, लय, शान्ति, बोध तथा व्याप्ति रूप १६ कला । ये १६ कलायें श्रीविद्याबीज में लीन हैं । गुरु इनको ही शिष्य देह में प्रकाशित करते हैं । महात्रिपुरसुन्दरी आत्मा–अन्तरात्मा–परमात्मा-ज्ञानात्मा रूप से चतुर्विध है तथा १६ अक्षर वाले मन्त्र से युक्त है । यथा–श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह स क ह ल ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः । इनका ध्यान करने पर मनः स्थैर्य होता है । इसी मनःस्थैर्य को उन्मनी कहते हैं । मन पक्षी स्वरूप है । उसके नेत्र हैं तृष्णा ॥२७-२९॥

संकल्पेन विकल्पेन पक्षाभ्यां चञ्चलः सदा ।
मोहमत्सरकामैश्च क्रोधाहंकारदुर्मदैः ।।३०।।
संनद्धपिच्छैः सबलः कृत्याकृत्यपदद्वयः ।
संसारवृक्षे देवेशि धनपुत्रादिमूलके ।।३१।।
अविद्याविस्तृते निन्दास्तुतिशाखासुशोभिते ।
अभिलाषस्फुरत्पुष्पभरिते पातकादिभिः ।।३२।।
पर्णपूर्णे वरारोहे पापपुण्यफलान्विते ।
तत्र शाखाद्वये स्थूले श्रुतदृष्टाभिधः स्थितः ।।३३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस कारण मनरूपीपक्षी तृष्णा नेत्र से युक्त कहा गया है। यह मनः पक्षी सदा संकल्प-विकल्प के कारण चंचल बना रहता है। मोह–मत्सर–काम द्वारा तथा क्रोध, अहंकार, मद, द्वारा सज्जित पूछ से युक्त है। कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य इन पक्षी के दो पैर हैं। यह पक्षी संसार वृक्ष पर बैठा है। हे देवेशी ! धन-पुत्र स्त्री सम्बन्धी आदि इस वृक्ष की जड़ है। अविद्या से ही यह वृक्ष बढ़ता जाता है। यह वृक्ष निन्दा-स्तुति रूप शाखा द्वारा शोभित है। नाना इच्छाओं से विकसित पुष्पों से यह परिपूर्ण है। पाप, उपपाप, महापाप इसके पत्ते हैं। फल भी वे ही हैं। अर्थात् पाप-पुण्य इसके फल हैं। इस संसार वृक्ष की दो मोटी शाखाओं पर यह पक्षी स्थित है। ये दो शाखाये हैं श्रवण (सुनना) दर्शन (देखना) ॥३०-३३॥

पक्षिणं तं समाक्रम्य ज्ञानपाशेन पाशयेत्।
पक्षिखेलारतो नित्यं कटाक्षः श्रीगुरोः प्रिये ॥३४॥
तेन पक्षद्वयं छिन्नं यदा भवति निश्चयात्।
तदा समुन्मनीभूत उन्मुखो निश्चयात्प्रिये ॥३५॥

श्रवण–दर्शन से ही नाना वासना, इच्छा आदि मन में उत्पन्न होती हैं। इसलिये ये शाखाये हैं। इस मनः रूप पक्षी को पकड़ कर ज्ञानपाश में बाँधना चाहिये। (ज्ञान से ही मन की प्रवृत्ति प्रतिहत होती है) इसीलिये ज्ञान को मन का पाश कहते हैं। हे प्रिये ! श्रीगुरु का कटाक्ष ही पक्षी को खेल-खेल में बद्ध करता है। श्रीगुरु की कृपा से ही मनः प्रवृत्ति वशीभूत होती है। जब श्रीगुरु की कृपा के कटाक्ष से पक्षी के पक्षद्वय (संकल्प–विकल्प) छिन्न होते हैं, तब मन निश्चित रूप से स्थिर होकर उर्ध्वमुख होगा। अर्थात् मन में ज्ञानतत्व रूप भगवती के लिये चिन्तना का उदय होगा ॥३४-३५॥

सर्वसंकल्परहिता कला सप्तदशी भवेत्।
उन्मनी नाम तस्या हि भवपाशनिकृन्तनम् ॥३६॥
उन्मन्या सहितो योगी न योगी नोन्मनी परा।
यथा कर्पूरगो दीपो न दीपो न पुनः शशी ॥३७॥
अत एव महेशानि दृष्ट्या संक्रमणं यजेत्।
तत्त्वमस्यादिवाक्येन पश्चाद्वाच्यं हि योजयेत् ॥३८॥

जो सप्तदशी कला है, वह संकल्प शून्य अवस्था है। इस कला को उन्मनी कहते हैं। यह संसार पाश का छेदन करने वाली है। उन्मनी चित्त की एक अवस्था है जो चित्त निरोध की स्थिति है। अवस्था कभी भी योगी नहीं होता, योगी ही अवस्थावान् होता है। जैसे दीप में कर्पूर है, तथापि कर्पूर दीप नहीं है। लेकिन चन्द्र ऐसा नहीं है। कर्पूर स्वयं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दीप (अग्निप्रकाश) नहीं होता, लेकिन चन्द्र तो स्वयं प्रकाशक है। हे महेशानी ! अतः गुरु दृष्टि से शिष्य में संक्रमण करें। अर्थात् अपने ज्ञान का संक्रमण शिष्य में करायें। इसके पश्चात् श्रीगुरु 'तत्वमसि' प्रभृति महावाक्य के अर्थ को शिष्य में उद्भासित कराये (यह 'तत्वमसि' भाषा से समझा सकनें वाला तत्व है ही नहीं। गुरु कृपाबल से इस वाक्य के तात्पर्य को शिष्य में प्रकाशित करें)। शिष्य में ज्ञान को दृढ़ करने हेतु वे महावाक्यों का अर्थ बोधन करायें ॥३६-३८॥

आदावकथ्यसंयोज्यं स्पर्शेनैव सुलोचने।
स्पर्शः स्पर्श इवाऽऽभाति श्रीगुरोः करसंभवः ॥३९॥
स्पर्शेन धातवः सद्यो लोहाद्याः सुरवन्दिते।
सुवर्णतां प्राप्य सर्वे विशिष्टाभरणान्विताः ॥४०॥
करस्पर्शस्तु देवेशि प्रपञ्चमलिनादिकम्।
लोहत्वं नाशयित्वा हि सुवर्णत्वं करोति हि ॥४१॥
करे पुष्पफलान्कृत्वा ब्रह्मरन्ध्रे करं क्षिपेत्।
तस्माद्ब्रह्मत्वमेवासीति वाक्यार्थः कराद्भवेत् ॥४२॥

हे सुलोचने ! पहले गुरु स्पर्श द्वारा ही अकथ्य ब्रह्मवस्तु को शिष्य में संयोजित करते हैं। श्रीगुरु का हस्तस्पर्श ही वास्तविक स्पर्श हैं। इससे उसमें ज्ञानोत्पत्ति होती है। हे देववन्दिते ! जैसे पारस आदि रत्न के स्पर्श से लौहादि धातु सुवर्ण बन जाती है और अलंकार में परिणत होती है, उसी प्रकार श्री गुरु के स्पर्श से शिष्य का संसार मालिन्य रूप लोहत्व समाप्त हो जाता है। उसमें स्वर्णत्व (ज्ञानत्व) का संचार हो जाता है ॥ हे देवेशी ! इसीलिये (नियम है कि) गुरु हाथ में पुष्प तथा फल लेकर शिष्य के ब्रह्मरंन्ध्र पर विन्यस्त करें। गुरु के स्पर्श से ही 'त्वं ब्रह्म असि' ऐसा वाक्यार्थ शिष्य में उदित होता है ॥३९-४२॥

अनिर्वाच्योपदेशोऽयं स्पर्शनाद्ब्रह्मरन्ध्रके।
ब्रह्मरन्ध्रे सहस्त्रारे कर्पूरधवलो गुरुः ॥४३॥
वराभयकरो नित्यो ब्रह्मरूपी सदाऽनघः।
जागर्ति परमेशानि निजस्थानप्रकाशकः ॥४४॥
पश्चात्षट्चक्रविज्ञानं शिष्याय प्रतिबोधयेत्।
आधारं स्वर्णवर्णं च चतुर्दलसुशोभितम् ॥४५॥

शिष्य के ब्रह्मरन्ध्र पर हस्तस्पर्श से जो ज्ञानोत्पादन होता है, वह अनिवार्च्य उपदेश है। इसमें वाणी का प्रयोजन ही नहीं है। हे परमेशानी ! ब्रह्मरन्ध्र में छत्राकार सहस्त्रदल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्थित है। यहां कर्पूरतुल्य शुभ्र, नित्य ब्रह्मरूप वर एवं अभय मुद्रा युक्त गुरु सदा स्थित तथा जाग्रत रहते हैं। वे निज ज्ञान (अर्थात् गुरु स्थान) को प्रकाशित करते हैं। श्रीगुरु इस प्रकार से शिष्य में ज्ञानोत्पादन करके तब शिष्य को षट् चक्र का ज्ञान प्रदान करें। आधार पद्म (मूलाधार) स्वर्ण वर्ण तथा चार दलों से शोभित है ॥४३-४५॥

वादिसान्तैश्चतुर्वर्णैस्तप्तहेमसमप्रभैः ।
गणेशसहितं विद्धि स्वाधिष्ठानं ततः प्रिये ।।४६।।
इन्द्रगोपप्रतीकाशं स्फुराद्विद्रुमसंनिभैः ।
बादिलान्तैः स्फुरद्वर्णैर्ब्रह्मणा मण्डितं प्रिये ।।४७।।
नीलवर्णं तृतीयं हि मणिपूरं दशारकम् ।
विद्युत्पुञ्जप्रभावर्णैर्डादिफान्तैश्च मण्डितम् ।।४८।।
गदाधरहरिं प्रौढं चतुर्थं शृणु सुव्रते ।
पिङ्गाभं द्वादशारं तु कादिठान्तैः सुलोचने ।।४९।।

इसके चार दलों में क्रमशः व श ष स ये चार वर्ण स्थित हैं। यह तप्तस्वर्ण समप्रभ है। इसमें विघ्नराज गणेश स्थित रहते हैं। यही मूलाधार है। हे प्रिये! तत्पश्चात् है स्वाधिष्ठान। इसका वर्ण रक्तवर्ण कीट (वीरबहूटी) के समान है। इसमें छः दल है। इसके वर्ण यथा क्रमेण हैं–ब भ म य र ल व। इन में से 'रं' प्रकाशमान प्रवाल के समान है। वर्ण स्पष्ट हैं। इसमें ब्रह्म अवस्थान करते हैं। हे प्रिये! तृतीय चक्र नीलवर्ण है। इसका नाम है मणिपूर। यह नाभि में विद्यमान है। इसमें दस दल हैं। इसमें यथाक्रमेण ड ढ ण त थ द ध न प फ ये दस वर्ण है। इनके रंग है विद्युत के समान। इसमें गदाधर हरि विद्यमान हैं। हे सुव्रते! अब चतुर्थ चक्र की बात सुनों। हे सुनयने! चतुर्थ चक्र हृदय में स्थित है। इसमें १२ दल हैं। वर्ण का रंग है पिङ्गल। इसमें क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ये १२ वर्ण स्थित हैं ॥४६-४९॥

विस्फुलिङ्गप्रभैर्वर्णैः शिवेन च युतं प्रिये ।
विशुद्धचक्रं देवेशि धूम्रवर्णं कलात्मकम् ।।५०।।
स्वरैर्माणिक्यसंकाशैर्मण्डितं परमेश्वरि ।
जीवात्मानऽधिष्ठितं हि तज्जानीहि तदन्ततः ।।५१।।

इसमें जो वर्ण (१२ वर्ण) हैं उनका रंग अग्नि की चिनगारि के समान है। इस चक्र में शिव रहते हैं। इसका नाम है अनाहत चक्र। हे देवेशी! तदनन्तर है विशुद्ध चक्र जो पद्म धूम्र वर्ण है। इसमें १६ दल हैं। इसमें यथा क्रमेण–अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः ये १६ वर्ण है। इनके वर्ण है माणिक्यवत्। यह चक्र कण्ठ में स्थित है ॥५०-५१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आज्ञाचक्रं महेशानि विद्युत्कोटिसमप्रभम् ।
द्विदलं हक्षवर्णाभ्यां शुभ्राभ्यां परिमण्डितम् ।।५२।।
परमात्मस्वरूपाढ्यं नादरूपं हि सप्तमम् ।
नादो विलीनो यस्मात्तु तस्मादूब्रह्म तदुच्यते ।।५३।।

हे परमेश्वरी ! तदनन्तर आज्ञाचक्र है। यह भ्रूद्वय के मध्य में विद्यमान है। हे महेशानी ! इस आज्ञाचक्र में पद्मकोटि विद्युत् प्रभा है। इस पद्म में दो ही दल है। दोनों दल में यथा क्रमेण ह तथा क्ष ये दो ही वर्ण हैं। इनका रंग है शुभ्र। इस चक्र में परमात्मा प्रतिष्ठित हैं। सातवां चक्र है नादरूप। वहां कोई पद्म नहीं है। वहां नाद विलीनावस्था में विद्यमान है। तब उसी को ब्रह्म कहते हैं। विलीन अवस्थापन्न नाद ही ब्रह्म है ।।५२-५३।।

देहेऽक्षराणि देवेशि नाद एवात्र कारणम् ।
नादः पवनसंयोगत्कुण्डलिन्या युतो यदा ।।५४।।
प्रसन्नः परमेशानि षट्श्चकाणां दलेषु सः ।
पञ्चाशद्वर्णरूपत्वं माप्तवान्सुरवन्दिते ।।५५।।
अव्यक्तरूपता प्राप्ता उदात्तादिस्वरैः क्रमात् ।
एवं सर्वज्ञतां तस्मै दद्याच्छिष्याय सद्गुरुः ।।५६।।
शिष्यस्तदा श्रीगुरोस्तु पूजां कुर्यात्सुलक्षणाम् ।
रत्नाभरणशोभाढ्यां पट्टवस्त्रधनान्विताम् ।।५७।।
गजाश्वसहितां भद्रे महिषीगोसमन्विताम् ।
क्षेत्रग्राममहारामरम्यां चेटीशतान्विताम् ।।५८।।
सुवर्णरशिमभरितां कस्तूरीचन्द्रचन्दनाम् ।
गुरुं संतोष्य विधिवत्प्रसादं तत्त्वसंयुतम् ।।५९।।

हे देवेशी ! देह में सुषुम्मा नाड़ी में जो षट चक्र हैं, उनमें जो अक्षर हैं, नाद ही उनका कारण है। जब वायु संयोग से नाद कुण्डलिनी के साथ युक्त होकर प्रसन्न होती है, तब उसे ५० वर्ण स्वरूपता प्राप्त होती है। हे परमेशानी ! हे देववन्दिते ! यह नाद क्रमशः उदात्त प्रभृति होते स्वररूपेण अव्यक्त स्वरूपता को प्राप्त होता है। सद्गुरु इस प्रकार से शिष्य को सर्वज्ञाता प्रदान करें। शिष्य भी तब गुरुकृपाप्राप्ति काल में श्रीगुरु की उत्तमरूप से पूजा करे। रत्नालंकार, पट्टवस्त्र, धन, हाथी, अश्व, महिषि, गौयें, जमीन, ग्राम, बागान, एक सौ दासी, सुवर्णराशि, कस्तूरी, कर्पूर, चन्दन प्रभृति प्रदान करके गुरु की पूजा करे ।।५४-५९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गृह्णीयाच्छिष्यवर्यस्तु गुरुस्तस्मा अनन्तरम् ।
बालां प्रकाशयेत्कर्णे दक्षिणे च ततः परम् ।।६०।।
पञ्चसिंहासनगता विद्या : पश्चात्प्रकाशयेत् ।
ततो रहस्यं परमं महात्रिपुरसुन्दरीम् ।।६१।।

गुरु भी इस प्रकार के शिष्य को सर्वज्ञता प्रदान करे । शिष्य भी गुरुकृपा प्राप्तिकाल में गुरु का प्रसाद ग्रहण करे । इस प्रसाद के साथ तत्वज्ञान रहता है । गुरु से तत्व ज्ञान प्राप्त करके शिष्य गुरु की प्रसन्नता प्राप्त करे । तब गुरु उस शिष्य के कानों में त्रिपुराबाला का मन्त्र प्रदान करें । तत्पश्चात् पञ्चसिंहासन मन्त्र (षष्ट पटल से नवम पटल तक इसका वर्णन है) प्रदान करें । तत्पश्चात् परम रहस्य युक्त महात्रिपुरसुन्दरी का मन्त्र प्रदान करें ।।६०-६१।।

प्रकाशयेद्दक्षकर्णे परब्रह्ममयीं प्रिये ।
सर्वसौभाग्यजननीं भोगमोक्षफलप्रदाम् ।।६२।।
श्रीविद्यां षोडशार्णां तु ब्रह्मानन्दस्फुरत्कलाम् ।
न प्रकाशये द्देवेशि सर्वस्वमिव सुव्रते ।।६३।।

हे प्रिये ! हे देवेशी ! हे सुव्रते ! शिष्य के दक्षिण कर्ण में श्रीगुरु सर्व सौभाग्य जननी, भोग-मोक्ष फलप्रदा, ब्रह्मानन्द प्रकाशिका, पर ब्रह्ममयी, षोड़शाक्षरी श्री विद्या प्रकाशित करें । अति उत्तम अधिकारी से ही इसका प्रकाशन करना चाहिये । सबके समक्ष कदापि प्रकाशित नहीं करना चाहिये ।।६२-६३।।

वेदशास्त्रपुराणेषु यामलेष्वपि सुव्रते ।
मुप्ता श्रीषोडशार्णेयं निधानमिव संस्मरेत् ।।६४।।
सहोदराय सर्वस्वप्राणदायापि बन्धवे ।
राज्ञे राज्यप्रदायापि पुत्राय प्राणदाय च ।।६५।।
न देया षोडशार्णेयं देयं सर्वस्वमद्रिजे ।
सुपुत्रदारसहितं शिरो देयं कथंचन ।।६६।।
न देया षोडशार्णा हि प्राणैः कण्ठगतैरपि ।
गोपितव्या महाविद्या स्वयोनिरिव पार्वति ।।६७।।
उदके लवणं लीनं यथा भवति शैलजे ।
मनो भवति वै लीनं पादयोः श्रीगुरौः प्रिये ।।६८।।
तदा देया महाविद्या कृपया षोडशाक्षरी ।
अक्षरैः सहिता वाऽपि निरक्षरतया स्थिता ।।६९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आकाशे नीलिमा देवि भ्रान्त्या दृष्टोदरे यथा।
अक्षराणि तथा सन्ति श्रीविद्यायां सुरेश्वरि।।७०।।

हे सुव्रते ! वेदशास्त्र समूह, पुराणसमूह तथा यामल समूह (तन्त्र तीन प्रकार का है। यथा आगम-तन्त्र-यामल) में यह षोड़शाक्षरी विद्या गुप्ता है। इस खान में गड़े रत्न के समान जानो। हे पर्वतनन्दिनी ! सहोदर को, सर्वस्वदाता को, प्राणदाता को, बन्धु को, राजा को, राज्यदान कर देने वाले को, प्राण बचाने वाले को भी यह षोड़शाक्षरी विद्या न प्रदान करे। स्त्री-पुत्रादि के साथ अपना मस्तक भी दे-दे, लेकिन षोडशाक्षरी न प्रदान करे। हे शैलजे ! हे प्रिये। जैसे जल में नमक लीन हो जाता है, उसी प्रकार जिसका मन श्रीगुरु के पादपद्म में लीन हो जाता है, उस स्थिति वाले शिष्य को श्रीगुरु षोडशाक्षरी विद्या कृपापूर्वक प्रदान करें। हे शैलजे ! हे प्रिये ! श्री विद्या के जिस अक्षर में निरक्षर रूप से विद्या अवस्थित रहती है अर्थात् षोड़श अक्षर युक्त श्रीविद्या मन्त्र द्वारा जो श्री विद्या देवी अभिहित होती हैं वे ही पर ब्रह्मरूपेण अक्षर द्वारा भी अवाच्य है। वहाँ कोई अक्षर या वर्ण नहीं है। हे देवी ! हम जिस आकाश को देखते हैं वह उल्टी कड़ाह जैसा परिलक्षित होता है। उस आकाश में जो नीलवर्ण भ्रान्तिवशात् परिलक्षित होता है, वैसे ही श्रीविद्या के अक्षर समूह भी भ्रान्तिवशात् परिलक्षित होते हैं। वास्तव में श्रीविद्या में कोई अक्षर है ही नहीं। वे परब्रह्मरूपा हैं ।।६४-७०।।

षोडशार्णां ब्रह्मरूपां जानीहि परमेश्वरि।
यथा रत्नमये दीपे कज्जलं नैव विद्यते।।७१।।
श्रीविद्यायां यथाऽव्यक्तव्यक्तता वीरवन्दिते।
न दद्याद्यस्य कस्यापि दद्यात्प्राणप्रियाय च।।७२।।
कृतार्थोऽसि शिशोर्वाक्यं प्रवदेद्देशिकोत्तमः।
षोडशार्णां महाविद्यां न दद्याद् ब्रह्मरूपिणीम्।।७३।।
एकोच्चारेण देवेशि वाजपेयस्य कोटयः।
अश्वमेधसहस्त्रं तु तुलां नाऽऽयाति सर्वदा।।७४।।

हे वीरवन्दिते, हे परमेश्वरी ! यह षोड़शाक्षरी श्रीविद्या ब्रह्मरूप है। जैसे रत्नदीप में काजल नहीं पड़ता, उसी प्रकार श्रीविद्या में व्यक्तता नहीं है। यह अव्यक्त ब्रह्म है। वास्तव में यह व्यक्तता रहित है। इसे तो प्राण से भी प्रिय को ही देना चाहिये। तुम तो इसे सुनकर कृतार्थ हो गयी हो। उत्तम आचार्य श्रीविद्या का उपदेश देते समय शिशु का उदाहरण देते हैं अर्थात् शिशु के वाक्य जैसे अस्फुट-अवाच्य होते हैं, ब्रह्मरूपा षोड़शाक्षरी श्रीविद्यारूप भी अवाच्य है। इसे गुरु अन्य को प्रदान न करे। जैसे शिशु के वाक्य समझ में नहीं आते, गुरु भी इसे अव्यक्त रूप में, अस्पष्ट रूप में बोलें। इस विद्या के एक उच्चारण से जो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

फल होता है, वह करोड़ो बाजपेय अथवा सहस्त्र अश्वमेघ से भी नहीं मिलता ।।७१-७४।।

एकोच्चारेण देवेशि प्रादक्षिण्यं भुवो भवेत् ।
धेनूनां कपिलानां हि दत्ता यैः कोटिकोटयः ।।७५।।
एकोच्चारेण देवेशि तुलां नाऽऽयाति सर्वदा ।
अर्धोदये पुण्यतिथौ हेमभारसहस्त्रकम् ।।७६।।
तुलापुरुषकोट्यस्तु तुलां नाऽऽयान्ति षोडशीम् ।
यदा यद्वर्ण्यते वस्तु तदा सर्व निरामयम् ।।७७।।
तथा ज्ञेया महाविद्या षोडशार्णा वरानने ।
परमात्मस्वरूपेयं विश्वस्पन्दनरूपिणी ।।७८।।

इस श्रीविद्या के एक उच्चारण से मानो समस्त पृथिवी की प्रदक्षिणा हो जाती है । जो कोटि-कोटि कपिला धेनु का दान करते हैं, उनके इस सम्पूर्ण दान का फल एक बार उच्चरित श्रीविद्या की तुलना कदापि नहीं कर सकता ।

अर्द्धोदय अर्थात् पौष अथवा माघ की अमावस्या में रविवार को श्रवणा नक्षत्र तथा व्यतीपात योग होने पर इसे अर्द्धोदय योग कहते हैं। इस पुण्यातिथि में एक हजार सुवर्ण दान तथा कोटि-कोटि तुलादान, यज्ञादि अनेक अनुष्ठान भी इस षोड़शाक्षरी की बराबरी नहीं कर सकते । हे वरानने ! जब जिस वस्तु की वर्णना की जाती है तब उस वस्तु के निर्दोष होने पर ही लोग ग्रहण करते हैं । इस प्रकार जैसे समस्त दोष शून्य वस्तु प्रशंसित होती है, उसी प्रकार से षोडशाक्षरी भी जगत् की सबसे निर्दोष वस्तु है । यह महाविद्या परमात्मरूपा हैं । समस्त जगत की स्पन्दरूपा है ।।७५-७८।।

श्वासोच्छ्वासतया देवि षट्शतान्येकविंशतिः ।
सहस्त्राणि दिवा रात्रौ हंसः शब्दजपो भवेत् ।।७९।।
स्यन्दनत्वेन सकलं व्याप्य तिष्ठति सर्वतः ।
आत्मत्वेनाजपा ज्ञेया सूर्यसोमस्वरूपिणी ।।८०।।
निरञ्जनस्वरूपा च निराभासस्वरूपिणी ।
अतनुत्वतनुत्वाभ्यां सूक्ष्मत्वेन वरानने ।।८१।।
प्रबोधापादनेनापि मण्डिता वह्निजायया ।
षडङ्गैः शोभितां देवीं हंसेनैव प्रपूजिताम् ।।८२।।
अव्यक्तरूपगायत्रीछन्दोवक्त्रां वरानने ।
साक्षात्परमहंसाभां देवतां परमेश्वरीम् ।।८३।।
श्रीविद्यां व्यापिकां विद्धि परज्योतिः स्वरूपिणीम् ।
आत्मस्वरूपलिङ्गं हि मायागेहगतं प्रिये ।।८४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हे देवी ! श्वास-प्रश्वास के रूप में दिनरात में जीव २१६०० बार 'हंस:' का जप होता है। इसे जीव नहीं जानता। यह हंस जप रूप स्पन्दन समस्त वस्तु को सर्वप्रकार से व्याप्त करके स्थित है। इस अजपा को आत्मा जानो। यह है सूर्य तथा चन्द्र स्वरूप। (हं-सूर्य। स: चन्द्र) और यह निरंजन स्वरूप तथा बुद्धिद्वारा प्रकाश शून्य रूप है। इसका कल्पित रूप शरीर है। वास्तव में शरीर नहीं है। वन्हिजाया (स्वाहा) मन्त्र से यह जागरित होता है। यह ६ (षड़ङ्ग) अंगों से शोभित है। ये अंग हैं (षड़ङ्ग न्यासार्थ) हृदय–शिर:–शिखा–कवच–नेत्र–तथा करतल। ये देवी हंस मन्त्र से पूजिता हैं। इनका रूप है गायत्री छन्द:। मुख है अव्यक्त। ये हैं साक्षात् परमहंस परमेश्वरी देवता रूप। इनको परमज्योतिरूपा, व्यापिका, श्रीविद्या जानो। ये श्रीविद्या आत्मस्वरूप की व्यापिका हैं। हे प्रिये ! जीव के निकट माया गृह में अवस्थित अर्थात् माया से अप्रकाशित है ॥७९-८४॥

श्रद्धातरङ्गिणीनीरक्षालितं भववन्दनम्।
सुमनोमण्डितं वाऽपि समाधिकुसुमैर्वरम् ॥८५॥
ज्ञानाङ्गारे प्रपञ्चाख्यं धूपं दीपं च चिन्मयम्।
अधितिष्ठति सर्वत्र सर्वनैवेद्यमण्डितम् ॥८६॥
निष्प्रपञ्चं निराभासं केवलं ब्रह्मसत्कलम्।
षोडशार्णा परा विद्या श्रीविद्येत्यभीधीयते ॥८७॥

अर्थात् यह विद्या माया से परे हैं। यह श्रद्धारूप जल से क्षालित धुली होने के कारण जगत् में वन्दनीय है। अर्थात् श्रद्धायुत होकर इनकी वन्दना करे। ज्ञानरूप अंगार में जगत रूप धूप देने से शुभ होता है। अर्थात् ज्ञान में जगत् के आभास को लीन करके इनकी चिन्तना करे। इनके समक्ष आत्म चैतन्यमय दीप को जलाये। ये सर्वत्र व्याप्त हैं। सब कुछ इनका नैवेद्य है। अर्थात् समस्त जगत् ही इनका नैवेद्य है। इनमें प्रपञ्च तथा जगत है ही नहीं। इनको कोई प्रकाशित नहीं कर सकता। ये स्वप्रकाश, ब्रह्मरूपसत्कला युक्त हैं। इन षोडशाक्षरी परा विद्या के पूर्वोक्त स्वरूप के कारण इनको श्रीविद्या कहा है ॥८५-८७॥

शुक्लपक्षे शुभदिने शुभवारे वरानने।
मन्त्राद्यारम्भणं कुर्याद्ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥८८॥
न वारमासदोषा हि ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः।
पवित्रं सर्व देवेशि दानमेव शुभे दिने ॥८९॥
चैत्रे वै निष्फलं ज्ञेयं नीरजायतलोचने।
वैशाखे क्षेत्रलाभं च ज्येष्ठे च मरणं ध्रुवम् ॥९०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आषाढे बन्धुनाशं च श्रावणे च शतायुषम् ।
क्षयो भाद्रपदे मासि आश्विने रत्नसंपदः ।।९१।।
कार्तिके तु भवेल्लक्ष्मीर्मार्गशीर्षे धनं महत् ।
पौषे तु सम्भवेत्क्लेशो माघे सम्पत्तिरुत्तमा ।।९२।।
फाल्गुने सर्वकार्याणि मासानां फ़लमीदृशम् ।
शिष्यस्य प्रथमार्णं हि गृहीत्वा सुन्दरि प्रिये ।।९३।।

हे वरानने ! शुक्ल पक्ष के शुभदिन, शुभवार को मन्त्रादि (मन्त्र जप, पुरश्चरण होमादि) प्रारंभ करना चाहिये । अथवा चन्द्रग्रहण किंवा सूर्यग्रहण के समय जपारंभ करें क्योंकि ग्रहण में वारदोष मासदोष आदि नहीं होते । हे सर्वदेवेशी ! शुभयोग में दान जप-होमादि पवित्रकारक होते हैं । हे कमलनयने । चैत्र मास मे दानादि को निष्फल मानो । वैशाख में दानादि से भूमि लाभ होता है । ज्येष्ठ में निश्चित मृत्यु, आषाढ़ में बन्धु मृत्यु, श्रावण में १०० वर्ष आयु प्राप्ति, भाद्र में क्षय, आश्विन में रत्न सम्पत्ति लाभ, कार्तिक में लक्ष्मीलाभ, अग्रहायण में महत् धन प्राप्ति, पौष में क्लेश, माघमास में दानादि से उत्तम सम्पत्ति लाभ, तथा फाल्गुन में दानादि से सब कार्य सिद्धि होते है । हे सुन्दरी ! हे प्रिये ! शिष्य के नाम का प्रथम अक्षर ले ॥८८-९३॥

नाम संकल्पयेद्देवि मनोज्ञं स्थिरबुद्धये ।
श्रीविद्यां हृदये तस्य न्यसेदव्यक्तरूपिणीम् ।।९४।।
श्रीविद्याक्षरपङ्क्तिस्तु परब्रह्मणि चिन्मयी ।
उदके लवणं लीनं यथा तिष्ठति पार्वति ।।९५।।
तस्माद्ब्रह्ममयीं विद्धि सर्वशास्त्रेषु योजिताम् ।।९६।।

उस प्रथम अक्षर से अथवा मन्त्र के प्रथम अक्षर से शिष्य को दीक्षा के उपरान्त स्थिर बुद्धि से नया नाम अथवा मन्त्र प्रदान करे । उसके हृदय में अव्यक्तरूपा श्री विद्या का न्यास श्री गुरु को करना चाहिये । हे पार्वती ! जैसे जल में नमक लीन हो जाता है, वैसे ही श्रीविद्या के अक्षर परब्रह्म में लीनरूप विद्यमान रहते हैं । ये अक्षर चिन्मय हैं । अतः श्रीविद्या सर्वशास्त्र प्रतिपाद्य ब्रह्ममयी है ॥९४-९६॥

चतुर्विंश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्चविंशः पटलः

(श्रीविद्या, पवित्रारोपण विधि, पवित्रार्पण)

ईश्वर उवाच–

पवित्रारोपणं वक्ष्ये साधकानां हिताय च।
वर्षमात्रकृता पूजा सफला भवति ध्रुवम्।।१।।
तस्मात्पवित्रपूजा हि कर्तव्या सिद्धिहेतवे।
आरम्भ मिथुनार्कं हि तुलासंक्रान्तिमासकम्।।२।।
अतिरम्या महापूजा पवित्राणां सुरेश्वरि।
पक्षद्वयेऽपि पूजा स्याच्चतुर्थ्यामिष्टमीदिने।।३।।

ईश्वर कहते हैं–हे सुरेश्वरी ! साधकों के हित के लिये पवित्रारोपण एक उत्सव है। इष्टदेव को यज्ञोपवीत प्रदान करना इस उत्सव का प्रधान कर्म है। वैष्णव भी श्रावण से कार्तिक के पूर्व शुक्लपक्ष में श्रीकृष्ण को यज्ञोपवीत प्रदान करते हैं। यह पवित्रारोपण वर्ष में एक बार करना पड़ता है। न करने से सम्पूर्ण वर्ष की पूजा निष्फल हो जाती है। यहां शक्ति साधक के लिये भी पवित्रारोपण कहा है। इस पवित्रारोपण को करके समस्त वर्ष की पूजा निश्चित रूपेण सफल हो जाती है। इसलिये सिद्धि हेतु पवित्र पूजा अवश्य करे। सूर्य के मिथुनराशि पर जाने अर्थात् आषाढ़ मास से आरंभ करके तुला सक्रान्ति (कार्तिक) के बीच यज्ञोपवीत भी अतिसुन्दर महापूजा करनी चाहिये। हे सुरेश्वरी ! इस पूजा को दोनो पक्ष की चतुर्था अथवा अष्टमी को करे ॥१-३॥

नवम्यां वा चतुर्दश्यां पवित्रारोपणं यजेत्।
सौवर्णरौप्यताम्राणां सूक्ष्मसूत्राणि कारयेत्।।४।।
कार्पाससंभवान्येव पट्टसूत्रसमुद्भवम्।
त्रसरीसूत्रसंभूतं पद्मवल्कलसंभवम्।।५।।

अथवा नवमी किंवा चतुर्दशी को यह पवित्राग्रोपण उत्सव करना चाहिये। सोना-चांदी-ताबा के सूक्ष्म सूत्र को बनाकर अथवा कपास के सूत अथवा पट्टसूत्र से अथवा कातने वाले के उपकरण से बने सूत्र से किंवा कमल के मृणाल के सूत्र से, कुश, मूंज अथवा सन के सूत्र को पवित्र (यज्ञोपवीत) हेतु व्यवहत करे ॥४-५॥

दर्भमुञ्जशणोद्भूतं पवित्राय प्रकल्पयेत्।
प्रणवश्चन्द्रमा वह्निर्ब्रह्मा नागो गुहो रविः।।६।।
साम्बाख्यः सर्वदेवश्च नवतन्तुषु पूजयेत्।
शिरोमन्त्रेणाभिमन्त्र्य हृन्मन्त्रेण ततः परम्।।७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रक्षालयेत्ततोऽभ्युक्ष्यास्त्रमन्त्रेण च देशिकः ।
अवरुध्य च नेत्रेण ग्रथितं कवचेन हि ।।८।।
रोचनाकुङ्कुमाभ्यां च रक्तचन्दनचन्दनैः ।
कस्तूरीघुसृणाद्यैश्च कर्पूरैर्न (र्ना) गरैरपि ।।९।।
गैरिकाद्यैर्विचित्रं तत्कारयेत्सुमनोहरम् ।
मूलमन्त्रेण चाभ्युक्ष्य स्थापयेदीशकोणके ।।१०।।
पवित्रवृन्दं सकलं षडङ्गैस्तु पवित्रितम् ।
कृत्वा देवेशि पूर्वस्मिन्दिवसे सद्य एव वा ।।११।।
अष्टोत्तरशतैः सूत्रैर्नवसूत्रेण कल्पितैः ।
उत्तमं तत्पवित्रं हि तदर्धं मध्यमं स्मृतम् ।।१२।।
तस्याप्यर्धं कनिष्ठं स्यात्त्रिविधं कथितं प्रिये ।
अधिवासनवेलायां यवान्विस्तार्य सुव्रते ।।१३।।
चतुर्भिरासनैस्तत्र पुष्पं निक्षिप्य देशिकः ।
पवित्राणि पवित्राणि पञ्चामृतसमुच्चयैः ।।१४।।
रचितान्यमलैः पञ्चरत्नैः सर्वौषधीगणैः ।
नववस्त्रयुगेनाथ सम्यगाच्छाद्य सुव्रते ।।१५।।
देवि कुम्भं प्रतिष्ठाप्य पूर्णं चामीकरादिभिः ।
देवीमावाह्य तत्कुम्भे मूलमन्त्रेण पूजयेत् ।।१६।।

पवित्र के ९ तन्तुओं क्रमशः ॐ, चन्द्र, अग्नि, ब्रह्म, नाग, गुह (कार्त्तिक), सूर्य, साम्ब तथा सर्वदेव की पूजा करे। शास्त्रज्ञ व्यक्ति शिरोमन्त्र (ऐं) से यज्ञोपवीत को मन्त्रित करके हृन्मन्त्र (नमः) से प्रक्षालित करे। उसका अभ्युक्षण (फट्) अस्त्र मन्त्र से करके नेत्र मन्त्र से (ईं) अवरोध संस्कार करके कवच (हुं) द्वारा ग्रन्थि प्रदान करे। गोरोचन, कुंकुंम, रक्तचन्दन, श्वेत चन्दन, कस्तूरी, धूसृण (एक सुगंध) प्रभृति से तथा कर्पूर-नागर प्रभृति से तथा गेरु प्रभृति से उसे मनोहर बनाये। मूलमन्त्र से उसका पुनः अभ्युक्षण करे। ईशान कोण में पवित्र को रखना होगा। हे देवेशी ! समस्त पवित्र को षड़ङ्ग द्वारा शुद्ध करना होगा। पवित्रारोपण के पूर्वदिन अथवा उसीदिन षड़ङ्गमन्त्र से इसे शुद्ध करे। १०० पवित्र में से प्रत्येक में ९ सूत्र करके जो पवित्र (यज्ञोपवीत) बनाया जाता है, वह उत्तम है। ५० बनाना मध्यम है। २७ बनाना कनिष्ठ है। हे प्रिये ! हे सुव्रते ! शास्त्रवेत्ता व्यक्ति पवित्रारोपण के अधिवास काल में जौ छिड़कर कर उसके ऊपर आसन बिछाकर पुष्प छोड़कर पंचामृत से पवित्रों (यज्ञोपवीतों) को सिक्त करे। तदनन्तर निर्मल पञ्चरत्न सर्वौषधि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आदि घट में छोड़कर उसे दोन ये वस्त्रों से ढाक कर सुवर्ण आदि को घट में छोड़कर देवी रूपी घट स्थापित करके उसमें देवी का आवाहन करके पूजा करे। पूजा मूलमन्त्र से करनी चाहिये ॥६-१६॥

ततः क्रमं समभ्यर्च्य पवित्रार्पणमारभेत्।
श्रीविद्यया पवित्राणि गुरोर्नाम्ना च देशिकः ॥१७॥
पवित्रं गुरवे दद्यात्सर्वेभ्यस्तदनन्तरम्।
गुरुभ्यस्त्रिविधेभ्यश्च पवित्राण्यर्पयेत्ततः ॥१८॥
तिथिनित्यागणायाथ पवित्रारोपणं यजेत्।
नवचक्रस्थितायाथ चक्रेशीनवकाय च ॥१९॥

चतुर्थ पटलोक्त विधान से त्रिपुरादेवी की पूजा करके पवित्रार्पण प्रारंभ करे। शास्त्रज्ञ साधक श्रीविद्या जपकर गुरु का नाम लेकर पवित्र प्रदान करे। जैसे–श्री ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह स क ह ल ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः (अब यहाँ गुरु का नाम लेकर नाम में आनन्दनाथ लगाये) अमुकानन्दनाथेभ्यः पवित्रं निवेदयामि। तदनन्तर परमगुरु, परापरगुरु परमेष्ठिगुरु, सबको पवित्रार्पण करे। तदनन्तर तिथिनित्यागण की पूजा करनी चाहिये। (यह इस ग्रंथ में अंकित है)। तदनन्तर उनको भी पवित्रार्पण करे। नवचक्रस्थ ९ चक्रेश्वरी–यथा श्रीत्रिपुरा, त्रिपुरेशी, त्रिपुरसुन्दरी, त्रिपुरवासिनी, त्रिपुरा, श्री त्रिपुरमालिनी, त्रिपुरसिद्धा, त्रिपुरात्मा तथा महत्रिपुरसुन्दरी को भी पवित्रार्पण करना चाहिये ॥१७-१९॥

रश्मिवृन्दाय देवेशि प्रत्येकं भावपूर्वकम्।
पवित्रकं समर्प्याथ गुरून् संतोषयेत्प्रिये ॥२०॥
स्वर्णालंकारवस्त्रैश्च नानाधनसमुच्चयैः।
तत्प्रसादं पवित्रं च धारयेत्तदनन्तरम् ॥२१॥
तदङ्गहोमं निर्वर्त्य पवित्रेण समर्चयेत्।
कुमारीपूजनं कुर्यात्ततः सुवासिनीगणम् ॥२२॥
योगिन्यो योगिनश्चैव ब्राह्मणा विविधा गणाः।
पूज्या हि परमेशानि यदीच्छेत्सिद्धिमात्मनः ॥२३॥

तत्पश्चात् रश्मिवृन्द को भी पवित्रार्पण करना होगा। इनमें से प्रत्येक को भक्तिपूर्वक अर्पण करके गुरु को सन्तुष्ट करे। हे प्रिये! स्वर्णालङ्कार, वस्त्र, नानाधन से गुरु को प्रसन्न करके उनके प्रसादरूप में स्वयं भी पवित्र धारण करना चाहिये। तत्पश्चात् इस उत्सव में अन्नरूप होम करके (अन्नादि से ब्राह्मादि को सन्तुष्ट करना) पवित्र से कुमारीगण का भी पूजन करे। यह पूजा करके सुवासिनी गण (जो चिरकाल से विवाहिता होकर भी पिता

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के घर में ही हैं, अथवा अविवाहिता कन्या) की पूजा करे। तदनन्तर विविध योगिनी तथा योगीगण एवं ब्राह्मणों की पूजा सम्पन्न करनी चाहिये। हे परमेशानी ! सिद्धि की इच्छा वाला साधक योगिनी, योगी, ब्राह्मणगण तथा कुमारीगण की पूजा अवश्य करे ॥२०-२३॥

पञ्चविंश पटल समाप्त ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षड्विंशः पटलः

(दमनादोपण विधि–दमनपूजा-दमनारोपण अंगविधि)

ईश्वर उवाच–

दमनारोपणं वक्ष्ये साधकानां हिताय च।
संवत्सरकृता पूजा येन पूर्णा भवेत् प्रिये ।।१।।
तपोभङ्गाय मदनो मम शैलभवे यदा।
भस्मीभवत्तदा पत्नी रतिः प्रीतिश्च दुःखिते ।।२।।
तन्नेत्रवारिसंभूता दमनस्य लता भवेत्।
तत्सौरभ्यं च सौभाग्यं महदासीत्सुलोचने ।।३।।
तेन संतुष्टसुहृदा वरो दत्तो मया प्रिये।
रत्यै प्रीत्यै च तस्मात्तु मदनः प्रकटीकृतः ।।४।।

हे प्रिये ! साधकों के हितार्थ दमनारोपण उत्सव कहता हूँ। इस उत्सव से पूरे सवत्सर में की गयी पूजा पूर्ण होती है। हे पर्वतकन्ये ! मेरी तपस्याभंग के कारण जब कामदेव भस्म हो गये, तब उनकी पत्नी रति एवं प्रीति दुःखित हो गयीं। उनके आसुओं से दमन नामक लता उत्पन्न हो गयी। हे सुलोचने ! इसकी सुगन्ध तथा स्वरूप उत्कट थी दमन लता के सौरभ आदि से प्रसन्न होकर मैने रति-प्रीति को वर दिया। उस वरदान के प्रभाव ने कामदेव को प्रकट किया था ॥१-४॥

दमनेन च यो मन्त्री वर्षमध्ये न पूजयेत्।
तस्य. सांवत्सरी पूजा मदनाय भविष्यति ।।५।।
इति तस्मै वरो दत्तो मयैव सुरवन्दिते।
तस्माद्दमनपूजा हि कर्तव्या वीरवन्दिते ।।६।।
अन्यथा तत्फलं वर्षकृतं कामाय जायते।
समूलं दमनं देवि स्थापयेत्पात्रके वरे ।।७।।
दमनं नवधा कूर्यात्पूजयेत्तदनन्तरम्।
आनन्देश्वरबीजेन ततो भिन्नेन सुन्दरि ।।८।।
आनन्देश्वरबीजेन नवधा बिन्दुना सह।
नवप्रकारभिन्नाङ्गं दमनं पूजयेत्क्रमात् ।।९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जो मन्त्रवान साधक एक वर्ष में (प्रतिवर्ष) दमनलता की पूजा नहीं करता, उसकी सम्पूर्ण वर्ष की कृत पूजा व्यर्थ हो जाती है। भक्ति का विपरीत है काम। जो दमनलता की पूजा नहीं करता, उसकी समस्त वर्ष भर की पूजा देवभक्ति की जगह काम में परिवर्त्तित होकर फलहीन हो जाती है। यही तात्पर्य है। हे सुन्दरी ! हे देवी ! जड़ के साथ दमनलता को उत्तम पात्र में स्थापित करना चाहिये। इसके ९ भाग मे (९ भाग की कल्पना करके) तब पूजा करे। तदनन्तर आनन्देश्वर बीज द्वारा भिन्नभाव से पूजा करे। यथा–"ह स क्ष मल व र यूं आनन्द भैरवाय वषट् एते गन्धपुष्पे दमनाय नमः'। ९ भाग में विभक्त लता की ९ प्रकार के भिन्न-भिन्न भाव से इन आनन्द भैरवी बीज–'ह स क्ष म ल वर यूं आनन्द भैरवाय वषट्' से दमनलता की पूजा करके चन्द्र बिन्दु की पूजा करे अथवा चन्द्र बिन्दु के साथ ही आनन्द भैरव बीज से दमनलता की पूजा की जाये ॥५-९॥

अघोरविद्यया पश्चादभिषिच्य तमेव हि।
पूर्वोक्तया दक्षिणस्यां दिशि सिंहासनोक्तया ॥१०॥
अस्त्रेण रक्षणं कुर्यात्कवचेन ततः परम्।
बद्ध्वा त्रिशूलमुद्रां तु भ्रामयेद्दमनोपरि ॥११॥
चैत्रे सितचतुर्दश्यां दमनारोपणं भवेत्।
उद्धरेदस्त्रमन्त्रेण हृदयेन च लेपयेत् ॥१२॥
श्रीखण्डघुसृणेन्द्राद्यैरधिवासं च कारयेत्।
प्रथमे दिवसे कुर्यादधिवासनमुत्तमम् ॥१३॥
सद्योऽधिवासनं वाऽपि वर्षपूर्जासुसिद्धये।
प्रातःकाले चतुर्दश्यां नित्यार्चानन्तरं ततः ॥१४॥
नवकोणं विरच्याथ सिन्दुरेण महाप्रभम्।
कलशान्नव संस्थाप्य हेमरत्नादिपूरितान् ॥१५॥

(पूर्व कथित) दक्षिण दिक् सिंहासन के लिये कहे गये–(पूर्व पटलों में) अधोर विद्या मन्त्र से इस दमनकलता का अभिषेक करना चाहिये। अघोर मन्त्र यह है—

"अघोरे ऐं घोरे ह्रीं घारेघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः
सर्वशर्वेभ्यः ह्रीं श्रीं नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपे हे सौः"।

फट् मन्त्र से रक्षण, हुं मन्त्र से त्रिशूलमुद्रा प्रदर्शन करे। (दाहिने हाथ के अंगुष्ठ से कनिष्ठा को बद्ध करके बाकी उगलियों को फैलाना, त्रिशूल मुद्रा है)। इस मुद्रा को दमनलता पर घुमाये। चैत्रमासीय शुक्ला चतुर्दशी को यह दमनारोपण उत्सव होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'फट्' मन्त्र से लता को उखाड़ कर हृदय (नमः) मन्त्र से श्रीखण्डचन्दन, धूसृण (सुगन्धिविशेष) कर्पूर प्रभृति द्वारा दमन को लिप्त करके अथवा नमः से लिप्त करके श्रीखण्ड चन्दन-धूसृण कर्पूर आदि की धूप प्रदान करे। प्रथम दिन (उत्सव के एक दिन पूर्व) उत्तम अधिवास करके अथवा दमनकोत्सव के दिन ही अधिवास करके पूरे वर्ष की पूजा की सुसिद्धि निश्चित करे। चतुर्दशी के प्रातःकाल नित्यपूजा के पश्चात् सिन्दूर से प्रदीप्त नवकोण रचना करके सुवर्ण रत्नादि द्वारा परिपूजित ९ कलस स्थापना करे। अथवा उत्तम साधक एक ही मनोरम कलस स्थापित करे। दक्षिण की ओर मण्डल बनाकर कुंकुम आदि द्वारा चित्रित करना चाहिये ॥१०-१५॥

एकं वा कलशं रम्यं स्थापयेद्देशिकोत्तमः।
दक्षतो मण्डलं कृत्वा कुङ्कुमाद्यैर्विचित्रितम् ॥१६॥
अशोकतरुमालिख्य त्रिकोणं मण्डलं लिखेत्।
तन्मध्ये पूजयेत्कामं तरुणं चारुणप्रभम् ॥१७॥
रक्तवस्त्रं रक्तभूषं वामदक्षिणयोः प्रिये।
रतिप्रीतिविशोभाढ्यं पञ्चबाणं धनुर्धरम् ॥१८॥
बसन्तसहितं कामं कदम्बवनमध्यगम्।
मन्त्रेणानेन तं कामं पूजयेत्सिद्धिहेतवे ॥१९॥
वाग्भवं भुवनेशानीं श्रियं कामात्मकेन च।
कामाय नम आलिख्य विद्येयं नववर्णिनी ॥२०॥
कामबीजत्रयं चोक्त्वा रत्यात्मकमुच्चरेत्।
रत्यै नमश्चाष्टवर्णा रतिविद्या वरानने ॥२१॥
प्रीतिं वदेद्रतिस्थाने प्रीतिमन्त्रोऽष्टवर्णकः।
गौरश्यामे रतिप्रीती क्रमेण मणिभूषणे ॥२२॥
पद्मताम्बूलहस्ते च रक्तवस्त्रविराजिते।
दिव्याभरणभूषे च पुष्पदामविराजिते ॥२३॥
वामदक्षिणयोर्ध्यात्वा कामस्य तदनन्तरम्।
वसन्तं पूजयेत्पश्चात्कदम्बवनमध्यगम् ॥२४॥

अशोक वृक्ष अंकित करके त्रिकोण मण्डल बनाये। इस त्रिकोण मण्डल में अरुण वर्ण, रक्तवस्त्रान्वित, रक्त अलंकार युक्त, वाम तथा दक्षिण में क्रमशः रति तथा प्रीति से शोभित पञ्चबाण समन्वित धनुर्धारी कदम्बवनमध्यस्थित वसन्त सहित तरुण युवक काम

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की पूजा करे। हे प्रिये ! वाग्भव (ऐं) भुवनेशानी (ह्रीं), श्रीं, कामात्मक क्लीं कामाय नमः लिखे। अर्थात् 'ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं कामाय नमः' का उच्चारण करके आगे "एष गन्धः कामाय नमः' लगाकर इसी प्रकार उपचार प्रदान करके पूजा करना चाहिये।

हे वरानने ! तीन काम बीज (क्लीं क्लीं क्लीं) लिखकर 'भ्रें' का उच्चारण करके 'रत्यैनमः' कहे। यह अष्टाक्षरी मन्त्र रति देवी का हैं। मन्त्रोद्धार इस प्रकार होगा "क्लीं क्लीं क्लीं भ्रें रत्यै नमः" । प्रीति मन्त्र होगा–"क्लीं क्लीं क्लीं भ्रें प्रीत्यै नमः । यह भी अष्टाक्षरी है। रति गौरवर्णा हैं। प्रीति श्यामवर्णा है। दोनो मणि से भूषित हैं। दोनों के हाथों में कमल तथा ताम्बूल है। दोनो लाल वस्त्र से शोभिता, दिव्यालंकार भूषिता, पुष्पमालायुता हैं। काम के बायें तथा दाहिने रति-प्रीति का ध्यान एवं पूजन करके तब वसन्त पूजन किया जाये ॥१६-२४॥

गौरवर्णं वामहस्ते सुधापूर्णघटान्वितम्।
दक्षहस्तेन दधतं नानापुष्पसमुच्चयम् ॥२५॥
साङ्गं कामं प्रपूज्याथ धूपदीपादि दर्शयेत्।
दमने पूजितः कामः सर्वकार्याणि साधयेत् ॥२६॥
तेन सम्यक्प्रपूज्याथ महात्रिपुरसुन्दरीम्।
क्रमं समर्चयेत्सम्यक्कुमारीर्भोजयेद्बुधः ॥२७॥
सुवासिनीश्च सम्पूज्य योगिनीगणमर्चयेत्।
ब्राह्मणान् परिपूज्याथ नानादर्शनपारगान् ॥२८॥
तदङ्गहवनात्पश्चाद्गुरुं रत्नादिभूषणैः।
स्वर्णभारसहस्रैश्च दिव्यवस्त्रमनोरमैः ॥२९॥
पूजयित्वा ततो देवि पूर्णाहुतिमथोच्चरेत्।
अनेन विधिना देवि दमनारोपणं यजेत् ॥३०॥
तस्य सांवत्सरी पूजा सफला शैलसंभवे ॥३१॥

वसन्त कदम्बवन मध्यस्थित, गौरवर्ण, सुधार्पूण घट तथा नाना पुष्प हाथों में धारण किये हुये हैं। इस प्रकार अंगदेवताओं के साथ कामदेव की पूजा करके धूप-दीपादि निवेदित करे। दमन अर्थात् दमनारोपण उत्सव में कामदेव पूजित होकर सर्वकार्य साधन करते हैं। सम्यक् रूपेण काम पूजा करके तदनन्तर महात्रिपुर सुन्दरी की सम्यक् पूजा करनी होगी। इसके पश्चात् कुमारी भोजनोपरान्त सुवसिनी गण की पूजा करके योगिनी गण की पूजा करे। तदनन्तर विभिन्न दर्शनशास्त्र पारंगत ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिये। इसके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनन्तर दमनारोपण का अंगभूत होम करके रत्नादि भूषणों से, सहस्रभार स्वर्ण से तथा मनोहर दिव्य वस्त्रों से गुरु की पूजा करके पूर्णाहुति करे। हे देवी ! इस प्रकार दमनारोपण उत्सव सम्पन्न किया जाता है। हे पर्वतकन्ये ! जो इस प्रकार से दमनारोपण याग करते हैं, उनकी पूजा सफल होती है ।।२५-३१।।

षड्विंश पटल समाप्त।

।। ग्रन्थ समाप्त ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ज्ञानार्णवतन्त्रम् चित्र

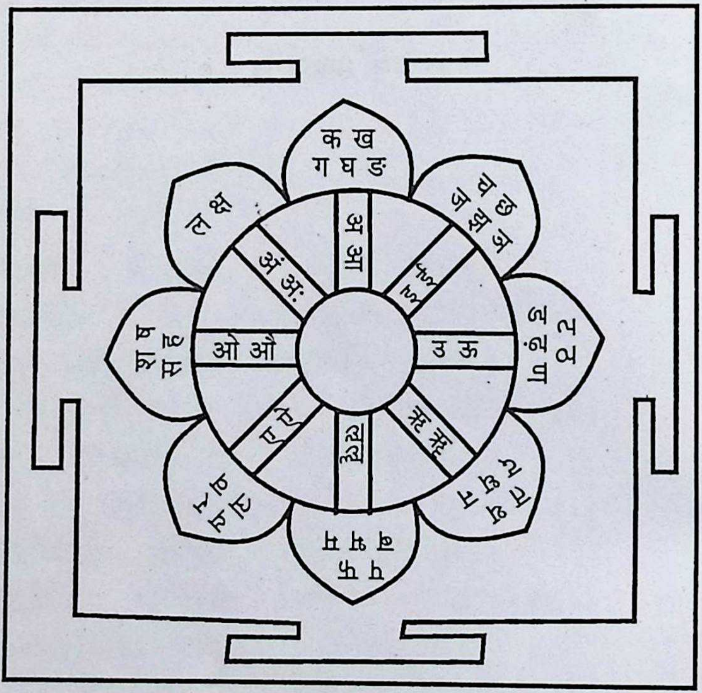

मातृचक्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ज्ञानवर्णवोक्त यन्त्र चित्र

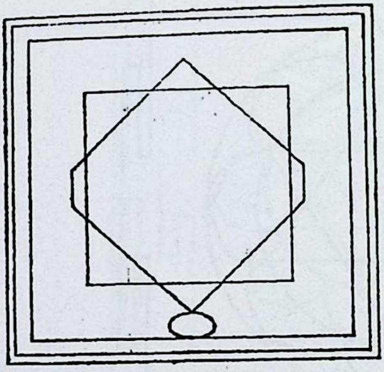

षडस्त्र कुण्ड

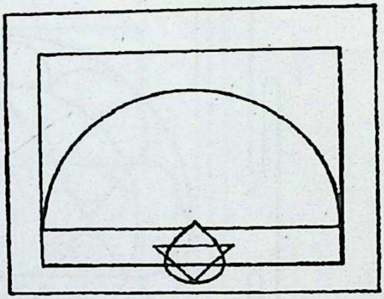

अर्द्धचन्द्र कुण्ड

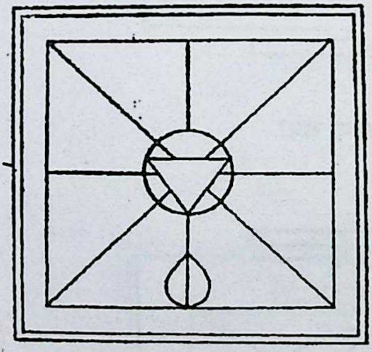

नवत्रिकोण कुण्ड

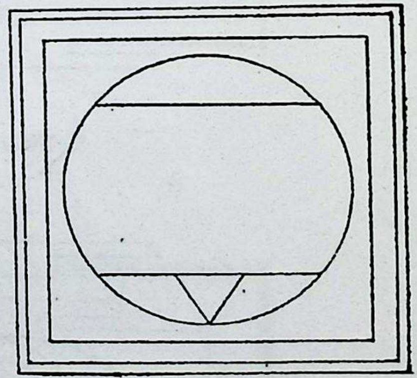

वृत्त कुण्ड

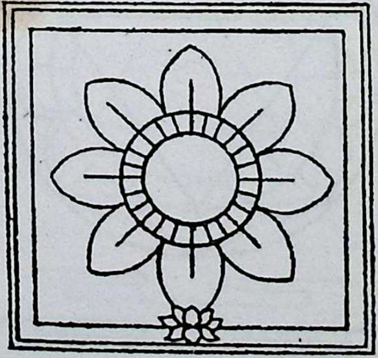

अष्टपत्र कुण्ड

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

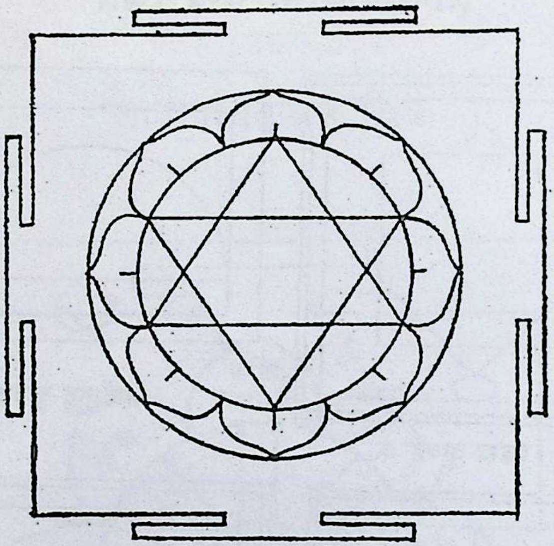

त्रैलोक्यमोहन यन्त्र

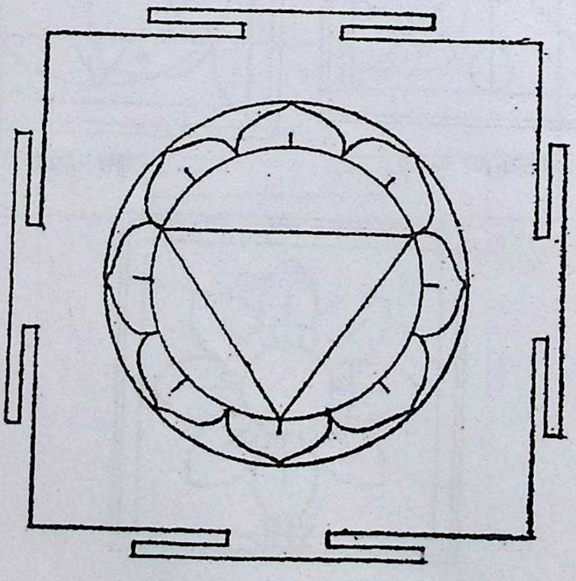

त्रिपुरायन्त्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

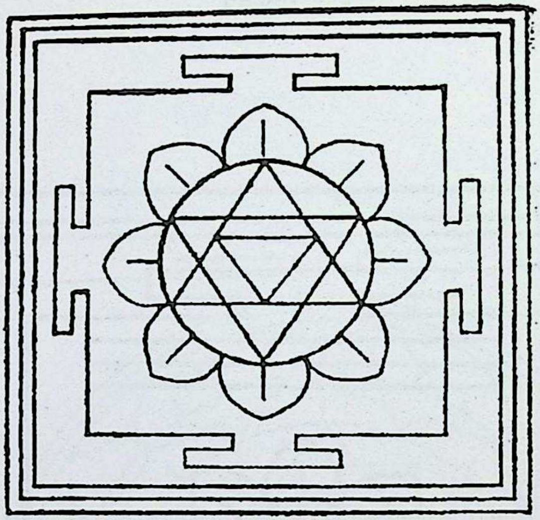

नवकोणाङ्कित दीक्षाचक्र

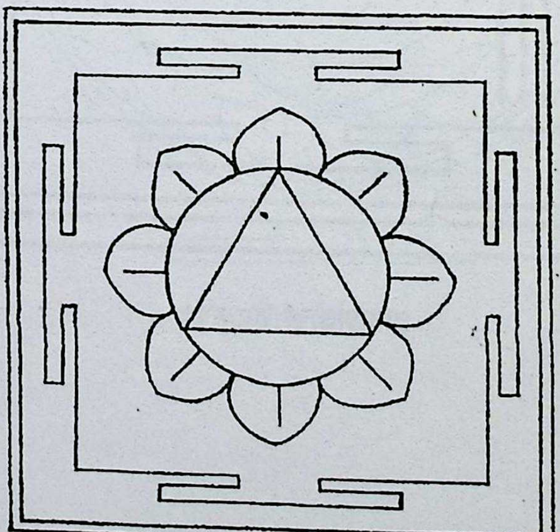

त्रिकोण मण्डल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

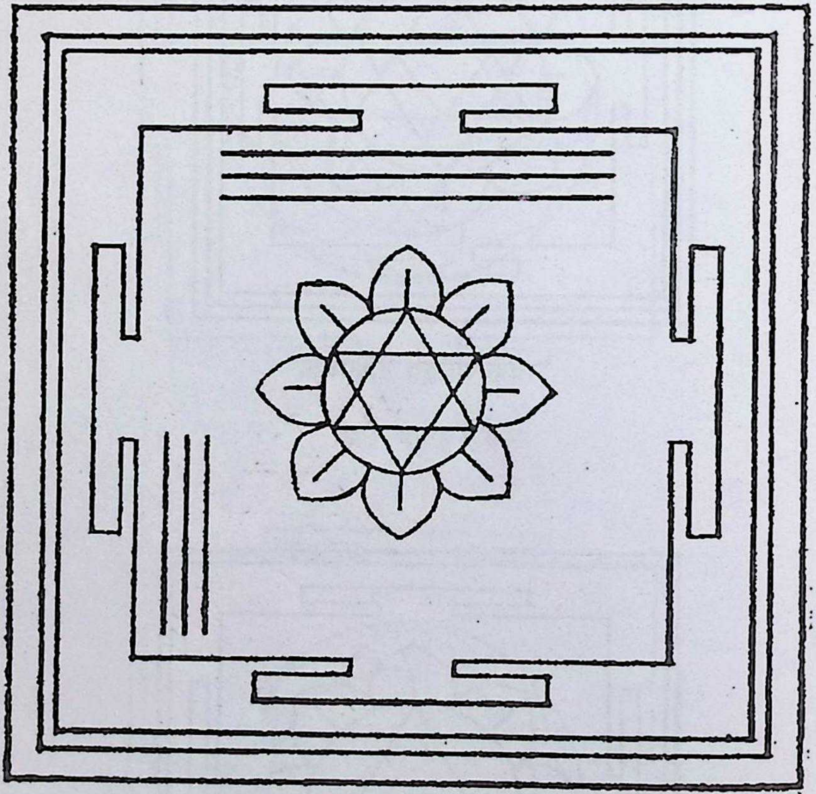

ज्ञानार्णवोक्त हेमकुण्ड

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

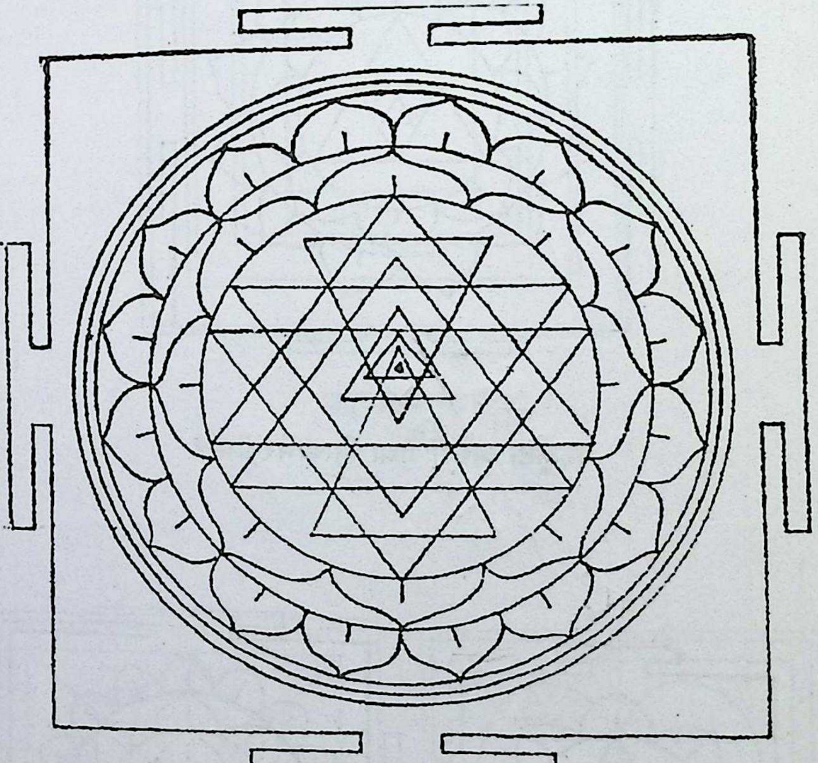

श्रीविद्यायन्त्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

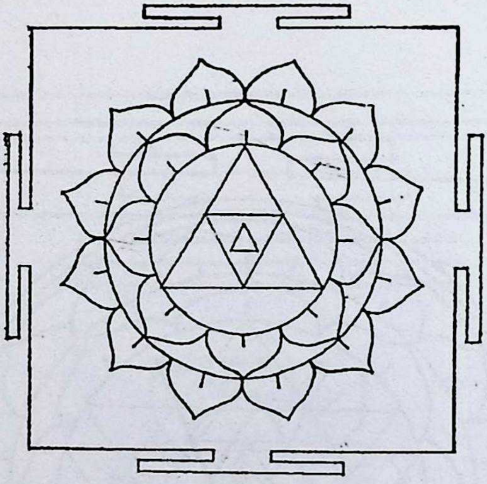

षट्कूटा भैरवी तथा नित्याभैरवीयन्त्र

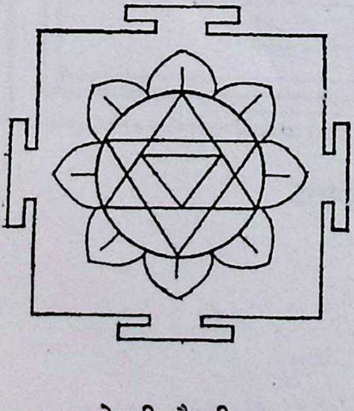

भुवनेश्वरी भैरवीयन्त्र

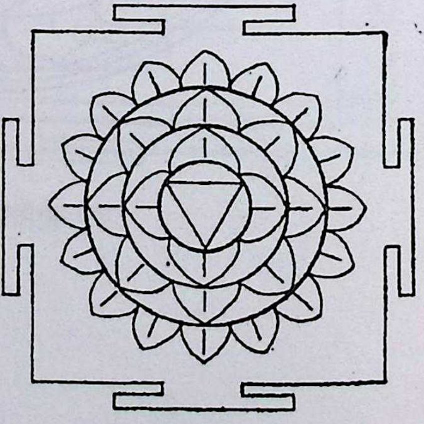

अन्नपूर्णा भैरवीयन्त्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

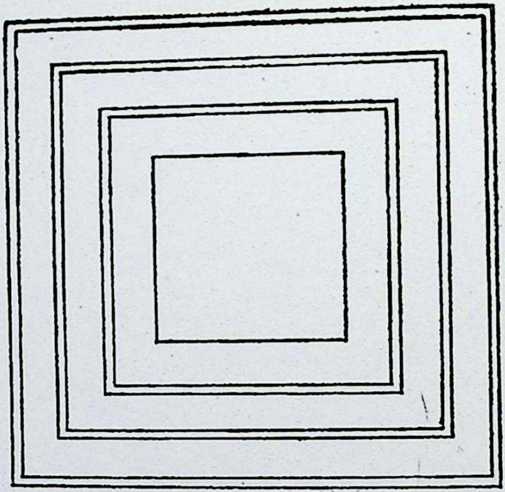

चतुरस्त्र कुण्ड

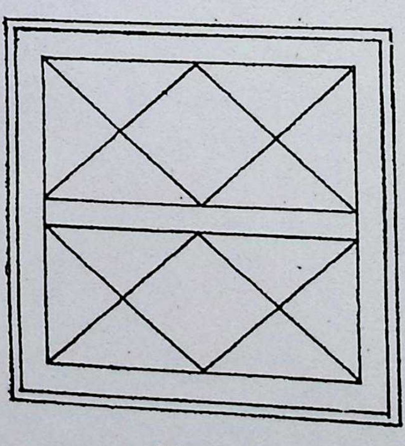

योनिकुण्ड

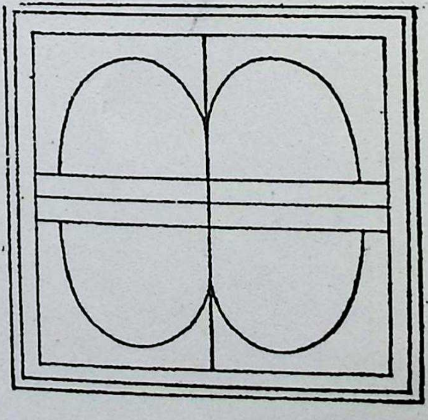

भग कुण्ड

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Acc. 39886/31447

१९ ज्ञान

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्य महत्वपूर्ण ग्रन्थ

* **कुमारीतन्त्र।** (तंत्र) कौलाचर सम्बन्धित तंत्र ग्रन्थ संस्कृत मूल एवं भाषाभाष्ययुक्त। भाषाभाष्यकार - एस.एन. खण्डेलवाल (का. 346)
* **कुण्डलिनी साधना (अमृतकलश)।** (तंत्र) प्रस्तुतकर्त्ता- स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द सरस्वती। सुनियोजक - डॉ. राजकुमार उपाध्याय 'मणि' (का. 303)
* **गायत्रीतन्त्रम्।** (तंत्र) शंकर कृत। गायत्री शापोद्धार, कवच, दश महाविद्या स्तोत्र सहित। शिवदत्त मिश्र कृत 'तत्त्वदीपिका' हिन्दी टीका। सं. तारकानाथ भट्टाचार्य। (का. 143)
* **गुरुतन्त्र।** (तंत्र) संस्कृत मूल एवं भाषाभाष्ययुक्त। भाषाभाष्यकार- एस.एन. खण्डेलवाल (का. 345)
* **गुप्तसाधनतन्त्र।** (तंत्र) संस्कृत मूल तथा भाषाभाष्ययुक्त। भाषाभाष्यकार- एस.एन. खण्डेलवाल (का. 349)
* **यंत्र मंत्रशक्ति** (सुख समृद्धि की प्राप्ति)। (तंत्र) प्रस्तुतकर्त्ता- स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द सरस्वती । सुनियोजक - डॉ. राजकुमार उपाध्याय 'मणि' (का. 302)
* **तंत्र में आयुर्वेद।** (तंत्र) औषधियों और मंत्र के साथ मणिकांच्चन संयोग का उत्तम मार्गदर्शन। संस्कृत मूल तथा भाषाभाष्ययुक्त। भाषाभाष्यकार - एस.एन. खण्डेलवाल (का. 352)
* **वास्तुशास्त्र** (सरल एवं व्यावहारिक ज्ञान) । (वास्तु) व्याख्याकार- डॉ. शालिनी कृष्णा खरे (का. 348)
* **प्राकृत-भाषाओं के व्याकरणों में गणपाठ।** (बौद्ध) लेखक सम्पादक- डॉ. के.वा. आप्टे (का. 342)
* **जन्म कुण्डली-ग्रहयोगफल।** (ज्योतिष) आचार्य पं. चक्रपाणि भट्ट (का. 336)
* **दैवज्ञाभरणम्।** (ज्योतिष) हिन्दी व्याख्या सहित। सम्पादक एवं व्याख्याकार- डॉ. चन्द्रमौली उपाध्याय (का. 328)
* **श्रीमद्भगवद्गीता।** गीता तत्त्व मीमांसा संवलिता (गीता) (शांकरभाष्य, रामानुज भाष्य भावार्थ एवं लोकमान्यतिलक कृत गीता रहस्य भावार्थ सहित) व्याख्याकार- डॉ. केशवराव सदाशिव शास्त्री मुसलगाँवकर। सम्पादक एवं भूमिका लेखक- डॉ. राजेश्वर शास्त्री मुसलगाँवकर एवं डॉ. शुभम् शर्मा (का. 341)

चौखम्भा संस्कृत संस्थान
पो.बा. नं. 1139, के. 37/116, गोपाल मन्दिर लेन,
गोलघर, (समीप मैदागिन) वाराणसी - 221001 (भारत)
टेलीफोन : 0542-2333445, टेलीफैक्स : 0542-2335930
E-mail : cssvns@sify.com

ISBN : 978-93-81608-22-7

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu